उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

व्यक्तित्व का मनोविज्ञान (बी.ए.पी.वाई.(N)321)

Psychology of personality (BAPY(N) 321

इकाई संख्या	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
	खण्ड 1. व्यक्तित्व: परिचय एवं विकास	
इकाई-1	व्यक्तित्व:- प्रकृति एवं विशेषताएँ; (Personality: Nature, and Characteristics)	1-9
इकाई-2	व्यक्तित्व विकास की अवधारणा; व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारक (Concept of Personality Development; Factors affecting Personality)	10-35
इकाई-3	योग द्वारा व्यक्तित्व का विकास (Development of Personality through Yoga)	36-64
इकाई-4	उपनिषद, अभिधर्मा एवम सांख्य में व्यक्तित्व की व्याख्या (Explanation of Personality in Upanishad, Abhi-dharma and the Sankhya)	65-85
	खण्ड 2 व्यक्तित्व के सामाजिक मनोवैज्ञानिक एवं विश्लेणात्मक सिद्धान्त	
इकाई-5	व्यक्तित्व के प्रकार एवं शीलगुण सिद्धान्त (Types and Trait Theory of Personality)	86-106
इकाई-6	व्यक्तित्व के सामाजिक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त (अल्फ्रेड एडलर, करेन हॉर्नी), (Social Psychological Theory of Personality (Alfred Adler, Karen Horney)	107-120
इकाई-7	बैंडुरा का व्यक्तित्व का सामाजिक संज्ञानात्मक सिद्धान्त(Bandura Social Cognitive Theory of Personality)	121-133
इकाई 8.	व्यक्तित्व का डोलार्ड एवं मिलर सिद्धान्त (Dollard and Miller Theory of Personality)	134-147
इकाई 9.	फ्राइड एवं एरिक्सन का व्यक्तित्व सिद्धान्त (Theory of Personality Freud and Erikson	148-158
	खण्ड 3 व्यक्तित्व के अधिगम **एवं मानवतावादी सिद्धान्त**	
इकाई 10.	व्यक्तित्व के अधिगम सिद्धान्त (स्कीनर), मानवतावादी एवं स्व सिद्धान्त (मेसलो, रोजर्स) (Learning Theory of Personality (Skinner), Humanistic and Self-Theory	159-187
इकाई 11.	आइसेंक व्यक्तित्व सिद्धान्त एवं व्यक्तित्व के पाँच बड़े सिद्धान्त (Eysenck Personality Theory and Big Five Theory of Personality)	188-206
	खण्ड 4. व्यक्तित्व का मूल्यांकन (Assessment of personality)	
इकाई 12.	व्यक्तित्व का मूल्यांकन; व्यक्तित्व परीक्षण और इसके महत्वपूर्ण मुद्दे (Assessment of Personality; Personality Test and Its Key Issues)	207-221
इकाई 13.	व्यक्तित्व मूल्यांकन के उपागम; आत्म-विवरण, प्रक्षेपी एवं व्यवहार मूल्यांकन) (Approaches of Personality Assessment; (Self-Report, Projective and Behavioral Assessment)	222-243
इकाई 14.	व्यक्तित्व के अन्य माप; क्यु-सार्ट प्रविधि, 16 पी.एफ. (Other Measures of Personality; Q-Sort Techniques, 16 P.f.)	244-253

इकाई 1. व्यक्तित्व: - प्रकृति एवं विशेषताएँ

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 व्यक्तित्व का स्वरूप

1.4 व्यक्तित्व की परिभाषाएं

1.4.1 सतही परिभाषाएं

1.4.2 तात्विक परिभाषाएं

1.4.3 समाकलित परिभाषाएं

1.5 व्यक्तित्व की विशेषताएं

1.6 सार संक्षेप

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.10 स्व-मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1.1 प्रस्तावना -

व्यक्तित्व एक जटिल विषय है। इसके अध्ययन की महत्ता इस बात से प्रमाणित हो जाती है कि जहां सभी मनोवैज्ञानिक क्रियाओं का स्वरूप व्यक्तित्व के स्वरूप से ही निर्धारित होता है, वहीं व्यक्तित्व के स्वरूप का निर्धारण भी इन सभी मनोवैज्ञानिक क्रियाओं के सम्मिलित प्रभाव से ही होता है; जहां बुद्धि से व्यक्ति की योग्यताओं के अन्तर की जानकारी मिलती है, वहीं व्यक्तित्व से व्यक्ति के लक्षणों का ज्ञान प्राप्त होता है। ये लक्षण व्यक्तित्व के विशिष्ट गुणों के रूप में उसके व्यवहार एवं अनुभूतियों को प्रतिबिम्बित करते हैं।

व्यक्तित्व मनोविज्ञान का एक ऐसा क्षेत्र है जो वास्तव में जीव विज्ञान, समाज विज्ञान एवं मनोविज्ञान का संगम स्थल है। यह एक ऐसा विषय है जिसमें केवल मनुष्यों की चर्चा की जाती है, पशुओं की नहीं। अतः व्यक्तित्व का अध्ययन मनोविज्ञान के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान रखता है।

प्रस्तुत इकाई में मनोविज्ञान के इस अत्यन्त ही जटिल विषय ''व्यक्तित्व'' को समझने, उसे परिभाषित करने, उसकी विशेषताओं को जानने तथा उसके विभिन्न उपागमों की व्याख्या करने का प्रयास अत्यन्त ही सरल रूप में किया गया है। आशा है, पाठकों को इस गूढ़ विषय को समझने में आसानी होगी।

1.2 उद्देश्य -

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप

1. व्यक्तित्व के स्वरूप का खाका खींच सकें।
2. व्यक्तित्व की विभिन्न परिभाषाओं का विश्लेषण कर उत्तम परिभाषा दे सकें।
3. व्यक्तित्व की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकें तथा
4. व्यक्तित्व के विभिन्न उपागमों की व्याख्या कर सकें।

1.3 व्यक्तित्व का स्वरूप -

''व्यक्तित्व'' अंग्रेजी के पर्सनॉलिटी शब्द का हिंदी रूपांतर है। पर्सनालिटी शब्द की उत्पत्ति लैटिन के परसोना से हुई है। परसोना एक प्रकार के नकाब या मुखावरण को कहते हैं, जिसका उपयोग यूनानी नाटकों में भाग लेने वाले पात्र करते थे। इन नकाबों को चेहरे पर लगा लेने से यह स्पष्ट पता चल जाता था कि नाटक में विभिन्न पात्रों के कार्य किस ढंग के होंगे। इस परसोना शब्द से पर्सनॉलिटी शब्द बना है, जिसका अर्थ बनावटी रूप होता है। इस शाब्दिक अर्थ में जिन लोगों ने व्यक्तित्व को परिभाषित करने की चेष्टा की है, उन लोगों ने मनुष्य की बाह्य रूप-रेखा, वेश-भूषा को ही व्यक्तित्व कहा है। साधारण बोलचाल की भाषा में भी व्यक्तित्व का प्रयोग इसी अर्थ में होता है। इस दृष्टिकोण को सतही दृष्टिकोण कहते हैं। उदाहरणार्थ, एक व्यक्ति जो देखने में सुंदर है, जिसकी पोशाक आकर्षक है, जो मधुरभाषी और फुर्तीला है-

साधारण बोलचाल की भाषा में उसे अच्छे व्यक्तित्व का व्यक्ति कहा जाता है। ठीक इसके विपरीत, जब किसी बेडौल नाक-नक्शेवाले व्यक्ति को मैले कपड़ों में देखते हैं तब हम उसके व्यक्तित्व को बुरा कहते हैं।

व्यक्तित्व के संबंध में एक अन्य दृष्टिकोण तात्विक दृष्टिकोण कहलाता है। यह दृष्टिकोण मनुष्य के स्वाभाविक स्थायी गुणों की ही व्याख्या करता है। इस दृष्टिकोण के समर्थकों में वारेन एवं कारमाइकेल के नाम प्रमुख है। वे व्यक्तित्व को मानसिक संगठन मानते हैं, जिसके अंतर्गत बुद्धि धातुस्वभाव, कौशल आदि आंतरिक स्वाभाविक गुण आते हैं।

लेकिन, उपर्युक्त दोनों दृष्टिकोणों में कोई भी एक दृष्टिकोण व्यक्तित्व के वास्तविक स्वरूप को स्पष्ट करने में सफल नहीं है। मनोविज्ञान के अन्दर व्यक्तित्व को समझने के लिए हमें दोनों दृष्टिकोणों को शामिल करना होगा। इसका मतलब यह हुआ कि किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को समझने के लिए हमें उसके बाह्य रंग-रूप, वेश-भूषा, चाल-ढाल इत्यादि के साथ-साथ उसके अन्दर के गुण, स्वभाव, विचार, अभिरूचि, मनोवृत्ति इत्यादि पर भी ध्यान देना होगा। अतः इस दृष्टिकोण के अनुसार 'व्यक्तिव को व्यक्ति के बाह्य एवं आन्तरिक स्वाभाविक स्थायी गुणों का समन्वय कहा जा सकता है।'

व्यक्तित्व के स्वरूप को और अच्छी तरह स्पष्ट करने हेतु हम एक सामान्य उदाहरण का विश्लेषण करें। मान लें, आपके किसी मित्र ने नौकरी के लिए आवेदनपत्र देते समय अपने परिचितों में आपका नाम दे दिया है। अब नियुक्ति करनेवाला ऑफिसर आपको एक गुप्त पत्र भेजकर उस उम्मीदवार की योग्यता, चरित्र एवं व्यक्तित्व के संबंध में पूछता है। उत्तर में आप लिखते हैं- उम्मीदवार का व्यक्तित्व आकर्षक और दिलचस्प है, वह उत्साही, अध्यवसायी और ईमानदार होने के साथ-साथ प्रसन्नचित, सरल और विश्वासपात्र है। वह अपने साथियों के साथ मिल-जुलकर काम करना जानता है, वह आत्मनिर्भर तथा अच्छे चरित्रवाला है। इसी तरह हजारों ऐसे विशेषण है जिनके उपयोग किसी के व्यक्तित्व को प्रकट करने हेतु किए जा सकते हैं।

यदि आप उपर्युक्त विशेषणों पर सोचें तो विदित होगा कि ये विशेषण सही अर्थ में क्रियाविशेषण है जिनसे व्यक्ति के व्यवहार के तरीकों के बारे में जानकारी मिलती है। अर्थात् व्यक्ति के विशिष्ट गुण उसके व्यवहार के तरीके का ज्ञान कराते हैं। अतः व्यक्तित्व की विशेषता बताने वाले शब्द व्यक्ति के गुणों के नाम है। किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व एक छोटे-से काम को करने में भी प्रकट हो सकता है। उस कार्य को वह विशेष ढंग से करेगा और यही विशेष ढंग उसका व्यक्तित्व होगा। व्यक्तित्व के इस विश्लेषण के आलोक में ही वुडवर्थ एवं मार्क्रविस ने व्यक्तित्व की परिभाषा इस प्रकार दी है- व्यक्तित्व व्यक्ति के व्यवहार की वह व्यापक विशेषता है जो उसके विचारों और उनके प्रकट करने के ढंग, उसकी मनोवृत्ति और अभिरूचि, कार्य करने के उसके ढंग और जीवन के प्रति उसके व्यक्तिगत दार्शनिक दृष्टिकोण से प्रकट होती है

स्पष्ट है कि व्यक्तित्व में व्यक्ति के बाह्य रूप-रंग, वेश-भूषा आदि के साथ-साथ किसी कार्य करने के विशेष ढंग (जो उसका स्थायी गुण होता है) को प्रकट करने वाले गुणों का समन्वय होता है तथा इसी समन्वय के फलस्वरूप उसका वातावरण के साथ अभियोजन अपूर्व ढंग का होता है।

1.4 व्यक्तित्व की परिभाषाएं -

व्यक्तित्व के स्वरूप का ऊपर जो वर्णन किया गया है, उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्तित्व के वास्तविक स्वरूप को थोड़े से शब्दों में (संक्षेप में) बताना आसान काम नहीं है। इसका कारण यह है कि व्यक्तित्व की विशेषताओं को प्रकट करने वाले विशेषण अमूर्त होते हैं, जिन्हें ठोस अर्थ में व्यक्त करना कठिन है। फिर भी, विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने इसे अपने-अपने ढंग से परिभाषित करने की कोशिश की है। जहां कुछ मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व को व्यक्ति के बाह्य पक्ष के आधार पर परिभाषित करने का प्रयास किया है, वहीं कुछ अन्य मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्ति के आन्तरिक पक्ष को महत्व देते हुए व्यक्तित्व की परिभाषा दी है। कुछ ऐसे भी मनोवैज्ञानिक हैं जिन्होंने इन दोनों पक्षों को ध्यान में रखकर व्यक्तित्व को परिभाषित किया है।

अतः व्यक्तित्व के सम्बन्ध में उपलब्ध परिभाषाओं को निम्नलिखित तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता हैः-

(क) सतही परिभाषाएं- इस वर्ग की परिभाषाएं व्यक्ति के बाहरी पक्ष यानी शरीरिक रचना, रूप-रंग, शारीरिक बनावट आदि पर आधारित हैं। सुन्दर एवं संगठित शारीरिक रचना अथवा भव्य शारीरिक प्रतीति वाले व्यक्ति को देखकर हम अक्सर कह बैठते हैं कि उसका व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक है। असल में व्यक्तित्व के सम्बन्ध में हमारी यह धारण व्यक्तित्व के शाब्दिक अर्थ से प्रभावित है। यूनान के लोग नाटक के बड़े शौकीन थे। नाटक के समय अभिनय के अनुसार अभिनेता अपने असली चेहरा को छिपाकर नकली चेहरा के साथ दर्शकों के सामने आने के लिए अपने चेहरे पर एक विशेष मुखावरण लगा लिया करते थे, जिसको परसौना कहा जाता था। अभिनेता के मुखावरण को देखकर ही दर्शकों को इस बात का भान हो जाता कि उसका अभिनय किस ढंग का होगा। इस प्रकार एक विशेष समय में किसी अभिनेता के अच्छे, बुरे, संवेगी, असंगी या क्रोधी होने का परिचय उसके मुखावरण से मिल जाया करता था। इसी आधार पर बाद में शारीरिक गठन, शारीरिक प्रतीति तथा वेश-भूषा को व्यक्तित्व मान लेने की भूल की गयी।

उल्लेखनीय है कि सतही दृष्टिकोण व्यक्तित्व की व्याख्या उत्तेजना तथा प्रतिक्रिया के आधार पर करता हे। अतः सतही दृष्टिकोण को निम्नलिखित दो उप-वर्गों में विभाजित किया जा सकता हैः-

(1) उत्तेजना दृष्टिकोण- इस दृष्टिकोण के अनुसार व्यक्तित्व एक उत्तेजना के रूप में कार्यरत होता है। प्रत्येक व्यक्तित्व का एक उत्तेजना मान होता है, जिससे उसकी (व्यक्तित्व की) प्रभावशीलता निर्धारित होती है। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का परिचय इस बात से मिलता है कि वह दूसरे व्यक्तियों को किस रूप में प्रभावित करता है। उसका यह प्रभाव सकारात्मक भी होता है और नकारात्मक भी। फिर, उसके सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव की मात्रा अधिक भी हो सकती है और कम भी। वह दूसरों पर जितना ही अधिक सकारात्मक प्रभाव डाल पाता है, उसका व्यक्तित्व उतना ही अधिक भव्य, आकर्षक तथा प्रभावशाली समझा जाता है।

(2) प्रतिक्रिया दृष्टिकोण- इस दृष्टिकोण के अनुसार व्यक्तित्व का बोध प्रतिक्रिया के रूप में होता है। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का बोध प्रतिक्रिया के रूप में होता है। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का परिचय इस बात से मिलता है कि वह भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में किस प्रकार व्यवहार या प्रतिक्रिया करता है। किसी व्यक्ति को बार-बार आक्रमणकारी व्यवहार करते देखकर हम कह उठते हैं कि वह आक्रमणकारी व्यक्तित्व का व्यक्ति है। इसी प्रकार, किसी व्यक्ति को बार-बार लजाते देखकर हम उसे लजालु व्यक्तित्व का आदमी समझने लगते हैं। स्पष्ट है कि इस दृष्टिकोण के अनुसार किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का परिचय उसके द्वारा किये गये व्यवहारों से मिलता है।

व्यवहारवाद के जन्मदाता वाटसन (1924) ने सतही दृष्टिकोण से व्यक्तित्व को परिभाषित करने का प्रयास किया। उन्होंने अपनी रचना व्यवहारवाद में व्यक्तित्व की परिभाषा देते हुए कहा व्यक्तित्व का तात्पर्य विश्वसनीय सूचना हेतु एक लंबे समय तक निरीक्षण की जाने वाली क्रियाओं के योगफल से है। इसी प्रकार शर्मन (1925) ने व्यक्ति की शारीरिक प्रतीति (उत्तेजना मान) तथा उसके व्यवहार (प्रतिक्रिया-मान) को ध्यान में रखते हुए व्यक्तित्व की परिभाषा दी कि व्यक्ति के विशिष्ट व्यवहार को व्यक्तित्व कहते हैं। मैक कीनन (1944) ने भी सतही दृष्टिकोण से व्यक्तित्व को परिभाषित किया और कहा कि आदत-प्रणाली तथा क्रियाओं का परिणाम ही व्यक्तित्व है।

लेकिन, सतही परिभाषायें अधिक दिनों तक टिक नहीं सकी। विद्वानों ने व्यक्तित्व को केवल उत्तेजना (बाह्य प्रतीति) अथवा प्रतिक्रिया (व्यवहार) के रूप में स्वीकार नहीं किया। उन्होंने कहा कि व्यक्तित्व का समबन्ध बाहरी भेष-भूषा या व्यवहार से नहीं है, बल्कि उन आन्तरिक शीलगुणों से है, जो व्यक्ति के व्यवहारों के निर्धारक हैं। इसी दृष्टिकोण को तात्विक दृष्टिकोण कहा गया।

(ख) **तात्विक परिभाषाएं-** इस वर्ग की परिभाषाएं अधिक उपयोगी तथा संतोषजनक हैं, क्योंकि उनके आधार पर व्यक्तित्व का स्वरूप अधिक स्पष्ट हो पाता है। तात्विक दृष्टिकोण के अनुसार व्यक्ति का आंतरिक स्थाई स्वभाव ही व्यक्तित्व है। बुद्धि, स्वभाव, प्रवृत्ति, नैतिकता, संवेगशीलता आदि आन्तरिक शीलगुणों से संरचित मानव-स्वभाव ही वास्तविक अर्थ में व्यक्तित्व है। भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में व्यक्ति के व्यवहारों का असल निर्धारक यही मानव स्वभाव है।

प्रिन्स (1974) ने व्यक्त्वि के तात्विक दृष्टिकोण पर बल दिया। उन्होंने अपनी रचना अचेतन में व्यक्तित्व की परिभाषा देते हुए कहा कि व्यक्तित्व का तात्पर्य व्यक्ति के सभी जैविक जन्मजात प्रवृत्तियों, आवेगों, झुकावों, अभिलाषाओं, मूल-प्रवृत्तियों तथा अर्जित प्रवृत्तियों एवं झुकावों के योगफल से है। स्पष्टतः इस परिभाषा में व्यक्तित्व के आन्तरिक पक्ष पर बल दिया गया है। यही मानसिक संगठन मानव-स्वभाव है, जो एक स्वतंत्र चर के रूप में भिन्न-भिन्न व्यवहारों (आश्रित चरों) को नियन्त्रित तथा संचालित करता है। वारेन आदि ने भी इसी अर्थ में व्यक्तित्व की परिभाषा दी है और कहा है कि मानव का सम्पूर्ण मानसिक संगठन ही व्यक्तित्व हे।

इस वर्ग की परिभाषाएं भी व्यक्तित्व की व्याख्या करने में केवल आंशिक रूप में सफल है। कारण, इन परिभाषाओं में केवल आंतरिक पक्ष पर बल दिया गया है और बाह्य पक्ष की उपेक्षा की गयी है। तात्विक

परिभाषाओं में व्यक्ति की मनोवृत्ति, मनोवेग, अभिलाषा आदि गत्यात्मक प्रत्ययों पर बल दिया गया है, परन्तु उनका अध्ययन प्रत्यक्ष रूप में सम्भव नहीं है। अतः मानसिक संगठन के सही स्वरूप को समझने के लिए बाह्य प्रतीति तथा व्यवहार का अध्ययन आवश्यक है।

(ग) समाकलनात्मक परिभाषाएं- इस वर्ग की परिभाषाएं व्यक्तित्व के स्वरूप की व्याख्या करने में काफी सफल है। इन परिभाषाओं में व्यक्तित्व के बाह्य पक्ष तथा आन्तरिक पक्ष दोनों पर बल दिया गया है। हम देख चुके हैं कि सतही परिभाषाओं में व्यक्तित्व के केवल बाह्य पक्ष अर्थात् शारीरिक गठन एवं व्यवहार पर बल दिया गया और तात्विक परिभाषाओं में केवल आन्तरिक पक्ष अर्थात् मानसिक गठन पर बल दिया गया। लेकिन, मनोवैज्ञानिकों की एक बड़ी संख्या ने व्यक्तित्व को दोनों पक्षों का समाकलित रूप माना है। इस दिशा में गार्डन ऑल्पोर्ट (1937) का प्रयास बहुत सराहनीय है। उन्होंने परसौना तथा पर्सनालिटी की छोटी-बड़ी 50 परिभाषाओं की एक सूची तैयार की और कहा कि व्यक्तित्व की केवल वही परिभाषा संतोषजनक हो सकती है, जो व्यक्तित्व के बाह्य तथा आंतरिक पक्षों की व्याख्या करने में सफल हो। अपने इसी विश्वास के आधार पर उन्होंने व्यक्तित्व की परिभाषा दी कि, ''व्यक्तित्व व्यक्ति के भीतर उन मनोदैहिक शीलगुणों का गत्यात्मक संगठन है, जो वातावरण के प्रति उसके अपूर्व अभियोजन को निर्धारित करते हैं।''

ऊपर जिन महत्वपूर्ण परिभाषाओं का उल्लेख किया गया है, उनमें कुछ परिभाषाओं में व्यक्तित्व से व्यक्ति के व्यवहार का बोध होता है तो कुछ परिभाषाएं जैवभौतिक दृष्टिकोण के आधार पर दी गई हैं। जैवभौतिक दृष्टिकोण के अनुसार व्यक्तित्व जीवरसायन एवं शारीरिक रचना पर निर्भर करता है। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व के शीलगुण पर जोर दिया है, जिनके अनुसार शीलगुण ही व्यक्तित्व के वास्तविक स्वरूप को प्रकट करते हैं। कुछ दूसरे मनोवैज्ञानिक के अनुसार, व्यक्ति अपने समाज के दूसरे लोगों के साथ जिस प्रकार का व्यवहार प्रदर्शित करता है, वही उसके व्यक्तित्व का सूचक होता है। इस प्रकार, हम देखते हैं कि विभन्न मनोवैज्ञानिक द्वारा दी गई परिभाषाओं में काफी भिन्नता है। यह विभिन्नता केवल शब्दों का ही नहीं, वरन् उनके दृष्टिकोणों का भी है। अतः, उपर्युक्त विभिन्न परिभाषाओं में कौन परिभाषा सर्वोत्तम है यह निश्चित करना आसान नहीं प्रतीत होता। वास्तविकता तो यह है कि व्यक्तित्व अपने-आप में एक पूर्ण संगठितइकाई है, जिसमें व्यक्ति की जैविक तंत्रों का समावेश रहता है। यह संगठन प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न-भिन्न प्रतिरूपें का होता है, जिससे वातावरण के साथ उसका अभियोजन-संबंधी व्यवहार अपूर्व ढंग का होता है। व्यक्तित्व के इस स्वरूप को मद्दे नजर रखते हुए ऑलपोर्ट, द्वारा दी गई परिभाषा को एक उत्तम परिभाषा माना जा सकता है। उनहोंने **''व्यक्तित्व को व्यक्ति के मनःशारीरिक गुणों अथवा तंत्रों का गत्यात्मक संगठन बताया है तथा इसी संगठन पर व्यक्ति का वातावरण के साथ विशिष्ट या अपूर्व अभियोजन निर्भर करता है''** इस परिभाषा में अन्य सभी परिभाषाओं की बातें तो शामिल हैं ही, साथ-ही-साथ इसमें व्यक्तित्व को गत्यात्मक स्वरूप का संगठन बताया गया है। तात्पर्य यह है कि व्यक्तित्व के विभिन्न मनःशारीरिक गुण, जैसे- धातुस्वरूप, कौशल, मनोवृत्ति, विवेक आदि का संगठन लचीले स्वरूप का होता है। यही कारण है कि समय और परिस्थिति के अनुरूप व्यक्ति का व्यवहार भी अलग-अलग स्वरूप का होता है। साथ ही, इस परिभाषा में व्यक्तित्व की अपूर्वता पर भी जोर दिया गया

है। अतः यह स्पष्ट है कि ऑलपोर्ट की परिभाषा से व्यक्तित्व का वास्तविक स्वरूप अच्छी तरह चित्रित होता है। अतः इसे व्यक्तित्व की एक उपयुक्त परिभाषा कह सकते हैं।

1.5 व्यक्तित्व की विशेषताएं-

मनोवैज्ञानिक जब व्यक्तित्व का वैज्ञानिक विश्लेषण करता है तब उसका एकमात्र उद्देश्य व्यक्ति के व्यवहार द्वारा प्रदर्शित लक्षणोंद्व गुणों या विशेषताओं को पहचानना होता है। व्यक्तित्व के विशिष्ट लक्षण, विशेषता अथवा शीलगुण का तात्पर्य व्यक्ति के किसी खास गुण, विशेषता जैसे- हसमुख होना, आत्मविश्वासी होना, उत्साही होना, जिद्दी होना आदि से है जो व्यक्ति के कार्यों में अपने-आप (स्वतः) प्रकट होता है तथा जो कुछ समय के लिए उसके स्वभाव का अंग बनकर स्थिर रहता है। इन्हीं शीलगुणों की जटिल संरचना से व्यक्ति का समग्र व्यक्तित्व बनता है। यही कारण है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व में स्थिरता एवं क्रमबद्धता पाई जाती है।

व्यक्तित्व के शीलगुण की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है- किसी खास परिस्थिति में व्यक्ति की सामान्यीकृत एवं निर्भरतापूर्वक व्यवहार करने के ढंग को शीलगुण कहते हैं।

कुछ लोग शीलगुण या विशेषताओं के आधार पर व्यक्तित्व को अलग-अलग प्रकारों में बांटते है। जैसे हम कहते हैं- 'क' एक ईमानदार व्यक्ति है, 'ख' का व्यक्तित्व विनीत प्रकार का है, 'ग' का व्यक्तित्व सामाजिक है इत्यादि। इन कथनों में हम व्यक्ति के व्यवहार की विशिष्ट विशेषता या शीलगुण पर ही जोर देते हैं। लेकिन, किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को केवल उसके शीलगुण या विशेषता के आधार पर परखना गलत है। किसी व्यक्ति में किसी शीलगुण की प्रधानता से उसके व्यक्तित्व की पूर्णता का बोध नहीं होता, बल्कि इसका अर्थ केवल इतना है कि उस व्यक्ति में वह गुण या विशेषता दूसरों की अपेक्षा अधिक है। यानी, हम कह सकते हैं कि प्रत्येक शीलगुण की एक विमा होती है, जिसके विभिन्न बिंदुओं पर उस शीलगुण की विभिन्न मात्राएं रहती हैं और व्यक्ति के व्यवहारों का निरीक्षण कर उसे उस विमा के अलग-अलग बिंदुओं पर रख जाता है। शीलगुण विभिन्न मात्राओं में रहते हैं तथा उनका संगठन भी एक निश्चित प्रकार का होता है। यह संगठन विभिन्न व्यक्तियों में अलग-अलग प्रतिरूपों का होता है। यही कारण है कि किसी एक ही शीलगुण की प्रधानता वाले व्यक्तियों के व्यक्तित्व में भी भिन्नता मिलती है।

व्यक्ति के व्यवहार की विशेषताएं अनेक हैं। ऑलपोर्ट एवं ऑडबर्ट (1936) को वेब्स्टर की अंग्रेजी शब्दावली में लगभग 18,000 ऐसे विशेषण शब्द मिले, जो व्यक्ति की कार्यशैली, चिंतन, प्रत्यक्षीकरण आदि व्यवहार की विशेषताओं को व्यक्त करते हैं। लेकिन, इनमें अनेक विशेषण शब्द एक-दूसरे के समानार्थक हैं और कुछ दुर्लभ। इस तरह, समानार्थक एवं दुर्लभ शब्दों को छांटने पर लगभग 170 विशेषण शब्द प्रचलित प्रतीत होते हैं। अर्थात् उन्हें हम प्रचलित नामों से व्यक्त करते हैं।

सधारणतः व्यक्तित्व के इन प्रचलित शीलगुणों में किसी शीलगुण को उसके विलोम शब्द के जोड़ा रूप में ही व्यक्त किया जाता है। जैसे-प्रसन्नचित-उदास, दयालु-क्रूर, ईमानदार-बेईमान, सच्चरित्र-दुश्चरित्र आदि। अर्थात, किसी व्यक्ति के शीलगुण को द्विध्रुवीय विमा में ही पहचानने की कोशिश की जाती है।

अभ्यास प्रश्न:

1. "पर्सनैलिटी" शब्द लैटिन शब्द "पर्सोना" से आया है जिसका मतलब है:

   अ. चरित्र

   ब. मुखौटा

   स. मन

   द. व्यवहार

2. निम्नलिखित में से कौन व्यक्तित्व की प्रकृति का सबसे अच्छा वर्णन करता है?

अ. निश्चित और अपरिवर्तनीय

ब. गतिशील और संगठित

स. केवल वंशानुगत

द. अस्थायी

3. निम्नलिखित में से कौन सी पर्सनैलिटी की विशेषता नहीं है?

   अ. विशिष्टता

   ब. निरंतरता

   स. बिना बदलाव के स्थायित्व

   द. गतिशील संगठन

1.6 सार संक्षेप

1. कुछ मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व को व्यक्ति के बाह्य पक्ष, जैसे रूप-रंग, वेश-भूषा, बनावट आदि के आधार पर परिभाषित करने का प्रयास किया है, वहीं दूसरी ओर कुछ अन्य मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्ति के आन्तरिक पक्ष को महत्व देते हुए मनुष्य के स्वभाविक स्थायी गुणों, जैसे- बुद्धि, धातु-स्वभाव, कौशल, नैतिकता आदि के आधार पर व्यक्तित्व की परिभाषा दी है।

2. व्यक्तित्व की परिभाषाओं को कुल तीन मुख्य वर्गों में विभाजित किया गया है- सतही परिभाषाएं, तात्विक परिभाषाएं तथा समाकलनात्मक परिभाषाएं।

3. हर व्यक्ति की अपनी खास विशेषता होती है जिसे व्यक्तित्व का शीलगुण कहते हैं। इन्हीं विशेष शीलगुणों के कारण किसी खास परिस्थिति में व्यक्ति सामान्यीकृत एवं निर्भरतापूर्वक व्यवहार करने के ढंग को प्रदर्शित करता है।

4. व्यक्तित्व का प्रकार उपागम जहां विभिन्न व्यक्तित्व सिद्धान्तों की व्याख्या व्यक्ति को खास-खास प्रकार में बांटकर उस प्रकार विशेष के शीलगुणों के परिपेक्ष्य में करता है वहीं शीलगुण उपागम विभिन्न व्यक्तित्व सिद्धान्तों की व्याख्या भिन्न-भिन्न प्रकार के शीलनगुणों के आलोक में करता है।

1.7 पारिभाषिक शब्दावली:-

व्यक्तित्वः व्यक्तित्व व्यक्ति के भीतर उन मनोदैहिक शीलगुणों का गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण के प्रति उसके अपूर्व अभियोजन को निर्धारित करते हैं।

शीलगुणः व्यक्तित्व की एक ऐसी विशेषता जो एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में सापेक्ष रूप से स्थायी एवं संगत ढंग से भिन्न-भिन्न होता है।

गत्यात्मक शीलगुणः वैसा शीलगुण जिससे व्यक्ति का व्यवहार एक खास लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है।
क्षमता शीलगुणः वैसा शीलगुण जो व्यक्ति को किसी लक्ष्य तक पहुंचाने में काफी प्रभावकारी सिद्ध होता है।
चित्तप्रकृति शीलगुणः वैसा शीलगुण जो किसी लक्ष्य तक पहुंचने के प्रयास से उत्पन्न होता है तथा जिसका संबंध व्यक्ति की संवेगात्मक स्थिति, अनुक्रिया करने की शक्ति तथा दर आदि से संबंधित होता है।

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ब, 2. ब, 3. स

1.9 संदर्भ-ग्रन्थ सूची-

1. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान- अरूण कुमार सिंह/आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास।
2. सामान्य मनोविज्ञान- सिन्हा एवं मिश्रा, भारती भवन।
3. आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान- सुलैमान एवं खान, शुक्ला बुक डिपो, पटना।
4. Walter Mischel – Introduction to Personality.
5- Shaffer & Lazarus – Theories of Personality.
6 Eysenck – The scientific study of personality

1.10 स्व- मूल्यांकन हेतु प्रश्नः-

1. व्यक्तित्व की विभिन्न परिभाषाओं के आलोक में उसके स्वरूप को स्पष्ट करें।
2. व्यक्तित्व से आप क्या समझते हैं ? इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालें।

इकाई 2. व्यक्तित्व विकास की अवधारणा; व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारक

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 व्यक्तित्व का संप्रत्यय

2.4 व्यक्तित्व विकास का संप्रत्यय

2.4.1 व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया

2.5 व्यक्तित्व के निर्धारक/प्रभावक

2.5.1 जैविक कारक/निर्धारक

2.5.2 सामाजिक/वातावरणीय कारक/निर्धारक

2.6 सार संक्षेप

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.9 संदर्भ-ग्रन्थ सूची

2.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.11 स्व मूल्यांकन हेतु प्रश्न

2.1 प्रस्तावना-

व्यक्तित्व जहाँ व्यक्ति के मनोदैहिक गुणों, यानी बाहरी रूप-रंग, डील-डौल, आकर्षण तथा आन्तरिक शीलगुणों का गत्यात्मक संगठन है, वहीं व्यक्तित्व विकास व्यक्ति के व्यक्तित्व पैटर्न का विकास है, यानी उन सभी मनोदैहिक तंत्रों का विकास है जिनसे व्यक्ति का व्यक्तित्व बना होता है तथा जो आपस में अन्तर्सम्बन्धित होते हैं और एक-दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं।

व्यक्तित्व विकास के क्रम में मूलतः व्यक्ति के आत्म-संप्रत्यय तथा शीलगुण में विकासात्मक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं एवं इन्हें व्यक्ति के जैविक व सामाजिक सांस्कृतिक कारक प्रभावित करते हैं।

पिछली इकाई में आपने व्यक्तित्व की परिभाषा, उसके स्वरूप, उसकी विशेषताएं एवं व्यक्तित्व अध्ययन के विभिन्न उपागमों की जानकारी प्राप्त की। आइए, अब इस इकाई के अन्तर्गत यह जानने का प्रयास करें कि वास्तव में व्यक्तित्व का विकास कैसे होता है, इसकी प्रक्रिया क्या है तथा इसके अध्ययन की कौन-कौन सी विधियां हैं? साथ ही, हम यह देखने का भी प्रयास करेंगें कि व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करने वाले कारकों में कौन-कौन से जैविक व सामाजिक-सांस्कृतिक या वातावरणीय कारकों का क्या महत्व हैं?

2.2 उद्देश्य-

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप-

1. व्यक्तित्व विकास के संप्रत्यय को स्पष्ट कर सकें,

2.व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया को रेखांकित कर सकें तथा

3.व्यक्तित्व के विकास में जैविक एवं वातावरणीय कारकों के सापेक्षिक महत्व को प्रतिपादित कर सकें।

2.3 व्यक्तित्व का संप्रत्यय-

व्यक्तित्व का संप्रत्यय यूनानी नाटकों में नायकों द्वारा इस्तेमाल किये जाने वाले नकाब से सम्बद्ध है जिसे ''परसोना'' कहा जाता था। परसोना लैटिन शब्द है। इसी का अंग्रेजी अनुवाद है-''पर्सनालिटी'' तथा इसी को हिन्दी में ''व्यक्तित्व'' की संज्ञा दी जाती है। स्पष्ट है कि व्यक्तित्व अपने शाब्दिक अर्थ में बाहरी वेशभूषा तथा दिखावा है। जिस व्यक्ति का बाहरी दिखावा जितना ही भड़कीला होगा, उसका व्यक्तित्व उतना ही अच्छा व प्रभावशाली समझा जायेगा।

व्यक्तित्व का उसके शाब्दिक अर्थ से जुड़ा यह सम्प्रत्यय कालांतर में खारिज कर दिया गया और आधुनिक मनोवैज्ञानिकों ने इस काफी वैज्ञानिक रूप में परिभाषित करते हुए बताया कि ''व्यक्तित्व व्यक्ति

के चरित्र, चित्त प्रकृति, ज्ञानशक्ति तथा शरीर गठन का करीब-करीब एक स्थायी एवं टिकाऊ संगठन है जो वातावरण में उसके अपूर्व समायोजन का निर्धारण करता है (आइजेंक, 1952)''।

व्यक्तित्व की इस वैज्ञानिक परिभाषा से स्पष्ट है कि व्यक्तित्व व्यक्ति के भीतरी गुणों तथा बाहरी गुणों का समन्वय है। व्यक्तित्व के सम्बन्ध में ऐसा ही विचार ऑलपोर्ट (1937) ने प्रस्तुत किया था। उनका कहना था कि ''व्यक्तित्व व्यक्ति के भीतर उन मनोदैहिक तंत्रों का गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण में उसके अपूर्व अभियोजन को निर्धारित करता है।

व्यक्तित्व के सम्बन्ध में ऑलपोर्ट और आइजेंक की राय लगभग एक समान ही है। दोनों ने ही व्यक्तित्व के निर्धारण में उसके आन्तरिक पक्षों एवं बाह्य पक्षों के महत्व पर प्रकाश डाला है, परन्तु भीतरी गुणों पर तुलनात्मक रूप से अधिक बल दिया है। व्यवहार पक्ष पर उतना बल नहीं दिया है।

2.4 व्यक्तित्व विकास का सम्प्रत्यय-

व्यक्तित्व विकास का संप्रत्यय एक ऐसा संप्रत्यय है जो व्यक्तित्व के मनोवैज्ञानिकों को सर्वाधिक उलझा कर रखा है। इस संम्प्रत्यय को समझने के लिए विकास का अर्थ समझना आवश्यक है। विकास से तात्पर्य समय बीतने के साथ परिपक्वता तथा पर्यावरण के साथ होने वाली अंतःक्रिया के परिणामस्वरूप व्यक्ति की अभिवृद्धि तथा क्षमता में होने वाले परिवर्तन की प्रक्रिया से है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि परिपक्वता तथा अनुभूति के परिणामस्वरूप होने वाले परिवर्तनों के उत्तरोत्तर क्रम को विकास कहा जाता है। वॉन डेन डीले (1976) के अनुसार विकास से आशय गुणात्मक परिवर्तन से होता है। इसका मतलब यह हुआ कि विकास का अर्थ केवल यही नहीं होता है कि व्यक्ति की लम्बाई दो इंच बढ़ गयी है या उसका वजन पाँच किलोग्राम पहले से अधिक हो गया है या उसकी क्षमता पहले से अधिक हो गयी है। बल्कि विकास की प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया होती है जिसमें बहुत सारी संरचनाएँ तथा क्रियाएँ सम्मिलित होती हैं।

जहाँ तक व्यक्तित्व विकास का प्रश्न है, इससे तात्पर्य व्यक्तित्व पैटर्न के विकास से होता है। व्यक्तित्व पैटर्न में सभी मनोदैहिक तंत्र जिनसे व्यक्ति का व्यक्तित्व बना होता है, आपस में अंतर्सम्बंधित होते हैं और एक दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। व्यक्तित्व पैटर्न के दो मुख्य तत्व होते हैं-आत्म-संप्रत्यय तथा शीलगुण।

1. आत्म-संप्रत्यय-

आत्म-संप्रत्यय से तात्पर्य उस तथ्य से होता है जिसमें व्यक्ति यह समझता है कि वह कौन है तथा वह क्या है। सचमुच में यह एक तरह का 'दर्पण बिम्ब' होता है जो व्यक्ति द्वारा की गई अपनी भूमिकाओं, दूसरों के साथ संबंधों तथा उसके प्रति दूसरों द्वारा की गई प्रतिक्रियाओं द्वारा मूलतः निर्धारित होता है।

प्रत्येक आत्म-संप्रत्यय के दो पहलू होते हैं- दैहिक तथा मनोवैज्ञानिक। दैहिक पहलू में वे सारे संप्रत्यय सम्मिलित होते हैं जो व्यक्ति के अपने रूप-रंग, यौन उपयुक्तता, किये जाने वाले व्यवहार के संदर्भ में शरीर का महत्व तथा दूसरे लोगों से उनके शरीर को मिलने वाली प्रतिष्ठा आदि के सम्बन्ध में होते हैं।

मनोवैज्ञानिक पहलू में वे सारे संप्रत्यय सम्मिलित होते हैं जो व्यक्ति के अपनी क्षमता तथा अक्षमता, अपनी योग्यता तथा अन्य लोगों के साथ संबंध आदि के बारे में होते हैं। प्रारंभ में ये दोनों पहलुएँ अलग-अलग होते हैं परंतु जैसे व्यक्तित्व का विकास होते जाता है, वे आपस में मिलकर एक हो जाते हैं।

2. शीलगुण-

शीलगुण से तात्पर्य व्यवहार या समायोजी पैटर्न के विशिष्ट गुणों से होता है। बुद्धि, प्रभुत्व, सहनशीलता, आदि शीलगुण के कुछ उदाहरण हैं। व्यक्तित्व का शीलगुण आत्म-संप्रत्यय से संघटित होता है तथा आत्म-संप्रत्यय से प्रभावित भी होता है। कुछ शीलगुण तो अलग-अलग होते हैं परंतु कुछ ऐसे होते हैं जो व्यवहार के संबंधित पैटर्न में संयोजित होते हैं जिन्हें संलक्षण कहा जाता है। शीलगुण की दो विशिष्ट विशेषताएँ होती हैं- वैयक्तिकता तथा संगतता। वैयक्तिकता से तात्पर्य यह होता है कि किसी शीलगुण की मात्रा प्रत्येक व्यक्ति में एक समान न होकर किसी में कम तथा किसी में अधिक होती है। संगतता से तात्पर्य यह होता है कि शीलगुण के कारण ही व्यक्ति समान परिस्थिति में समान ढंग से व्यवहार करता है।

2.4.1 व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया-

मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया विभिन्न अवस्थाओं में संपन्न होती है। इस अवस्था की अपनी कुछ खास तो कुछ सामान्य विशेषता होती है। आइये, पहले ऐसे विकास की कुछ सामान्य विशेषताओं पर नजर डालें।

1. व्यक्तित्व विकास में आरंभिक नींव महत्वपूर्ण होते हैं-

इसका मतलब यह हुआ कि व्यक्तित्व विकास की आरंभिक अवस्थाओं में जो मनोवृत्ति, आदत तथा व्यवहार का पैटर्न स्थापित होता है, वह बहुत हद तक बाद के व्यक्तित्व विकास में होने वाले परिवर्तनों को निर्धारित करता है।

2. व्यक्तित्व विकास में परिपक्वता तथा अधिगम दोनों की भूमिका प्रधान होती है-

व्यक्तित्व विकास में परिपक्वता मौलिक संसाधनों को प्रदान करता है जिसके अनुसार व्यक्ति सीखकर व्यवहार के सामान्य क्रम एवं पैटर्न को दिखाता है।

3. विकास का एक निश्चित एवं पूर्वानुमेय पैटर्न होता है-

जब तक पर्यावरण या अन्य समान कारकों का हस्तक्षेप नहीं होता है व्यक्ति के विभिन्न अवस्थाओं में होने वाला विकास एक निश्चत पैटर्न के अनुसार चलता रहता है जो पूर्वानुमेय होता है। अब तक कोई ऐसा सबूत प्राप्त नहीं है जिसके आधार पर यह कहा जाय कि व्यक्तित्व का अपना विकास विशेष पैटर्न होता है। हाँ, यह अवश्य होता है कि व्यक्तित्व विकास का दर अलग-अलग होता है।

4. सभी व्यक्ति एक-दूसरे से भिन्न होते हैं-

व्यक्तित्व का विकास इस ढंग से होता है कि सभी व्यक्ति एक दूसरे से भिन्न होते हैं। यह विशेषता अभिन्न जुड़वों में भी पायी जाती है।

5. व्यक्तित्व विकास के प्रत्येक अवस्था की अपनी विशेषता होती है-

व्यक्तित्व विकास के प्रत्येक अवस्था में व्यक्ति कुछ खास ढंग का विशेष व्यवहार करता है। प्रत्येक अवस्था में कुछ अवधि संतुलन की होती है तो कुछ अवधि असंतुलन की होती है। संतुलन की अवधि में व्यक्ति अपने वातावरण की माँगों के साथ आसानी से समायोजन कर लेता है तथा उत्तम समायोजन करता है। असंतुलन की अवधि में व्यक्ति अपने वातावरण के माँगों के साथ ठीक ढंग से समायोजन नहीं कर पाता है जिससे सामाजिक समायोजन में कठिनाइयाँ होती है।

6. व्यक्तित्व विकास के प्रत्येक अवस्था में कुछ जोखिम होते हैं-

विकास का प्रत्येक अवस्था में कुछ भौतिक, मनोवैज्ञानिक या पर्यावरणी जोखिम कारक होते हैं जिनसे व्यक्तित्व विकास थोड़ा अवस्द्ध होते हैं।

7. व्यक्तित्व विकास पर सांस्कृतिक परिवर्तनों का प्रभाव पड़ता है-

प्रत्येक व्यक्ति एक परिवार में जन्म लेता है और उस परिवार के सांस्कृतिक मानकों एवं मूल्यों से बँधा होता है। अतः वह स्वाभाविक है कि व्यक्तित्व विकास पर उन सांस्कृतिक परिवर्तनों का प्रभाव पड़े।

8. व्यक्तित्व विकास के प्रत्येक अवस्था की कुछ अपनी सामाजिक प्रत्याशाएं होती हैं-

विकास की प्रत्येक अवस्था में व्यक्ति कुछ कौशलों को सीखता है तथा व्यवहार के विभिन्न अनुमोदित पैटर्न को सीखता है। इसे हैविंगहर्स्ट (1953) ने विकासात्मक कार्य कहा है।

स्पष्ट हुआ कि व्यक्तित्व विकास की विभिन्न अवस्थाओं की अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं। आइए, अब व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया पर चर्चा करें।

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया निम्नांकित अवस्थाओं में संपन्न होती है-

1. पूर्वप्रसूत अवस्था में व्यक्तित्व विकास
2. शैश्वावस्था में व्यक्तित्व विकास
3. बचपनावस्था में व्यक्तित्व विकास
4. बाल्यावस्था में व्यक्तित्व विकास
5. पूर्वकिशोरावस्था में व्यक्तित्व विकास
6. किशोरावस्था में व्यक्तित्व विकास

7. प्रौढ़ावस्था में व्यक्तित्व विकास

8. मध्यावस्था में व्यक्तिव विकास

9. वृद्धावस्था में व्यक्तित्व विकास

इन सबों का वर्णन इस प्रकार हैं-

1. पूर्वप्रसूति अवस्था में व्यक्तिव विकास-

पूर्व प्रसूति काल गर्भधारण से लेकर जन्म तक की अवधि है जो सामान्यतः 280 दिनों तक विस्तरित रहता है। यह अवस्था तीन भागों में बँटी होती है- जायगोट की अवस्था (गर्भधारण से 14 दिनों की अवधि), भ्रूण की अवस्था (दूसरा सप्ताह से आठवें सप्ताह तक की अवधि) तथा फेटस की अवस्था (9वें सप्ताह से जन्म तक की अवधि)। अध्ययनों से पता चलता है कि इस अवधि में हुई घटनाओं का माँ के गर्भ में पल रहे बच्चे के व्यक्तित्व विकास पर काफी प्रभाव पड़ता है। बोवेस एवं उनके सहयोगियों (1970) ने अपने अध्ययन में यह पाया है कि यदि गर्भवती माता किसी कारण से कुनैन का उपयोग करती है, तो उनके बच्चे में बहरापन रोग हो जाता है। उसी तरह एसपिरीन तथा एण्टीबायटिक्स का उपयोग करने से बच्चे में हृदय रोग की संभावना बढ़ जाती है। उसी तरह गर्भावस्था मंे ं जब माताएँ कुपोषण का शिकार हो जाती है, तो उनके बच्चों में मानसिक मंदता उत्पन्न होने की संभावना अधिक हो जाती है। इतना ही नहीं, ऐसे बच्चों का शारीरिक विकास भी काफी मंदित हो जाता है तथा कई तरह के स्नायविक दोष उत्पन्न हो जाते हैं जिनसे उनका व्यक्तिव विकास मंदित हो जाता है।

2. शैशवावस्था में व्यक्तिव विकास-

शैशवावस्था जन्म से लेकर दो सप्ताह तक की अवधि को कहा जाता है तथा यह अवस्था सभी अवस्थाओं से छोटी होती है। इसे दो भागों में बाँटा गया है- प्रसव अवधि, जो जन्म से लगभग 30 मिनट तक का होता है तथा न्योनेट की अवधि, जो नाभि (नाड़ी) को काटकर बाँधने से दूसरे सप्ताह तक की अवधि को कहा जाता है। शैशवावस्था की क्रियाओं एवं घटनाओं से न केवल भविष्य में विकसित होने वाले व्यक्तित्व के पैटर्न का पता चलता है बल्कि इनका ऐसे व्यक्तित्व विकास पर काफी प्रभाव भी पड़ता है। इस अवधि में बच्चों में तरह-तरह की भिन्नता पायी जाती है। कुछ बच्चे अधिक रूदन करते हैं तो कोई कम। कुछ बच्चों द्वारा पेशीय क्रियाएँ अधिक होती हैं तो कुछ बच्चों द्वारा ऐसी क्रियाएँ कम एवं अनियंत्रित होती हैं। कुछ बच्चों में अमुक तरह के प्रतिवर्त क्रियाएँ अधिक होते हैं। कुछ बच्चे बहुत सोते हैं तो इस अवधि में कुछ बच्चे ऐसे भी होते हैं जो तुलनात्मक रूप से कम सोते हैं। इन सभी तरह की क्रियाओं का व्यक्तित्व विकास पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ते देखा गया है। हरलॉक (1979) के अनुसार जो बच्चे इस अवधि में अधिक पेशीय क्रियाएँ जैसे-हाथ पैर फेंकना आदि करते हैं, उनमें आगे चलकर समायोजन संबंधी कठिनाइयाँ कम होती हैं, क्योंकि उनका व्यक्तित्व विकास सामान्य होता है।

3. बचपनावस्था में व्यक्तित्व विकास-

बचपनावस्था की शुरूआत जन्म के दो सप्ताह बाद से प्रारंभ होकर अगले दो साल तक बनी होती है। बचपनावस्था को व्यक्तित्व विकास का विवेचित या क्रान्तिक अवस्था कहा जाता है। इसे विवेचित अवस्था इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसी अवधि में उन सारी चीजों की नींव पड़ती है जिस पर वयस्क व्यक्तित्व संरचना का आगे चलकर निर्माण होता है। निम्नांकित पाँच ऐसे सबूत प्राप्त हैं जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि वयस्क व्यक्तित्व संरचना की नींव इस अवधि में पड़ती है-

क. कोट्स एवं उनके सहयोगियों (1972) तथा रटर (1972) ने अपने-अपने अध्ययनों के आधार पर यह बतलाया है कि इस अवधि में बच्चों में सांवेगिक वंचन होने पर (जैसा कि घर में माँ द्वारा बच्चे के साथ अंतक्रिया करने के लिए समयाभाव के होने से या बच्चा को किसी संस्थान में रख देने से प्रायः होता है) आगे उनके व्यक्तित्व विकास में बहुत सारी कमियाँ उत्पन्न होते पायी गयी है। प्रायः ऐसे वयस्क सांवेगिक रूप से अस्थिर प्रकृति के होते देखे गए हैं।

ख. चूँकि इस अवधि में बच्चे की अन्तःक्रिया माँ के साथ सबसे ज्यादा होती हैं, अतः माँ के अपने व्यक्तित्व तथा बच्चे के साथ उसके संबंध का प्रत्यक्ष प्रभाव बच्चे के व्यक्तित्व विकास पर पड़ता है। यदि यह संबंध अनुकूल तथा स्नेहमयी होता है, तो बच्चों में धनात्मक आत्म-संप्रत्यय का विकास होता है।

ग. इस अवधि में जब कोई अप्रत्याशित तथा प्रतिकूल घटना घटती है, तो उस समय बच्चों में विकसित हो रहे शीलगुण पर बुरा प्रभाव पड़ता है। जैसे- स्टोन एवं चर्च (1973) ने अपने अध्ययन में पाया कि इस अवधि में जब बच्चों में स्वतंत्रता का शीलगुण का निर्माण हो रहा होता है और यदि उस समय माता-पिता से उसे अतिसंरक्षण मिलता है, तो यह बच्चे के लिए हानिकारक सिद्ध होता है और उस शीलगुण का विकास अवरूद्ध हो जाता है।

घ. जराई एवं स्कीनफिल्ड (1968) के अध्ययन के अनुसार इसी अवस्था में बच्चों में यौन अंतर की नींव भी पड़ जाती है जो बाद में पुरूष बच्चा को एक ढंग से तथा स्त्री बच्चा को दूसरे ढंग से व्यवहार करने एवं सोचने के लिए बाध्य करता है।

ड. इस अवस्था में व्यक्तित्व पैटर्न का सार अर्थात् आत्म-संप्रत्यय का जो जन्म होता है, वह बाद में करीब-करीब वैसा ही रह जाता है। विशेष पर्यावरणी परिस्थिति के होने पर उसमें हल्का-सा परिवर्तन होता है। जैसे-जैसे समय बीतता जाता है, व्यक्तित्व का यह सार कम-से-कम लचीला होता चला जाता है। वैसी परिस्थिति में व्यक्तित्व शीलगुणों में किसी तरह के परिवर्तन से व्यक्तित्व संतुलन बिगड़ जाता है।

बचपनावस्था के कुछ व्यक्तित्व शीलगुणों में परिवर्तन होता है। इस परिवर्तन का स्वरूप मात्रात्मक या गुणात्मक कुछ भी हो सकता है। मात्रात्मक परिवर्तन होने पर पहले से उपस्थित शीलगुण या तो और

मजबूत हो जाते हैं या कमजोर हो जाते हैं। गुणात्मक परिवर्तन होने पर एक शीलगुण दूसरे शीलगुण द्वारा प्रतिस्थापित हो जाता है।

4. बाल्यावस्था में व्यक्तित्व विकास-

बाल्यावस्था 2 वर्ष की आयु से प्रारंभ होकर 12 वर्ष की आयु तक की होती है। इसमें 2 वर्ष से 6 वर्ष की आयु तक को आरंभिक बाल्यावस्था तथा 6 से 12 वर्ष की आयु तक को उत्तर बाल्यावस्था कहा जाता है। बाल्यावस्था को प्राक्स्कूल अवस्था या प्राक् टोली अवस्था तथा उत्तर बाल्यावस्था को टोली अवस्था भी कहा जाता है। इस अवस्था में बच्चों का शारीरिक विकास, भाषा विकास, सांवेगिक विकास, सामाजिक विकास, मानसिक एवं संज्ञानात्मक विकास तेजी से होता है। इस अवस्था में शरीर की मांशपेशियाँ अधिक गठीली और मजबूत हो जाती है जिससे बचपन वाली आकृति धीरे-धीरे खत्म होने लगती है। यह अवस्था समाप्त होते-होते बालकों में 32 स्थायी दाँतों में से 28 स्थायी दाँत निकल आते हैं और बाकी चार स्थायी दाँत किशोरावस्था में निकलते हैं। इस अवस्था में बालकों में शब्दावली निर्माण में वृद्धि, उच्चारण में स्पष्टता तथा जटिल वाक्यों का प्रयोग आदि अधिक पाया जाता है। इनके संभाषण अब अधिक नियंत्रित एवं तथ्य पूर्ण दिखाई पड़ने लगते हैं। इनका सांवेगिक पैटर्न भी अब पहले की तुलना में अधिक परिपक्व हो जाता है। बाल्यावस्था समाप्त होते-होते, सांवेगिक अभिव्यक्ति का ढंग अधिक परिपक्व हो जाता है। वे सामाजिक रूप से बहिष्कृत संवेगों की अभिव्यक्ति नहीं करते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि ऐसा करने से उसे उन्हें दूसरों का सामाजिक अनुमोदन प्राप्त नहीं हो सकेगा। मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गए अध्ययनों से यह संयुक्त रूप से स्पष्ट हुआ है कि बाल्यावस्था समाप्त होते ही बच्चों के व्यक्तित्व में कुछ खास प्रकार के सामाजिक व्यवहार विकसित होते हैं जिनमें प्रमुख हैं- सामाजिक अनुमोदन की प्राप्ति के लिए प्रयास करना, किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिये प्रतियोगिता करना, उत्तरदायित्व लेना, सामाजिक सूझ, सामाजिक विभेद, पूर्वाग्रह तथा यौन प्रतिरोध आदि दिखाना। इस अवस्था तक व्यक्ति में 90 प्रतिशत मानसिक विकास पूरा हो जाता है तथा वह तरह-तरह के परिपक्व संज्ञानात्मक व्यवहार करने लगता है।

5. पूर्व किशोरावस्था में व्यक्तित्व विकास-

यह अवस्था सामान्यतः 11-12 वर्ष से 13-14 वर्ष तक की होती है। इस अवस्था में व्यक्तित्व विकास संबंधी परिवर्तन काफी स्पष्ट होते हैं और लड़कों की तुलना लड़कियों का व्यक्तित्व विकास अधिक प्रभावित होता है क्योंकि यह वह अवस्था होती है जहाँ लड़कियों पर सामाजिक प्रतिबंध लगना प्रारंभ हो जाते हैं। मोरे (1989) द्वारा किये गये अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि इस अवस्था में व्यक्ति में चिंता, चिड़चिड़ापन तथा उदासी आदि अधिक बढ़ जाता है। इस अवधि में असहयोगिता, किसी बात को प्रायः नहीं मानना, विपरीत लिंग के व्यक्तियों के साथ झगड़ना आदि मुख्य रूप से पाये जाते हैं। लड़कों तथा लड़कियों दोनों में इस अवस्था में प्रायः सरदर्द, पीठ दर्द, तथा पूरे शरीर में सामान्य दर्द की शिकायत भी होती है जो स्पष्टतः उनके ग्रन्थीय विकास के कारण होते हैं।

6. किशोरावस्था में व्यक्तित्व विकास-

यह अवस्था 14-15 साल की आयु से लगभग 19-20 साल की आयु तक होती है। व्यक्तित्व विकास की यह अवस्था एक महत्वपूर्ण अवस्था है क्योंकि इसमें बहुत तरह के दैहिक एवं मनोवैज्ञानिक परिवर्तन होते हैं, जिसका असर व्यक्तित्व विकास पर सीधा पड़ता है इसे 'तनाव एवं तूफान की अवस्था' भी कहा गया है क्योंकि इसमें बहुत तरह की समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं जिनसे व्यक्तित्व पैटर्न का विकास प्रभावित होता है। लड़के एवं लड़कियों दोनों के शारीरिक ऊँचाई, भार, शरीर के अंगों का अनुपात, यौन अंगों एवं गौण यौन विशेषताओं में पर्याप्त परिवर्तन आते हैं जिनका असर व्यक्तित्व विकास पर सीधा पड़ता है। गैसेल तथा मोरे (1965) ने अपने अध्ययन में पाया कि 16-17 साल के बालक-बालिकाओं दोनों में ही क्रोध के संवेग की तीव्रता अधिक होती है और फिर धीरे-धीरे इसकी तीव्रता कम हो जाती है। इनमें विषमलैंगिकता का शीलगुण भी विकसित होने लगता है क्योंकि लड़के एवं लड़कियाँ अपने विपरीत यौन के व्यक्तियों के साथ मिलने-जुलने में काफी आनन्द उठाते हैं। पियाजे (1965)के अनुसार इस अवस्था में व्यक्ति का संज्ञानात्मक विकास एक नया रूख अपनाता है और इनके द्वारा क्रमबद्ध निगमनात्मक चिंतन का उपयोग किसी समस्या के समाधान में अधिक होने लगता है। इस अवस्था में लड़के एवं लड़कियों में आर्थिक स्वतंत्रता की प्राप्ति की ओर अग्रसर होने की प्रवृत्ति भी अधिक होती है। इस अवस्था में जो व्यक्ति लक्ष्य निर्धारण करने में वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण अपनाते हैं तथा जो अपनी क्षमताओं एवं कमजोरियों का सही मूल्'यांकन करते हैं, उनका व्यक्तित्व पैटर्न का विकास अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त एवं समुचित होता है।

7. प्रौढ़ावस्था में व्यक्तित्व विकास-

यह अवस्था 21 वर्ष से लगभग 40 वर्ष की होती है। इस अवस्था में सामान्यतः व्यक्ति शादी करके अपना घर-परिवार बसाता है और किसी नौकरी या व्यवसाय में लग जाता है तथा अपने आत्म विकास को मजबूत कर आगे बढ़ाता है। इन्हीं कारणों से इसे व्यवस्था या बसाने की अवस्था कहा गया है। इस अवस्था में व्यक्ति की अभिरूचियाँ थोड़ी सीमित हो जाती है। इनकी व्यक्तिगत अभिरूचियाँ, सामाजिक अभिरूचियाँ तथा मनोरंजन से संबद्ध अभिरूचियाँ किशोरावस्था के समान बहुत अधिक न होकर सीमित हो जाती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि उनमें कुछ नये-नये शीलगुणों का विकास होने लगता है। इस अवस्था में नयी-नयी जवाबदेहियाँ व्यक्ति के कंधे पर आ जाती है। व्यक्ति पर एक तरफ अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियाँ होती हैं तो दूसरी तरफ अपने व्यवसाय या नौकरी से संबद्ध जिम्मेवारियाँ। इससे व्यक्ति की जिंदगी थोड़ा तनावयुक्त हो जाती है। प्रायः वह अपनी समस्याओं का समाधान स्वतंत्र रूप से करना चाहता है। इस अभ्यास से उसमें सर्जनात्मकता का गुण भी विकसित होता है। चाहे इस अवस्था में वयस्क विवाहित या अविवाहित हो, अगर उनका सामाजिक-आर्थिक स्तर अनुकूल होता है, तो उनकी सामाजिक क्रियाएँ अधिक बढ़ जाती है। परंतु यदि उनका सामाजिक आर्थिक स्तर प्रतिकूल होता है, तो ऐसी सामाजिक क्रियाएँ काफी कम एवं सीमित ही हो पाती हैं। इस उम्र में अविवाहित व्यक्ति विवाहित व्यक्ति की तुलना में सामान्यतः अधिक सामाजिक क्रियाओं में भाग लेते हैं। अतः इनमें सामाजिकता का शीलगुण तुलनात्मक रूप से अधिक तेजी से विकसित होता है।

8. मध्यावस्था में व्यक्तित्व विकास-

मध्यावस्था या मध्यवयस्कावस्था की अवधि 40 से 60 वर्ष की होती है। इस अवस्था में व्यक्ति में कई कारणों से तनाव अधिक होता पाया गया है। मारमोर (1967) के अनुसार इस अवस्था में चार तरह के तनाव मुख्य रूप से होते हैं जिनका व्यक्तित्व पैटर्न के विकास पर सीधा असर पड़ता है।

क. दैहिक तनाव- उम्र के परिणामस्वरूप गिरते स्वास्थ्य के कारण इस तरह का तनाव उत्पन्न होता है।

ख. सांस्कृतिक तनाव- इस तरह के तनाव का मुख्य कारण सामाजिक परिवेश में यौवन-शक्ति को उनके तुलना में अधिक महत्व दिया गया होता है।

ग. आर्थिक तनाव- इसका कारण सेवामुक्त होने पर आय में कमी तथा इस सीमित आय से परिवार के सदस्यों को शिक्षित करके स्तर संकेत प्रदान करने के प्रयास से होता है।

घ. मनोवैज्ञानिक तनाव- इस तरह के तनाव के कई कारण होते हैं जिनमें पति या पत्नी का देहांत, घर से बच्चों का व्यवसाय या नौकरी पर चला जाना, वैवाहिक जीवन का ऊब, मृत्यु के करीब होने का अनुमान आदि प्रमुख है।

सामान्यतः यह कहा जाता है कि इस अवस्था में दैहिक क्षमता में गिरावट आने के साथ-ही-साथ मानसिक क्षमता में भी गिरावट आती है। परंतु प्रयोगात्मक सबूत इसके विपरीत हैं। टरमेन एवं ओडेन (1959)ने पुरूषों तथा महिलाओं के समूह पर एक अनुदैर्ध्य अध्ययन किया और पाया कि उच्च बौद्धिक क्षमता वाले व्यक्तियों में इस मध्यावस्था में भी बौद्धिक तथा मानसिक ह्रास के कोई सबूत नहीं मिलते हैं। केसलर (1976) ने भी अपने अध्ययन में इस तथ्य की संपुष्टि करते हुए कहा है कि ऐसे व्यक्तियों में तो इस अवस्था में समस्या-समाधान तथा शाब्दिक क्षमताएँ और विकसित हो जाती हैं। मध्यावस्था में कुछ व्यक्तियों में सामाजिक समायोजन पहले से परिपक्व हो जाता है क्योंकि उनके पास अब सामाजिक क्रियाओं के लिये पर्याप्त समय मिलता है।

9. वृद्धावस्था में व्यक्ति विकास-

जीवन अवधि की अंतिम अवस्था वृद्धावस्था होती है जो सामान्यतः 60 वर्ष से प्रारंभ होकर मृत्यु तक विस्तारित होती है। 60 से 70 साल की अवधि को आरंभिक वृद्धावस्था तथा 70 से मृत्यु तक की अवधि को प्रगत वृद्धावस्था कहा जाता है। इस अवस्था में कुछ विशेष दैहिक एवं मनोवैज्ञानिक परिवर्तन होते हैं जिनसे वृद्धों के समायोजन क्षमता पर बुरा प्रभाव पड़ता है तथा उनके खुशियों को कुप्रभावित करता है। हरलाँक (1989) के अध्ययनानुसार इस अवस्था में व्यक्ति के सामान्य रूप रंग एवं डील-डौल में स्पष्ट परिवर्तन आते हैं। इतना ही नहीं, उनमें आंतरिक परिवर्तन भी होते हैं जिनसे उनकी संवेदी एवं पेशीय क्षमताएँ काफी प्रभावित हो जाती हैं और व्यक्तित्व की सामान्य समयोजन क्षमता कम हो जाती है। इन परिवर्तनों का कारण दैहिक एवं मनोवैज्ञानिक दोनों ही होते हैं। दैहिक कारणों में शक्ति की कमी, जोड़-संधियों में कड़ापन, हाथ, सिर एवं निम्न जबड़े में कमी मुख्य है। मनोवैज्ञानिक कारणों में उस हीनता का भाव है जो उनमें तब पनपता है जब वह अपनी तुलना अन्य कम उम्र के व्यक्तियों के कौशल, शक्ति एवं

क्षमताओं से करता है। ऐसे भाव से उनमें सांवेगिक तनाव उत्पन्न होता है जो उनके व्यक्तित्व के सांवेगिक विकास और फिर सामाजिक विकास को कुप्रभावित करता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि व्यक्तित्व विकास जीवन अवधि के विभिन्न अवस्थाओं में चलने वाली एक निरंतर प्रक्रिया है जिसका इन सभी अवस्थाओं में व्यक्तित्व पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है।

2.5 व्यक्तित्व के निर्धारक/प्रभावक-

जैसा कि हमने देखा- व्यक्तित्व के विकास में निरन्तरता पाई जाती है जिसका प्रारंभ गर्भाधान के समय से ही हो जाता है और मृत्यु पर्यन्त विकास की यह प्रक्रिया चलती रहती है। यह कभी रूकती नहीं। हाँ, जीवन के प्रारंभिक वर्षों में विकास की गति कुछ तेज जरूर होती है। इन बातों की पुष्टि व्यक्तित्व-विकास की प्रत्येक अवस्था का क्रमशः अध्ययन से प्राप्त आलेखों या विवरणों से होती है। परंतु, यदि व्यक्ति के विकासक्रम का ऐतिहासिक आलेख उपलब्ध न हो और हम विकास के किसी एक या दो अवस्थाओं का ही अध्ययन करें, तो निरंतरता का यह क्रम टूटता हुआ भी दृष्टिगोचर हो सकता है; क्योंकि व्यक्तित्व के कुछ शीलगुणों को तेजी से उत्पन्न होते हुए भी देखा जा सकता है। जैसे- एक सामान्य व्यक्ति अपने विकास की किसी खास अवस्था में कुछ असामान्य लक्षणों को प्रदर्शित करता है। यहाँ शीलगुण के विकासक्रम की निरंतरता टूट जाती है और एक नया मोड़ ले लेती है। स्पष्ट है कि व्यक्तित्व के विकास में उछालद्व टूट या क्रम की रूकावट आदि के लक्षण भी देखे जाते हैं।

कुल मिलाकर व्यक्तित्व का विशिष्ट संगठन और पुनः संगठन निरंतर विकासात्मक तंत्र का ही प्रतिफल है तथा व्यक्तित्व के विकास के क्रम में अनेक जैविक एवं वातावरण से संबद्ध तत्वों का प्रभाव पड़ता है। तात्पर्य यह है कि अन्य सभी घटनाओं की ही तरह व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया भी कारण एवं फल के नियम द्वारा शासित होती है तथा इसमें 'अपूर्वता या विशिष्टता' आती है। इन दोनों प्रकार के विभिन्न कारक तत्वों को व्यक्तित्व का निर्धारक या प्रभावक भी कहते हैं।

2.5.1 व्यक्तित्व के जैविक निर्धारक-

व्यक्तित्व के जैविक निर्धारकों से तात्पर्य उन कारकों से है जो आनुवंशिक होते है। इनका निर्धारण वातावरण से नहीं, बल्कि माँ-बाप एवं पुरखों से प्राप्त वंशानुक्रम से होता है। व्यक्तित्व के विकास या गठन पर वंशानुक्रम का व्यापक प्रभाव पड़ता है। हालाँकि, व्यक्तित्व प्रत्यक्षतः वंशगत नहीं होता। पर, किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास किस ढंग का होगा, यह वंशानुक्रम द्वारा पूर्व-उद्यत होता है और व्यक्तित्व का विकास पूर्व-उद्यत रूप में होता है या नहीं और यदि होता है तो किस हद तक पूर्व-उद्यत अथवा वंशानुक्रम द्वारा पूर्वनिर्धारित ढंग के अनुरूप होता है- यह वातावरण के कुछ तत्वों पर निर्भर करता है।

व्यक्तित्व विकास में वंशानुक्रम के पूर्व-उद्यत प्रभाव को हम छोटे-छोटे शिशुओं के व्यवहारों का निरीक्षण कर समझ सकते हैं। छोटे शिशुओं में अर्जित आदतों या शिक्षण का प्रभाव नहीं रहता। फिर भी, शिशुओं की विशेषताओं में महत्वपूर्ण भिन्नता पाई जाती है। उदाहरणार्थ-एक शिशु अत्यंत सक्रिय रहता है तो

दूसरा आलसी, एक जोर-जोर से रोता और चिल्लाता है तो दूसरा शांत रहता है। कभी-कभी हमें शिशुरोग विशेषज्ञों की सलाह भी लेने की आवश्यकता पड़ जाती है। शिशुओं की प्रवृत्तियों में ये विभिन्नताएँ जन्मजात यानी वंशानुगत होती हैं, जिनके अनुरूप ही उनके व्यक्तित्व का विकास होता है।

मनुष्यों के व्यक्तित्व पर वंशानुक्रम के प्रभावों का अध्ययन करने हेतु विद्वानों ने परिवार जीवनियों का सहारा लिया है। उनका विश्वास था कि कोई लक्षण यदि परिवार की पीढ़ी-दर-पीढ़ी में व्याप्त हो, तो उस लक्षण को वंशानुक्रम से प्राप्त माना जा सकता है। इस विश्वास की पुष्टि के लिए अनेक अध्ययन हुए हैं। गाल्टन ने 1869 ई0 में प्रकाशित अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ''हेरिडिटरी जीनियस'' एवं 1873 ई0 में प्रकाशित ''इंग्लिश मेन ऑफ साइंस'' में अपने इस विश्वास पर जोर देते हुए बताया है कि 'प्रतिष्ठा' और 'श्रेष्ठता' कुछ ही परिवारों में सीमित रहती है। गोडार्ड ने ज्यूक परिवारों का अध्ययन कई पीढ़ियों तक किया और पाया कि जिन परिवारों की माताएँ मंदबुद्धि की थीं, उनके बच्चे भी बुद्धिहीन थे। इसी प्रकार की बात रोगी और अपराधी प्रवृत्ति वाले व्यक्तित्यों के साथ भी पाई गई। गोडार्ड ने कालिकाक परिवार का अध्ययन कर भी वंशानुक्रम के महत्व को प्रमाणित किया है। कालिकाक मार्टिन नाम के एक सैनिक के परिवार को काल्पनिक नाम दिया है जिसने अमेरिका की क्रांति के जमाने में एक मानसिक रूप से दुर्बल लड़की और फिर बाद में मानसिक रूप से स्वस्थ महिला के साथ शादी कर ली थी। इन दोनों महिलाओं से उत्पन्न संतानों से परिवार का एक सिलसिला चला। देखा गया कि मानसिक रूप से दुर्बल महिला की संतानों से बने परिवारों के प्रायः सभी बच्चे भी मानसिक दुर्बलता से ग्रस्त थे और मानसिक रूप से स्वस्थ महिला की संतानों से बने परिवारों के प्रायः सभी बच्चे भी स्वस्थ एवं औसत या उससे अधिक बुद्धि के थे।

किंतु, यहाँ स्मरणीय होना चाहिए, कि परिवार जीवनियों पर आधारित ये साक्ष्य बहुत अधिक विश्वसनीय नहीं है; क्योंकि इन अध्ययनों में वंशानुक्रम से प्राप्त गुणों की जानकारी पर्याप्त नहीं थी और साथ ही वातावरण पर नियंत्रण का भी अभाव था।

व्यक्तित्व पर वंशानुक्रम के प्रभाव संबंध में सबसे अच्छे प्रमाण जुड़वे बच्चों एवं पशुओं पर किए गए अध्ययनों से प्राप्त हुए हैं।

जुड़वें बच्चे दो प्रकार के होते हैं-अभिन्न यमज एवं भिन्न यमज। जब पुरूष के शुक्रकीट से स्त्री का एक रजकीट निषेचित होता है और विकास के क्रम में निषेचित अंडाणु के दो भागों में विभक्त होने से दो स्वतंत्र बच्चे विकसित होने लगते हैं, जिनकी वंशगत विशेषताएँ एक समान यानी अभिन्न होती हैं, तब ऐसे बच्चों को 'एकांडाण्विक' या 'अभिन्न यमज' कहते हैं। इसके विपरीत, कभी-कभी स्त्री के दो अंडाणु या रजकीट एक ही समय में पुरूषों के दो शुक्रकीटों द्वारा निषेचित हो जाते हैं, जिससे गर्भाशय में प्रारंभ से ही दो स्वतंत्र बच्चे विकसित होने लगते हैं। इन दोनों बच्चों की वंशगत विशेषताएँ एक-दूसरे से भिन्न होती हैं। ऐसे जुड़वों को 'द्विअंडाण्विक' या 'भिन्न यमज' कहते हैं। अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि अभिन्न यमजों की व्यक्तित्व-संबंधी विशेषताएँ भिन्न यमजों के व्यक्तित्व की विशेषताओं की तुलना में बहुत

अधिक समान होती हैं। इससे स्पष्ट होता है कि व्यक्तित्व-संबंधी विशेषताओं के निर्धारण में वंशानुक्रम का बहुत बड़ा हाथ रहता है।

गोटेस्मैन (1963) ने मिन्नेसोटा मल्टीफेजिक परसनॉलटी इन्वेण्टरी और कैटेल की उच्च विद्यालय व्यक्तित्व-प्रश्नावली का प्रयोग 34 जोड़े अभिन्न एवं भिन्न यमजों यानी जुड़वें बच्चों पर किया और पाया कि 'अभिन्न जुड़वों' में 'भिन्न जुड़वों' की अपेक्षा बहुत अधिक समानता थी। व्यक्तित्व के गुणों के विकास में वुशानुक्रम के महत्व को कालमैन (1953), डफ्फी (1957), मैलमो (1956), कैटेल (1956), आदि ने भी अपने अध्ययनों के आधार पर सिद्ध किया है।

उपर्युक्त साक्ष्यों के बावजूद इस बात के भी स्पष्ट प्रमाण मिले हैं कि व्यक्तित्व के विकास में वंशानुक्रम का महत्व आंशिक है। वंशानुक्रम व्यक्तित्व-विकास की प्रक्रिया का पूर्व-उद्यत अथवा निर्धारक तत्व हैः अतः, स्पष्ट है कि व्यक्तित्व के निर्धारण में वंशानुक्रम के अतिरिक्त अन्य जैविक एवं सामाजिक तत्वों का भी योगदान रहता है जिनकी चर्चा आगे की जा रही है।

क. शारीरिक बनावट या गठन एवं धातुस्वभाव-

प्रायः साधारण से साधारण व्यक्ति भी शारीरिक बनावट को देखकर किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को परखने की कोशिश करता है। शारीरिक बनावट के अंतर्गत व्यक्ति का रूप-रंग, उसकी लम्बाई, स्वास्थ्य, वजन, विभिन्न अंगों का संतुलित अनुपात आदि विशेषताएँ शामिल हैं। इन विशेषताओं के विशेष प्रकार के संयोग से ही किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व सुंदर और आकर्षक अथवा कुरूप और अनाकर्षक प्रतीत होता है। यहाँ एक महत्वपूर्ण बात यह है कि शारीरिक बनावट-संबंधी भिन्नता के कारण उसके प्रति लोगों द्वारा की जाने वाली प्रतिक्रियाओं की विभिन्नता पर ही व्यक्तित्व का निर्धारण निर्भर करता है। शारीरिक बनावट स्वयं में कोई महत्व नहीं रखता। उदाहरणार्थ-यदि कोई नाटा और काले रंग का हो अथवा किसी की एक आँख खराब हो तो बनावट-संबंधी इन विशेषताओं का उसके व्यक्तित्व पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ेगा, यदि समाज के दूसरे लोग उसे बुरी दृष्टि से नहीं देखे। प्रायः ऐसे लोगों को देखकर दूसरे लोग उन्हें अपाहिज या विकृत कहकर उनका अपमान करते हैं अथवा चिढ़ाते हैं। इससे उनमें हीनता की भावना विकसित होती है, जिससे उनका व्यक्तित्व कुत्सित या कुंठित होता है। इस संबंध में एडलर का विचार है कि हीनता के भाव का अनुभव होने पर व्यक्ति में इस कमी की पूर्ति के लिए क्षतिपूर्त्यात्मक व्यवहार उत्पन्न होता है जो भला या बुरा दोनों हो सकता है। समाजविरोधी व्यक्तित्व अथवा मनोविकारी व्यक्तित्व के विकास में हीन भाव का महत्व विशेष रूप से देखा गया है। किसी-किसी में हीन भाव समाजोपयोगी व्यवहारों को भी उत्पन्न करते हैं; जैसे-किसी शारीरिक रूप से अपाहिज का एक बड़ा वैज्ञानिक साहित्यकार या चित्रकार बनना। अतः, स्पष्ट है कि शारीरिक बनावट-संबंधी विकृति के कारण व्यक्तित्व का विकास प्रभावित होता है।

शारीरिक बनावट-संबंधी विभिन्नता के कारण व्यक्तित्व की विभिन्नता प्रयोगों द्वारा भी प्रमाणित हुई है। एक प्रयोग पंगु एवं सामान्य लड़कियों पर किया गया। इन दोनों समूह की लड़कियों की संवेगात्मक स्थिरता की जाँच की गई और देखा गया कि पंगु लड़कियों में सामान्य लड़कियों की अपेक्षा संवेगात्मक

स्थिरता कम थीं स्पष्ट है कि शारीरिक बनावट का व्यक्तित्व निर्माण अथवा विकास पर अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।

शारीरिक बनावट और धातु-स्वभाव में घनिष्ठ संबंध है। इसी संबंध के आधार पर विद्वानों ने व्यक्तित्व के विभिन्न प्रकारों की चर्चा की है। इन आधारों पर क्रेश्मर एवं शेल्डन के व्यक्तित्व प्रकारों की चर्चा पहले भी की जा चुकी है। मोटे तौर पर हम यह निश्चित रूप से स्वीकार करते हैं कि व्यक्तित्व गठन में व्यक्ति के शरीर का आकार-प्रकार एक महत्वपूर्ण तत्व है। व्यक्तियों के शरीर रचना-संबंधी विभिन्नताएँ बहुधा व्यक्तित्व के शीलगुणों से संबंध रखती है। प्रायः, यह देखा जाता है कि गोल-मटोल आदमी विनोदी स्वभाव का, आरामपसंद और सामाजिक होता है। दुबले-पतले आदमी संयमी, तनाव की हालत में रहने वाले और अंतर्मुखी होते हैं। इस तरह के अंतरों को शेक्सपियर के नाटकों में भी प्रदर्शित किया गया है। व्यक्तित्व और शरीररचना तथा उससे संबद्ध धातु-स्वभाव के संबंधों के विषय में आजकल भी अनेक खोज किए जा रहे हैं।

ख.शरीर रसायन-

व्यक्तित्व के जैविक तत्वों में शरीर रसायन का महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन लोग चार द्रवों के प्रभाव से चार अलग-अलग स्वभावों की चर्चा करते थे। उनके विचारानुसार आदतन आशावादी व्यक्तियों में अत्यधिक रक्त रहता है, चिड़चिड़े व्यक्ति में पित्त की, शांत व्यक्ति में कफ की और उदास रहने वाले व्यक्ति में प्लीहा की अधिकता रहती है। कभी-कभी एक पाँचवाँ स्वभाव धैर्यहीन या चेतनामय भी माना जाता था जिसका संबंध स्नायुद्रव की अधिकता से बताया जाता था।

उपर्युक्त दृष्टिकोण आजकल पुराना पड़ गया है, अतः बहुत उपयोगी प्रतीत नहीं होता। फिर भी, रासायनिक द्रव और व्यक्ति के व्यवहार के बीच संबंध होने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। वैज्ञानिक खोजों के फलस्वरूप कुछ शरीर रसायन-संबंधी तत्व महत्वपूर्ण पाए गए हैं, जो निम्नवत है-

1. रक्त संचरण-

व्यक्ति के रासायनिक तत्व रक्तसंचार पर निर्भर करते हैं। स्नायुमंडल की तरह रक्तसंचार का भी शरीर के संयोजन में महत्वपूर्ण स्थान है, हालाँकि दोनों के ढंग अलग-अलग हैं। रासायनिक द्रव्यों को शरीर के विभिन्न अंगों तक ले जाने में रक्तसंचार रेलगाड़ी की तरह कार्य करता है और संदेशों को ढोने में स्नायुमंडल टेलिफोन के तार की तरह। रासायनिक द्रव्यों का संवहन कुछ इस प्रकार होता है-शरीर का प्रत्येक अंग अपने उत्पादित द्रवों को रक्त में छोड़ देता है और वे रक्त के साथ हृदय के एक कोष्ठ में पहुँचते हैं, जहाँ से रक्त शुद्ध होकर शरीर के सभी अंगों में भ्रमण करता है। उस समय शरीर के सभी अंग रक्त में बहने वाले द्रवों को अपनी आवश्यकता के अनुसार ग्रहण करते हैं रक्त संचरण-क्रिया अनवरत एक नित्य गति से हुआ करती है। लेकिन, जब इसकी गति किसी कारणवश कम या तेज होती है, तब रक्तचाप में परिवर्तन होता है जिसका प्रभाव व्यक्ति के स्वभाव पर भी पड़ता है। जैसे-उच्च रक्तचाप के रोगी में घबड़ाहट एवं अत्यधित क्रोध, आवेगात्मक व्यवहार आदि लक्षण उनके व्यक्तित्व के अंग बन जाते हैं।

2. रक्त में चीनी की मात्रा-

रक्म में चीनी की मात्रा का भी प्रभाव व्यक्तित्व पर पड़ता है। मस्तिष्क और शरीर के अन्य अंगों को सुचारू रूप से कार्य करने के लिए लहू में चीनी की मात्रा उपयुक्त स्तर में रहना आवश्यक है। लेकिन, जब चीनी की मात्रा में कमी या बेशी होती है, तब व्यक्तित्व में कुछ खास परिवर्तन होते है; जैसे-व्यक्ति की मनोदशा या चित्त में परिवर्तन, चिड़चिड़ाहट में वृद्धि, भयभीत बना रहना, चेतना का लुप्त होना, वाक्-असंतुलन, स्मृति में ह्रास का होना, संवेगात्मक अस्थिरता आदि।

3. अंतःस्रावी ग्रंथियाँ-

अंतःस्रावी ग्रंथियाँनलिकाविहीन होती हैं तथा इनसे उत्पन्न होने वाले द्रव्य या स्राव सीधे रक्त में मिल जाते है। इन ग्रंथियों द्वारा कुछ हार्मोन्स उत्पन्न होते हैं, जो शरीर या उसके किसी अंग की क्रियाओं को बढ़ाने या घटाने की शक्ति रखते हैं। देखा गया है कि जिन व्यक्तियों की इन ग्रंथियों में कोई दोष रहता है, उनके व्यक्तित्व में कुछ दोषपूर्ण लक्षण दृष्टिगोचर होने लगते हैं। प्रमाणों के आधार पर कुछ विद्वानों ने व्यक्तित्व में अंतःस्रावी ग्रंथियों के महत्व को बहुत अधिक बढ़ा-चढ़ाकर बताया है। लुइस बर्मन (1928) ने तो यहाँ तक दावा किया है कि स्नायुमुडल-संबंधी रोग, पालगपन, चारित्रिक विकृति, अपराधी प्रवृत्ति आदि इन्हीं के कारण होते हैं तथा इन ग्रंथियों के दोषों को चिकित्सा द्वारा दूर कर देने पर संबद्ध विकृति के लक्षण भी दूर हो जाते हैं। इसके विपरीत हॉकिन्स का मत है कि व्यक्तित्व विकास में अंतःस्रावी ग्रंथियों का महत्व अभी तक बहुत स्पष्ट नहीं हो सका है। उपर्युक्त विरोधी विचारों के बावजूद हाल में किए गए अध्ययनों से यह स्पष्ट पता चलता है कि व्यक्तित्व पर अंतःस्रावी ग्रंथियों का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। यहाँ कुछ महत्वपूर्ण ग्रंथियों के उत्पादकों के प्रभावों का संक्षेप में वर्णन किया जा रहा है।

1. गलग्रंथि-

यह ग्रंथि गर्दन की जड़ में श्वासनलिका के सामने रहती है। साधारणतः इसका वजन एक औंस होता है कभी-कभी इसका आकार असामान्य रूप से बढ़ जाता है, लेकिन इससे इसके कार्य में कोई खास चिंताजनक गड़बड़ी नहीं होती। जब किसी तरह से यह ग्रंथि रूग्ण होकर विनष्ट हो जाती है, तब इस अवस्था को माइक्सोडेमा कहते हैं और इससे स्रावित होने वाले हार्मोन, जिन्हें थाइरॉक्सिन कहते है मंद पड़ जाते है। इससे चमड़े अकड़ जाते है। फलतः मस्तिष्क और पे शियों की क्रियाएँ मंद पड़ जाती हैं। व्यक्ति में शिथिलता, मूर्खता, भुलड़पन आ जाते हैं। वह एकाग्रचित होकर न तो किसी वस्तु पर ध्यान केंद्रित कर सकता है और न सोच-विचार कर सकता है। बच्चों में तो थाइरॉक्सिन के अभाव के कारण बुद्धि का ह्रास भी हो जाता है। थाइरॉक्सिन के अभाव के कारण व्यक्ति में सुस्ती और निष्क्रियता की स्थिति के अलावा उसका स्वभाव झगड़ालू हो जाता है। कुछ मनःचिकित्सकों की राय में इस हार्मोन के अभाव के कारण व्यक्ति में मनोविदाली लक्षण भी उत्पन्न होते है, अर्थात व्यक्ति असंतुष्ट, निराश और अविश्वासी हो जाता है, जो मनोविदलिता का प्रधान लक्षण है। थाइरॉक्सिन का स्राव अधिक होने पर व्यक्ति में स्नायुमंडलीय तनाव बढ़ जाता है और व्यक्ति उत्तेजित, चिंतित और अशांत हो जाता है।

स्वतःसंचालित स्नायुमंडल की कार्यशीलता भी बढ़ जाती है। विद्वानों का ऐसा विश्वास है कि थाइरॉक्सिन की अधिकता का प्रभाव व्यक्ति के व्यवहार पर सीधे पड़ता है, जबकि इसके अभाव का प्रभाव अप्रत्यक्ष रूप से पड़ता है।

2. एड्रिनल ग्रंथि-

यह ग्रंथि दाहिने और बाँए दोनों गुर्दा के निकट स्थित है। गुर्दो के निकट रहने के कारण ही इन्हें उपवृक्क ग्रंथियाँ भी कहते हैं, हालाँकि गुर्दो के कार्य से इनका कार्य बिल्कुल भिन्न है। प्रत्येक एड्रिनल ग्रंथि के दो भाग होते हैं-बाह्य एवं भीतरी। बाह्य भाग को कॉर्टेक्स तथा भीतरी भाग को मेडुला कहते हैं। इन दोनों भागों में बनावट और काय्र की दृष्टि से अंतर होता है। बाह्य भाग यानी कॉर्टेक्स से उत्पन्न हार्मोन को कॉर्टिन और भीतरी भाग मेडुला से उत्पन्न हार्मोन को एड्रेनलिन कहते हैं।

एड्रेनलिन अत्यंत शक्तिशाली हार्मोन है। इसमें दो प्रकार के रासायनिक तत्व रहते हैं, जिन्हें एपिनेफ्रीन एवं नॉर-एपिनेफ्रीन कहते हैं। रक्त में एड्रेनिन की थोड़ी-सी मात्रा भी अग्रलिखित प्रभाव उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त होती है-(1) तेज और जोरदार हृदय की धड़कन; (2) ऊँचा रक्तचाप जो रक्त को चर्म या शरीर के भीतरी अंग के रास्ते न धकेलकर मांसपेशियों और मस्तिष्क के रास्ते धकेलता है; (3) उदर और आँत की क्रियाओं का स्थगित होना; (4) फेफड़ों के वायुमार्गो का चौड़ा पड़ जाना; (5) लीवन से एकत्र चीनी का निकास; (6) मांसपेशियों में देर तक थकान का न आना; (7) बहुत अधिक पसीना आना; (8) आँख की पुतली का फैल जाना।

इन प्रभावों को उत्पन्न करने में स्वतःसंचालित स्नायुमंडल के सहानुभूतिक विभाग का हाथ रहता है। सहानुभूतिक मंडल द्वारा उपर्युक्त प्रभाव शीघ्रता से और थोड़े समय के लिए उत्पन्न होते है, जबकि रक्त में मिले हुए एड्रेनिन के कारण ये प्रभाव धीरे-धीरे एवं लंबे समय के लिए उत्पन्न होते है। इस प्रकार, एड्रिनल मेडुला सहानुभूतिक मंडल से जुड़ा हुआ है।

शरीर द्वारा सोडियम पोटाशियम और चीनी का उपयोग करने में कॉर्टिन से काम लिया जाता है और मांसपेशियों तथा यौन क्रियाओं पर इनका बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। यह शरीर को उपयुक्त स्थिति में रखता है। यह जीवन के लिए आवश्यक भी है। साधारणतः, यक्ष्मा की बीमारी के कारण पुरूषों में एड्रिनल कॉर्टेक्स का पूर्ण विनाश हो जाता है, जिसे 'एडीसन' की बीमारी कहते हैं। इस बीमारी का नामकरण एडीसन नाम के अनुसंधानकर्ता के नाम पर हुआ है। इस घातक रोग के उत्पन्न होने पर निर्बलता और शिथिलता में तेजी से वृद्धि, यौन क्रियाओं में अरूचि, मेटाबॉलिक क्रियाओं का मंद पड़ना, किसी संक्रामक रोग के प्रतिरोधक शक्ति का कम हो जाना, चर्म का काला पड़ जाना, गर्मी का ठंडक के प्रति असहनशीलता, नींद की कमी, चिड़चिड़ाहट आदि लक्षण उत्पन्न होते है। रोगी को बाहर से कार्टिन देने पर ये लक्षण दूर हो जाते है।

एड्रिनल कॉर्टेक्स की अत्यधिक कार्यशीलता के कारण पुरूषों और स्त्रियों में पुरूषोचित्त लक्षणों की अधिकता पाई जाती है। स्त्रियों के अंगों की गोलाई नष्ट हो जाती है, आवाज भारी हो जाती है और दाढ़ी उगने लगती है।

3. यौन ग्रंथि-

पुरूषों की यौनग्रंथि को अंडकोष और स्त्रियों की यौनग्रंथि को डिंब कहते हैं। इन ग्रंथियों से क्रमशः शुक्रकीट और रजकीट नाम के क्रोमोजोम प्राप्त होते हैं जिनके संयोग से संतान की उत्पत्ति होती है। साथ ही, इन ग्रंथियों से कुछ हॉर्मोन्स का भी स्राव होता है, जिनका व्यक्ति के विकास और उसके व्यवहार पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

यह हॉर्मोन्स काफी संख्या में होते हैं और इनमें कुछ पुरूष और स्त्री दोनों में उपस्थित रहते हैं। पुरूष के हॉर्मोन्स का संतुलन पुरूष में पुरूषत्व तथा स्त्री के हॉर्मोन्स का संतुलन स्त्री में स्त्रीत्व का विकास करता है। वयःसंधि के समय ये हॉर्मोन्स जननेद्रियों, यौन लक्षणों, जैसे स्त्रियों में दुग्ध ग्रंथि तथा पुरूषों में भारी आवाज और दाढ़ी का विकास करते हैं।

यौनग्रंथि द्वारा उत्पादित हॉर्मोन्स काफी हद तक स्त्रियों में संतानोत्पत्ति-संबंधी प्रक्रियाओं-जिसके अंतर्गत मासिक धर्म गर्भाधान, शिशु को दूध पिलाना आदि क्रियाएँ शामिल हैं-को नियंत्रित करती हैं। शिशु के पालन-पोषण की प्रेरणा में भी इन हॉर्मोन्स का महत्वपूर्ण हाथ रहता है।

कुछ व्यक्तियों में कामवासना अधिक होती है तो कुछ में कम। इस विभिन्नता का कारण यौनग्रंथि के हॉर्मोन्स को ही माना जाता है। पर, इस बात के यथेष्ट प्रमाण अभी नहीं मिले हैं। कुछ लोग रतिक्रिया में कम अभिरूचि रखते है; जिससे वे अपने मित्रों की आलोचना का विषय बने रहते है। इन आलोचनाओं की प्रतिक्रिया के रूप में ऐसे लोग कुछ विभिन्न प्रकार की यौन क्रियाओं में संलग्न हो जाते हैं। इस तरह, स्पष्ट है कि यौनग्रंथि का भी व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

4. पियूष ग्रंथि-

इसे ग्रंथिपति की संज्ञा दी जाती है; क्योंकि इस ग्रंथि के हॉर्मोन्स अन्य अंतःस्रावी ग्रंथियों पर नियंत्रण रखते है। यह मस्तिष्क की निचली सतह में स्थित एक छोटी-सी ग्रंथि है। इस ग्रंथि के दो भाग है-पीछे का भाग एवं आगे का भाग। पियूष ग्रंथि के पिछले भाग से उत्पादित होने वाले हॉर्मोन्स शारीरिक क्रियाओं, जैसे रक्तचाप और जल के मेटाबोलिक कार्यो को नियमित करते हैं तथा आगे के भाग से उत्पादित हॉर्मोन्स अन्य अंतःस्रावी ग्रंथियों, जैसे गलग्रंथि, यौनग्रंथि, एड्रिनल ग्रंथि आदि को उत्तेजित करते हैं। पियूष ग्रंथि के निष्क्रिय रहने पर ये ग्रंथियाँ या तो विकसित नहीं हो पाती अथवा सामान्य रूप से कार्य नहीं कर पातीं।

पियूष ग्रंथि के अगले भाग का शारीरिक विकास पर काफी प्रभाव पड़ता है। बाल्यावस्था में इस ग्रंथि की अतिकार्यशीलता के कारण हड्डियाँ एवं मांसपेशियाँ बड़ी तेजी से बढ़ती हैं और व्यक्ति की लंबाई असामान्य रूप से दैत्य की तरह 7 से 9 फुट तक हो जा सकती है। बाद में चलकर यह ग्रंथि शक्तिहीन हो

जा सकती है जिससे कम उम्र में ही उसकी मृत्यु हो जा सकती है। यदि प्रौढ़ जीवन में यह ग्रंथि अधिक कार्यशील होती है तो व्यक्ति का कद लंबा होने के बजाए हाथ, पैर, नाक, जबड़े इत्यादि की लंबाई में वृद्धि होने की संभावना रहती है। इस स्थिति को मिडगेट्स कहते हैं। शरीर के विकास की अवधि में इस ग्रंथि के कम क्रियाशील रहने पर व्यक्ति बौने कद का हो जाता है जिन्हें 'क्रेटिन्स' कहते हैं। पियूष ग्रंथि के पिछले भाग का व्यक्तित्व के साथ क्या संबंध है इसके बारे में कोई विशेष जानकारी नहीं है।

5. पीनियल ग्रंथि-

इसके हॉर्मोन का प्रभाव बाल्यकाल में अधिक देखा जाता है। मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि यह ग्रंथि अपने स्राव के द्वारा बच्चों में यौन भाव के विकास के न होने में सहायक है।

6. पैक्रियाज-

इसका बहाव या स्राव मांसपेशियों की चीनी की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। कभी-कभी देखा जाता है कि पैक्रियाज के अत्यधिक क्रियाशील होने के फलस्वरूप व्यक्ति और चिंतित रहने लगता है।

व्यक्ति के व्यवहार और किसी ग्रंथिविशेष का क्या संबंध है-यह बताना कठिन है। इसका कारण यह है कि व्यवहार और ग्रंथि दोनों एक-दूसरे को प्रभावित करते है। फिर भी उपर्युक्त वर्णन से इतना तो स्पष्ट है कि विभिन्न ग्रंथियों के अत्यधिक या कम कार्यशील होने का प्रभाव शारीरिक बनावट एवं कार्य पर पड़ता है जिससे व्यक्ति के व्यवहार में भी कुछ विशिष्ट प्रकार के परिवर्तन होते हैं। परंतु, ग्रंथियाँ यदि सामान्य रूप से कार्य करती हों, तो व्यक्तित्व में अंतर का कारण निश्चित रूप से अन्यान्य जैविक एवं सामाजिक तत्व हो सकते हैं। शायद यही कारण है कि व्यक्तित्व और अंतःस्रावी ग्रंथियों के पारस्परिक संबंधों के बारे में इंगल (1935) ने यह निष्कर्ष निकाला है-''निष्कर्ष रूप में हम इतना ही कह सकते हैं कि व्यक्तित्व के आधारभूत जैविक तत्वों में अंतःस्रावी ग्रंथियाँ भी है''

ग. स्नायुमण्डल-

व्यक्तित्व का सम्बन्ध व्यक्ति के समायोजन सम्बन्धी व्यवहारों से है तथा इन व्यवहारों पर व्यक्ति के शीलगुणों एवं वातावरणीय कारकों के बीच उत्पन्न संघर्षो का सार्थक प्रभाव पड़ता है। स्नायुमण्डल की इस समायोजित व्यवहार की उत्पत्ति में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। स्नायुमण्डल के केन्द्रीय एवं स्वतःचालित-दोनों ही तंत्रों का व्यक्ति के समायोजन सम्बन्धी व्यवहारों के नियमन एवं नियंत्रण पर सार्थक प्रभाव देखा गया है।

2.5.2 व्यक्तित्व के सामाजिक/वातावरणीय निर्धारक-

व्यक्तित्व विकास पर जैविक कारकों के साथ-साथ वैसे कारकों का भी प्रभाव पड़ता है जिनका सम्बन्ध उसके वातावरण सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थिति आदि से होता है। इसे ही व्यक्तित्व का सामाजिक या

सामाजिक-सांस्कृतिक या वातावरणीय निर्धारक कहते है। सामाजिक निर्धारकों को निम्नलिखित मुख्य वर्गो में बांटा जा सकता है –

(क) जीवन के प्रारंभिक वर्षो का प्रभाव-

मनुष्य एक अनुभवशील प्राणी है। वह जन्म से ही अनुभव प्राप्त करता है और इसी अनुभव पर उसके व्यक्तित्व का निर्माण निर्भर करता है। इस संबंध में फ्रायड ने जोरदार शब्दों में कहा है कि मनुष्य के प्रत्येक व्यवहार का बीजारोपण बचपन के प्रारंभिक 5 वर्षो में हो जाता है और उसी नींव पर संपूर्ण व्यक्तित्व-रूपी भवन खड़ा रहता है। चरित्रनिर्माण की व्याख्या करते हुए फ्रायड ने स्पष्ट किया है कि बाल्यावस्था में किसी बच्चे को दूध पिलाना शीघ्र बंद कर दिया जाता है तो किसी को देर से। इन घटनाओं के फलस्वरूप बालकों को कुछ अनुभव प्राप्त होते हैं जिनकी अभिव्यक्ति बाद में चलकर संरक्षित या असंरक्षित होने की भावना के रूप में होती है। इसी तरह, बालक जब विकास के गुदावस्था में पहुँचता है, तब उस समय भी उसे कुछ नई अनुभूतियाँ प्राप्त होती है जिनका प्रभाव भी उसके भावी, व्यक्तित्व के निर्माण पर पड़ता है। उक्त अवस्था में बालकों में मल-मूत्र को रोके रहने अथवा जल्दी-जल्दी निष्काषित करने की प्रवृत्ति देखी जाती है, जिसकी छाप उसके व्यक्तित्व पर पड़ती है। गुदा धारण की अवस्था में बालकों में मल-मूत्र को रोके रखने की प्रवृत्ति बहुत अधिक रहती है। कभी-कभी मल-मूत्र परित्याग-संबंधी प्रशिक्षण के अभाव में बालक इसी अवस्था में लंबे समय तक रहते हैं। इसी प्रकार बाल्यावस्था की शिक्षावस्था अथवा किशोरावस्था के अनुभवों की भी अमिट छाप वयस्क व्यक्तित्व पर पड़ती है।

(ख) परिवार का प्रभाव-

बालकों के व्यक्तित्व के विकास पर उसके परिवार तथा घरेलू वातावरण का प्रभाव अत्यंत व्यापक रूप से पड़ता है। घरेलू वातावरण में पालन-पोषण की प्रणाली, माता और पिता के आपसी संबंध, माता-पिता का बच्चों के साथ संबंध, परिवार के दूसरे बच्चों के साथ संबंध आदि तत्वों के प्रभाव प्रमुख हैं।

1. पालन-पोषण की प्रणाली-

प्रत्येक परिवार में बालकों के पालन-पोषण की रीति भिन्न-भिन्न ढंग की होती है। कुछ माँ-बाप बच्चों को अति सुरक्षा प्रदान करते हैं तो कुछ उनके प्रति लापरवाह रहते हैं। किसी बच्चे को स्वाभाविक रूप से स्वतंत्र प्रशिक्षण का पर्याप्त अवसर मिलता है तो किसी को ऐसा अवसर बिल्कुल नहीं मिलता। इन विभिन्नताओं का प्रभाव बालकों के व्यक्तित्व के विकास और निर्माण पर पड़ता है। ब्रॉडी (1956) ने 32 माताओं के बच्चा पोसने के ढंग का अध्ययन किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचीं कि जो माताएँ अपनी संतानों की आवश्यकताओं के प्रति बहुत अधिक सजग रहती हैं उनका बच्चों के प्रति व्यवहार निश्चित और स्थिर ढंग का होता है तथा वे बच्चों पर पूरा ध्यान रखती है। लेकिन, जो माताएँ बच्चों की आवश्यकताओं के प्रति सजग नहीं रहतीं उनके व्यवहार अनिश्चित ढंग के होते हैं।

2. माता और पिता के आपसी संबंध-

माता और पिता के पारस्परिक संबंधों का बच्चों के व्यक्तित्व विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। इस संबंध में सिरिल बर्ट का कहना है कि जिन बच्चों के माता-पिता के पारस्परिक संबंध अच्छे नहीं रहते, उनके बच्चों में संतुलित व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाता। ऐसे परिवारों में उचित अनुशासन का अभाव रहता है जिसके परिणामस्वरूप वे बाल-अपराधी हो जाते हैं। ऐसे घरों को सिरिल बर्ट ने बिगड़े या टूटे हुए घर की संज्ञा दी है। बॉलकाइण्ड एवं रटर (1973) ने बिगड़े या टूटे हुए घरों के संबंध में यह निष्कर्ष निकाला है कि विकासशील बालकों के लिए माता-पिता के पारस्परिक झगड़े, संघर्ष और उनके बीच की तनावपूर्ण स्थितियाँ घातक होती हैं, फलतः उन घरों में विकसित होने वाले बच्चे असुरक्षा की भावना से ग्रस्त रहने लगते हैं, तथा उनका व्यक्तित्व भी कुंठित हो जाता है। ऐसे घरों में बच्चों में बेईमानी की प्रवृत्तियाँ विकसित होती हैं, बच्चे विश्वासघाती हो जाते हैं अथवा इस प्रकार के अन्यान्य अवांछित गुण विकसित होते है। इसका प्रधान कारण यह है कि ऐसे बच्चे घरों में अपने माता-पिता का उपयुक्त स्नेह और प्यार नहीं प्राप्त कर पाते और वे शीघ्र ही समाज के अवांछित तत्वों के संपर्क में आ जाते हैं अथवा अपने माता-पिता के अनाभियोजित व्यवहारों को ग्रहण करते हैं।

3. माता-पिता का बच्चों के साथ संबंध-

माता-पिता के पारस्परिक संबंध के अतिरिक्त बच्चों के साथ उनके संबंध भी व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इस संबंध में किए गए लगभग सभी अध्ययनों से स्पष्ट हुआ है कि कठोर अनुशासन, दंड या अति-सुरक्षा अस्वीकार करने आदि के फलस्वरूप व्यक्तित्व अस्त-व्यस्त हो जाता है। कभी माता-पिता बच्चे के जन्म का स्वागत करते हैं तो कभी बच्चे अनावश्यक समझे जाते हैं। अनावश्यक समझे जाने वाले बच्चे हीनता ही भावना से ग्रस्त रहने लगते हैं, जिसका प्रतिकूल प्रभाव उनके व्यक्तित्व के निर्माण पर पड़ता है।

4. परिवार के बच्चों का एक-दूसरे से संबंध-

परिवार में बच्चों को अपने भाई-बहनों या दूसरे बच्चों के साथ अंतःक्रिया का भी प्रभाव उनके व्यक्तित्व-विकास पर महत्वपूर्ण ढंग से पड़ता है। इस संबंध में एकलौता बच्चा, जन्मक्रम, बच्चों का यौन-वितरण, बच्चों का यौन संयोग, परिवार का आकार आदि परिवार-संरचना के महत्वपूर्ण तत्व है तथा इन संरचनात्मक तत्वों में भिन्नता का प्रभाव बच्चों के व्यक्तित्व-संबंधी गुणों के विकास पर अलग-अलग ढंग से पड़ता है। इन तत्वों द्वारा सामाजिक अभियोजन की प्रक्रिया निर्धारित होती है। एक घर में अगर एक से अधिक बच्चे होते है तो वह एक-दूसरे के विचारों, मनोवृत्तियों आदि से प्रभावित होते हैं तथा परस्पर अभियोजन का प्रयास करते हैं। इसी प्रयास का फल है कि व्यक्ति बड़ा होने पर पहले से सीखी हुई अभियोजन-विधि का उपयोग सामाजिक परिस्थितियों में अभियोजन करने हेतु करता है एकलौते बच्चों को ऐसा अवसर नहीं मिलता, फलतः उन्हें सामाजिक अभियोजन में कठिनाई होती है।

विभिन्न मनोवैज्ञानिकों द्वारा किए गए अध्ययनों में जन्मक्रम का भी महत्वपूर्ण प्रभाव देखा गया है। इस संबंध में मैक्लीलैण्ड, विंटरबॉटम, सैम्पसन आदि ने विभिन्न संस्कृतियों का अध्ययन किया है और वे इस

निष्कर्ष पर पहुँचे कि जन्मक्रम में भिन्नता होने के फलस्वरूप एक ही परिवार के विभिन्न बच्चों के व्यक्तित्व-गुण भिन्न-भिन्न हुआ करते हैं।

(ग) पड़ोस का प्रभाव-

बच्चे जब कुछ बड़े होते हैं तब वे पड़ोस के बच्चों के साथ मिलते-जुलते हैं, पड़ोसियों के घरों में आने-जाने लगते हैं तथा पड़ोस के बच्चों के साथ खेलते हैं इस तरह, आस-पास के पड़ोसियों से वे सामाजिक रहन-सहन, तौर-तरीकों और अभियोजन-संबंधी गुणों को ग्रहण करते हैं। साथ ही, बच्चे अपने व्यवहार एवं मनोवृत्तियों से दूसरों को और दूसरों के व्यवहार एवं मनोवृत्तियों से स्वयं अपने को भी प्रभावित करते हैं। इन प्रभावों के फलस्वरूप उनके व्यक्तित्व में सामाजिक अभियोजन संबंधी गुणों का विकास होता है।

(घ) स्कूल का प्रभाव-

लगभग 5 से 6 वर्ष की आयु में बच्चे स्कूलों में शिक्षा ग्रहण करने हेतु प्रवेश लेते हैं और पूर्ण वयस्क होने के समय तक शैक्षणिक वातावरण द्वारा बालकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास होता है। हालाँकि स्कूलों में प्रवेश लेने के पूर्व ही घरेलू वातावरण में बच्चों के व्यक्तित्व की रूप-रेखा तैयार हो जाती है और स्कूल में वे अपने व्यक्तित्व का प्रदर्शन भी उसी रूपरेखा के आलोक में करते हैं, फिर भी स्कूल का वातावरण बच्चों में नया अनुभव उत्पन्न करता है जिसका प्रभाव उनके व्यक्तित्व-निर्माण पर महत्वपूर्ण रूप से पड़ता है। स्कूल में पहली बार बच्चों को संस्थानिक कायदे-कानून का अनुभव प्राप्त होता है, हम उम्र के विभिन्न विद्यार्थियों के साथ रहना पड़ता है, विद्यालय प्रशासन का अनुभव होता है तथा शिक्षकों की मनोवृत्तियों, वर्ग के सहपाठियों के विचारों, उनके रहन-सहन, मनोवृत्ति इत्यादि का एक नया अनुभव प्राप्त होता है तथा उसके अनुसार ही अभियोजन का नया ढंग सीखना होता है। इन सब बातों से उनका व्यक्तित्व सिंचित और पल्लवित होता है।

शिक्षकों के व्यक्तित्व का बालकों के व्यक्तित्व पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन बोआयण्टेन तथा अन्य (1934) लोगों ने किया है तथा उन्होंने देखा कि जो शिक्षक 'बर्नरायटर-व्यक्तित्व आविष्कारिका' पर स्नायुमंडल-संबंधी रोगों के लक्षण प्रदर्शित करते थे, उनके विद्यार्थियों में भी इस रोग के लक्षण मौजूद थे।

स्कूल की प्रशासनिक व्यवस्थाओं का भी प्रभाव बालकों के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। स्कूल की प्रशासनिक व्यवस्था स्कूल प्रशासक के व्यक्तित्व, उसकी मनोवृत्ति, विश्वास, कार्यशैली इत्यादि द्वारा निर्धारित होती है। अतः, विद्यार्थियों के व्यक्तित्व पर स्कूल के प्रशासक एवं प्रशासनिक व्यवस्था दोनों का प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि मिशन द्वारा संचालित स्कूलों में पढ़ रहे विद्यार्थियों और राज्य सरकार द्वारा संचालित स्कूलों में पढ़ रहे विद्यार्थियों के व्यक्तित्व में स्पष्ट अंतर देखने को मिलता है। इस संबंध में लेमैन (1949) ने एक अध्ययन में पाया कि आस-पास के दो विद्यालयों में से एक के विद्यार्थियों ने उनके परीक्षण कार्यक्रम में काफी सहयोग दिया, जबकि दूसरे विद्यालय के विद्यार्थियों ने स्पष्ट असहयोग किया। जाँच करने पर पता चला कि पहले स्कूल के प्राचार्य का प्रशासन लोकतंत्री व्यवस्था पर आधृत था, जबकि दूसरे स्कूल के प्राचार्य सत्तवादी प्रशासक थे।

(ड़) समुदाय का प्रभाव-

समुदाय के अंतर्गत समूह, गैंग, क्लब आदि सामाजिक परिस्थितियाँ आती हैं। इन सामाजिक परिस्थितियों का भी प्रभाव बच्चों के व्यक्तित्व-विकास पर कुछ कम नहीं पड़ता, खासकर सामाजिकता से संबद्ध गुणों के विकास पर इनका महत्वपूर्ण योगदान रहता है।

व्यक्ति के व्यक्तित्व पर समुदाय अथवा सामाजिक वातावरण के प्रभावों का संकेत हमें समुदाय की नियमावली और कार्यभाग अथवा भूमिका से प्राप्त होता है। व्यक्ति आचरण की एक नियमावली सीखता है। वह अपने समूह या समुदाय की नियमावली को अपना लेता है अथवा उस समूह में रहते हुए अपनी व्यक्तिगत नियमावली बना लेता है। इस तरह, समुदाय में या तो उसके लिए कोई कार्य रहता है अथवा वह अपने लिए कार्यभाग का चुनाव खुद कर लेता है।

सामुदायिक जीवन में ही वह अपने समाज के रीतिरिवाजों, परंपराओं, नैतिक आदर्शों इत्यादि को ग्रहण कर लेता है तथा उसी के अनुरूप आचरण करता है। इसी क्रम में परस्पर सहयोग, मिल-जुलकर रहने, प्रतियोगिता, प्रतिस्पर्द्धा आदि व्यक्तित्व-गुणों को भी अर्जित करता है। साथ ही, समुदाय द्वारा दिए गए कार्यों अथवा समुदाय में अपने योग्य कार्यों का चुनाव कर वह अपने व्यवहारों से दूसरों को भी प्रभावित करता है। व्यक्ति द्वारा किए गए कार्यों के मूल्यांकन से उसे संतुष्टि, प्रतिष्ठा, सामाजिक स्तर आदि प्राप्त होते हैं, जिससे उसके व्यक्तित्व में निखार आता है।

(च) सांस्कृतिक निर्धारक-

व्यक्तित्व के निर्धारण में संस्कृति का भी महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। संस्कृति के अंतर्गत रहन-सहन, वेश-भूषा, विचार, व्यवहारशैली, आदि शामिल हैं जिनका व्यक्तित्व पर दो तरह से प्रभाव पड़ता है-

1. विशिष्ट प्रकार की संस्कृति में जन्म लेने के कारण व्यक्ति उसी संस्कृति को अपना लेता है। अतः, व्यक्ति को सांस्कृतिक वातावरण से पृथक नहीं किया जा सकता।

2. संस्कृति की कुछ ऐसी भी बातें होती हैं जिन्हें व्यक्ति अपनाना नहीं चाहता, परंतु संस्कृति में अपनी पहचान बनाए रखने की इच्छा से अथवा सामाजिक दबाव के कारण वह उसे अपना लेता है।

उपर्युक्त दोनों तरह के प्रभावों के फलस्वरूप ही व्यक्ति पर उसकी संस्कृति की छाप रहती है और व्यक्तित्व का संगठन तथा निर्माण उस संस्कृति की विशेषताओं के अनुरूप होता है। लिंटन (1936) एवं कार्डिनर (1945) ने कुछ प्रजातियों का अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला कि भिन्न-भिन्न संस्कृतियों के लोगों के व्यक्तित्व में अंतर होता है।

मीड (1901, 1952, 1972) ने न्यूगिनी और उसके आसपास रहने वाली तीन संस्कृतियों का अध्ययन किया और बताया कि तीनों संस्कृतियों की मूल व्यक्तित्व-रचना एक दूसरे से भिन्न है। अरापेश संस्कृति जनाना स्वरूप की हैं अतः, इस संस्कृति के रहने वाले लोगों में एक-दूसरे से आगे बढ़ने तथा अगुआ बनने

की भावना का अभाव रहता है। इस संस्कृति के स्त्री-पुरूष अत्यधिक सहयोगपूर्ण, दयालु, विश्वासी, सुशील और नेक होते हैं। इसके विपरीत, मुंडुगुमोर संस्कृति मर्दाना स्वरूप की है। इस संस्कृति के लोग अक्खड़, उग्र, ईष्यालु, अविश्वासी, आक्रमणशील और व्यक्तिवादी होते हैं। इन दोनों से भिन्न शांबुली की संस्कृति है, जहाँ स्त्रियाँ घरों के बाहर जीविकोपार्जन के धंधों में लगती हैं तथा पुरूष बच्चों की देख-रेख, लालन-पालन करते हैं। वे अपने को सुंदर और आकर्षक बनाने के लिए श्रृंगार करते हैं, कलाप्रेमी होते हैं तथा आपस में मिलकर गप्पें मारते हैं। स्त्रियाँ पुरूषों की सजावट देखकर प्रसन्न और मुग्ध होती हैं तथा उनसे विवाह की याचना करती हैं। इन्हीं तथ्यों के आधार पर कुईनर (1951)ने लिखा है कि यदि समाज में स्त्रियों और पुरूषों के लिए अलग-अलग नियम निर्धारित न हों, तो उनकी भूमिकाओं में भी कोई अंतर नहीं होगा।

रूथ बंनेडिक्ट ने भी जुनी इंडियन संस्कृति के लोगों में स्पर्द्धा नामक गुण का अभाव पाया, जिसका कारण उन्होंने उनकी संस्कृति की विशेषता बताया है।

व्यक्तित्व के निर्धारकों के संबंध में निष्कर्ष-

व्यक्तित्व के जिन निर्धारकों का वर्णन ऊपर किया गया है, उनसे स्पष्ट होता है कि किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व-विकास को समझने के लिए हमें उसके वंशानुक्रम और वातावरण की पारस्परिक अंतःक्रियाओं का अध्ययन करना आवश्यक होगा। किसी व्यक्ति में वंशपरंपरा (पीढ़ी-दर-पीढ़ी) द्वारा जैविक रूप से संचारित गुणों की संपूर्णता को वंशानुक्रम की संज्ञा दी जाती है, जिसका प्रभाव शारीरिक रचना पर पड़ता है वातावरण का तात्पर्य उन अवस्थाओं की संपूर्णता से है, जो व्यक्ति को व्यवहार करने हेतु उत्तेजित या उद्यत करता है अथवा जिसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति का व्यवहार परिमार्जित या संशोधित होता है। व्यक्ति के जैविक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक विकास में उपर्युक्त तत्वों के कार्यो को निम्नलिखित सूत्र द्वारा भी प्रकट किया जा सकता है-

वंशानुक्रम×वातावरण×समय = विकासात्मक स्तर

उपर्युक्त सूत्र से स्पष्ट है कि व्यक्तित्व के विकास में वंशानुक्रम या जैविक तत्व तथा वातावरण के तत्व दोनों का प्रभाव साथ-साथ पड़ता है। अतः, संक्षेप में कहा जा सकता है कि किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व उसकी वंशपरंपरा, जैविक एवं वातावरण के विभिन्न तत्वों की संयुक्त उपज है। इनमें किसी एक के महत्व को अधिक या कम बताना उचित नहीं है।

व्यक्तित्व के निर्माण एवं विकास में जैविक एवं सामाजिक तत्वों का सापेक्षिक महत्व-

व्यक्तित्व के जैविक एवं सामाजिक तत्वों या निर्धारकों के वर्णन से यह स्पष्ट है कि व्यक्तित्व के निर्माण और विकास की प्रक्रिया इन दोनों कारकों से निर्धारित होती है। अब प्रश्न यह है कि इनमें किसका महत्व कम या अधिक है, अर्थात कौन तत्व किस अनुपात में व्यक्तित्व को प्रभावित करता है? यह विषय अभी

तक विवादास्पद है। कुछ लोग वंशानुक्रम या जैविक संरचना की दुहाई देते हैं तो कुछ लोग सामाजिक वातावरण की। इस विवाद का संतोषप्रद हल दुष्कर है। वंशानुक्रम या जैविक संरचना में विकसित होने की विशिष्ट प्रवृत्ति या संभावना रहती है, लेकिन इस प्रवृत्ति या संभावना के पोषण और विकास में वातावरण से प्राप्त उत्तेजना एवं अवसर का महत्वपूर्ण हाथ रहता है। उदाहरणार्थ, वंशानुक्रम से किसी की शारीरिक रचना सुदृढ़ और मांसपेशियाँ गठी हुई होती है किंतु, यदि उपयुक्त आहार और व्यायाम का अवसर न मिले तो शारीरिक रचना का सुदृढ़ होना और मांसपेशियों का गठा होना संभव नहीं होगा। स्पष्ट है कि व्यक्तित्व के विकास एवं निर्माण में उपर्युक्त दोनों तत्वों का महत्वपूर्ण स्थान है-किसी एक का कम या अधिक नहीं।

अभ्यास प्रश्न-

1. इनमें से किस मनोवैज्ञानिक ने व्यक्तित्व की सर्वाधिक उपयुक्त परिभाषा दी हैं?

अ. शेल्डन ब. कैटेल

स. क्रेश्मर द. ऑलपोर्ट

1. निम्नलिखित में से कौन व्यक्तित्व विकास पर माता-पिता, परिवार और घर के माहौल के प्रभाव को बताता है?

अ. आनुवंशिकता

ब. संस्कृति

स. पारिवारिक माहौल

द. बुद्धिमत्ता

2. माता-पिता से बच्चों में मिलने वाले आनुवंशिक लक्षण जो व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं, उन्हें इस नाम से जाना जाता है:

A. सामाजिक कारक

B. पर्यावरणीय कारक

C. आनुवंशिकता

D. स्थितिजन्य कारक

2.6 सार संक्षेप-

1. व्यक्तित्व व्यक्ति के बाहरी गुणों तथा भीतरी गुणों का एक समन्वय है। यह अपेक्षाकृत टिकाऊ प्रकृति का होता है तथा वातावरण में व्यक्ति के अपूर्व समायोजन का निर्धारक भी।

2. व्यक्तित्व में चार प्रकार की संगतता पाई जाती है- प्रकार 'अ' संगतता, प्रकार 'ब' संगतता, प्रकार 'स' संगतता तथा प्रकार 'द' संगतता।

3. व्यक्तित्व विकास से तात्पर्य व्यक्तित्व पैटर्न के विकास से है। इसके मुख्य दो तत्व होते हैं- आत्म-संप्रत्यय तथा शीलगुण

4. व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया विभिन्न अवस्थाओं में सम्पन्न होती है तथा प्रत्येक अवस्था की अपने कुछ खास तो कुछ सामान्य विशेषता होती है।

6. व्यक्तित्व विकास की निम्नलिखित अवस्थाएं हैं- पूर्व प्रसूत अवस्था, शौशवावस्था, बचपनावस्था, बाल्यावस्था, पूर्व किशोरावस्था, किशोरावस्था, प्रौढ़ावस्था, मध्यावस्था तथा वृद्धावस्था।

7. जैविक कारक के अन्तर्गत आने वाले कारक हैं- आनुवंशिकता, शारीरिक गठन व धातु स्वभाग, अन्तःस्रावी ग्रंथिया, स्नायुमण्डल आदि।

8. सामाजिक कारक के अन्तर्गत व्यक्ति के जीवन के प्रारंभिक वर्षो का वातावरण, पारिवारिक वातारण, स्कूल, पड़ोस, खेल के साथी, समुदाय, संस्कृति आदि आते हैं।

2.7 पारिभाषिक शब्दावली-

आत्म-संप्रत्यय: व्यक्ति के स्वयं से सम्बद्ध एक ऐसा तथ्य जिसमें व्यक्ति यह समझता है कि वह कौन है तथा क्या है? यह एक दर्पण-बिम्ब होता है जो व्यक्ति द्वारा सम्पन्न भूमिकाओं, दूसरों के साथ उसके सम्बन्धों तथा उसके प्रति दूसरों द्वारा की गई प्रतिक्रियाओं द्वारा निर्धारित होता है।

हार्मोन्स: शरीर की अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से निकलने वाला स्राव जो शरीर या उसके किसी अंग की क्रियाओं को बढ़ाने या घटाने की शक्ति रखता है।

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. घ 2. स 3. स

2.9 संदर्भ-ग्रन्थ सूची-

1. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान- अरूण कुमार सिंह/आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास।

2. आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान- सुलैमान एवं खान, शुक्ला बुक डिपो, पटना

3. Walter Mischel – Introduction to Personality.

4. Shaffer & Lazarus – Theories of Personality.

5. Eysenck – The scientific study of personality

2.10 स्व-मूल्यांकन हेतु प्रश्न-

1. व्यक्तित्व से आप क्या समझते हैं?

2. व्यक्तित्व के जैविक निर्धारकों की विवेचना करें।

3. व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करने वाले सामाजिक-आर्थिक कारकों पर प्रकाश डालें।

इकाई 3. योग द्वारा व्यक्तित्व का विकास

इकाई संरचना

3.1 परिचय

3.2 उद्देश्य

3.3 योग की अवधारणा:

3.4 योग और व्यक्तित्व विकास के आयाम

5.5 व्यक्तित्व विकास के लिए योगाभ्यास

5.5.1 आसन

3.3.2 प्राणायाम

3.6 सारांश

3.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.9 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 परिचय

आधुनिक युग में उत्तम व्यक्तित्व वाले व्यक्ति का बहुत महत्व है| अधिकांश लोग पसंद करते हैं वह सभी के साथ समायोजित होने में सफल रहता है उनके जीवन में सफलता खुशियां और सामाजिक स्वीकृति जब चाहे तब मिलती रहती है ऐसे गुण और विशेषताएं जो भी व्यक्ति चाहे अर्जित कर सकता है यह भी तब संभव है जब वह इसके लिए अगर मन से सतत प्रयास करें| आज किशोरावस्था से युवावस्था तक के व्यक्तियों में अपने व्यक्तित्व को उन्नत करने की बहुत चाहत है| प्रत्येक आयु वर्ग के स्त्री पुरुष अपने व्यक्तित्व को बेहतर बनाना पसंद करते हैं और वे इस दिशा में प्रयास भी करते हैं|

आज के युग में प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है सामाजिक और पारिवारिक जीवन जटिल हो रहा है| सभी लोग यह मानते हैं कि अच्छा और प्रभावशाली व्यक्तित्व होने पर वह व्यक्ति अनेक उपलब्धियां प्राप्त कर सकता है, उसकी उपलब्धियों के पीछे उसके व्यक्तित्व का बहुत बड़ा हाथ रहता है| लोग यह भी विश्वास करते हैं कि आज उनका जो व्यक्तित्व है उसको बदला जा सकता है उन्नत किया जा सकता है अतः लोग आज टीवी अखबार या पत्रिकाओं के माध्यम से उन तरीकों की खोज करते रहते हैं जिनके द्वारा व्यक्तित्व को बदला और उन्नत किया जा सकता है| इस संबंध में वह अपने परिचितों और मित्रों से भी विचार-विमर्श करता है कुछ लोग व्यक्तित्व को जन्मजात उपहार या ईश्वरी उपहार भी मांगते हैं ऐसे व्यक्ति व्यक्तित्व के परिवर्तन और उत्कृष्ट होने में अपेक्षाकृत कम विश्वास करते हैं

व्यक्तित्व का विकास एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। व्यक्तित्व जन्म से ही विकसित होना शुरू हो जाता है, किशोरावस्था के दौरान लेकिन यह बहुत महत्व रखता है, जब व्यक्तित्व का पुनर्गठन होता है| व्यक्तित्व एक बहुत ही सामान्य शब्द है जिसका प्रयोग रोज़मर्रा की ज़िंदगी में किया जाता है यह हमें बताता है कि व्यक्ति किस प्रकार का है। हम लोग जानते कि प्रत्येक व्यक्ति आम तौर पर अधिकांश स्थिति में एक जैसा व्यवहार करता है। इस संगति के उदाहरण देखे जा सकते हैं-एक व्यक्ति जो आम तौर पर मिलनसार रहता है या वह व्यक्ति जो अधिकांश स्थितियों में दयालु या सहायक होता है । इस तरह का एक सुसंगत पैटर्न व्यवहार को व्यक्तित्व कहा जाता है। इसे व्यवहार का कुल योग कहा जा सकता है जिसमें दृष्टिकोण, भावनाएं, विचार आदतें और लक्षण शामिल हैं| व्यवहार का यह पैटर्न एक व्यक्ति के लिए विशेषता है।

व्यक्तित्व के विभिन्न आयाम हैं। पहलू हमारे व्यवहार के यह आयाम शारीरिक, भावनात्मक, सामाजिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक रूप से संबंधित हैं। इन आयामों के विकास के लिए योग एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप-

- योग के महत्त्व को समझ पायेंगे |
- व्यक्तित्व विकास में योग की भूमिका को समझ पायेंगे|

- व्यक्तित्व विकास में आसन की भूमिका को समझ पायेंगे|
- व्यक्तित्व विकास में प्राणायाम की भूमिका को समझ पायेंगे|

3.3 योग की अवधारणा:

योग की अवधारणा को ठीक प्रकार से समझने के लिये योग के शाब्दिक अर्थ का विश्लेषण करना आवश्यक है। महर्षि पाणिनि कृत संस्कृत व्याकरण में गणपाठ में तीन युक्त धातु है और तीनों ही धातुओं से योग शब्द का निष्पन्न होता है, किन्तु इसके अर्थ में भिन्नता है। हम एक-एक करके इन तीनों धातुओं से बने योगशब्द के अर्थ पर विचार करते हैं-

1. दिवादिगणीय युज् धातु
2. रूधादिगणीय युज् धातु
3. चुरादिगणीय युज् धतु

1. **दिवादिगणीय युज् धातू-** दिवादिगणीय युज् धातु से निष्पन्न योग शब्द समाधि अर्थ में प्रयुक्त होता है; '' युज् समाधौ'' प्रायः सभी विद्वान योग का तात्पर्य समाधि से ही लेते है। अन्य अर्थ गौण एवं लौकिक माने जाते है। यम-नियम, आसन-प्राणायामादि योगाभ्यासों के द्वारा समाधि की स्थिति को प्राप्त करके आत्मस्वरूप में स्थित होने का नाम ही योग है। इसी अर्थ को स्पष्ट करते हुये महर्षि व्यास ने कहा है-'' योगः समाधि'' अर्थात- ''योग का अर्थ समाधि है।''
2. **रूधादिगणीय युज् धातु-** रूधादिगणीय युज् धातु से निष्पन्न योग शब्द का अर्थ है- जुड़ना या मिलना अर्थात्-एकत्व की प्राप्ति- ''युजिर योगे'' यहाँ जुड़ने का तात्पर्य आत्मा और परमात्मा के जुड़ने से लिया जाता है और इस सन्दर्भ में योग का अर्थ है कि आत्मा एवं परमात्मा का मिलन ही योग है। किन्तु योग शब्द का यह अर्थ लेने पर एक विरोधाभास उत्पन्न हो जाता है कि क्या आत्मा एवं परमात्मा अथवा जीव एवं ब्रह्म एक दूसरे से पृथक-पृथक रहते है और क्या योग साधना के द्वारा ही दोनों में संयोग होता है? वास्तव में देखा जाये तो योग शब्द का यह अर्थ उपयुक्त नहीं है, क्योंकि आत्मा तो परमात्मा का ही एक अंश है और यह कभी भी परमात्मा से अलग नहीं होती। अब आप सोच रहे होंगे कि फिर जुड़ना से योग शब्द का आखिर क्या अभिप्राय है? संयोग अर्थ में योग शब्द का आशय यह है कि जब साधक का चित्त शुद्ध हो जाता है अर्थात् जब जन्म-जन्मान्तर के कर्म संस्कार नष्ट हो जाते हैं तब उस स्थिति में जीवात्मा को परमात्मा के साथ जुड़ाव की अनुभूति होती है और अन्ततः वह आत्मा भी परमात्मस्वरूप हो जाती है; इसी स्थिति को आत्मा एवं परमात्मा का मिलन कहा गया है। इसी सन्दर्भ में योगदर्शन के प्रणेता महान् अध्यात्मवेत्ता महर्षि पतंजलि ने कहा है- '' योगश्चित्तवृत्ति निरोधः'' (पातंजल योग सूत्र/समाधिवाद/2) अर्थात- '' चित्त की समस्त वृत्तियों का निरोध ही योग है।'' चित्तवृत्तियों

के निरोध का परिणाम क्या होता है, इसको स्पष्ट करते हुये वे आगे कहते हैं- '' तदा दुरष्टुःस्वरूपेऽवस्थानम्'' (पातंजल योग सूत्र/समाधिवाद/3) अर्थात-''तब (चित्त की वृत्तियों का निरोध होने पर)द्रष्टा आत्मस्वरूप में स्थित होजाता है।'' इस प्रकार स्पष्ट है कि आत्मा एवं परमात्मा का संयोग तो शाश्वत है, किन्तु इसकी अनुभूति चित्तशुद्धि होने पर ही होती है।

3. **चुरादिगणीय युज् धातु-** पाठकों, चुरादिगणीय युज् धातु से निष्पन्न योग शब्द संयम अर्थ में प्रयुक्त होता है-'' युज् संयमने'' अर्थात- '' मन एवं इन्द्रियों का संयम ही योग है।'' मन तथा इन्द्रियों को वश में किये बिना योग साधना में प्रगति नहीं हो सकती।

अतः आत्म साक्षात्कार के लिये समस्त इन्द्रियों को संयमित करना अत्यावश्यक है। उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि शब्द व्युत्पत्ति के आधार पर योग शब्द तीन अर्थों में प्रयुक्त होता है- समाधि, संयोग एवं संयम, किन्तु इन तीनों में समाधि अर्थ ही सर्वाधिक उपयुक्त है, अन्य अर्थ गौण हैं।

परिभाषायें- योग की परिभाषा महर्षि पतंजलि के अनुसार- '' योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'' (पातंजल योग सूत्र/ 1/2) अर्थात- ''चित्त की समस्त वृत्तियों का निरोध ही योग है।'' महर्षि व्यास के अनुसार- '' योगः समाधि स च सार्वभौमिश्चित्तस्य धर्मः।'' अर्थात- '' योग का अर्थ है- समाधि, जो चित्त का सार्वभौम धर्म है ।'' महर्षि याज्ञवल्क्य के अनुसार- **'' संयोग योग इत्युक्तो जीवात्मः परमात्मनो'' अर्थात- '' जीवात्मा एवं परमात्मा के मिलन का नाम योग है।''** (याज्ञवल्क्य स्मृति)

श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार- **'' योगस्थः कुरू कर्माणि, संगंव्यक्त्वा धनन्जय। सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा, समत्वं योग उच्चते।।''** (श्रीमद्भागवद्गीता/2/48)

अर्थात- '' हे अर्जुन! तुम आसक्ति का परित्याग करके सफलता-असफलता में समान होकर योग में स्थित होकर कर्म करों, क्योंकि समत्व ही योग है।'' ''योगःकर्मसुकौशलम्'' (श्रीमद्भगवद्गीता/2/50) अर्थात-'' कर्मों में कुशलता का नाम ही योग है।' यहाँ कर्मों में कुशलता का अर्थ हैं-'' कर्मफल की कामना का परित्याग करके कर्म करना अर्थात्- निष्काम कर्म ही योग है।

व्यक्तित्त्व के बारे में आप पिछली इकाइयों में अध्ययन कर चुके हैं|

3.4 योग और व्यक्तित्व विकास के आयाम:

योगाभ्यास व्यक्तित्व विकास के सभी आयामों के लिए कारगर पाए गए हैं योग व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों के विकास को निम्न प्रकार प्रभावित करटा है -

- **योग और व्यक्तित्व का शारीरिक आयाम:** शारीरिक आयाम हमारे शरीर से संबंधित है। इसका अर्थ है कि हमारे शरीर के सभी अंग और प्रणालियों ठीक से विकसित और कार्य करना चाहिए। इसका तात्पर्य बिना किसी बीमारी के स्वस्थ शरीर से है। यौगिक अभ्यास जैसे आसन, प्राणायाम और बंध बच्चों का शारीरिक विकास में लाभकारी भूमिका निभाते हैं| आसनों और प्राणायाम की एक श्रृंखला है जो शरीर की कार्यप्रणाली को सुधारने में मदद करते हैं|
- **योगा और व्यक्तित्व विकास का संवेगात्मक आयाम:** योगाभ्यास हमारे अभिवृत्ति संवेग और भाव से संबंधित संवेगात्मक आयामों के विकास के लिए प्रभावी है|दो प्रकार के संवेग होते हैं उदाहरण के लिए प्यार और दयालुता धनात्मक संवेग हैं जबकि क्रोध और भय नकारात्मक संवेग हैं इसी तरह से हमारी अनुभव और अभिवृत्ति भी धनात्मक और नकारात्मक हो सकती है संवेगात्मक विकास के लिए धनात्मक अनुभव जैसे अभिवृत्ति और संवेग विकसित होने चाहिए और नकारात्मक संवेग नियंत्रित होने चाहिए जैसा कि नकारात्मक अभिवृद्धि और संवेग| व्यक्तित्व विकास के लिए मानसिक ब्लॉक के रूप में कार्य करते हैं| योग इन धनात्मक संवेगों के विकास के लिए महत्वपूर्ण कार्य करता है यह संवेगात्मक स्थिरता लाता है| योग का अभ्यास जैसे कि यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहारा और ध्यान संवेगों के प्रबंधन में सहायता करते हैं|उदाहरण के लिए अहिंसा के नियम हमें नकारात्मकता से बचाते हैं और प्यार और दयालुता की धनात्मक भावनाओं में वृद्धि करते हैं| इसी तरह यम और नियम के अन्य सिद्धांत व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में धनात्मक संवेग और अभिवृत्ति का विकास करने में हमारी मदद करते हैं|

योग एवं व्यक्तित्व के बौद्धिक आयाम

बौद्धिक विकास हमारे मानसिक योग्यताएं और प्रक्रियाओं जैसे सृजनात्मक चिंतन, स्मृति, प्रत्यक्षीकरण, निर्णय लेने की क्षमता, छवि निर्माण, सृजनात्मकता आदि के विकास से संबंधित है| आयाम का विकास बहुत महत्वपूर्ण है जैसा कि यह हमें नई चीजें सीखने, नया ज्ञान और दक्षता प्राप्त करने के योग्य बनाता है| योगाभ्यास जैसे आसन, प्राणायाम, धारणा एकाग्रता विकसित करने, स्मृति और बौद्धिक विकास में मदद करते हैं|

योग एवं व्यक्तित्व के सामाजिक आयाम

प्रारंभिक सामाजीकरण शैशवावस्था में व्यक्तित्व विकास के एक महत्वपूर्ण पहलू के रूप में स्थान रखता है| माता-पिता और दादा-दादी के अनुमोदन और अस्वीकृति का जवाब देकर और उनके उदाहरणों का अनुकरण करके, बच्चा भाषा और अपने समाज के कई बुनियादी व्यवहार पैटर्न सीखता है। समाजीकरण की प्रक्रिया बचपन तक ही सीमित नहीं है, बल्कि जीवन भर चलती रहती है और बढ़ते बच्चे और किशोर को उस समाज के मानदंडों और नियमों के बारे में सिखाती है जिसमें वह रहता है। इस प्रक्रिया के

कुछ प्रमुख तत्वों में दूसरों के लिए सम्मान, अन्य व्यक्तियों को ध्यान से सुनना, उनमें दिलचस्पी लेना, और अपने विचारों और भावनाओं को विनम्रता से, ईमानदारी से और स्पष्ट रूप से व्यक्त करना शामिल है ताकि आपको आसानी से सुना और समझा जा सके। यम के सिद्धांतों में ये प्रमुख तत्व शामिल हैं और ये बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि ये हमारे दोस्तों, माता-पिता, शिक्षकों और अन्य लोगों के साथ हमारे संबंधों को बेहतर बनाने में हमारी मदद करते हैं।

योग और व्यक्तित्व का आध्यात्मिक आयाम:यह आयाम मूल्यों के विकास व आत्म-साक्षात्कार से संबंधित है जो किसी की क्षमता को पहचानने और उन्हें अधिकतम स्तर तक विकसित करने से संबंधित है। इस आयाम का समुचित विकास व्यक्ति को अपनी वास्तविक पहचान का एहसास कराने में मदद करता है। आध्यात्मिक विकास के लिए यम, नियम, प्रत्याहार और ध्यान (ध्यान) सहायक होते हैं। यम और नियम हमारे नैतिक मूल्यों को विकसित करने में मदद करते हैं जबकि प्राणायाम और ध्यान हमें अपने सच्चे स्व को महसूस करने में मदद करते हैं। आत्मनिरीक्षण 'स्व' के विकास के लिए बहुत प्रभावी है।

3.5 व्यक्तित्व विकास के लिए योगाभ्यास :

अब हम कुछ योगाभ्यासों पर चर्चा करेंगे जो व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों के विकास में योगदान देतें है |

3.5.1 आसन:

योग के एक महत्वपूर्ण अंग के रुप में योगासनों का उल्लेख आता है। योग से शरीर को स्वस्थ, लचीला एवं मन को एकाग्र बनाने के उद्देश्य से योगासनों का उपदेश योग के सभी प्रमुख ग्रन्थों में किया गया है। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक योगासनों की महत्ता एवं उपादेयता का वर्ण सभी यौगिक ग्रन्थों में किया गया है । विशेष रुप में योग चिकित्सा में योगासन का प्रयोग एक अचूक शस्त्र के रुप में किया जाता है। योग के प्रमुख ग्रन्थ योग दर्शन में महर्षि पतंजलि आसन को स्पष्ट करते हुए कहते हैं - स्थिरसुखमासनम्।। (पा0 योगसूत्र 2/46) अर्थात स्थिरतापूर्वक एवं सुखपूर्वक किया गया अभ्यास आसन कहलाता है। योगासनों का सतत अर्थात निरन्तर अभ्यास करने से शरीर स्वस्थ, लचीला, हल्का एवं अनेक प्रकार के रोगों से मुक्त बनता है। इसके साथ साथ योगासन मानसिक शान्ति प्राप्त करने के अपूर्व साधन हैं। योगासनों का अभ्यास करने से शरीर में दृढता एवम स्थिरता के साथ स्फूर्ति का संचार होता है। यौगिक ग्रन्थों में शारीरिक एवं मानसिक लाभ प्राप्त करने हेतु योगासनों का उल्लेख किया गया है। हम सभी जानते हैं कि आसन हमारे शारीरिक और मानसिक विकास के लिए फायदे मंद होते हैं अब, हम कुछ आसनों के बारे में चर्चा करेंगे|

ताड़ासन: संस्कृत में ताड़ा का अर्थ है 'ताड़ का पेड़'। इसे ताड़ासन कहते हैं क्योंकि इस आसन में विद्यार्थी पेड़ की तरह सीधा खड़ा होता है। इसलिए इसका नाम ताड़ासन रखा गया है|

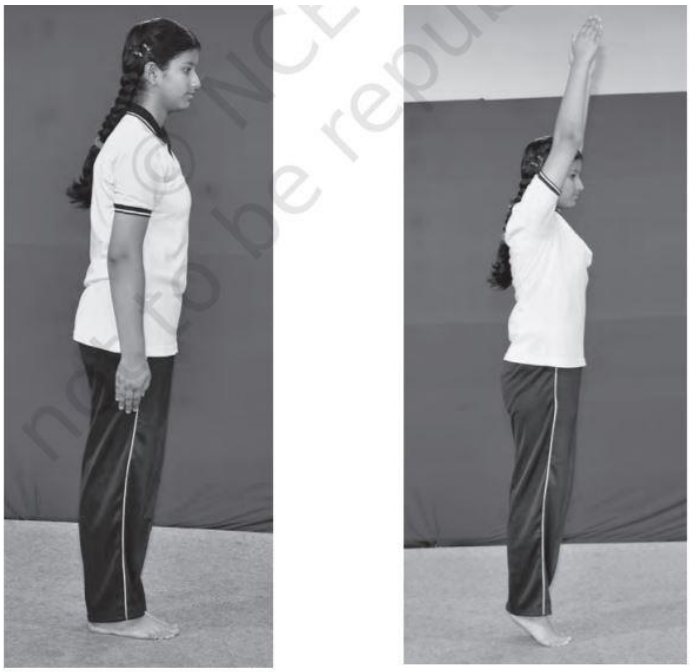

Source: NCERT

ताड़ासन के चरण:

1. सीधे खड़े हो जायें, पैर एक साथ, हाथ जांघ की तरफ। पीठ सीधी रखें और सामने की ओर देखें।
2. बाजुओं को ऊपर की ओर फैलाएं, उन्हें सीधा रखें और ऊर्ध्वाधर स्थिति में हथेलियाँ के साथ एक दूसरे के समानांतर, अंदर की ओर।
3. धीरे-धीरे एड़ियों को जितना हो सके ऊपर उठाएं और पैर की उंगलियों पर खड़े हो जाएं। जितना हो सके शरीर को ऊपर की ओर तानें। 5-10 सेकंड के लिए इस स्थिति को बनाए रखना है।
4. वापस आने के लिए सबसे पहले एड़ियों को फर्श पर लाएं। धीरे से हाथों को जाँघों की तरफ से नीचे लाएँ और आराम करें।

लाभ:

- यह पूरे शरीर की मांसपेशियों को लंबवत खिंचाव देता है।
- यह जांघों, घुटनों और टखनों को मजबूत करता है।
- यह बच्चों की लंबाई बढ़ाने में मदद करता है।
- यह आसन व्यक्ति के आत्म-जागरूकता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- यह आलस्य और सुस्ती को दूर करने में मदद करता है।

सीमायें: जिन लोगों को चक्कर आने की शिकायत है उन्हें इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

कटिचक्रासन: संस्कृत में कटि का अर्थ है 'कमर' और चक्र का अर्थ है 'पहिया'। इस आसन में कमर को दायीं और बायीं ओर घुमाया जाता है। बाजुओं के साथ-साथ कमर की हरकतें कुछ पहिया की तरह दिखती हैं। इसलिए इसे कटिचक्रासन कहा जाता है।

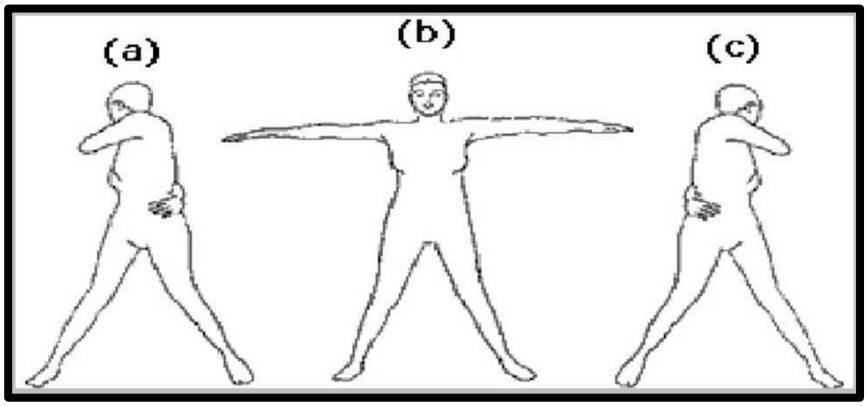

Source: https://vishwashantiyoga.com/kati-chakrasana

कटिचक्रासन के चरण:

1. पैरों के बीच 12 इंच की दूरी बनाकर जमीन पर सीधे खड़े हो जाएं।
2. अब बाजुओं को हथेलियों के कंधे के स्तर एक दूसरे का सामने रखते हुए शरीर के सामने फैलाकर रखें|
3. सांस भरते हुए बाजुओं को धीरे-धीरे अपने शरीर की दाहिनी ओर घुमाएं तरफ।
4. अपने शरीर को कमर से दाहिनी ओर मोड़ें और जहाँ तक संभव हो अपनी बाँहों को पीछे की ओर ले जाएँ।
5. दायीं ओर झूलते समय दाहिने हाथ को रखें सीधा और बायां हाथ मुड़ा हुआ।
6. अभ्यास को बाईं ओर घुमा--कर भी दोहराएं।

लाभ:

- स्लिम बनाने में मदद करता है।
- यह कब्ज से राहत देता है और काठ का क्षेत्र (lumber region) मजबूत बनाता है।
- यह सांस की बीमारियों के लिए अच्छा है। इससे फेफड़ों का क्षय रोग रोका जा सकता है।
- यह कंधे, गर्दन, हाथ, पेट, पीठ और जांघ को मजबूत करता है।

सीमायें: रीढ़ की हड्डी में पुराने दर्द या चोट से पीड़ित होने पर इसका अभ्यास न करें|

सिंहासन:

संस्कृत में सिम्हा का अर्थ है 'शेर'। इस आसन में चेहरा खुला मुंह और जीभ ठुड्डी की ओर खिंचे हुए

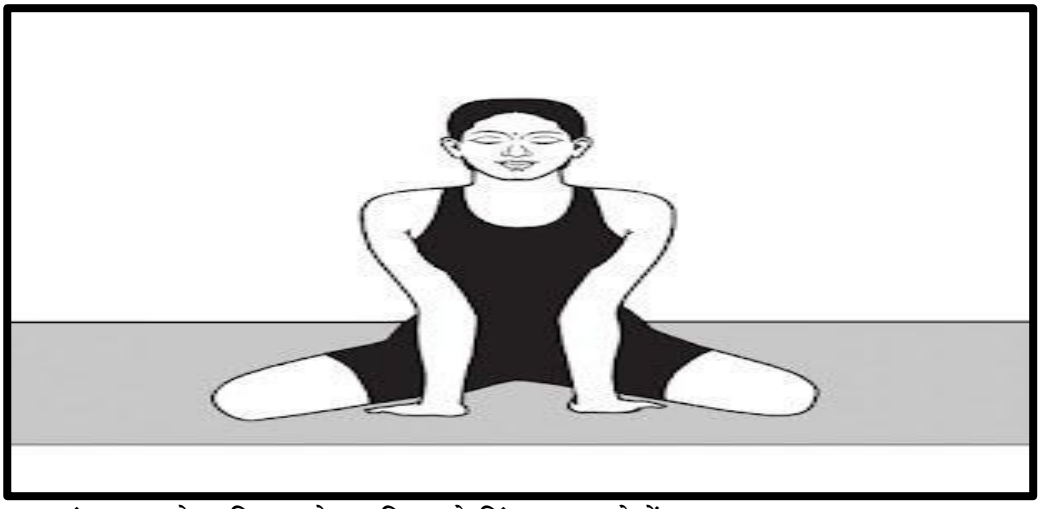

सिंह का भयंकर रूप जैसा दिखता है, इसलिए इसे सिंहासन कहते हैं|

Source: https://www.oklife.in/2016/06/blog-post.html

सिंहासन के चरण:

1. वज्रासन में हथेलियों को घुटनों पर रखकर बैठ जाएं।
2. घुटनों को अलग रखें।
3. दोनों एड़ियों को मूलाधार के नीचे ऊपर की ओर रखें।
4. उंगलियों को फैलाते हुए दोनों हथेलियों को संबंधित घुटनों पर रखें।
5. आगे की ओर झुकें और हथेलियों को फर्श पर घुटने के बीच रखें ।
6. मुंह खोलें और जीभ को जितना संभव हो सके फैलायें और भौंहों के बीच केंद्र को देखें।
7. भौंहों का बीच दृष्टि को छोड़ें और अपनी आंखों को आराम दें।
8. हथेलियों को संबंधित घुटनों पर रखकर वज्रासन में आएं और आराम करें।

लाभ:

- यह चेहरे और गर्दन की मांसपेशियों के लिए फायदेमंद होता है।
- जीभ अधिक लोचदार और स्वस्थ हो जाती है।
- लार ग्रंथियां मजबूत हो जाती हैं।
- यह थायराइड के कामकाज को नियंत्रित करता है।
- यह सुस्ती और अवसाद को कम करने में मदद करता है|

सीमायें: पीठ दर्द, गठिया कूल्हे और घुटने, गले की समस्या और जबड़े में दर्द से पीड़ित होने पर इसका अभ्यास न करें।

मंडुकासन:

मंडुका एक संस्कृत शब्द है जिसका का अर्थ है 'मेंढक'। इस आसन में अंतिम आसन मेंढक के आकार जैसा दिखता है। इसलिए, इसका नाम मंडुकासन है।

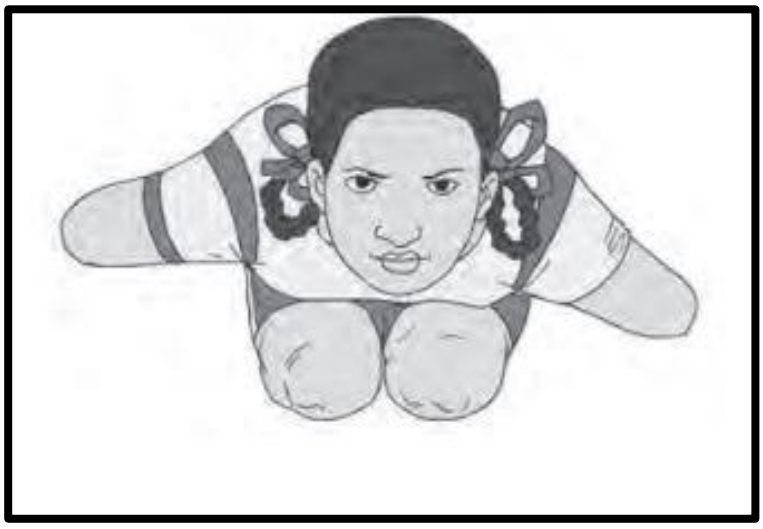

Source: NCERT

मंडुकासन के चरण:

1. वज्रासन में बैठें।
2. अंगूठों को अंदर की ओर से मुट्ठी बनाकर नाभि के पास रखें और नाभि क्षेत्र को दबाएं।
3. धीरे-धीरे सांस छोड़ें, कमर से आगे की ओर झुकें, छाती को नीचे करें, ताकि वह जांघों पर टिकी रहे।
4. सिर और गर्दन को ऊपर उठाकर सामने की ओर टकटकी लगाकर देखें।
5. 5-10 सेकंड के लिए आराम से स्थिति बनाए रखें।
6. आसन को छोड़ने के लिए ट्रंक उठाकर वापस बैठने की स्थिति में आ जाएं अपनी मुट्ठियों को नाभि क्षेत्र से हटाकर वज्रासन में बैठ जाएं।

लाभ:

- ये आसन भारी वजन पेट, जांघ या कूल्हे वाले लोगों के लिए फायदेमंद है।
- यह पेट से गैसों को खत्म करता है।

- यह कब्ज, मधुमेह और पाचन विकार से पीड़ित लोगों को लाभ पहुंचाता है।

सीमायें:स्लिप डिस्क, लम्बर स्पॉन्डिलाइटिस या रीढ़ की व किसी अन्य प्रमुख बीमारियों में पीड़ित व्यक्ति को इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए|

उत्ताना-मंडूकासन: उत्ताना का अर्थ है 'सीधा' या 'फैला हुआ' और मंडुका का अर्थ है 'मेंढक'। इस आसन की अंतिम स्थिति में शरीर एक फैला हुआ या सीधा मेंढक जैसा दिखता है, इसलिए इसे उत्ताना-मंडूकासन कहा जाता है।

Source: NCERT

उत्ताना-मंडूकासन के चरण:

1. वज्रासन में बैठें।
2. दोनों घुटनों को इतना चौड़ा रखें कि दोनों पैरों के पंज एक दूसरे को स्पर्श करें। सिर, गर्दन और धड़ को सीधा रखा जाता है। आंखें बंद या खुली रखी जाती हैं|
3. बाजुओं को सिर के ऊपर उठाएं, मोड़ें और पीछे ले जाएं।
4. दायीं हथेली को बायें कंधे के नीचे और बायीं हथेली को दायें कंधे के नीचे रखें।
5. इस स्थिति को आराम से 5-10 सेकेंड तक बनाए रखें।
6. वापस आने के लिए हाथों को एक-एक करके हटा लें, घुटनों को आपस में मिला लें और वज्रासन में आ जाएं।

लाभ:

- यह कमर दर्द को कम करने में मदद करता है।
- यह छाती और पेट में रक्त परिसंचरण में सुधार करता है।
- यह पेट और कंधे की मांसपेशियों को टोन करता है।
- यह डायाफ्राम की गति में सुधार करके फेफड़ों की कार्यप्रणाली में सुधार करता है।

सीमायें:पुराने घुटने के दर्द और बवासीर से पीड़ित लोगों को इस आसन से बचना चाहिए।

कुक्कुटासन:

इसे कुक्कुटासन कहा जाता है क्योंकि यह आसन मुर्गा की मुद्रा का अनुकरण करता है। यह एक संतुलनकारी मुद्रा है, इसलिए इसका अभ्यास सावधानी से करना चाहिए। इस अभ्यास को करने से पहले, व्यक्ति के पास पद्मासन का पर्याप्त अभ्यास होना चाहिए।

Source: https://www.yogicwayoflife.com/kukkutasana-the-cockerel-pose/

कुक्कुटासन के चरण:

1. पद्मासन में बैठें। अपना हाथ साइड में रखें।
2. अब बाजुओं को पिंडलियों और जाँघों के बीच डालें जब तक हथेलियाँ फर्श पर न पहुँच जाएँ।
3. सांस भरते हुए शरीर को हवा में जितना हो सके ऊपर उठाएं। शरीर को हाथों पर संतुलित करें| गर्दन सिर को सीधा रखें।
4. सामान्य सांस के साथ 5-10 सेकंड के लिए आराम से स्थिति बनाए रखें।
5. आसन को छोड़ने के लिए सास नीचे करें और शरीर फर्श पर ले आएं। भुजाओं को बाहर निकालें और पद्मासन में बैठ जाएं।

लाभ:

- यह आसन कंधे, बाहों और कोहनी को मजबूत करने में मदद करता है
- यह आसन संतुलन और स्थिरता की भावना को विकसित करने में भी मदद करता है।
- यह शरीर को मजबूत बनाता है।
-

सीमायें: हृदय रोग या उच्च रक्त दबाव से पीड़ित लोगों को इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए|

अकर्ण धनुरासन: अकर्ण का अर्थ है 'कान' और धनुर का अर्थ है 'धनुष'। इस आसन में मुद्रा 'धनुष' की तरह दिखती है। इस आसन में हाथ को धनुष और तीर की तरह कान तक खींचा जाता है। इसलिए इसे अकर्ण धनुरासन कहा जाता है।

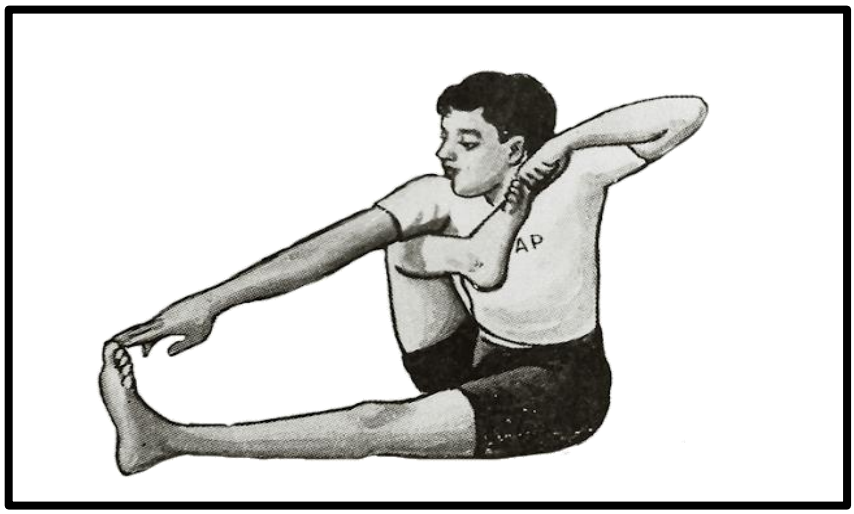

Source: https://amityogavart.blogspot.com

अकर्ण धनुरासन के चरण:

1. बैठ जाएं और दोनों पैरों को सामने फैलाएं। दोनों हाथों को शरीर के बगल में रखें।
2. हथेलियां जमीन पर टिकी होनी चाहिए, उंगलियां एक साथ आगे की ओर इशारा करते हुए।
3. बाएं हाथ की तर्जनी अंगुली और अंगूठे द्वारा दाहिने बड़े पैर के अंगूठे को पकड़ें।
4. दाहिने हाथ की तर्जनी और अंगूठे की सहायता से हुक बना लें। बाएं पैर के अंगूठे को पकड़ें।
5. दाहिने पैर को घुटने से मोड़ें। पैरों के पंजों को अगूंठे से इस प्रकार खींचे कि यह बाएं कान तक पहुंच जाए।
6. कुछ समय तक़रीबन 5 से 10 सेकेंड तक इसी स्थिति में रहें।
7. वापस आने के लिए दाहिने पैर को नीचे करें, हाथ को किनारे से छोड़ें और इसे रख दें। अब बाएं पैर को फर्श पर ले आएं। दाहिने हाथ को छोड़ दें और इसे शरीर के बगल में रख दें। (दूसरी तरफ से पैरों और हाथों की स्थिति बदलते हुए इसे करें।)

लाभ:

- यह आसन कब्ज और अपच में लाभकारी होता है।
- यह पेट की मांसपेशियों, पैर व बाहों की मांसपेशियों को मजबूत करता है।
- यह पैरों को लचीला बनाता है।

परिसीमन: रीढ़ की हड्डी की शिकायत से पीड़ित होने, कूल्हे के जोड़ों और कटिस्नायुशूल का विस्थापन पर इस अभ्यास को न करें।

मत्स्यासन

संस्कृत में मत्स्य का अर्थ है 'मछली'। इस आसन की अंतिम मुद्रा में, शरीर तैरती हुई मछली का आकार ले लेता है। मुड़े हुए पैर मछली की पूंछ से मिलते जुलते हैं, इसलिए इसे मत्स्यासन कहा जाता है। यह आसन किसी विशेषज्ञ की देखरेख में करना चाहिए।

Source: https://nexoye.com/matsyasana-fish-pose-benefits-steps-precautions

मत्स्यासन के चरण:

1. पद्मासन में बैठें।
2. कोहनियों के सहारे पीठ के बल लेट जाएं।
3. गर्दन और छाती को थोड़ा ऊपर उठाएं; पीठ धनुषाकार और जमीन से उठा होना चाहिए या।
4. सिर को पीछे की ओर मोड़ें और सिर फर्श पर लगाएं।
5. दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से हुक बनाएं; तथा बड़े पैर की उंगलियों को विपरीत हाथों के हुक से पकड़ें।
6. इस स्थिति को 10-15 सेकंड या जितनी देर तक बनाए रखें।
7. वापस आने के लिए, पैर की उंगलियों को छोड़ दें; ज़मीन पर हाथ रखें; हाथों के सहारे सिर ऊपर उठाएं। कोहनियों के सहारे बैठ जाएं।

लाभ:

- यह मस्तिष्क की रक्त की आपूर्ति में सुधार करता है।
- यह थायरॉयड ग्रंथि के कामकाज को नियंत्रित करता है और प्रतिरक्षा तंत्र में सुधार करता है।
- यह पीठ दर्द और सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस को कम करता है।
- यह रक्त को पैरों से पेल्विक क्षेत्र की ओर मोड़ता है और पेट की मांसपेशियों के स्वर को बढ़ाने में मदद करता है।

- यह फेफड़ों और श्वसन विकारों में लाभकारी है।

सीमाएं: चक्कर आने की स्थिति, हृदय रोग, हर्निया, गठिया, घुटने और टखने और रीढ़ की समस्या में इस आसन के अभ्यास से बचें।

भुजंगासन: भुजंगासन में दो शब्द भुजंगा और आसन शामिल हैं। संस्कृत में,भुजंगा का अर्थ है नाग (सांप) और आसन का अर्थ है मुद्रा। इस आसन की अंतिम स्थिति में शरीर हुड वाले सांप के आकार जैसा दिखता है, इसलिए इस आसन को भुजंगासन कहा जाता है।

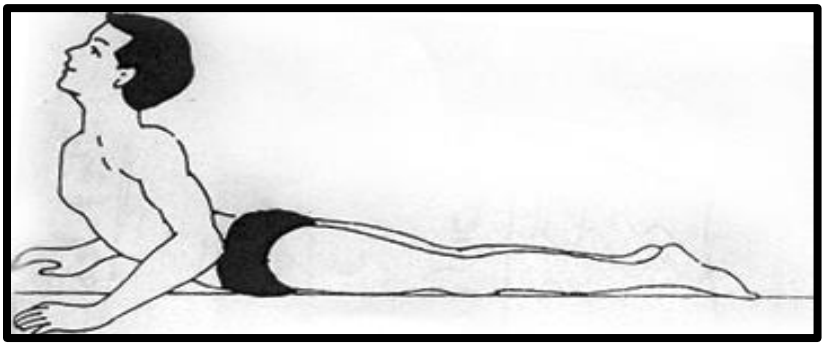

Source: https://www.achhikhabar.com/2019/02/20/yoga-asanas-in-hindi

भुजंगासन के चरण:

1. माथे को फर्श से छूते हुए जमीन पर झुकें; पैर एक साथ, हाथ जांघों के किनारे ।
2. हाथों को कोहनियों पर मोड़ें और हथेलियों को कंधों के बगल में,अंगूठे बगल के नीचे के, उंगलियों की नोक कंधे की रेखा को पार नहीं करते हुए।
3. सांस भरते हुए धीरे-धीरे सिर, गर्दन और कंधों को ऊपर उठाएं। कंधों को पीछे की ओर झुका होना चाहिए।
4. धड़ को नाभि क्षेत्र तक ऊपर उठाएं। ठुड्डी को जितना हो सके ऊपर उठाएं।
5. आंखों को ऊपर की ओर देखते रहना चाहिए।
6. 5-10 सेकंड के लिए या जब तक आराम से स्थिति बनाए रखें।
7. वापस आने के लिए नाभि क्षेत्र के ऊपरी हिस्से, छाती, कंधे, ठुड्डी और सिर को नीचे लाएं।
8. माथे को जमीन पर और हाथों को शरीर के साथ, हाथों को जाँघों के पास रखें। आराम करें।

लाभ:

- यह स्पाइनल कॉलम को प्रभावित करता है और इसे लचीला बनाता है।
- यह पाचन संबंधी शिकायतों का समाधान करता है।
- यह पेट के अंदर के दबाव को बढ़ाता है जिससे आंतरिक अंगों को लाभ होता है, विशेष रूप से यकृत और गुर्दे।

- यह तन और मन दोनों को आराम देता है।

सीमायें: हर्निया, पेप्टिक अल्सर, आंतों के तपेदिक से पीड़ित और तीव्र पेट दर्द वाले लोगों को इस अभ्यास से बचना चाहिए।

मकरासन: इस मुद्रा को मकरासन कहा जाता है क्योंकि इसमें शरीर मकर के आकार जैसा दिखता है, जिसका संस्कृत में अर्थ है 'मगरमच्छ'। मकरासन शरीर और दिमाग के लिए एक आराम है| यह आसन और तनाव कम करने के लिए बहुत फायदेमंद है।

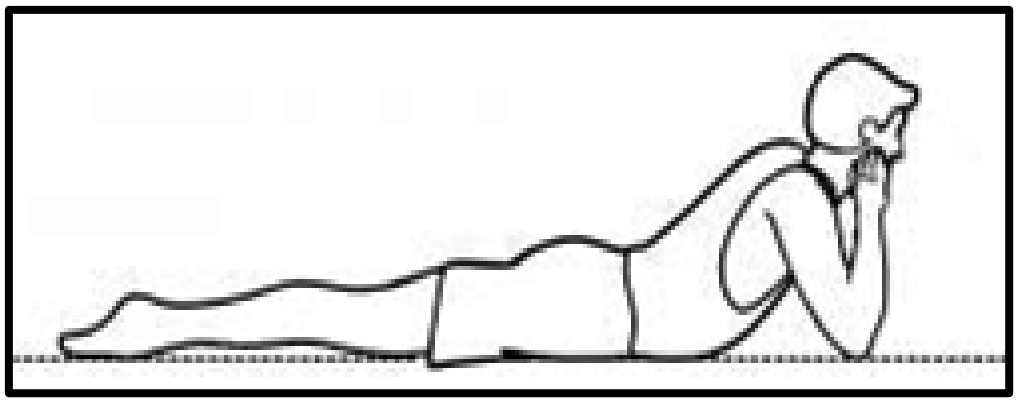

Source: https://helloswasthya.com/fitness/balance-flexibility/makarasana

मकरासन के चरण:

1. पेट के बल लेट जाएं।
2. पैरों को एड़ी अंदर रखते हुए आरामदायक दूरी पर रखें और पैर की उंगलियां बाहर की ओर ।
3. हाथों को कोहनियों पर मोड़ें और सिर के नीचे रखें।
4. सिर को बाजुओं के तकिये पर रखें, आँखें बंद करें और आराम करें|
5. वापस आने के लिए बाजुओं को शरीर और पैरों के साथ में लाएं।

लाभ:

- परंपरागत रूप से यह आराम की मुद्रा है।
- यह लगभग सभी मनोदैहिक विकारों में लाभकारी है।
- यह श्वसन अंगों के साथ-साथ पाचन अंग के लिए भी फायदेमंद है।

सीमायें: जिन्हें मोटापे और हृदय संबंधी समस्याओं की शिकायत है उनको इस अभ्यास से बचना चाहिए।

शलभासन: इस आसन का नाम टिड्डियों के नाम पर रखा गया है। संस्कृत में शलभा 'टिड्डी' को संदर्भित करता है और आसन का अर्थ है 'आसन'। इस आसन की अंतिम मुद्रा में शरीर टिड्डे जैसा दिखता है।

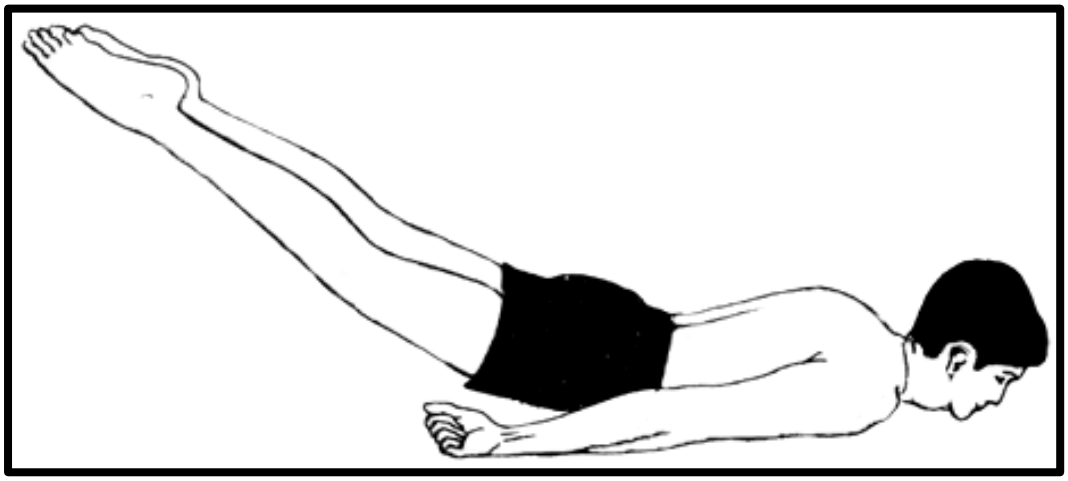

SOURCE: MISHRA, GOPAL (2021) "तन-मन स्वस्थ रखने के 10 उपयोगी योगासन, WWW.ACHGABAR.COM

शलभासन के चरण:

1. पेट के बल लेट जाएं, पैर एक साथ, हाथ जांघों के किनारे, हथेलियाँ नीचे की ओर और एड़ी साथ में। छाती और माथा जमीन पर रखना चाहिए।
2. दोनों हथेलियों को जाँघों के नीचे रखें।
3. ठुड्डी को थोड़ा आगे की ओर खींचे और फर्श पर टिका दें।
4. सांस भरते हुए हथेलियों को जमीन पर दबाते हुए ऊपर उठाएं दोनों पैरों को जितना हो सके ऊपर की ओर उठाएं।
5. कुछ सेकंड के लिए सामान्य श्वास के साथ स्थिति बनाए रखें।
6. वापस आने के लिए पैरों को धीरे-धीरे नीचे फर्श पर ले आएं। हाथों को जाँघों से बाहर निकालें। पेट के बल लेट जाएं, पैर एक साथ, हाथ जांघों के किनारे और हथेलियां नीचे की ओर हों।

लाभ:

- शलभासन स्वायत्त तंत्रिका तंत्र विशेष रूप से पैरासिम्पेथेटिक सिस्टम को उत्तेजित करता है।
- यह पीठ के निचले हिस्से और श्रोणि अंगों को मजबूत करता है।
- यह हल्के साइटिका, पीठ दर्द और गैर-गंभीर स्लिप डिस्क की स्थिति में राहत देता है।
- यह पैरों, जांघों, कूल्हों, नितंबों, पेट के निचले हिस्से, डायाफ्राम और कलाई के लिए एक अच्छा व्यायाम है।
- यह श्रोणि क्षेत्र में रक्त परिसंचरण में सुधार करता है।
- यह घुटनों के आसपास जांघों, कमर और पेट पर बनने वाली अत्यधिक चर्बी को कम करने में मदद करता है, जिससे शारीरिक बनावट और सकारात्मक शरीर की छवि में सुधार होता है।

- यह लीवर की कार्यप्रणाली को नियंत्रित करने में मदद करता है।
- यह रीढ़ की लोच और लचीलेपन को बढ़ाने के लिए फायदेमंद है।

सीमाएं: उच्च रक्तचाप, अस्थमा और हृदय रोग, कमजोर फेफड़े, हर्निया, पेप्टिक अल्सर और आंतों के क्षय रोग से पीड़ित लोगों को इस आसन के अभ्यास से बचना चाहिए।

धनुरासन: संस्कृत में धनुर का अर्थ है 'धनुष'। इसे धनुष मुद्रा कहा जाता है क्योंकि इस मुद्रा में शरीर एक धनुष के समान होता है जिसके साथ इसकी डोरी जुड़ी होती है। सूंड और जांघें धनुष का प्रतिनिधित्व करते हैं, जबकि हाथ और पैर तार की जगह लेते हैं

धनुरासन के चरण:

1. प्रवण स्थिति में लेट जाओ।
2. सांस छोड़ते हुए पैरों को धीरे-धीरे घुटनों के बल पीछे की ओर मोड़ें।
3. पंजों या टखनों को अपनी क्षमता के अनुसार हाथों से मजबूती से पकड़ें।
4. सांस भरते हुए जांघों, सिर और छाती को यथासंभव ऊपर उठाएं। खिंचाव करें और पैर की उंगलियों या टखनों को सिर की ओर लाएं। ऊपर की ओर देखें। 5-10 सेकंड के लिए आराम से स्थिति बनाए रखें।
5. वापस आने के लिए बाजुओं को छोड़ दें और उन्हें शरीर के बगल में रखें।। पैरों को सीधा करें। पैरों, सिर, कंधों और छाती को धीरे-धीरे फर्श पर लाएं और प्रारंभिक स्थिति में आराम करें।

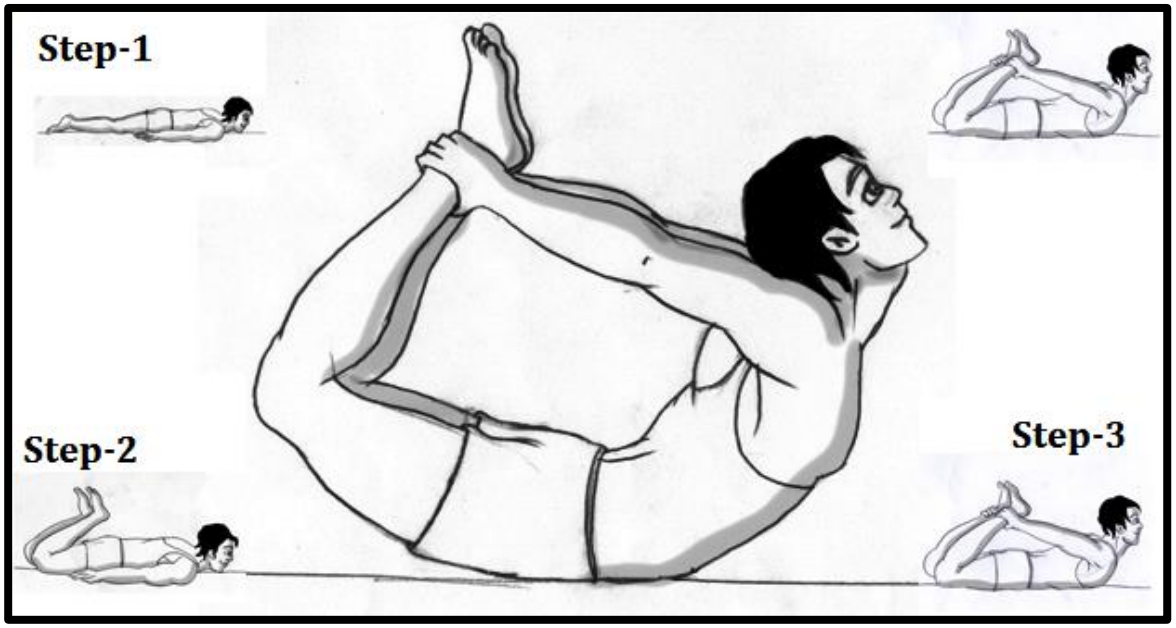

Source: ibid

लाभ:

- धनुरासन कंधों के जोड़ घुटनों, टखनों और पूरी रीढ़ की हड्डी के लिए एक अच्छा व्यायाम है।
- यह मधुमेह मेलिटस के प्रबंधन के लिए फायदेमंद है क्योंकि यह जिगर और अग्न्याशय की मालिश करता है।
- यह पेट, कमर और कूल्हों के आसपास की अतिरिक्त चर्बी को कम करने में मदद करता है।
- यह पीठ, हाथ, पैर, कंधे, गर्दन और पेट में स्नायुबंधन, मांसपेशियों और नसों को मजबूत करता है।
- यह थायराइड और अधिवृक्क ग्रंथियों को उत्तेजित और नियंत्रित करता है।
- यह पीठ दर्द को कम करने में मदद करता है।
- यह झुकी हुई पीठ और झुके हुए कंधों की स्थिति के लिए अच्छा है।

परिसीमन: उच्च रक्तचाप, हर्निया, पेप्टिक अल्सर, अपेंडिसाइटिस, कोलाइटिस स्लिप डिस्क, लम्बर स्पॉन्डिलाइटिस से पीड़ित व्यक्ति को यह आसन नहीं करना चाहिए।

सर्वांगासन: सर्वांगासन में तीन शब्द शामिल हैं: सर्व, अंग और आसन। संस्कृत में, सर्व का अर्थ है 'संपूर्ण' और अंग का अर्थ है ' शरीर के भाग' और आसन का अर्थ है 'आसन'। यह आसन सर्वांगासन

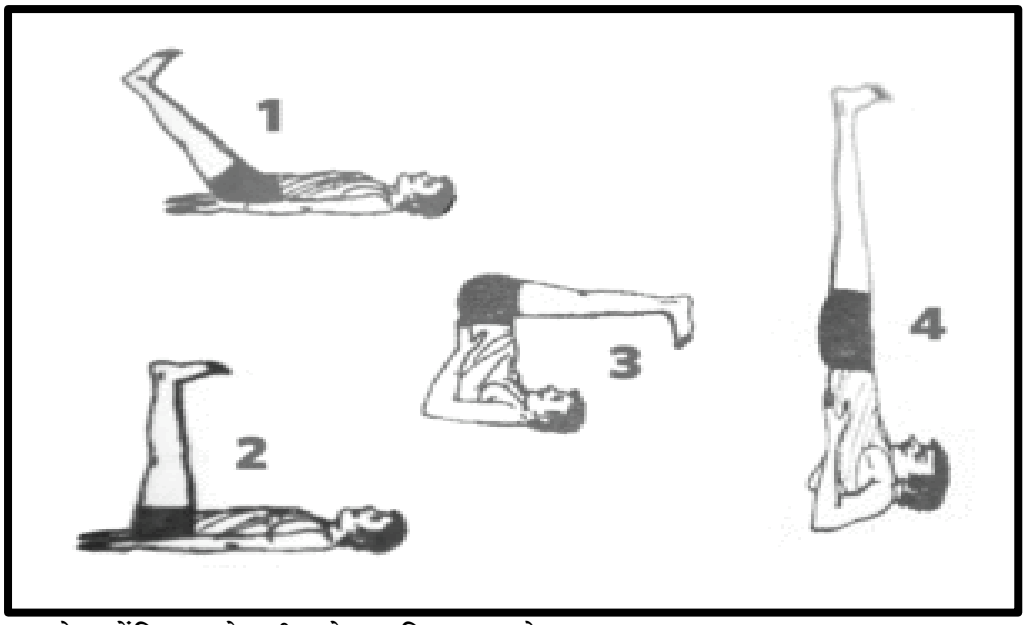

कहलाता है, क्योंकि यह पूरे शरीर को प्रभावित करता है।

Source: ibid.

सर्वांगासन के चरण

1. हाथों को जाँघों के साथ पीठ के बल लेट जाएँ, हथेलियाँ ज़मीन पर टिकी हुई हों।

2. हाथों को नीचे की ओर धकेलते हुए धीरे-धीरे दोनों पैरों को 30डिग्री तक उठाएं। कुछ सेकंड के लिए इस स्थिति में रहें।
3. धीरे-धीरे, टांगों को 60 डिग्री तक और ऊपर उठाएं और कुछ सेकंड के लिए इस स्थिति को बनाए रखें।
4. पैरों को 90 डिग्री तक और ऊपर उठाएं और कुछ सेकंड के लिए इसी स्थिति में रहें।
5. बाजुओं को कोहनी पर मोड़ें और हाथों को कूल्हों पर रखें। अब नितंबों को हाथों से दबाते हुए ऊपर उठाएं। पैरों, पेट और छाती को धड़ के साथ एक सीधी रेखा में ऊपर उठाएं। पीठ को सहारा देने के लिए हथेलियों को अपनी पीठ पर रखें।
6. छाती को आगे की ओर धकेलें ताकि वह ठुड्डी से मजबूती से दब जाए। कोहनियों को एक दूसरे के पास रखें।
7. छाती को 5-10 सेकंड के लिए आराम से स्थिति में बनाए रखें। वापस आने के लिए रीढ़ की हड्डी को बहुत धीरे-धीरे फर्श के साथ नीचे करें। पीठ को सहारा देते हुए हाथों से नितंबों को नीचे करें और नितंबों को जमीन पर लाएं। पैरों को 90^0 तक लाएं और वहीं रुक जाएं। हाथों को शरीर के पास जमीन पर मजबूती से टिकाएं। पैरों को अभी भी 60^0 और 30^0 तक नीचे करें और फिर धीरे-धीरे जमीन पर टिकाएं और आराम करें।

लाभ:

- यह थायराइड की क्रिया को नियंत्रित करता है।
- यह मस्तिष्क में रक्त के संचार को बढ़ाने में मदद करता है।
- यह गर्दन क्षेत्र को मजबूत करता है।
- यह एंडोक्राइन ग्रंथि से संबंधित समस्याओं के प्रबंधन में मदद करता है।

सीमाएं :उच्च रक्तचाप, मिर्गी, गर्दन और काठ के क्षेत्र में दर्द से पीड़ित, अत्यधिक मोटापा और हृदय संबंधी शिकायत वाले लोगों को इसका अभ्यास नहीं करना चाहिए।

हलासन: संस्कृत और हिंदी में हल का अर्थ है 'हल'। इस आसन की अंतिम स्थिति में, शरीर हल के आकार जैसा दिखता है। जैसे हल कठोर जमीन को नरम बनाता है, इस आसन में नसों को फैलाया जाता है जिससे शरीर की कठोरता कम हो जाती है।

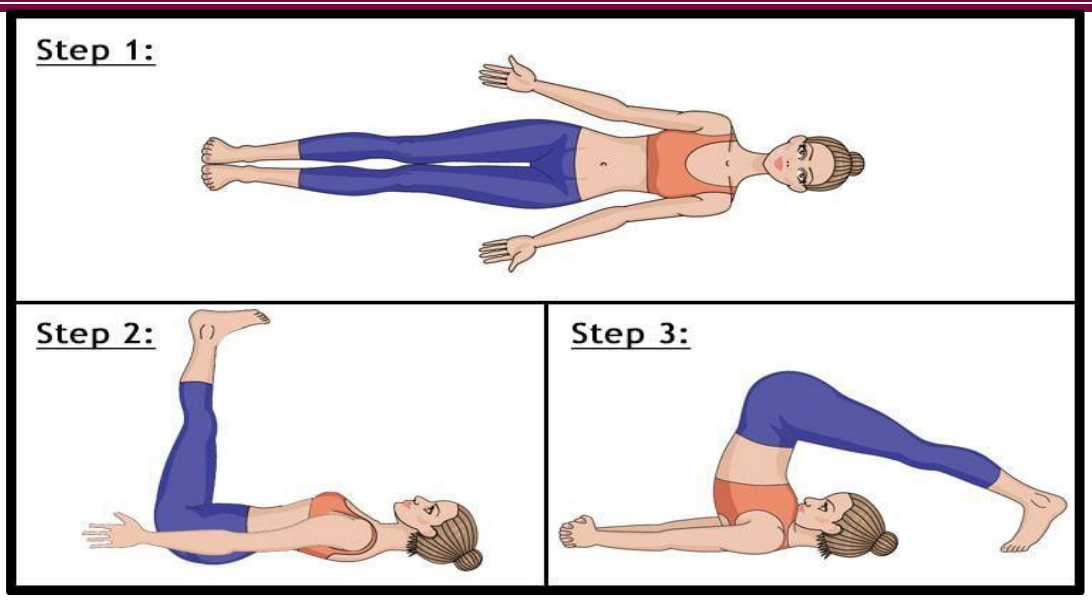

Source: Education Master.Com

हलासन के चरण:

1. लापरवाह स्थिति में लेटें, पैर एक साथ और हाथ शरीर के बगल में।
2. घुटनों को सीधा रखते हुए पैरों को 30° तक ऊपर उठाएं।
3. टांगों को पुन:60° तक और ऊपर उठाएं।
4. टांगों को और भी 90° तक ऊपर उठाएं, उन्हें लंबवत और सीधा रखें।
5. बाजुओं को दबाते हुए पैरों को सिर के ऊपर, पंजों को जमीन से छूते हुए धड़ को ऊपर उठाएं। पैरों को सिर से थोड़ा आगे की ओर धकेलें।
6. हाथ को फर्श पर सीधा रखें। 5-10 सेकंड के लिए स्थिति बनाए रखें।
7. वापस आने के लिए बाजुओं को हटा दें, धीरे-धीरे पीठ और नितंबों को जमीन पर टिकाएं, पैरों को 90^0 की स्थिति में लाएं। पैरों को शुरुआती स्थिति में करें।

लाभ

- यह थायरॉयड ग्रंथि/पैराथायरायड ग्रंथि को अच्छा व्यायाम देता है।
- यह रीढ़ की हड्डी के स्तंभ और पीठ की गहरी मांसपेशियों को एक अच्छा खिंचाव देता है, जिससे रीढ़ मजबूत और स्वस्थ होती है।
- यह बच्चों की लंबाई बढ़ाने में मदद करता है।
- यह अपच और कब्ज की समस्या को दूर करता है।

सीमायें: रीढ़ की हड्डी में अकड़न, सर्वाइकल स्पॉन्डिलिटी, हर्निया, उच्च रक्तचाप और स्लिप डिस्क के मामले में इस आसन के अभ्यास से बचना चाहिए।

शवासन: संस्कृत में, शव का अर्थ है 'मृत शरीर'। इस आसन में शरीर यह एक मृत शरीर जैसा दिखता है, इसलिए इस आसन को शवासन कहा जाता है। जैसा कि नाम से पता चलता है, यह आसन व्यक्ति को तनाव से दूर ले जाता है; तनाव को कम करता है और मन और शरीर को आराम देता है।

https://media.istockphoto.com

शवासन के चरण :

1. सुपाइन पोजीशन में सीधे लेट जाएं।
2. पैरों को 8-12 इंच की दूरी पर रखते हुए पैरों को सीधा रखें। एड़ियों को अंदर और पंजों को बाहर रखें।
3. हथेलियों को शरीर से थोड़ा ऊपर की ओर रखते हुए उँगलियों से अर्ध-लचीली स्थिति में रखें।
4. गहरी सांस लें और साथ ही आंखें बंद कर लें। अपने शरीर में पूर्ण विश्राम महसूस करें। अपने शरीर के सभी हिस्सों को आराम देने की कोशिश करें।
5. सामान्य रूप से सांस लें और सांस के प्रवाह पर ध्यान केंद्रित करें।
6. वापस आने के लिए अपनी आंखें खोलें और शुरुआती स्थिति में आ जाएं।

लाभ:

- यह तनाव को दूर करता है।
- यह उच्च रक्तचाप को कम करने में उपयोगी है।
- यह शरीर और मन को आराम देता है।
- यह शरीर से थकान को दूर करता है।
- यह अनिद्रा के मामलों में फायदेमंद है क्योंकि यह नींद को लाने में मदद करता है।

सीमायें: निम्न रक्तचाप से पीड़ित होने पर यह अभ्यास न करें।

3.5.2 प्राणायाम:

प्राण का अर्थ है 'सार्वभौमिक जीवन शक्ति' और अयामा का अर्थ है 'नियमन'। प्राण वह महत्वपूर्ण ऊर्जा है

जिसके

Source: www.jagran.com

बिना शरीर नहीं बचेगा। प्राणायाम श्वास तकनीक से संबंधित है जो सांस लेने की क्षमता को बढ़ाने में मदद करते हैं। कुछ सामान्य प्राणायाम में अनुलोम-विलोम, भस्त्रिका, उज्जयी, शीतली|

अनुलोम-विलोम प्राणायाम(वैकल्पिक नासिका श्वास)

अनुलोम का अर्थ है 'की ओर' और विलोम का अर्थ है 'उल्टा'। चूँकि इस विधि में प्रत्येक बार साँस लेने और छोड़ने के लिए वैकल्पिक नथुने का उपयोग किया जाता है साथ ही व्यक्ति बायीं नासिका से श्वास लेता है और फिर दायें नथुने से श्वास छोड़ता है, फिर दायें नथुने से श्वास लेते हुए क्रम को उलट देता है इसी कारण इस विधि को अनुलोम-विलोम कहा जाता है।

Source: http://upendradubey0008.blogspot.com/2017/06/blog-post.html

अनुलोम-विलोम प्राणायाम के चरण

1. पद्मासन या किसी भी आरामदायक ध्यान मुद्रा अन्य मुद्रा में बैठ जाएं|
1. शरीर को सीधा रखें और हाथों को संबंधित घुटने पर रखें।
2. दाहिने हाथ को ऊपर उठायें और दाहिने अंगूठे को दाहिने नथुने पर रखें और इसे बंद करें।
3. बायीं नासिका छिद्र से धीरे-धीरे श्वास लें।
4. बाएं नथुने को अनामिका उंगली और छोटी उंगली से बंद करें और दाएं नथुने से धीरे-धीरे सांस छोड़ें। फिर से दाहिने नथुने से श्वास लें।
5. दाहिने नथुने को अंगूठे से बंद करें और बायां नथुना से श्वास को बाहर निकालें। यह अनुलोम-विलोम का एक चक्र है।
   इसे 10 बार दोहराएं

लाभ

- यह मन को शांत करता है और एकाग्रता में सुधार करता है।
- यह शरीर की सभी कोशिकाओं को पर्याप्त ऑक्सीजन युक्त रक्त प्रदान करके उनके कामकाज में सुधार करता है।
- यह रक्त को शुद्ध करता है।
- यह मस्तिष्क को रक्त की आपूर्ति में सुधार करता है।
- यह रक्तचाप को नियंत्रित करने में मदद करता है।
- यह चिंता को कम करके तनाव को प्रबंधित करने में मदद करता है।
- यह अस्थमा, उच्च या निम्न रक्तचाप, अनिद्रा, पुराने दर्द, अंतःस्रावी असंतुलन, हृदय-समस्या, अति सक्रियता आदि जैसे कई रोगों में लाभकारी है।

सीमायें:शुरुआत में सांस को रोके रखने से बचना चाहिए।

भस्त्रिका प्राणायाम: भस्त्रिका शब्द संस्कृत के एक शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ है 'भस्त्र''धौंकनी' की एक जोड़ी। इस प्राणायाम में भस्त्र या धौंकनी की क्रिया का अनुकरण किया जाता है। इस प्राणायाम में

श्वास तेजी से आगे बढाते हुए और बलपूर्वक किया जाता है। जिस प्रकार लोहार धौंकनी को जोर-जोर से जोर-जोर से फूंकता, फैलाता और सिकोड़ता है, उसी प्रकार पेट को तेजी से और तेजी से फैलाकर और सिकोड़कर सांस अंदर और बाहर ली जाती है।

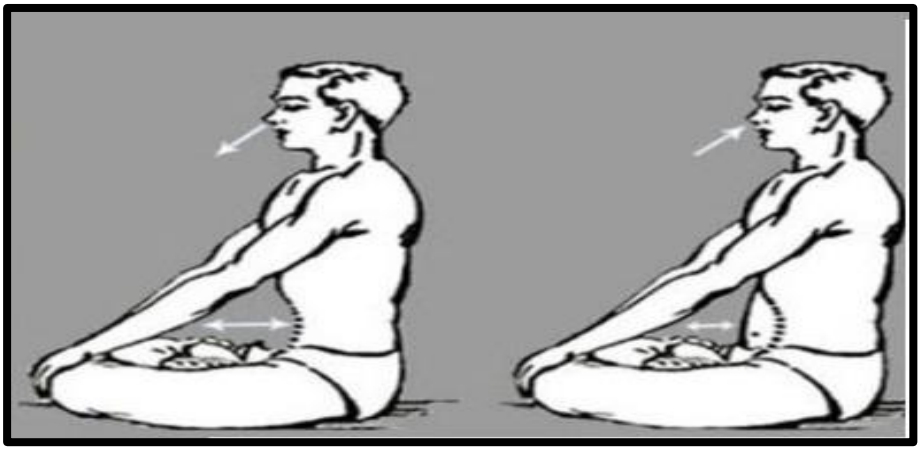

Source: https://www.achisoch.com/kapalbhati-pranayam-kaise-kare-fayde-benefits-in

भस्त्रिका प्राणायाम चरण:

1. पद्मासन, अर्धपद्मासन या किसी अन्य ध्यान मुद्रा में बैठें। शरीर को सीधा रखें।
2. नासिका छिद्र से धीरे-धीरे श्वास लें।
3. फिर नासिका छिद्र से तेजी से और जोर से सांस छोड़ें।
4. तुरंत बल के साथ श्वास लें।
5. इस जोरदार तेजी से साँस छोड़ना और साँस लेना को एक से दस गिनती तक जारी रखें।
6. दसवीं सांस के अंत में, अंतिम साँस छोड़ने के बाद गहरी साँस लेना और धीमी साँस छोड़ना है। यह भस्त्रिका प्राणायाम का एक चक्र है।
7. इस राउंड के बाद दूसरा राउंड शुरू करने से पहले कुछ सामान्य सांसें लें।
8. भस्त्रिका प्राणायाम के तीन फेरे पूरे करें।
9. भस्त्रिक प्राणायाम की तकनीक में भिन्नता हो सकती है|

लाभ:

- यह गैस्ट्रिक आग को बढ़ाता है और भूख में सुधार करता है।
- यह कफ को नष्ट करता है।
- दमा की स्थिति में यह लाभकारी होता है।

सीमायें:भस्त्रिका प्राणायाम का अभ्यास कान में इन्फेक्षन के दौरान नहीं करना चाहिए। हृदय रोग से पीड़ित, उच्च रक्तचाप, चक्कर, पेट के अल्सर के व्यक्ति को इस प्राणायाम का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

3.6 सारांश:

व्यक्तित्व एक बहुत ही सामान्य शब्द है जिसका प्रयोग रोज़मर्रा की ज़िंदगी में किया जाता है यह हमें बताता है कि व्यक्ति किस प्रकार का है। प्रत्येक व्यक्ति आम तौर पर अधिकांश स्थिति में एक जैसा व्यवहार करता है । योगाभ्यास व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों जैसे- शारीरिक, संवेगात्मक बौद्धिक, आध्यात्मिक के विकास को प्रभावित करती हैं| योग में शरीर को स्वस्थ, लचीला एवं मन को एकाग्र बनाने के उद्देश्य से योगासनों का उपदेश योग के सभी प्रमुख ग्रन्थों में किया गया है।

आसन हमारे शारीरिक और मानसिक विकास के लिए फायदेमंद होते हैं| जैसे- ताड़ासन पूरे शरीर की मांसपेशियों को लंबवत खिंचाव देता है। यह जांघों, घुटनों और टखनों को मजबूत करता है। यह बच्चों की लंबाई बढ़ाने में मदद करता है। यह आसन व्यक्ति के आत्म-जागरूकता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

कटिचक्रासन यह कब्ज से राहत देता है और काठ का क्षेत्र (lumber region) मजबूत बनाता है। यह सांस की बीमारियों के लिए अच्छा है। इससे फेफड़ों का क्षय रोग रोका जा सकता है। यह कंधे, गर्दन, हाथ, पेट, पीठ और जांघ को मजबूत करता है।

सिंहासन चेहरे और गर्दन की मांसपेशियों के लिए फायदेमंद होता है। यह थायराइड के कामकाज को नियंत्रित करता है। यह सुस्ती और अवसाद को कम करने में मदद करता है| पीठ दर्द, गठिया कूल्हे और घुटने, गले की समस्या और जबड़े में दर्द से पीड़ित होने पर अभ्यास न करें ।

मंडुकासन: भारी वजन पेट, जांघ या कूल्हे वाले लोगों के लिए फायदेमंद है । यह पेट से गैसों को खत्म करता है। यह कब्ज, मधुमेह और पाचन विकार से पीड़ित लोगों को लाभ पहुंचाता है।

उत्ताना-मंडूकासन कमर दर्द को कम करने में मदद करता है। यह छाती और पेट में रक्त परिसंचरण में सुधार करता है । यह पेट और कंधे की मांसपेशियों को टोन करता है।

कुक्कुटासन कंधे, बाहों और कोहनी को मजबूत करने में मदद करता है यह आसन संतुलन और स्थिरता की भावना को विकसित करने में भी मदद करता है। यह शरीर को मजबूत बनाता है।

अकर्ण धनुरासन कब्ज और अपच में लाभकारी होता है। यह पेट की मांसपेशियों, पैर व बाहों की मांसपेशियों को मजबूत करता है। यह पैरों को लचीला बनाता है।

मत्स्यासन मस्तिष्क को रक्त की आपूर्ति में सुधार करता है। यह थायरॉयड ग्रंथि के कामकाज को नियंत्रित करता है और प्रतिरक्षा तंत्र में सुधार करता है। यह पीठ दर्द और सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस को कम करता है।

भुजंगासन यह स्पाइनल कॉलम को प्रभावित करता है और इसे लचीला बनाता है। यह पाचन संबंधी शिकायतों का समाधान करता है। यह पेट के अंदर के दबाव को बढ़ाता है जिससे आंतरिक अंगों को लाभ होता है, विशेष रूप से यकृत और गुर्दे। यह तन और मन दोनों को आराम देता है।

मकरासन परंपरागत रूप से यह आराम की मुद्रा है। यह लगभग सभी मनोदैहिक विकारों में लाभकारी है। यह श्वसन अंगों के साथ-साथ पाचन अंग के लिए भी फायदेमंद है।

शलभासन स्वायत्त तंत्रिका तंत्र विशेष रूप से पैरासिम्पेथेटिक सिस्टम को उत्तेजित करता है। यह हल्के साइटिका, पीठ दर्द और गैर-गंभीर स्लिप डिस्क की स्थिति में राहत देता है । यह घुटनों के आसपास जांघों, कमर और पेट पर बनने वाली अत्यधिक चर्बी को कम करने में मदद करता है, जिससे शारीरिक बनावट और सकारात्मक शरीर की छवि में सुधार होता है।

धनुरासन कंधों के जोड़ घुटनों, टखनों और पूरी रीढ़ की हड्डी के लिए एक अच्छा व्यायाम है। यह मधुमेह मेलिटस के प्रबंधन के लिए फायदेमंद है क्योंकि यह जिगर और अग्न्याशय की मालिश करता है। यह पीठ, हाथ, पैर, कंधे, गर्दन और पेट में स्नायुबंधन, मांसपेशियों और नसों को मजबूत करता है।

सर्वांगासन यह थायराइड की क्रिया को नियंत्रित करता है। यह मस्तिष्क में रक्त के संचार को बढ़ाने में मदद करता है। यह एंडोक्राइन ग्रंथि से संबंधित समस्याओं के प्रबंधन में मदद करता है।

हलासन थायरॉयड ग्रंथि/पैराथायरायड ग्रंथि को अच्छा व्यायाम देता है। यह रीढ़ की हड्डी के स्तंभ और पीठ की गहरी मांसपेशियों को एक अच्छा खिंचाव देता है, जिससे रीढ़ मजबूत और स्वस्थ होती है।

शवासन यह तनाव को दूर करता है। यह उच्च रक्तचाप को कम करने में उपयोगी है। यह अनिद्रा के मामलों में फायदेमंद है क्योंकि यह नींद को लाने में मदद करता है।

प्राणायाम में प्राण का अर्थ है 'सार्वभौमिक जीवन शक्ति' और अयामा का अर्थ है 'नियमन'। प्राण वह महत्वपूर्ण ऊर्जा है जिसके बिना शरीर नहीं बचेगा। प्राणायाम श्वास तकनीक से संबंधित है जो सांस लेने की क्षमता को बढ़ाने में मदद करते हैं। कुछ सामान्य प्राणायाम में अनुलोम-विलोम, भस्त्रिका, उज्जयी, शीतली| यह शरीर की सभी कोशिकाओं को पर्याप्त ऑक्सीजन युक्त रक्त प्रदान करके उनके कामकाज में सुधार करता है। यह रक्त को शुद्ध करता है। यह चिंता को कम करके तनाव को प्रबंधित करने में मदद करता है। यह अस्थमा, उच्च या निम्न रक्तचाप, अनिद्रा, पुराने दर्द, अंतःस्रावी असंतुलन, हृदय-समस्या, अति सक्रियता आदि जैसे कई रोगों में लाभकारी है। शुरुआत में सांस को रोके रखने से बचना चाहिए।

भस्त्रिका प्राणायाम में भस्त्र या धौंकनी की क्रिया का अनुकरण किया जाता है। इस प्राणायाम में श्वास तेजी से आगे बढाते हुए और बलपूर्वक किया जाता है। यह भूख में सुधार करता है। यह कफ को नष्ट करता है। दमा की स्थिति में यह लाभकारी होता है।

3.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न:

1. व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों का उल्लेख कीजिए।
2. योग के अर्थ को स्पष्ट करते हुये योग के महत्व पर प्रकाश डालिये|

लघु उत्तरीय प्रश्न:

1. प्राणायाम पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें
2. भस्त्रिका प्राणायाम के लाभ लिखिए|
3. आसान के लाभ बताइये|

वस्तुनिष्ठ प्रश्न:

1. योग का प्रभाव पड़ता है।

(क) शारीरिक स्वास्थ्य पर

(ख) मानसिक स्वास्थ्य पर

(ग) आध्यात्मिक स्वास्थ्य पर

(घ) उपर्युक्त सभी

2. 'योग शब्द बना है-

(क) युज् समाधौ धातु से

(ख) युज संयमने धातु से

(ग) युजिर योगे धातु से

(घ) उपर्युक्त सभी

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर:

1. घ

2. घ

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- Easwaran, Eknath (2006), The Bhagavad Gita-For Daily Living, Jaico Publishing House, Mahatma Gandhi Road, Mumbai, India
- **Tiwary, S. (2016)** Personality Development through Yoga, International Journal of Science and Consciousness; 2(2): 34- 37, Vol. 2, No. 2, Pages 34-37 ISSN: 2455-2038.
- **Mishra, Gopal (2021)** "तन-मन स्वस्थ रखने के 10 उपयोगी योगासन, www.achgabar.com
- योग एवं आयुर्वेद BY 203, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी

Web Sources

- www.ncert.nic.in
- https://vishwashantiyoga.com/kati-chakrasana
- https://www.yogicwayoflife.com/kukkutasana-the-cockerel-pose/
- https://nexoye.com/matsyasana-fish-pose-benefits-steps-precautions
- https://www.achhikhabar.com
- https://helloswasthya.com/fitness/balance-flexibility/makarasana
- www.educatinmaster.com
- www.jagran.com
- https://www.achisoch.com

इकाई- 4 उपनिषद्, अभिधम्म एवं सांख्य में व्यक्तित्व की व्याख्या

संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 उपनिषद् में व्यक्तित्व की व्याख्या

4.3.1 उपनिषद् क्या है ?

4.3.2 उपनिषद् में व्यक्तित्व

4.4 सांख्य में व्यक्तित्व की व्याख्या

4.4.1 सांख्य क्या है?

4.4.2 सांख्य के अनुसार व्यक्तित्व

4.5 अभिधम्म में व्यक्तित्व की व्याख्या

4.5.1 अभिधम्म क्या है?

4.5.2 अभिधम्म में व्यक्तित्व

4.5.3 अभिधम्म में व्यक्तित्व के प्रकार

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.10 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

भारत में शिक्षा की शुरुआत पूर्व वैदिक काल में हुई थी। यह प्रणाली गुरुकुलों के माध्यम से व्यक्तित्व विकास को महत्व देने पर केन्द्रित थी। एक केंद्र जो अभ्यास, प्रकृति, उपयुक्त वातावरण, महान व्यक्ति के जीवन, चरित्र और आदर्शों पर आधारित सही आचरण और शिक्षण पर बोध प्रदान करता है। वैदिक काल में शिक्षा, आत्म-साक्षात्कार और आत्म-सम्मान के माध्यम से शिक्षार्थी के व्यक्तित्व का विकास करती थी और इसका अंतिम लक्ष्य आत्म- बोध का निर्माण करना था।

आज तक आपने व्यक्तित्व के जितने भी सिद्धांतो का अध्ययन किया है वे सभी सिद्धांत पश्चिम- केन्द्रित जैसे – यूरो- अमेरिकी मानसिकता में विकसित हुए हैं इसलिए इन सिद्धांतो को पश्चिमी व्यक्तित्व सिद्धांत भी कहा जाता है। इन सिद्धांतो के अतिरिक्त कुछ सिद्धांत ऐसे भी है जिनका विकास पूर्वी देशों जैसे – भारत, चीन तथा जापान आदि में हुआ और इन सिद्धांतो को पूर्वी व्यक्तित्व का सिद्धांत कहा गया। इस तरह के सिद्धांत का समावेश एशिया महाद्वीप में व्याप्त प्राचीन तथा दार्शनिक ग्रंथों में प्राप्त होता है।

भारतीय मनोविज्ञान में व्यक्तित्व सिद्धांतों का विकास उपनिषद्, सांख्य एवम् अन्य दार्शनिक ग्रंथों ने विस्तृत रूप से किया है। भारतीय मनोविज्ञान में व्यक्तित्व को 'जीवात्मा' कह कर संबोधित किया गया है। 'जीवात्मा' शब्द व्यक्तित्व के मनोदैहिक संरचना मात्र से संबद्ध न होकर उसके नैतिक एवं आध्यात्मिक पहलू से भी सम्बंधित होता है। भारतीय दर्शन प्रणाली के अनुसार हर व्यक्ति के भीतर जीवात्मा का वास होता है। जो व्यक्ति में होने वाले सभी मनोदैहिक परिवर्तनों के दौरान भी अपनी मौलिक अवस्था में बना होता है। इस कारण व्यक्ति का सम्पूर्ण व्यक्तित्व आध्यात्मिक आत्म – अभिव्यक्ति के एक उपयुक्त चक्रीय के स्वरुप में कार्य करता है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप

- उपनिषद् को जान पाएंगे।
- उपनिषद् में व्यक्तित्व के वर्णन को समझ सकेंगे।
- सांख्य दर्शन को समझ सकेंगे।
- सांख्य में व्यक्तित्व को किस प्रकार से दर्शया गया है यह जान पाएंगे।
- बौद्ध दर्शन एवम् अभिधम्म को समझ सकेंगे।
- अभिधम्म में व्यक्तित्व को समझ सकेंगे।

4.3 उपनिषद् में व्यक्तित्व की व्याख्या

पिछले पृष्ठ में आपने जाना कि भारतीय दर्शन परम्परा के अन्तर्गत सर्वाधिक महत्वपूर्ण माने जाने वाले उपनिषद् ग्रंथ का सामान्य परिचय क्या था। इस इकाई के अतिरिक्त भी आप अन्य स्रोतों से भारतीय

उपनिषद् परम्परा को जान कर अपने ज्ञान में वृद्धि कर सकते है। अब आप जानेंगे कि उपनिषद् परम्परा क्या है और इसमें व्यक्तित्व की व्याख्या किस प्रकार की गई है।

4.3.1 उपनिषद् क्या है ?

उपनिषद् हिन्दू धर्म के महत्त्वपूर्ण श्रुति सम्मत धर्मग्रन्थ हैं। ये वैदिक वाङ्मय के अभिन्न भाग हैं। ये संस्कृत में लिखे गये हैं। इनकी संख्या लगभग 108 है, किन्तु मुख्य उपनिषद् 13 हैं। हर एक उपनिषद् किसी न किसी वेद से जुड़ा हुआ है। इनमें परमेश्वर, परमात्मा – ब्रह्म और आत्मा के स्वभाव और सम्बन्ध का बहुत ही दार्शनिक और ज्ञानपूर्ण वर्णन दिया गया है।

उपनिषदों में कर्मकाण्ड को 'अवर' कहकर ज्ञान को इसलिए महत्व दिया गया कि ज्ञान स्थूल (जगत और पदार्थ) से सूक्ष्म (मन और आत्मा) की ओर ले जाता है। ब्रह्म, जीव और जगत का ज्ञान पाना उपनिषदों की मूल शिक्षा है। भगवद्गीता तथा ब्रह्मसूत्र , उपनिषदों के साथ मिलकर वेदान्त की 'प्रस्थानत्रयी ' कहलाते हैं। ब्रह्मसूत्र और गीता कुछ सीमा तक उपनिषदों पर आधारित हैं। भारत की समग्र दार्शनिक चिन्तनधारा का मूल स्रोत उपनिषद-साहित्य ही है। इनसे दर्शन की जो विभिन्न धाराएं निकली हैं, उनमें 'वेदान्त दर्शन' का अद्वैत सम्प्रदाय प्रमुख है। उपनिषदों के तत्त्वज्ञान और कर्तव्यशास्त्र का प्रभाव भारतीय दर्शन के अतिरिक्त धर्म, संस्कृति और संस्कृति पर भी परिलक्षित होता है। उपनिषदों का महत्त्व उनकी रोचक प्रतिपादन शैली के कारण भी है। कई सुन्दर आख्यान और रूपक उपनिषदों में प्राप्त होते हैं।

उपनिषद् भारतीय सभ्यता की अमूल्य धरोहर है। उपनिषद् ही समस्त भारतीय दर्शनों के मूल स्रोत हैं, चाहे वो वेदान्त हो या सांख्य । उपनिषदों को स्वयं भी 'वेदान्त' कहा गया है। १७वीं सदी में दारा शिकोह ने अनेक उपनिषदों का फ़ारसी में अनुवाद कराया। 19 वीं सदी में जर्मन तत्त्ववेता शोपेनहावर ने इन ग्रन्थों में जो रुचि दिखलाकर इनके अनुवाद किए वह सर्वविदित और माननीय हैं। विश्व के कई दार्शनिक उपनिषदों को सबसे महत्वपूर्ण ज्ञानकोश मानते हैं।

उपनिषद् भारतीय आध्यात्मिक चिन्तन के मूल आधार हैं, भारतीय आध्यात्मिक दर्शन के स्रोत हैं। वे ब्रह्मविद्या हैं। विभिन्न मानवीय आध्यात्मिक जिज्ञासाओं एवम् शंकाओं के ऋषियों द्वारा खोजे गए उत्तर हैं। वे चिन्तनशील ऋषियों की ज्ञानचर्चाओं का सार हैं। वे कवि-हृदय ऋषियों की काव्यमय आध्यात्मिक रचनाएँ हैं, अज्ञात की खोज के प्रयास हैं, वर्णनातीत परमशक्ति को शब्दों में प्रस्तुत करने के प्रयास हैं और उस निराकार, निर्विकार, असीम, अपार को अन्तरदृष्टि से समझने और परिभाषित करने की अदम्य आकांक्षा के लेखबद्ध विवरण हैं।

4.3.2 उपनिषद् में व्यक्तित्व

उपनिषद, मनोवैज्ञानिक सामग्री का भंडार हैं। वेदों और उपनिषदों में मन की प्रकृति और उसके कार्यों और विभिन्न मनोवैज्ञानिक घटनाओं-सामान्य, असामान्य, रोगात्मक, अपसामान्य और आध्यात्मिक की व्याख्या की गई है। प्राचीन दार्शनिक परंपरा के अनुसार मुख्य विषय स्वयं, आत्मा, मानव स्वभाव, मानव अस्तित्व और मानव अनुभव के आसपास केंद्रित हैं।

वैदिक साहित्य में व्यक्तित्व के सिद्धान्तों की व्याख्या मिलती है। इसमें व्यक्तित्व को एक जटिल संरचना के रूप में माना गया है। जहाँ हृदय तथा मस्तिष्क को मन में सम्मिलित समझा गया। इसमें व्यक्तित्व के अन्य महत्वपूर्ण अंश के रूप में आत्मा जिसे वैयक्तिक आत्मन भी कहा गया, प्राण जिसे वैयक्तिक जीवन बल कहा गया, आदि को रखा गया। उपनिषद् जो वेद का सम्पादित एवम् पुनर्गठित प्रारूप है इसमें व्यक्तित्व की व्याख्या वैदिक के समान ही है किन्तु इसमें व्यक्तित्व की व्याख्या अधिक उत्तम दार्शनिक भाषा में प्रस्तुत की गई है। उपनिषद् में आत्मन को 'ब्रह्म' के तुल्य माना गया है। भोजन अर्थात अन्नम को जीवन, आत्मन तथा व्यक्तित्व का सारतत्व कहा गया है। यह वाक्, स्पर्श, रंग, स्वाद एवं गंध से परे होता है। इसलिए इसका ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष वर्णन अथवा अनुभव नहीं किया जा सकता है। साथ ही साथ इसका प्रत्यक्षण 'मानस' (जो आतंरिक अंग होता है) से भी नहीं हो पाता है। क्योंकि इसमें दुःख, सुख, दैन्य नामक कोई अनुभव नहीं होता है। इनके अनुसार आत्मा एक आधारभूत सत्य है जो समय, स्थान तथा मृत्यु के बंधन से मुक्त होता है। परन्तु आत्मा का अनुभव मनन या चिंतन द्वारा किया जा सकता है।

उपनिषद् में व्यक्तित्व का केन्द्र जीवात्मा होता है। व्यक्तित्व की संरचना के विभिन्न मूलभूत तत्व उस केंद्र के चारों तरफ आवरण का निर्माण करते हैं। आवरण के विभिन्न स्तर चेतन या 'पुरुष' के विभिन्न अनुवर्ती अवस्थाओं (Succeeding stage) के प्रति उत्तरदायी होते हैं। चेतन या पुरुष के इन विभिन्न अवस्थाओं को 'कोष' कहा गया है। उपनिषद् चिंतकों द्वारा चेतन या 'पुरुष' के विश्लेषण के बाद 'पुरुष' के पाँच आवरण (Sheaths or Koshas) की पहचान की गई है। उपनिषद् में व्यक्तित्व के सैद्धांतिक पहलुओं पर चर्चा पंचकोश सिद्धांत के अंतर्गत की गई है।

पंचकोश सिद्धांत: पांच गुना समग्र आत्म-विकास के लिए एक रूपरेखा प्रदान करता है।

तालिका 1 : पंच कोष (जीवन की कोशिका-इकाई) मानव व्यक्तित्व के पांच कोष हैं

कोश का नाम	**पोषित**	**कार्य**
अन्नमय	भोजन	शारीरिक
प्राणमय:	जैव-ऊर्जा	मनोवैज्ञानिक
मनमय:	शिक्षा	मानसिक
विजनमय:	अहंकार	बौद्धिक
आनंदमय:	भावनाएँ	आध्यात्मिक

अन्नमय कोष – इसमें दैहिक शरीर (Physical Body) तथा ज्ञानेन्द्रियाँ (Sense Organs) सम्मिलित होती हैं। यह आत्मन (Self) का बाह्य आवरण या जैव- दैहिक आवरण होता है और अन्य सूक्ष्म तहों या

आवरणों के लिए एक अल्पकालिक पर्दे का काम करता है। इसमें पाँच कर्मेन्द्रिय (Organs) अर्थात् संभाषण तंत्र, हाथ, पैर, उत्सर्जन अंग एवम् जनन अंग सम्मिलित होते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (Sense Organs) अर्थात् आँख, नाक, कान, जीभ तथा त्वचा भी सम्मिलित होते हैं।

प्राणमय कोष – व्यक्ति के जीवन को बनाए रखने वाले पाँच जैव बल (Vital Force) अर्थात् वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी तथा आकाश इसमें सम्मिलित होते हैं। इसलिए इसे जैव आवरण (Vital Sheath) भी कहते हैं।

मनोमय कोष – जैव आवरण के बाद आत्मन की यह तीसरी तह होती है जिसे मानसिक आवरण (Mental Sheath) भी कहा जाता है। मन व्यक्तित्व का एक मुख्य अंग होता है जो आकारहीन एवम् स्थानहीन होता है। यह अनुभूतियों को प्राप्त करने वाला होता है साथ ही साथ यह अनुभूतियों को संकलित करने का भी कार्य करता है।

विज्ञानमय कोष – आत्मन का यह बौद्धिक आवरण (Intellectual Sheath) होता है और इसका सम्बन्ध बुद्धि से होता है। इसके द्वारा विभेदनात्मक कार्य किये जाते हैं। मन, बुद्धि एवम् अहंकार या अहम्-भाव (Ego- Sense) मानव व्यक्तित्व के तीन मानसिक तत्व है। जिस इच्छाशक्ति द्वारा स्वार्थ सिद्धि करने वाला कार्य किया जाता है, उसे अहंकार कहा जाता है।

आनंदमय कोष – यह आत्मन या जीवात्मा का आनंदमय या सुखद आवरण है और इसे व्यक्तित्व की अंतिम पराकाष्ठा कहा जाता है।

उपनिषद्कारों ने मानव अनुभूतियों या चेतना की चार अवस्थाओं का भी वर्णन किया है जिसमें जीवात्मा के स्वरुप को समझने में समुचित सहायता मिलती है। इन चिंतकों के अनुसार 'चेतन', शरीर या मन में सम्मिलित नहीं होता है बल्कि यह आत्मन में निहित होता है। चेतन में इस प्रकार की शक्ति होती है जिससे यह वैयक्तिक स्तर पर सभी दैहिक एवम् मानसिक क्रियाओं को तथा ब्रह्माण्डीय स्तर (Cosmic Level) पर बाह्य ब्रह्माण्ड (External Universe) को उज्जवलित करता है।

उपनिषद्कारों द्वारा चेतना के निम्नांकित चार स्तर या अवस्थाएं बतलाए गए हैं जिनमें जीवात्मा के स्वरूप को समझने में समुचित सहायता मिलती है।

जाग्रतावस्था- इस अवस्था में 'चेतन' बाह्य वस्तुओं की पहचान करता है तथा इसमें ज्ञानेन्द्रियाँ मन के सहित सक्रिय हो उठती हैं। मन बाह्य ज्ञानेन्द्रियों द्वारा बाह्य उद्दीपकों के विषय में सूचना प्राप्त करता है तथा उसे संकलित करता है। इस अवस्था में जीवात्मा 'विश्व' कहलाता है और वह बाह्य इन्द्रियों द्वारा सांसारिक विषयों का भोग करता है।

स्वप्नावस्था- इस अवस्था में व्यक्ति को सूक्ष्म आतंरिक वस्तुओं का ज्ञान होता है या मन द्वारा प्रत्यक्ष संज्ञान होता है। इस अवस्था में ज्ञानेन्द्रियाँ बाह्य दुनिया से सूचनाओं को ग्रहण नहीं करती है फिर भी मन सक्रिय रहता है तथा जागृतावस्था से प्राप्त अनुभूतियों पर कार्य करते रहता है। इस अवस्था में चेतन

अंशतः सोया तथा अंशतः जाग्रत होता है तथा इनकी अनुभूतियाँ बाह्य वस्तुओं के स्थान पर गत अनुभूतियों द्वारा अधिक अनुबंधित होती है। इस अवस्था में पुरुष अन्नमय कोष से स्वतंत्र हो जाता है। यहाँ जीवात्मा को तेजस कहा जाता है। वह आतंरिक वस्तुओं को सूक्ष्म रूप से जानता है तथा उसका भोग करता है।

गहरी निद्रावस्था- इस अवस्था में सभी अनुभूतियाँ आंतरिक आत्मन तथा सार्विक आत्मन दोनों से ही मिल जाती है। ज्ञानेन्द्रियाँ सक्रिय नहीं रहती है परन्तु आत्मन अपनी शक्ति से प्रत्यक्षण कर पाता है। यह परमानन्द की अवस्था होती है जहाँ न तो कोई इच्छा होती है और न ही कोई दुविधा होती है। यह अवस्था व्यक्ति के सतही चेतन को बिना किसी चेतन के ही ज्ञात होती है। इस अवस्था में पुरुष प्राणमय एवं मनोमय स्तरों से स्वतंत्र हो जाता है। अब पुरुष अपनी मौलिक अवस्था अर्थात परमानन्द अवस्था में प्रवेश कर जाता है। इस अवस्था में जीवात्मा को 'प्रज्ञा' कहा जाता है जो शुद्ध चित्त के रूप में मौजूद रहता है।

तुरिया अवस्था- यह पूर्ण एवं अपरिवर्तित अवस्था होती है। इसे सतत पहचान की अवस्था भी कहते हैं। यह सभी तरह के परिवर्तनों के बीच भी चलते रहता है। इसका न कोई आदि होता है न कोई अंत। वास्तव में यह आत्म -अनुभूति की अवस्था होती है। इस अवस्था में व्यक्ति का व्यक्तित्व सभी तरह की सीमाओं एवं इच्छाओं से मुक्त हो जाता है और व्यक्ति सभी तरह के दुष्कर्मों एवं अन्य सामान्य प्रभावों से स्वतंत्र हो जाता है। इस अवस्था में जीवात्मा को 'आत्मा' कहा जाता है।

उपरोक्त चारों अवस्थाओं का सारतत्व यह है कि उपनिषद् के चिंतकों के अनुसार आत्मन शरीर या जागृतावस्था या स्वप्नावस्था के विभिन्न मानसिक अवस्थाओं के साथ तादात्म्य स्थापित नहीं कर पाता है। इतना ही नहीं, वे सार्वत्रिक चेतना की सत्यता को ही सभी तरह की वैयक्तिक चेतनाओं का आधार मानते हैं और साथ ही साथ वे यह भी स्वीकार करते हैं कि गहरी निद्रावस्था जो सभी तरह की अनुभूतियों से परे होती है, में भी यह चलते रहता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि उपनिषद् के अनुसार मानव व्यक्तित्व का सारतत्व जीवात्मा होता है जो सूक्ष्म एवं ठोस शारीरिक अवस्थाओं के संयोग से, दुखद एवं सुखद अनुभूतियों को अनुभव करता है। इसका वास्तविक रूप पाँच आवरणों जिससे सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण होता है, ढका रहता है। आत्मन अंशतः मानसिक आवरण में अहम् के रूप में अभिव्यक्त होता है परन्तु बिना अहम् की दुनियाँ में पाँच चीज अर्थात पदार्थ, जीवन, चेतन, बुद्धि एवं परमानन्द भी पाए जाते हैं। इसमें से प्रथम दो का सम्बन्ध दैहिक आत्मन, अगले दो का सम्बन्ध मानसिक आत्मन तथा अंतिम का सम्बन्ध आध्यात्मिक आत्मन से होता है। धीरे-धीरे जीवात्मा निष्काम आत्मज्ञान को अनुभूत करके शुद्ध चेतन में विलीन हो जाता है।

4.4 सांख्य में व्यक्तित्व की व्याख्या

सांख्य में व्यक्तित्व को किस तरह से दर्शाया गया है यह जानने से पहले हमे यह जानना आवश्यक है, सांख्य किसे कहते है?

4.4.1 सांख्य क्या है?

भारतीय दर्शन के छः प्रकारों में से **सांख्य** (सांख्य) भी एक है जो प्राचीनकाल में अत्यन्त लोकप्रिय तथा प्रचलित हुआ था। यह अद्वैत सिद्धांत से सर्वथा विपरीत मान्यताएँ रखने वाला दर्शन है। इसकी स्थापना करने वाले मूल ऋषि कपिल माने जाते हैं। 'सांख्य' का शाब्दिक अर्थ है - 'संख्या सम्बंधी' या विश्लेषण। इसकी सबसे प्रमुख धारणा सृष्टि के 'प्रकृति एवम् पुरुष' के अन्तरसंबंध से निर्मित होने की है, यहाँ प्रकृति (यानि पंचमहाभूतों से बनी) जड़ है और पुरुष (यानि जीवात्मा) चेतन। योग शास्त्रों के ऊर्जा स्रोत (ईडा – पिंगला), शाक्तो के शिव -शक्ति के सिद्धांत इसके समानान्तर दीखते हैं।

किसी समय भारतीय संस्कृति में सांख्य दर्शन का स्थान अत्यन्त ऊँचा था। देश के उदात्त मस्तिष्क सांख्य की विचार पद्धति से सोचते थे। महाभारतकार ने यहाँ तक कहा है कि इस लोक में जो भी ज्ञान है वह सांख्य से आया है। (*ज्ञानं च लोके यदिहास्ति किञ्चित् साङ्ख्यागतं तच्च महन्महात्मन्* (शांति पर्व 301.109))। वस्तुतः महाभारत में दार्शनिक विचारों की जो पृष्ठभूमि है, उसमें सांख्यशास्त्र का महत्वपूर्ण स्थान है। शान्ति पर्व के कई स्थलों पर सांख्य दर्शन के विचारों का अत्यन्त काव्यमय और रोचक ढंग से उल्लेख किया गया है। सांख्य दर्शन का प्रभाव गीता में प्रतिपादित दार्शनिक पृष्ठभूमि पर पर्याप्त रूप से विद्यमान है।

इसकी लोकप्रियता का कारण एक यह अवश्य रहा है कि इस दर्शन ने जीवन में दिखाई पड़ने वाले वैषम्य का समाधान त्रिगुणात्मक प्रकृति की सर्वकारण रूप में प्रतिष्ठा करके बड़े सुंदर ढंग से किया। सांख्याचार्यों के इस प्रकृति-कारण-वाद का महान गुण यह है कि पृथक्-पृथक् धर्म वाले सत्व, रजस तथा तमस तत्वों के आधार पर जगत् की विषमता का किया गया समाधान बड़ा बुद्धिगम्य प्रतीत होता है। किसी लौकिक समस्या को ईश्वर का नियम न मानकर इन प्रकृतियों के तालमेल बिगड़ने और जीवों के पुरुषार्थ न करने को कारण बताया गया है। यानि, सांख्य दर्शन की सबसे बड़ी महानता यह है कि इसमें सृष्टि की उत्पत्ति भगवान के द्वारा नहीं मानी गयी है बल्कि इसे एक विकासात्मक प्रक्रिया के रूप में समझा गया है और माना गया है कि सृष्टि अनेक - अनेक अवस्थाओं (phases) से होकर गुजरने के बाद अपने वर्तमान स्वरूप को प्राप्त हुई है। कपिलाचार्य को कई अनीश्वरवादी मानते हैं पर 'भगवद्गीता' और सत्यार्थ प्रकाश जैसे ग्रंथों में इस धारणा का निषेध किया गया है।

4.4.2 सांख्य के अनुसार व्यक्तित्व

सांख्य शाखा द्वारा व्यक्तित्व की एक तात्विक व्याख्या उपस्थित की गयी है। सांख्य सिद्धांत के अनुसार मानव व्यक्तित्व 'पुरुष' तथा प्रकृति दोनों की अन्तः क्रिया का परिणाम होता है जबकि जीव अर्थात आनुभविक आत्मन इन दोनों के मिलने से बनता है। 'पुरुष' से सम्बंधित दैहिक एवं मानसिक जीव 'प्रकृति' की ही अभिव्यक्ति होता है परन्तु 'पुरुष' के बिना प्राणी जीवनहीन हो जाता है। प्रकृति को जड़ कहा गया है क्योंकि वह मूलतः जड़ पदार्थ है। जड़ होने के कारण 'प्रकृति' में चेतना का आभाव पाया जाता है। चेतना का आभाव होने के बावजूद प्रकृति सक्रिय है। प्रकृति में क्रियाशीलता निरंतर दीख पड़ती है क्योंकि उसमें गति अन्तर्भूत होती है। 'पुरुष' चेतन होता है। इसे अधिकांशतः भारतीय दार्शनिकों ने 'आत्मा' कहा है।

सांख्य तंत्र में व्यक्तित्व के सम्पूर्ण मनोदैहिक एवं आध्यात्मिक विमा का विश्लेषण 'प्रकृति' एवं 'पुरुष' के स्वभाव तथा उनके अन्तर्सम्बन्धों पर निर्भर करता है। सांख्य सिद्धांत के अनुसार व्यक्ति के मनोदैहिक शरीर गठन का निर्माण सम्पूर्ण या बाह्य शरीर तथा सूक्ष्म शरीर जो मानसिक अंगों का वाहक होता है, से बना होता है। ये मानसिक अंग व्यक्ति के लिए इसलिए काफी महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि इनसे व्यक्ति का आतंरिक जीवन का निर्धारण होता है। इस स्कूल में बाह्य अंगों को आतंरिक अंगों का प्रमुख साधन माना गया है। बाह्य अंगों द्वारा बाहर के सभी तरह के उद्दीपकों के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है लेकिन उनपर विशेष कार्य आतंरिक अंगों द्वारा ही होता है। इस तरह के आतंरिक तथा बाह्य अंग एक दूसरे के साथ मिलकर कार्य करते हैं।

सांख्य सिद्धांत में व्यक्तित्व के त्रयोदश अंग बतलाए गए हैं। इनमें दस बाह्य अंग हैं अर्थात पाँच प्रत्यक्षण के अंग है, पाँच कार्य करने के अंग है तथा तीन आतंरिक अंग है। प्रत्यक्षण के पाँच अंगों को ज्ञानेन्द्रिय तथा कार्य के पाँच अंगों को कर्मेन्द्रिय कहा जाता है। पाँच ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से बाह्य वस्तुओं का ज्ञान होता है तथा पाँच कर्मेन्द्रियों द्वारा व्यक्ति को इन उद्दीपकों के प्रति अनुक्रिया करने तथा समझने में विशेष सहायता प्राप्त होती है। इन मनोदैहिक अंगों के अतिरिक्त व्यक्ति में ठोस दैहिक विशेषताएँ होती है जिनके पाँच तत्त्व होते हैं - आकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी। व्यक्ति के तीन आतंरिक अंगों के नाम इस प्रकार है - मन, अहंकार तथा बुद्धि। मन द्वारा चिंतन का कार्य होता है, अहंकार से व्यक्ति में आत्म - चेतना का नियंत्रण होता है तथा बुद्धि ज्ञान शक्ति का अंग होता है। बाह्य अंग वस्तुओं के साथ सीधे संपर्क में आते हैं परन्तु बाह्य अंगों की प्रतिक्रिया के माध्यम से ही आतंरिक अंग उन्हें समझ पाते हैं। उनके द्वारा प्राप्त ज्ञान की 'मन' द्वारा जाँच की जाती है, 'अहंकार' द्वारा उसके महत्त्व का निर्धारण किया जाता है तथा बुद्धि द्वारा उसकी उपयोगिता की जाँच की जाती है। सभी ज्ञानेन्द्रियाँ 'मन', 'अहंकार' तथा 'बुद्धि' के लिए ही कार्य करती हैं परन्तु बुद्धि तत्व 'पुरुष' के अनुभव एवं सुख के लिए कार्य करता है। बुद्धि 'पुरुष' एवं 'प्रकृति' के सूक्ष्म अंतर को तो पता लगाता ही है साथ ही साथ इसे सभी तरह की गत अनुभूतियों एवं स्मृति का संग्रह गृह होता है। इस तरह से यह कहा जा सकता है कि बाह्य ज्ञानेन्द्रिय व्यक्ति को अनिर्धार्य तथ्य प्रदान करती हैं, 'मन' उसे निर्धार्य में बदल देता है तथा बुद्धि इसे निश्चित ज्ञान में बदल देती है।

'जीवात्मा' में स्थूल तथा सूक्ष्म दोनों गुण होते हैं। स्थूल गुण को व्यक्ति अपने माता - पिता से प्राप्त करता है तथा मृत्यु के बाद वह समाप्त हो जाता है। सूक्ष्म गुण अपनी चेतन अवस्था में दिन - प्रतिदिन की क्रियाओं के रूप में कार्य करते हैं परन्तु अपने गहरे अर्द्धचेतन रूप में इसमें सिर्फ वर्तमान चेतन ही नहीं होता है बल्कि अनगिनत गत अनुभूतियाँ भी संचित होती हैं। इसे 'संस्कार' कहा जाता है। 'संस्कार' बुद्धि में संचित रहता है तथा सूक्ष्म वस्तु को एक जीवन से दूसरी जीवन में स्थानांतरण करते रहता है।

सांख्य सिद्धांत में व्यक्तित्व के स्वरुप को समझने के लिए गुण के संप्रत्यय को भी महत्वपूर्ण बतलाया गया है। 'गुण' को 'प्रकृति' का तत्व या द्रव्य माना गया है। गुण प्रकृति की सत्ता का निर्माण करते हैं। गुणों के आभाव में प्रकृति की कल्पना असंभव है। सांख्य सिद्धांत में तीन तरह के गुणों का वर्णन किया गया है जिनसे व्यक्ति की चित्तप्रकृति का निर्धारण होता है।

वे तीन गुण निम्नांकित हैं।

सत्व	रजस	तमस
प्रीति आनंद प्रकाश रोशनी	अप्रीति असहमति प्रव्रत्ति गतिविधि	विसिदा निराशा नियम संयम

सत्त्व- सत्व गुण "आध्यात्मिक गुण" है। जब सत्व गुण प्रबल होता है, तो व्यक्ति में अच्छा और देखभाल करने की स्वाभाविक इच्छा होती है। मन और इंद्रियों की एक दृढ़ स्थिरता होती है। जब सत्त्व का प्रसार होता है, तो व्यक्ति के माध्यम से ज्ञान का प्रकाश चमकता है। सात्विक बुद्धि वांछनीय और अवांछनीय, कर्तव्यपरायण और अकर्तव्यपरायण के बीच के अंतर को स्पष्ट रूप से समझती है। जब सत्त्व प्रधान होता है तो व्यक्ति कर्तव्य के रूप में अपना कार्य करता है। शांत समझ के साथ कोई भी कार्य किया जाता है और व्यक्ति संदेह से मुक्त होता है। जब सत्त्व प्रधान होता है तो व्यक्ति दैवीय और आध्यात्मिक मूल्यों का वहन करता है।

शक्ति, गुरुओं का सम्मान, अहिंसा, ध्यान, दया, मौन, आत्मसंयम और चरित्र की पवित्रता सात्विक गुण की प्रेरक शक्ति है। सात्विक गुण की एक सीमा यह है कि यह व्यक्ति को सुख और ज्ञान के मोह में बांधता है। सत्व गुण अपने साथ अच्छाई की समस्या भी लेकर आता है।

तमस- तमस गुण "भौतिक गुण" है। तमस आशा और भ्रम से उत्पन्न होता है। तमस अस्पष्टता, आलस्य, कल्पना और दृढ़ता पैदा करता है। तमस गुण प्रधान लोगों के लक्षण सतर्क, आशंकित और प्रतिशोधी होते हैं। तामसिक गुण मोहभंग और निंदक का भी संकेत देता है। जब तामसिक गुण प्रबल होता है, तो व्यक्ति को सुख की प्राप्ति होती है जो आत्म-भ्रम और गलतफहमी में उत्पन्न और समाप्त होती है। तमस गुण की सकारात्मक अभिव्यक्ति बहुत मेहनत करने की इच्छा है। इन विशेषताओं की सीमाओं में से एक है संपत्ति और आत्म-केंद्रित प्रवृत्तियों के प्रति लगाव।

रजस- रजस गुण "सक्रिय गुण" है। रजस गुण को वासना और इच्छा को जन्म देने वाला माना जाता है, यह लोभ, गतिविधि, कार्यों के उपक्रम, बेचैनी और इच्छा का कारण बनता है। रजस प्रधान व्यक्ति आसक्ति से भरा होता है, कर्म के फल की लालसा से भरा होता है। स्वार्थ के प्रभुत्व के कारण बुद्धि सही-गलत का विकृत चित्र देती है। रजस प्रधान व्यक्ति द्वारा त्याग और वैराग्य को बढ़ावा नहीं दिया जाता है। उत्साह, रुचि और गतिविधि इस गुण के कुछ गुण हैं।

सत्त्व, तमस तथा रजस गुण स्थिर गुण न होकर सतत आपस में अंत:क्रिया करते हुए परिवर्तनशील दिखते है। इन तीनों में से कोई एक व्यक्तित्व में प्रबल हो सकता है और इस प्रबलता का परिणाम यह होता है कि उस व्यक्ति में विशेष तरह का व्यवहार तथा चरित्र का निर्माण होता है। यद्यपि मौलिक रूप से ये तीनों गुण एक – दूसरे से अलग एवम् भिन्न होते है, वे एक साथ अंत:क्रिया करते है तथा व्यक्तित्व पर उनका प्रभाव अचेतन रूप से पड़ता है।

उपर्युक्त तथ्यों के आलोक में यह कहा जा सकता है कि सांख्य शाखा द्वारा व्यक्तित्व का प्रतिपादित सिद्धांत एक वास्तविक एवम् वस्तुनिष्ठ सिद्धांत है। इसमें व्यक्तित्व के एक दैहिक आधार की पहचान की गयी है तथा इसमें वैयक्तिक विभिन्नता को पर्याप्त महत्त्व दिया गया है।

4.5 अभिधम्म में व्यक्तित्व की व्याख्या

अभिधम्म में व्यक्तित्व को किस तरह से दर्शाया गया है यह जानने से पहले हमे यह जानना आवश्यक है, अभिधम्म क्या है?

4.5.1 अभिधम्म क्या है?

बुद्ध के निर्वाण के बाद उनके शिष्यों ने उनके उपदिष्ट 'धर्म' और 'विनय' का संग्रह कर लिया। अट्ठकथा की एक परम्परा से पता चलता है कि 'धर्म' से दीर्घनिकाय आदि चार निकायग्रन्थ समझे जाते थे; और धम्मपद सुत्तनिपात आदि छोटे-छोटे ग्रंथों का एक अलग संग्रह बना दिया गया, जिसे 'अभिधर्म' (अतिरिक्त धर्म) कहते थे। जब धम्मसंगणि जैसे विशिष्ट ग्रंथों का भी समावेश इसी संग्रह में हुआ (जो अतिरिक्त छोटे ग्रंथों से अत्यंत भिन्न प्रकार के थे), तब उनका अपना एक स्वतंत्र पिटक- 'अभिधर्मपिटक' बना दिया गया और उन अतिरिक्त छोटे ग्रंथों के संग्रह का 'खुद्दक निकाय' के नाम से पाँचवाँ निकाय बना।

'अभिधम्मपिटक' में सात ग्रंथ हैं-

धम्मसंगणि, विभंग, जातुकथा, पुग्गलपंत्ति, कथावत्थु, यमक और पट्ठान।

विद्वानों में इनकी रचनाकाल के विषय में मतभेद है। प्रारंभिक समय में स्वयं भिक्षुसंघ में इस पर विवाद चलता था कि क्या अभिधम्मपिटक बुद्धवचन है।

पाँचवें ग्रंथ कथावत्थु की रचना अशोक के गुरु 'मोगालिपुत्त तिस्स' ने की, जिसमें उन्होंने संघ के अंतर्गत उत्पन्न हो गई मिथ्या धारणाओं का निराकण किया। बाद के आचार्यों ने इसे 'अभिधम्मपिटक' में संगृहीत कर इसे बुद्धवचन का गौरव प्रदान किया।

शेष छह ग्रंथों में प्रतिपादन विषय समान हैं। पहले ग्रंथ धम्मसंगणि में अभिधर्म के सारे मूलभूत सिद्धांतों का संकलन कर दिया गया है। अन्य ग्रंथों में विभिन्न शैलियों से उन्हीं का स्पष्टीकरण किया गया है।

4.5.2 अभिधम्म में व्यक्तित्व

बौद्ध धर्म ने व्यक्तित्व प्रकारों (पाली: पुगला-पन्नत्ती), व्यक्तित्व लक्षणों और अंतर्निहित प्रवृत्तियों (अनुसूया) का एक जटिल मनोविज्ञान विकसित किया है। यह ज्यादातर बौद्ध अभिधर्म साहित्य में विकसित किया गया था और इसकी प्रमुख चिंता शैक्षणिक और सामाजिक उद्देश्यों के लिए विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों की पहचान करना था। कहा जाता है कि बुद्ध ने प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व और मानसिक विकास के स्तर के आधार पर विभिन्न शिक्षाओं को कुशलता से सिखाया था। व्यक्तित्व मनोविज्ञान का विकास अभिधार्मिकों के लिए महत्वपूर्ण था जिन्होंने बौद्ध शिक्षाओं और अभ्यास को प्रत्येक व्यक्तित्व प्रकार के अनुकूल बनाने की मांग की ताकि लोगों को उनके मानसिक दोषों से शुद्ध करके निर्वाण के लिए बेहतर तरीके से तैयार किया जा सके। व्यक्ति का बौद्ध दृष्टिकोण आत्म-शिक्षा से घिरा हुआ है, जिसमें कहा गया है कि किसी व्यक्ति के लिए कोई अपरिवर्तनीय कोर नहीं है, कोई आत्मा (आत्मन) या अहंकार नहीं है।

अभिधम्म सिद्धांत में व्यक्तित्व का तुल्य शब्द 'अट्ठा' या आत्मन होता है। आत्मन स्थाई नहीं होता है। सचमुच में यह अवैयक्तिक प्रक्रियाओं का योग होता है। इन्ही प्रक्रियाओं के सम्मिश्रण से व्यक्तित्व परिलक्षित होता है। वास्तव में आत्मन शारीरिक अंगों, विचारों, संवेदनाओं, इच्छाओं तथा स्मृतियों आदि का योग होता है। मन में एक ऐसी शक्ति है होती है जो सतत निरंतरता प्रदान करती है वह शक्ति है 'भाव'। हमारी चेतना का प्रत्येक अनुक्रमिक क्षण बीते हुए क्षण द्वारा निर्धारित होता है और इसके द्वारा फिर आने वाले क्षण का निर्धारण होता है। 'भाव', चेतन के वर्तमान क्षण तथा आने वाले क्षण के बीच सम्बन्ध जोड़ता है। व्यक्ति आत्मन की पहचान उसके विचारों, स्मृतियों या प्रत्यक्षण द्वारा करता है हालाँकि ये सभी क्रियायें उस सतत प्रवाह के ही भाग होते है। अभिधम्म यह मानता है कि मानव व्यक्तित्व एक नदी की भांति होता है जिसका एक सतत रूप होता है, जिसकी एक विशिष्ट पहचान होती है। इस नदी के प्रवाह की प्रत्येक बूंद क्षण -क्षण परिवर्तित होते रहती है। शायद यही कारण है कि कोई भी वर्त्तमान क्षण पहले बीते क्षण से भिन्न होता है। इस दृष्टिकोण से यह कहा जा सकता है कि कर्ता कार्य से अलग नहीं होता तथा प्रत्यक्षक प्रत्यक्षण से भिन्न नहीं होता है और चेतना से परे कोई चेतन वस्तु नहीं है।

बौद्ध- मत में व्यक्तित्व के अध्ययन का संबद्ध अचेतन या अहम् जैसे संप्रत्ययो से न होकर घटनाओं के क्रम से होता है। सबसे मौलिक घटना मानसिक अवस्था तथा संवेदी वस्तु के बीच का सम्बन्ध होता है। जैसे- किसी सुन्दर दृश्य (संवेदी वस्तु) को देखकर विशेष इच्छा का भाव (मानसिक अवस्था) का उत्पन्न होना एक घटना का उदाहरण है। व्यक्ति की मानसिक अवस्थायें एक क्षण से दूसरे क्षण सतत परिवर्तित होते रहती है और इस तरह के सतत परिवर्तित होने वाली मानसिक अवस्थाओं का अध्ययन करने के लिये अंतनिरीक्षण विधि का उपयोग किया जाता है जिसमें व्यक्ति स्वयं इन मानसिक अवस्थाओं का एक क्रमबद्ध प्रेक्षण करता है। अभिधम्म में न केवल मानसिक अवस्थाओं को ही एक क्षण से दूसरे क्षण परिवर्तित होते कहा गया है बल्कि संवेदी वस्तुओं को भी एक क्षण से दूसरे क्षण परिवर्तित होते देखा गया है। जैसे - एक व्यक्ति जब किसी वस्तु पर (जैसे मेज पर रखा गुलदस्ता) पर ध्यान देता है तो उसके चेतन में न केवल वह गुलदस्ता ही अपितु इर्द -गिर्द की अन्य वस्तुओं जैसे - पुस्तक, टेबल लैम्प आदि पर भी

ध्यान चला जाता है। इसके अतिरिक्त इन संवेदी वस्तुओं के साथ विभिन्न प्रकार के चिंतन एवं स्मृतियाँ भी मिल जाती है।

अभिधम्म में पाँच सामान्य इन्द्रियों के अतिरिक्त एक छठी इन्द्रिय भी होती है जिसे 'चिंतन' कहा गया है। जिस तरह से आवाज या दृश्य मानसिक अवस्था की क्रिया हो सकती है ठीक उसी तरह से 'चिंतन' भी मानसिक अवस्था की एक क्रिया हो सकती है। प्रत्येक मानसिक अवस्था में विशेषताओं का गुच्छ या समुच्चय पाया जाता है जिसे मानसिक कारक कहा जाता है। अभिधम्म सिद्धांत के अनुसार ऐसे मानसिक कारकों की 53 श्रेणियाँ होती है। किसी एक मानसिक अवस्था में इन मानसिक कारकों का एक उपसेट होता है। प्रत्येक मानसिक अवस्था का विशेष गुण का निर्धारण उन कारकों के माध्यम से होता है जिनसे मिलकर वह मानसिक अवस्था बनी होती है। पश्चिमी मनोविज्ञान के सामान ही अभिधम्म सिद्धांतवादियों का मत है कि मानसिक अवस्था गत मनोवैज्ञानिक क्षण के अतिरिक्त अंशतः जैविक तथा परिस्थितिजन्य कारकों से भी प्रभावित होता है फिर प्रत्येक मानसिक अवस्था अगली मानसिक अवस्था में आने वाले कारकों का निर्धारण करते है।

मानसिक कारकों की कुंजी कर्म है जिसे पाली भाषा में काम कहा जाता है। अभिधम्म में 'काम' एक तकनीकी पद है क्योंकि प्रत्येक काम मानसिक अवस्था से प्रभावित होता है। अन्य पूर्वी मनोविज्ञान के समान अभिधम्म में भी कोई भी व्यवहार नैतिक रूप से तटस्थ होता है। इससे नैतिक स्वरुप का निर्धारण उस व्यवहार को करने वाले व्यक्ति की अभिप्रेरणा पर निर्भर करता है। किसी व्यक्ति द्वारा किया गया ऐसा कार्य जिसमें मानसिक कारकों का एक नकारात्मक मिश्रण होता है (जैसे -जब व्यक्ति कोई कार्य बुरे भाव से करता है) पाप है, भले ही प्रेक्षक को वह कार्य बुरा न दिखे।

अभिधम्म सिद्धांत में सभी मानसिक कारकों को दो भागों में बांटा गया है- कुशल कारक तथा अकुशल कारक। कुशल कारक में उन प्रत्यक्षणात्मक, संज्ञानात्मक तथा भावात्मक मानसिक कारकों को रखा गया है जो शुद्ध, स्वस्थ्य एवम् हितकर होते है। उसी तरह से अकुशल कारक में उन प्रत्यक्षणात्मक, संज्ञानात्मक तथा भावात्मक मानसिक कारकों को रखा गया है जो अशुद्ध, अस्वस्थकर एवम् अहितकर होते है। किसी भी कारक को 'कुशल' या 'अकुशल' की श्रेणी में रखने का निर्णय इस कसौटी पर किया जाता है कि वह कारक मनन के दौरान ध्यान एकाग्रचित करने में मदद करता है या बाधा पहुचाता है। यदि वह कारक मदद करता है, तो उस कारक को कुशल कारक कहते है और यदि बाधा पहुचाता है तो उसे अकुशल कारक की श्रेणी में रखते है। इन कुशल या अकुशल कारकों के अलावा प्रत्येक मानसिक अवस्था में सात तटस्थ कारक भी पाये जाते है जो निम्नांकित है –

i. **सम्प्रत्यक्षण-** इसे पाली भाषा में फास्सा कहा जाता है। इसमें व्यक्ति को वस्तु का मात्र ज्ञान होता है।
ii. **प्रत्यक्षण**– इसे पाली भाषा में सान्ना कहा जाता है कि जिसमें वस्तु की प्रथम जानकारी यह होती है कि वह वस्तु किस इन्द्रिय से संबद्ध है।

iii. **संकल्पशक्ति-** इसे पाली भाषा में 'केटाना' कहा जाता है जिसमें वस्तु के पहले प्रत्यक्षण के प्रति एक अनुबंधित प्रतिक्रिया होती है।

iv. **भाव-** इसे पाली भाषा में 'वेदना' कहा गया है। वस्तु द्वारा उत्पन्न संवेदन को भाव कहा जाता है।

v. **एक केन्द्रीयता-** इसे पाली भाषा में 'एकाग्गता' कहा जाता है जिसमें व्यक्ति किसी वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करता है।

vi. **स्वत: ध्यान-** इसे पाली भाषा में 'मनसिकारा' कहा जाता है जिसमें वस्तु के आकर्षण के कारण व्यक्ति का ध्यान अनैच्छिक रूप से उसकी तरफ चला जाता है।

vii. **मानसिक उर्जा-** इसे पाली भाषा में 'जिभितीन्द्रिय' कहा जाता है जिसके कारण उपर्युक्त छह कारक आपस में संगठित होते है तथा उन्हें यह ओजश्विता प्रदान करता है।

ये सभी सात कारक चेतना को एक मौलिक ढाँचा प्रदान करते है जिसमें कुशल तथा अकुशल दोनों कारक सम्मिलित होते है। अब हम लोग यहाँ पर कुशल तथा अकुशल दोनों तरह के कारकों पर सविस्तार प्रकाश डालेंगे।

कुशल कारक- अभिधम्म सिद्धांत के अनुसार कुशल कारक द्वारा अकुशल कारक का प्रतिरोध किया जाता है। जब व्यक्ति की मानसिक अवस्था में कुशल कारक या स्वस्थ्य कारक मौजूद रहते है, तो अकुशल कारक या अस्वस्थ्य कारकों को दबा देते है और तब उन अकुशल कारकों का प्रभाव व्यक्ति की मानसिक अवस्था पर नहीं पड़ता है।

सूझ- सबसे कुशल कारक सूझ है जिसे पाली भाषा में 'पान्ना' कहा जाता है। सूझ से यहाँ तात्पर्य किसी चीज या वस्तु को उसके वास्तविक रूप में स्पष्ट प्रत्यक्षण से होता है। सूझ एक ऐसा कुशल कारक है जो व्यामोह जैसे अकुशल कारक को दबा कर रखता है। सूझ का विपरीत कारक व्यामोह है। दोनों कारक परस्पर विरोधी है। इसलिए एक ही मानसिक अवस्था में दोनों नहीं रह सकते है। जब स्पष्टता होगी, व्यामोह नहीं हो सकता और ठीक उसके विपरीत जब व्यामोह होगा, तो स्पष्टता नहीं होगी।

सतर्कता- सूझ से ही सम्बंधित एक दूसरा महत्वपूर्ण कुशल कारक है सतर्कता। जिसे पाली भाषा में 'साति' कहा गया है। सतर्कता से तात्पर्य किसी वस्तु के सतत स्पष्ट बोध से होता है। इससे व्यक्ति के मन में स्पष्टता में वृद्धि होती है। इसे सूझ का एक सहयोगी कारक माना जाता है। यदि किसी मानसिक अवस्था में सूझ के साथ सतर्कता उपस्थित रहती है तो अन्य सम्बंधित कुशल कारक भी व्यक्ति में मौजूद रहते है। अभिधम्म सिद्धांत के अनुसार, यदि यह दो कुशल कारक व्यक्ति में मौजूद रहते है तो अधिकतर अकुशल कारक अपने आप दबे हुए होते है।

सलज्जता- सलज्जता जिसे पाली भाषा में 'हिरी' कहा जाता है। सलज्जता जैसे कुशल कारक की उत्पत्ति तब होती है जब व्यक्ति कोई बुरा कार्य करने की बात मन में लाता है। सलज्जता औचित्य से सम्बंधित कुशल कारक है। औचित्य से यहाँ मतलब सही निर्णय करने की मनोवृति से होता है। सलज्जता निर्लज्जापन जैसे अकुशल कारक का प्रतिरोध होता है।

विवेक- कुशल कारक विवेक को पाली भाषा में 'ओटाप्पा' नाम से जाना जाता है। कुछ कुशल कारक का स्वरुप ऐसा होता है कि उसकी उत्पत्ति होने के लिए कुछ विशेष परिस्थिति का होना अनिवार्य होता है जैसे - विवेक। विवेक एक ऐसा संज्ञानात्मक कुशल कारक है जो निष्ठुरपन जैसे अकुशल कारक का प्रतिरोध करता है।

विश्वास- कुशल कारक विश्वास को पाली भाषा में 'सद्धा' नाम से जाना जाता है। विश्वास से तात्पर्य सही प्रत्यक्षण पर आधारित निश्चितता से होता है।

कुछ अन्य महत्वपूर्ण कुशल कारक है - अनाशक्ति जिसे पाली भाषा में 'अलोभा', रूचि जिसे पाली भाषा में 'अदोषा', अपक्षपात जिसे पाली भाषा में 'तत्रमाज्झाता' तथा शांति या आत्मसंयम जिसे पाली भाषा में 'पस्सधि' कहा जाता है। ये चारों कुशल कारक ऐसे है जो व्यक्ति में शारीरिक एवं मानसिक शांति उत्पन्न करते है और इनकी उत्पत्ति तब होती है जब व्यक्ति में आसक्ति के भाव की कमी हो जाती है। अभिधम्म सिद्धांत में इस बात पर विशेष रूप से बल डाला गया है कि इन चारो कुशल कारकों के होने से व्यक्ति में कुछ अकुशल कारक जैसे - लालच, कृपणता, ईर्ष्या तथा विमुखता का प्रतिरोध होता है और वे दब जाते है।

अभिधम्म की एक मान्यता यह है कि मन और शरीर दोनों ही एक -दूसरे से अन्तर्सम्बन्ध होते है। प्रत्येक कारक इन दोनों को प्रभावित करते है और कुछ ऐसे कुशल कारकों की भी पहचान की गयी है जिनका मनोवैज्ञानिक एवं दैहिक प्रभाव बिलकुल ही स्पष्ट होते है। इनमें प्रफुल्लता, नमनशीलता, समायोजनशीलता तथा प्रवीणता प्रमुख है। जब ये सभी कुशल कारक किसी मानसिक अवस्था में होते है, तो व्यक्ति अपने कौशल के शीर्ष पर होता है। ये सब कुशल कारक कुछ अकुशल कारकों अर्थात संकुचन तथा उदासीनता का विरोध करते है। ये दोनों अकुशल कारक व्यक्ति में उस समय उदय होते है जब व्यक्ति विषाद की स्थिति में होता है। ये चारों कुशल कारक व्यक्ति को शारीरिक एवं मानसिक रूप से परिवर्तनशील अवस्थाओं के साथ समायोजित करने में मदद करता है।

अकुशल कारक- अकुशल कारकों में तीन श्रेणियाँ है। कुछ कारक प्रत्यक्षणात्मक, कुछ संज्ञानात्मक तथा कुछ भावात्मक होते है। प्रत्यक्षणात्मक कारकों में मुख्य है -

व्यामोह- व्यामोह अर्थात मोह या गलत विचार या जिसे पाली भाषा में 'डिट्ठी' कहा जाता है। व्यामोह एक प्रधान अकुशल कारक है। व्यामोह एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें व्यक्ति का मन ऐसा आच्छादित रहता है कि वह ज्ञान की वस्तुओं का गलत प्रत्यक्षण करता है। इस तरह से अभिधम्म में व्यामोह को एक ऐसी मौलिक अज्ञानता के रूप में लिया जाता है जो मानव दुखों की जड़ है। व्यामोह से व्यक्ति में गलत विचार या डिट्ठी का जन्म होता है। इस तरह के विचार के उत्पन्न होने पर व्यक्ति किसी चीज को गलत श्रेणी में रख देता है। इन दोनों कारकों की प्रधानता हमें मशहूर मानसिक रोग स्थिर -व्यामोह में देखने को मिलता है।

प्रत्यक्षणात्मक कारक के अतिरिक्त कुछ संज्ञानात्मक कारक भी है जिन्हें अकुशल कारक के रूप में पहचान की गयी है। इनमें प्रधान है **असमंजस-** असमंजस जिसे पाली भाषा में 'विसिकिच्चा' कहा जाता है। असमंजस की स्थिति में व्यक्ति में निर्णय करने की या सही निर्णय करने की अक्षमता पायी जाती है। इस मानसिक कारक की प्रबलता होने पर व्यक्ति का मन शक से भर जाता है और वह कोई भी निर्णय सही ढंग से नहीं ले पाता है।

निर्लज्जपन- निर्लज्जपन जिसे पाली भाषा में 'अहिरिका' कहा जाता है। निर्लज्जपना मानसिक कारक की प्रबलता होने पर व्यक्ति दूसरों की राय या मत को तथा अपने अन्तः स्वीकृत मानकों को अस्वीकार कर देता है। इस कारक के प्रबल होने पर व्यक्ति दुर्व्यवहार खुले रूप से करता है।

निष्ठुरपन- निष्ठुरपन जिसे पाली भाषा में 'अनोत्ताप्पा' कहा गया है। इस अकुशल कारक की अधिकता होने पर व्यक्ति को दूसरों की भावनाओं की कोई परवाह नहीं होती तथा वह बुरे कार्य करने में कोई संकोच नहीं करता है।

अहंभाव- अहंभाव जिसे पाली भाषा में 'मना' कहा गया है। अहंभाव मानसिक कारक में व्यक्ति हर वस्तु का प्रत्यक्षण इस ढंग से करता है कि मानो उससे अपनी आवश्यकता की पूर्ति होती है।

जब ये तीन मानसिक कारक अर्थात निर्लज्जपन, निष्ठुरपन तथा स्वार्थीपन या अहंभाव किसी एक क्षण में आपस में मिल जाते है तो इससे व्यक्ति निश्चित रूप से कई तरह के बुरे कार्य को बेहिचक करने में समर्थ हो जाता है।

उक्त अकुशल कारकों के अतिरिक्त कुछ अन्य अकुशल कारक ऐसे है जिनका स्वरुप भावात्मक है। इनमे प्रमुख है - घबड़ाहट, चिंता, लालच, कृपणता, ईर्ष्या, विमुखता, संकुचन, उदासीनता। घबड़ाहट तथा चिंता दो ऐसे मानसिक कारक है जिनसे कई तरह के मानसिक विकृतियाँ उत्पन्न होती है। लालच, कृपणता तथा ईर्ष्या में व्यक्ति में किसी वस्तु के प्रति उसे ग्रहण करने की आसक्ति पायी जाती है। विमुखता में आसक्ति का नकारात्मक पहलू देखने को मिलता है। सभी नकारात्मक मानसिक अवस्थाओं में लालच तथा विमुखता पायी जाती है तथा वे हमेशा व्यामोह के साथ संयोजित हो जाते है। संकुचन तथा उदासीनता दो ऐसे अकुशल मानसिक कारक है जिनसे मानसिक अवस्थाओं में दृढ़ आलोच उत्पन्न होता है। जब ऐसे कारकों की प्रबलता व्यक्ति में बढ़ जाती है, तो उसका मन एवं शरीर दोनों में आलसीपन की ओर उन्मुखता बढ़ जाती है।

अभिधम्म सिद्धांत में ऐसे तो कुशल या स्वस्थकर मानसिक कारक तथा अकुशल या अस्वस्थकर मानसिक कारक दोनों ही परस्पर एक -दूसरे का विरोध करते है अर्थात एक की उपस्थिति दूसरे को दबा देती है। परन्तु कुशल तथा अकुशल कारकों में एक - से - एक का सम्बन्ध नहीं होता है। कुछ ऐसे हालात होते है जिसमे एक ही कुशल कारक कई अकुशल कारकों को अकेले ही दबा देता है। उदाहरणस्वरूप, अनासक्ति अकेले ही कई अकुशल कारकों अर्थात लालच, कृपणता, ईर्ष्या तथा

विमुखता सभी को दबा देता है। उसी तरह जब व्यामोह जैसा अकुशल कारक मानसिक अवस्था में उपस्थित रहता है, तब किसी भी कुशल कारक का उत्पन्न होना संभव नहीं हो पाता है।

अभिधम्म सिद्धांत में 'काम ' ही वह अवस्था है जो यह निर्धारित करता है कि वह कुशल या अकुशल मानसिक दशा का अनुभव करेगा। किस तरह के कारकों का संयोग अमुक मानसिक दशा में तैयार होगा, यह जैविक, परिस्थितिजन्य तथा मन के गत अवस्थाओं से प्राप्त अनुभूतियों पर निर्भर करता है। मानसिक कारकों का कोई भी सेट चाहे धनात्मक हो या ऋणात्मक, एक समूह में ही व्यक्ति के मन में पनपते है। जब व्यक्ति के मानसिक दशा में विशेष कारक या कारकों का विशेष सेट प्राय: उत्पन्न होता है, तो यह फिर व्यक्तित्व शीलगुण में बदल जाता है जिससे फिर विशेष प्रकार के व्यक्तित्वों का निर्माण होता है।

4.5.3 अभिधम्म में व्यक्तित्व के प्रकार –

अभिधम्म सिद्धांत में व्यक्तित्व प्रकार का आधार मानसिक कारकों की विभिन्न शक्तियाँ होती है। अगर व्यक्ति का मन आदतन किसी विशेष मानसिक कारक या मानसिक कारकों के सेट से प्रबलित होता है, तो उससे व्यक्ति के व्यक्तित्व में अभिप्रेरण तथा व्यवहार प्रभावित होता है। इन मानसिक कारकों के पैटर्न के अनोखेपन से विशेष व्यक्तित्व प्रकार का निर्माण होता है। व्यक्तित्व का सबसे सामान्य प्रकार वह होता है जिसमें व्यामोह की प्रबलता कम होती है; जिसमें विमुखता की प्रबलता होती है, वह कामुक प्रकार का व्यक्ति होता है। जिस व्यक्ति में सूझ एवम् सतर्कता की प्रबलता होती है, वह बुद्धिमान व्यक्तित्व का व्यक्ति होता है। अभिधम्म सिद्धांत में मानव अभिप्रेरण का स्त्रोत मानसिक कारकों तथा उसका व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण है। व्यक्ति अपनी विशेष मानसिक दशा या अवस्था के कारण ही कोई एक विशेष कार्य करना चाहता है तथा कोई अन्य विशेष कार्य का परित्याग करता है। सचमुच में उसकी मानसिक अवस्था में ही प्रत्येक कार्य का निर्देशन करता है। जैसे व्यक्ति का मन लालच से प्रबलित होता है, तो यह उसके लिये एक महत्वपूर्ण अभिप्रेरण हो जायेगा और वह उसी के अनुरूप व्यवहार भी करेगा और वह अपने लालच से संबद्ध वस्तुओं को पाने का भरसक प्रयास भी करेगा। उसी तरह से यदि उसकी मानसिक अवस्था में अहंभाव की प्रबलता होती है, तो व्यक्ति सिर्फ अपने अहम को प्रफुल्लित करने वाले कार्य करेगा। इन सब का अर्थ यह निकलता है कि प्रत्येक व्यक्तित्व प्रकार एक अभिप्रेरणात्मक प्रकार भी होता है।

अभिधम्म नियमावली जिसे "विशुद्धिमग्गा" कहा जाता है तथा जिसका निर्माण पाँचवी शताब्दी में हुआ था, में भी कुछ व्यक्तित्व प्रकारों का वर्णन है। इन व्यक्तित्व प्रकारों के वर्णन में जो सबसे बड़ी विशेषता दर्शायी गयी है, वह यह है कि इसमें व्यक्तित्व प्रकारों का मूल्यांकन का आधार इस बात का सघन प्रेक्षण होता है कि व्यक्ति व्यवहार करने के लिए किस तरह खड़ा होता है तथा आगे बढ़ता है। जैसे - एक घृणित व्यक्ति जब चलेगा, तो वह अपना पैर घसीट - घसीट कर चलेगा तथा धोखा देने वाला व्यक्ति तेजी से चलेगा, आदि। "विशुद्धिमग्गा" के लेखक इस नियमावली में इस बात पर जोर दिया है कि जीवन का प्रत्येक विवरण उसके चरित्र को समझने का एक महत्वपूर्ण संकेत प्रदान करता है। इसी के आधार पर इस नियमावली में निम्नांकित तीन प्रमुख व्यक्तित्व प्रकारों का वर्णन मिलता है –

i. **संवेदी व्यक्तित्व प्रकार-** इस प्रकार का व्यक्ति सुन्दर, नम्र तथा बोलने में भद्रता का परिचय देने वाला होता है। ऐसे व्यक्ति अपना कार्य कलात्मक, क्रमबद्ध एवं निष्ठापूर्वक तरीके से करते है। वे साफ़ -सुथरा एवं जरुरत के हिसाब से पोशाक पहनते है। वह बिस्तर पर सोने से पहले उसे काफी ठीक - ठाक कर लेते है तथा सोते समय काम छटपटाहट दिखाते है। खाने में वे मुलायम तथा मीठा भोजन पसंद करते है। यह धीरे - धीरे तथा थोड़ा - थोड़ा करके खाते है तथा उसे ठीक ढंग से चबा - चबाकर खाते है ताकि खाने का अधिक से अधिक मजा लिया जाए। कोई भी सुन्दर वस्तु का दीदार भरपूर करते है तथा उसके गुणों से वे काफी प्रभावित होते है। इन सब के बावजूद भी इस तरह के व्यक्तित्व में कुछ नकारात्मक गन भी पाए जाते है। ये आडम्बरी, धूर्त या कपटिपूर्ण, असंतुष्ट, हीन तथा कामुक होते है।

ii. **घृणित व्यक्तित्व प्रकार-** इस तरह के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति शुष्क प्रकृति के होते है। ऐसे व्यक्ति के सोने का कमरा तथा बिस्तर जैसे -तैसे रहता है तथा सोते समय ये अपने शरीर को तना हुआ रखते है। जब इन्हें नींद से कभी उठाया जाता है, तो वे क्रोधित हो उठते है। ऐसे लोगों का कार्य करने का ढंग लापरवाहीयुक्त होता है। इनके पहनावा भी ढंग का नहीं होता है। खाने में वे ऐसा भोजन पसंद करते है जिसका स्वाद खट्टा तथा तीखा होता है। वे उस भोजन को भी जल्दी - जल्दी खा लेते है जिनका स्वाद उन्हें बहुत पसंद नहीं होता है। वस्तुओं की सुंदरता पर इनका ध्यान नहीं जाता है तथा वस्तु के गुण पर ध्यान कम तथा उसके सूक्ष्म से सूक्ष्म अवगुण पर ध्यान जल्दी जाता है। मोटे तौर पर देखा जाए तो ऐसे लोग क्रोध, अकृतघ्न, ईर्ष्यालु, तुच्छ तथा बुराइयों से युक्त होते है।

iii. **धोखेबाज व्यक्तित्व प्रकार-** ऐसे व्यक्तित्व वाले व्यक्ति प्रायः आलसी एवं उदासीन होते है। इनका ध्यान अपने काम से आसानी से विचलित हो जाता है तथा इन्हें अपने कार्यों के लिए पश्चताप भी अधिक होता है। ऐसे लोग जिद्दी तथा अड़ियल होते है। सोने की आदत भी बुरी होती है। ये हाथ -पैर फैला कर सोते है, सोने का बिस्तर काफी अस्त -व्यस्त रहता है तथा नींद से उठने पर उनकी तरह - तरह की शिकायतें भी होते है। एक कार्यकर्ता के रूप में ये अयोग्य एवं गड़बड़ होते है। इनकी पोशाक काफी ढीली -ढाली होती है और उनके व्यक्तित्व को भद्दा बना देती है। ये भोजन करने में कोई सावधानी नहीं बरतते है तथा जो कुछ भी उन्हें खाने को मिल जाता है, उसे खाने लगते है। वे इस बात का कोई सही मूल्यांकन नहीं कर पाते है कि क्या कोई वस्तु सचमुच में सुन्दर है या नहीं। उन्हें जो कुछ भी अन्य व्यक्तियों द्वारा कहा जाता है, उसमें आसानी से विश्वास कर लेते है और उसी के अनुरूप वे उसकी प्रशंसा या निंदा करते है।

"विशुद्धिमग्गा" में प्रत्येक व्यक्तित्व के प्रकार के लिए अलग -अलग ढंग के उपचार की बात कही गयी है। इस तरह से इस व्यक्तित्व प्रकार का मानसिक स्वास्थ्य से भी गहरा सम्बन्ध बतलाया गया है।

स्वस्थ व्यक्तित्व एवं मानसिक विकृति- अभिधम्म सिद्धांत के अनुसार प्रत्येक मानसिक अवस्था में पाये जाने वाले मानसिक कारक एक क्षण से दूसरे क्षण परिवर्तित होते रहते है। इस सिद्धांत में स्वस्थकर या कुशल कारकों की अनुपस्थिति तथा अस्वस्थकर या अकुशल कारकों की उपस्थिति ही मानसिक विकृति कहलाता है। मानसिक रोग का प्रत्येक प्रकार की उत्पत्ति तब होती है जब अकुशल कारकों की उपस्थिति मन में बढ़ जाती है। प्रत्येक अकुशल कारक से एक विशेष प्रकार की मानसिक विकृति की उत्पत्ति होती है। जैसे - विमुखता जैसे अकुशल कारक की उपस्थिति से व्यक्ति में दुर्भीति उत्पन्न होता है तथा घबड़ाहट एवं चिंता जैसे अकुशल कारक से स्नायुविकृति की उत्पत्ति होती है।

अभिधम्म सिद्धांत में मानसिक स्वस्थ की कसौटी भी सरल है - व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक वातावरण में जब कुशल कारक उपस्थित तथा अकुशल कारक अनुपस्थित होते है, तो इस अवस्था को मानसिक स्वास्थ्य कहा जाता है। इस सिद्धांत की यह भी मान्यता है कि स्वस्थ्यकार या कुशल कारक न केवल अकुशल कारकों को दबाता है बल्कि धनात्मक भावात्मक कारकों के लिए एक ऐसा मानसिक वातावरण तैयार करता है जो अकुशल कारकों की उपस्थिति में प्रफुल्लित नहीं हो सकता है। स्नेहमयी दयालुता तथा परोपकारी ख़ुशी दो ऐसे ही धनात्मक भावात्मक कारक के उदाहरण है।

अभिधम्म सिद्धांत के अनुसार एक सामान्य व्यक्तित्व की मानसिक अवस्थाओं में कुशल या स्वस्थकर कारक तथा अकुशल या अस्वस्थकर कारक दोनों का मिश्रण पाया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ क्षण में पूर्णत: कुशल कारक तथा कुछ क्षण में पूर्णत: अकुशल कारक की प्रबलता पायी जाती है। बहुत कम ऐसे लोग होते है जो सिर्फ स्वस्थ मानसिक अवस्थाओं का अनुभव करते है और इस अर्थ में हम लोगों में से अधिकतर लोग अस्वस्थकर अकुशल भी होते है। अभिधम्म सिद्धांत के अनुसार मनोवैज्ञानिक विकास का मुख्य लक्ष्य स्वस्थ्य मानसिक अवस्था को बढ़ावा देना तथा अस्वस्थ्य मानसिक अवस्था को कम करना होता है। जब व्यक्ति अपने मानसिक स्वास्थ्य के शीर्ष पर होता है, तो व्यक्ति के मन में कोई अस्वस्थयकर कारक की उत्पत्ति नहीं हो पाती है। निश्चित रूप से यह एक आदर्श लक्ष्य है जिसकी प्राप्ति प्रत्येक व्यक्ति ठीक से नहीं कर पाता है।

मनन : स्वस्थ्य व्यक्तित्व का मार्ग- सिर्फ स्वस्थ्य मानसिक अवस्था तथा अस्वस्थ्य मानसिक अवस्था की पहचान कर लेने से ही एक स्वास्थ्य व्यक्तित्व का मार्ग प्रसस्त नहीं हो जाता है। अभिधम्म सिद्धांत में एक स्वास्थ्य व्यक्तित्व की प्राप्ति के लिये एक विशेष विधि जिसे मनन कहा गया है, की अनुशंसा की गयी है। मनन की दो विधि बतलायी गयी है जिनका वर्णन निम्नांकित है -

a. एकाग्रता मनन
b. सतर्कता मनन

एकाग्रता मनन- मनन की इस विधि में व्यक्ति अपने ध्यान को एक वस्तु या एक बिंदु पर एकाग्रचित्त करता है। जब व्यक्ति कुशल कारक पर ध्यान एकाग्रचित्त करता है, तो इससे उसमें गहरी एकाग्रता उत्पन्न होती है। जैसे -जैसे एकाग्रता की गहराई बढ़ती है, मन स्थिर होते जाता है और अकुशल कारक जैसे -

घबड़ाहट, ध्यान भंगता आदि में कमी हो जाती है। इस प्रक्रिया से धीरे - धीरे एक ऐसा क्षण आता है, जब एकाग्रता बहुत तेजी से आने लगाती है और मन सिर्फ कुशल कारकों द्वारा ही प्रभावित होने लगता है और जो व्यक्ति के ध्यान को वांछित वस्तु पर बनाये रखता है। ऐसे कुशल कारकों में प्रयुक्त ध्यान तथा अविछिन्न ध्यान, हर्षोन्माद का भाव, शक्ति, धीरज या धृति। इन स्वास्थ्य कारकों में विकारा तथा विटाक्का दो ऐसे कारक है जो व्यक्ति के ध्यान को सतत किसी एक वस्तु केंद्रित करने में काफी मदद करता है। किन्तु इस अवस्था में इन पाँचो कारकों की शक्ति में उतार - चढ़ाव होता है। परन्तु जब व्यक्ति एक बिंदु एकाग्रता बनाये रखता है, तो उस उतार - चढ़ाव में कमी आ जाती है और फिर ध्यान में स्थिरता आ जाती है और मननकर्त्ता को सामान्य चेतना, पूर्ण अलगाव या विरक्ति का अनुभव होता है। चेतन की इस परिवर्तित अवस्था को पाली भाषा में झाना कहा गया है।

सतर्कता मनन- सतर्कता मनन में मननकर्ता चेतना के प्रवाह को नियमित करने का प्रयास नहीं करता है। इस तरह के मनन की आरंभिक अवस्था में व्यक्ति मन के किसी एक वस्तु पर एकाग्रचित्त न करके सभी तरह की वस्तुओं एवं मानसिक अनुभूतियों पर अपना ध्यान देता है। वह प्रत्येक मानसिक घटना या मानसिक अनुभूति पर इस ढंग से ध्यान देता है मानो वह प्रथम बार उसके सामने हो। वह इन सभी तरह की अनुभूतियों पर सामान रूप से ध्यान देता है तथा वह इनमें से किसी को भी अधिक महत्वपूर्ण समझकर अन्य से अलग नहीं करता है। मननकर्ता के लिये यह आरंभिक अवस्था काफी कठिनाईयुक्त होती है क्योंकि बहुत सारे विचार तथा मानसिक अनुभूतियाँ व्यक्ति के सामने आती है और चूँकि उन सबों पर उन्हें ध्यान देना होता है, इसलिये सतर्कता मनन खतरे में पड़ जाता है। सचमुच में सतर्कता मनन वहाँ पर सर्वाधिक प्रभावी होता है जब मननकर्ता की एकाग्रता इतनी अधिक होती है कि उसका मन सभी प्रत्यक्षण एवं चिन्तनों को आलेख कर पाता है परन्तु इतनी अधिक नहीं होती कि ऐसी संज्ञानात्मक प्रक्रिया रुक जाए।

अराहत: स्वास्थ्य व्यक्तित्व का आदर्श प्रकार- 'अराहत' का शाब्दिक अर्थ है जो प्रशंसनीय हो। इस अर्थ में तब 'अराहत' से अर्थ एक ऐसे व्यक्तित्व से होता है जिसकी सम्पूर्ण प्रशंसा हो सके। अभिधम्म सिद्धांत में 'अराहत' व्यक्तित्व की तस्वीर कुछ इस तरह है जैसे हम पश्चिमी व्यक्तित्व सिद्धांत अर्थात मैस्लो तथा रोजर्स के सिद्धांत में आत्म -सिद्ध व्यक्तित्व का पाते है। 'अराहत' व्यक्तित्व के शीलगुण ऐसे होते है जो स्थाई तौर पर परिवर्तित होते है तथा वे सभी अभिरुचियाँ, अभिप्रेरण क्रियाएँ, चिंतन, प्रत्यक्षण जो पहले अकुशल कारकों के प्रभाव में होता है, पूर्णतः समाप्त हो जाते है। वान युंग के अनुसार अराहत व्यक्तित्व विशेषकर के स्वप्न अर्थात अतीन्द्रियदर्शी स्वप्न अधिक देखते है। अतीन्द्रियदर्शी स्वप्न उन सपनों को कहा जाता है, जिनमें भविष्य में होने वाली घटनाओं का एक सही -सही पूर्वानुमान होता है। जोहानस्सन (Johansson 1970) ने अपनी प्रसिद्द पुस्तक "दी साइकोलॉजी ऑफ निर्वाण" में 'अराहत' व्यक्तित्व के कुछ गुणों का वर्णन किया है जो निम्न है।

अराहत व्यक्तित्व में निम्न गुणों की अधिकता पायी जाती है –

- ऐसे लोगों में स्नेह, दयालुता तथा सहानुभूति का भाव तीव्र होता है।

- ऐसे लोगों का प्रत्यक्षण तीक्ष्ण एवं सही होता है।
- ऐसे लोग दूसरों के प्रति कोई पक्षपात नहीं करते है।
- ऐसे लोग सभी परिस्थितियों में धीरज बनाये रखते है।
- ऐसे लोग कोई भी कार्य या कौशल शांतभाव से करते है।
- ऐसे लोग मनउबाऊ परिस्थितियों में भी शांत एवं मानसिक सतर्कता बनाये रखते है।
- ऐसे लोग अपने विचारों की खुली अभिव्यक्ति करते है तथा अपनी आवश्यकताओं के प्रति अनुक्रियाशील होते है।

अराहत व्यक्तित्व में निम्न गुणों की अनुपस्थिति होती है -

- ऐसे लोगो में संवेदी इच्छाओं के प्रति लोलुप्तता नहीं होती है।
- ऐसे लोगो में दर, चिंता, विद्वेष आदि नहीं होता है।
- ऐसे लोगो में हठधर्मिता की कमी होती है।
- ऐसे लोग दुःख - दर्द, निंदा, घाटा, अपयश या बदनामी के प्रति संवेदनशीलता नहीं दिखाते है।
- ऐसे लोगो में क्रोध व कामुकता की कमी होती है।
- ऐसे लोगो में दूसरों से अनुमोदन की आवश्यकता, प्रशंसा, सुख - दुःख का अनुभव नहीं होता है।
- ऐसे लोगो में में अतिआवश्यक चीजों को छोड़कर कुछ और पाने की आवश्यकता भी नहीं है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अभिधम्म व्यक्तित्व सिद्धांत में अराहत व्यक्तित्व की प्राप्ति एक अंतिम लक्ष्य होता है क्योंकि इसे स्वास्थ्यकर व्यक्तित्व का एक आदर्श प्रकार माना गया है। यद्यपि इस अराहत व्यक्तित्व की समानता पश्चिमी व्यक्तित्व सिद्धांतो खासकर मैस्लो एवं रोजर्स के आत्म - सिद्ध व्यक्तित्व से है, फिर भी इस तरह के व्यक्तित्व की व्याख्या हमें पश्चिमी सिद्धांतों में नहीं मिलती है।

4.6 सारांश

उपनिषद् में व्यक्तित्व का केंद्र जीवात्मा माना गया है। इसमें चेतना को पुरुष कहा गया है जिसके पाँच आवरण या कोष बताये गए है - अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष, विज्ञानमय कोष तथा आनंदमय कोष। इतना ही नहीं इसमें चेतना के चार स्तर भी बताये गए है। सांख्य सिद्धांत में व्यक्तित्व की एक तात्विक व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। इस सिद्धांत में मानव व्यक्तित्व को 'पुरुष' तथा 'प्रकृति' दोनों की अन्तः क्रिया का परिणाम बताया गया है। अभिधम्म सिद्धांत गौतम बुद्ध के उपदेश एवं शिक्षण पर आधारित है। इस सिद्धांत में सम्पूर्ण व्यक्तित्व के आदर्श प्रकार का वर्णन मिलता है जिनमें मन के कार्यों में व्यक्तित्व का अध्ययन का सम्बन्ध अचेतन या अहम जैसे सम्प्रत्ययों से न होकर घटनाओं के क्रम से होता है। इसमें प्रत्येक मानसिक अवस्था में विशेषताओं का गुच्छ या समुच्चय पाया जाता है जिसे मानसिक कारक कहा गया है। जिन्हें दो भागों में अर्थात कुशल कारक तथा अकुशल कारक में बाँटा गया है। मनन की दो विधियाँ अर्थात एकाग्रता मनन तथा सतर्कता मनन द्वारा मानसिक अवस्था से अकुशल कारकों को

ख़त्म करके कुशल कारकों की प्रवीणता को बढ़ाया जाता है। इससे अंत में एक स्वस्थकर व्यक्तित्व का विकास होता है जिसे अराहत कहा जाता है।

4.7 शब्दावली

कर्मेन्द्रिय- Organs or Actions संभाषण तंत्र- Vocal System

उत्सर्जन अंग- Excretory System

बाह्य ब्रह्माण्ड- External Universe

4.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. निम्न में से क्या सात्विक क्रिया की प्रेरक शक्ति नहीं है?

a) अहिंसा
b) ध्यान
c) आलस्य
d) दया

2. तमस आशा व भ्रम से उत्पन्न होता है। (सत्य /असत्य)

उत्तर -: 1. ग 2. असत्य

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

https://en.wikipedia.org/wiki/Abhidharma

http://dspace.hmlibrary.ac.in:8080/jspui/bitstream/123456789/1290/10/10_CHAPTER_2.pdf

डॉ.अरुण कुमार सिंह एवम् डॉ. आशीष कुमार 'व्यक्तित्व का मनोविज्ञान'.

4.10 निबंधात्मक प्रश्न

1) उपनिषद् के अनुसार एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व की व्याख्या प्रस्तुत करें।
2) सांख्य सिद्धांत के अनुसार व्यक्तित्व की व्याख्या किस तरह से की गयी है ?
3) अभिधम्म सिद्धांत अनुसार व्यक्तित्व की संरचना एवं प्रकार की व्याख्या करें।
4) 'अराहत' से आप क्या समझते है? अराहत व्यक्तित्व के प्रमुख गुणों का वर्णन करें।

इकाई 5. व्यक्तित्व के प्रकार एवं शीलगुण सिद्धान्त

इकाई संरचना

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 शील गुण उपागमों का वर्णन

5.4 प्रकार सिद्धान्त

5.5 व्यक्तित्व के प्रकार एवं शीलगुण सिद्धान्त में विभिन्नताएं

5.6 सारांश

5.7 शब्दावली

5.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

व्यक्तित्व व्यक्ति के मनोदैहिक गुणो का गत्यामक संगठन है जो वातावरण के प्रति व्यक्ति के अपूर्व समायोजन को निर्धारित करता है। अर्थात व्यक्तित्व व्यक्ति के मनोदैहिक संस्थानों अथवा मानसिक एवं शारिरिक संस्थानो का गत्यामक संगठन है क्योंकि व्यक्ति का व्यक्तित्व बाल्यावस्था से लेकर जीवनपर्यन्त परिवर्तित होता रहता है और यही व्यक्ति का जीवनपर्यन्त मार्गान्तिकरण करता है। व्यक्ति संसार में कुछ आनुवांशिक गुणों को लेकर आता है जो उसके शारीरिक और मानसिक विकास में अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों का निर्धारण करते हैं। प्रत्येक मानव प्राणी वशिष्ट भौगोलिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिवेश में विकसित होता है। सामाजिक परिवेश में परिवार, विद्यालय, सामाजिक समूह का व्यक्तित्व के विकास पर विशेष प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक समूह और समाज में कुछ मूल्य पाये जाते हैं। इन मूल्यों और आदर्शों का, जो संस्कृति के प्रमुख तत्त्व हैं, व्यक्तित्व विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार व्यक्ति का व्यक्तित्व आनुवंशिक और परिवेशगत दोनों प्रकार के कारकों द्वारा निर्धारित होता है ।व्यक्तित्व के वर्णनात्मक सिद्धान्तों के अन्तर्गत दो तरह के सिद्धान्त आते हैं- प्रकार सिद्धान्त तथा शीलगुण सिद्धान्त। व्यक्तित्व अध्ययन का प्रकार एवं शीलगुण उपागम व्यक्ति की विशेषताओं पर बल देता है तथा वह अध्ययन करने का प्रयास करता है कि ये विशेषतायें किस प्रकार संगठित होती हैं।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- व्यक्तित्व के उपागमों के बारे में बता सकेंगे।
- व्यक्ति के शीलगुण सिद्धांत की व्याख्या कर सकेंगे |
- व्यक्ति के प्रकार सिद्धांत की व्याख्या कर सकेंगे|

व्यक्तित्व के प्रकार एवं शीलगुण सिद्धांत में अंतर का अध्ययन सकेंगे|

5.3 व्यक्तित्व के उपागमों का वर्णन

5.3.1 शीलगुण सिद्धांत (Trait Theory). शीलगुण व्यक्ति के व्यवहारों की एक ऐसी विशेषता है जो विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों में प्रकट होती है। किसी व्यक्ति को ईमानदार, उत्साही, संवेदनशील आदि कहा जाता है। ये सभी शब्द विशेषण हैं, जिनके द्वारा व्यक्ति के प्रमुख लक्षणों को व्यक्त किया जा सकता है। इन्हीं लक्षणों को शीलगुण कहते हैं। सबसे पहले शीलगुण के द्वारा व्यक्तित्व को स्पष्ट करने के लिए आलपोर्ट एवं आडवर्ट ने 17953 अंग्रेजी शब्दों का चयन किया जिनके द्वारा किसी व्यक्ति की विशेषताओं को व्यक्त किया जा सकता है। आलपोर्ट (1937) के अनुसार 'प्रत्येक व्यक्ति में विभिन्न मात्राओं में अनेक शीलगुण होते हैं और इन शीलगुणों को संगठन एक निश्चित प्रकार का होता है।'

शीलगुण सिद्धान्त के अनुसार व्यक्तित्व की रचना विभिन्न शीलगुणों से हुई है। व्यक्तित्व रूपी भवन की इकाई को शीलगुण कहते हैं। विभिन्न शीलगुणों के संगठन से व्यक्तित्व संरचित होता है। शीलगुण अपेक्षाकृत स्थिर होते हैं और विभिन्न परिस्थितियों में व्यक्ति के व्यवहार द्वारा प्रकट होते हैं। चैपलिन के अनुसार- 'शीलगुण अपेक्षाकृत स्थिर एवं संगत व्यवहार प्रतिरूप है जिनकी अभिव्यक्ति विभिन्न परिस्थितियों में होती है।' प्रत्येक शीलगुण की मात्रा भिन्न-भिन्न होती है। जैसे- प्रभुत्व शीलगुण सभी व्यक्तियों में होता है, परन्तु किसी व्यक्ति में इसकी मात्रा कम होती है और किसी में अधिक। इसी कारण कुछ मनोवैज्ञानिकों ने शीलगुण के स्थान पर विमा या आयाम शब्द का प्रयोग किया है। विशेष रूप से कैटेल और आइजेंक ने इस बात पर बल दिया है कि प्रत्येक शीलगुण व्यक्तित्व की एक विमा है, इस विमा के विभिन्न बिन्दुओं पर उस विशेष शीलगुण की मात्राओं को अंकित किया जा सकता है। इस प्रकार विमा के निश्चित बिन्दु से शीलगुण की एक निश्चित मात्रा का बोध होता है।

शीलगुण सिद्धान्त की विशेषतायें (Characteristics of Trait Theory).

इस सिद्धांत की विशेषतायें निम्नलिखित हैं-

1. इस सिद्धांत का सबसे बड़ा गुण यह है कि इससे व्यक्तित्व के आधार तत्वों को समझने में सहायता मिलती है।

2. शीलगुण सिद्धान्त के आधार पर भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के बीच समानता की व्याख्या की जा सकती है।

3. यह सिद्धांत इस बात पर बल देता है कि व्यक्ति का व्यवहार स्थिर और संगतिपूर्ण होता है।

4. आइजेंक द्वारा प्रस्तुत द्विध्रुवीय विमाओं के आधार पर व्यक्तित्व की अन्तर्मुखता-बहिर्मुखता, मनःस्नानुविकृति-स्थिरता तथा मनोविक्षिप्तता-यथार्थता प्रवृत्ति की व्याख्या सरल हो जाती है।

5.3.2. शीलगुण सिद्धान्त में मनोवैज्ञानिकों के विचार- इस तरह से शीलगुण में व्यक्तित्व के उन महत्वपूर्ण विमाओं (dimensions) की पहचान करने की कोशिश की जाती है जिनके आधार पर व्यक्ति एक दूसरे से भिन्न समझे जाते हैं। इस उपागम की मान्यता यह है कि यदि एक बार यह जान लिया जाता है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से किस तरह से भिन्न है, फिर यह आसानी से मापा जा सकता है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से कितना भिन्न है और तब अध्ययनकर्ता उन अन्तरों को विभिन्न परिस्थितियों में व्यक्ति व्यवहार के अन्तरों के साथ संबंद्ध कर उसकी व्याख्या करता है। शीलगुण सिद्धान्त में मूल रूप से दो मनोवैज्ञानिकों के विचार का उल्लेख किया जाता है जो निम्नांकित है-

5.3.2.1. आलपोर्ट का योगदान (Contribution of Allport)- आलपोर्ट का नाम शीलगुण सिद्धान्त के साथ गहरे रूप से जुड़ा हुआ है। यही कारण है कि आलपोर्ट द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व के सिद्धान्त को 'आलपोर्ट का शीलगुण सिद्धान्त (Allport's trait theory) कहा जाता है जिसकी विस्तृत चर्चा हम आगे करेंगे। आलपोर्ट ने शीलगुण को मुख्यतः दो भागों में बांटा है जो इस प्रकार है-

1. **सामान्य शीलगुण (Common trait)**- सामान्य शीलगुण से तात्पर्य वैसे शीलगुणों से होता है जो किसी समाज या संस्कृति (culture) के अधिकतर लोगों से पाया जाता है। फलतः सामान्यस शीलगुण ऐसा शीलगुण है जिसके आधार पर किसी समाज या संस्कृति के अधिकतर लोगों की तुलना आपस में की जा सकती है। उदाहरणार्थ, प्रभुत्व (dominance) की माप पर मोहन का शीलगुण यदि 70वें शततमक (percentile) पर है, तो इसका मतलब हुआ कि 7०% व्यक्तियों का गुण मोहन की तुलना में कम है। स्पष्टतः यहाँ प्रभुत्व के शीलगुणों के आधार पर मोहन की तुलना अन्य व्यक्तियों से की जा रही है। अतः प्रभुत्व एक सामान्य शीलगुण (Common trait) का उदाहरण हुआ।

2. **व्यक्तिगत शीलगुण (Personal trait)**- आलपोर्ट (Allport) के अनुसार व्यक्तिगत शीलगुण (personal trait) एक दूसरा महत्वपूर्ण शीलगुण है जिसे उन्होंने व्यक्तिगत प्रवृत्ति (personal disposition) कहना अधिक उचित ठहराया है। उनका विचार है कि व्यक्तिगत प्रवृत्ति (disposition) से तात्पर्य वैसे शीलगुणों से होता है जो किसी समाज या संस्कृति के व्यक्ति विशेष तक ही सीमित होता है, अर्थात उस समय या संस्कृति के सभी व्यक्तियों के बीच तुलना नहीं की जा सकती है परन्तु एक ही व्यक्ति का तुलनात्मक (active) अध्ययन भिन्न-भिन्न पहलुओं पर हो सकता है। आलपोर्ट ने अपने शब्दावली में सामान्य शीलगुण के लिए सिर्फ शीलगुण का प्रयोग किया तथा वैयक्तिक शीलगुण के लिए वैयक्तिक पूर्ववृत्ति का प्रयोग किया। आलपोर्ट ने वैयक्तिक पूर्ववृत्ति केा निम्नांकित तीन भागों में बॉटा है-

1. कार्डिनल पूर्ववृत्ति या शीलगुण

2. केन्द्रीय पूर्ववृत्ति या शीलगुण

3. गौण पूर्ववृत्ति या शीलगुण

इन तीनों का वर्णन निम्नांकित है-

(1) कार्डिनल पूर्ववृत्ति या शीलगुण (Cardinal disposition): कार्डिनल पूर्ववृत्ति या शीलगुण से तात्पर्य वैसे शीलगुण से होता है जो व्यक्ति में इतना अधिक व्यापक होता है कि वह प्रत्येक व्यवहार इसी से प्रभावित होकर करता पाया जाता है। जैसे, शान्ति एवं अहिंसा में विश्वास महात्मा गाँधी के कार्डिनल शीलगुण का एक उदाहरण है। आक्रामकता हिटलर एवं नेपोलियन का एक कार्डिनल शीलगुण था जिससे वे विश्वविख्यात थे। यह शीलगुण सभी व्यक्तियों में नहीं पाया जाता है परन्तु जिसमें पाया जाता है वह इसी शीलगुण के लिए जाने जाते है।

(2) **केन्द्रीय प्रवृत्ति या शीलगुण (Central Disposition)** केन्द्रीय प्रवृत्ति सभी व्यक्तियों में पायी जाती है। प्रत्येक व्यक्ति में 5 से 10 ऐसे प्रवृत्तियाँ या गुण होते हैं जिसके भीतर उसका व्यक्तित्व अधिक सक्रिय रहता है। एक तरह से यदि कहा जाय कि व्यक्तित्व इन 5 से 10 गुणों के भीतर जिंदा रहता है, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस तरह के गुणों या प्रवृत्तियों को केन्द्रीय

प्रवृत्ति कहा जाता है। सामाजिकता (Sociability) आत्मविश्वास (Self-confidence) उदासी (Depression),आदि कुछ केन्द्रीय प्रवृत्ति (Central disposition) के उदाहरण हैं।

(3) **गौण प्रवृत्ति या शीलगुण (Secondary Disposition**) - गौण प्रवृत्ति वैसे गुणों को कहा जाता है जो व्यक्तित्व के लिए कम महत्वपूर्ण, कम संगत (Consistent), कम अर्थपूर्ण तथा कम स्पष्ट होते हैं, जैसे-खाने की आदत, केश सज्जा, पहनावा, आदि कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ हैं जिनके आधार पर व्यक्तिव को समझने में कोई खास मदद नहीं मिलती हैं और न ही इसके आधार पर व्यक्तित्व के बारे में कोई खास अर्थ ही लगाया जा सकता है। आलपोर्ट ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि एक व्यक्ति के लिए एक गुण केन्द्रीय प्रवृत्ति (Central disposition) हो सकता है, परन्तु दूसरे के लिए वही गुण गौण प्रवृत्ति (**Secondary Disposition**) हो सकता है। उदाहरणार्थ, वहिर्मुखी (extrovert) के लिए सामाजिकता एक केन्द्रीय प्रवृत्ति है परन्तु अन्तर्मुखी (Introvert)के लिए सामाजिकता एक गौण प्रवृत्ति है। इस तरह से हम देखते हैं कि आलपोर्ट ने व्यक्तित्व के शीलगुणों को कई भागों में बाँटकर एक यथोचित व्याख्या प्रस्तुत की है।

1.3.2.2. कैटेल का योगदान (Contribution of Cattell)- शीलगुण सिद्धान्त में आलपोर्ट के बाद कैटेल का नाम अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। इन्होंने शीलगुण सिद्धान्त में आलपोर्ट के योगदान करके इस सिद्धान्त को व्यक्तित्व की व्याख्या करने में काफी प्रबल बनाया है।

कैटेल ने प्रमुख शीलगुणों की खोज की शुरूआत आलपोर्ट द्वारा बतलाये गए 18,000 शीलगुणों में से 4,500 शीलगुणों को चुनकर किया। बाद में, इनमें से समानार्थ (Synonym) शब्दों को एक साथ मिलाकर इसकी संख्या उन्होंने 200 कर दी और फिर बाद में विशेष सांख्यिकीय विधि (Statistical method) यानी कारक विश्लेषण (Factor analysis) के सहारे अन्तर सहसम्बन्ध (Inter correlation) द्वारा उसकी संख्या 35 कर दी।

कैटेल ने शीलगुणों को कई ढंग से विभाजित कर अध्ययन किया है। उनका सबसे मशहूर वर्गीकरण वह है जिसमें उन्होंने व्यक्तित्व के शीलगुणों का सतही शीलगुण (surface trait) तथा मूल या स्त्रोत शीलगुण (source trait) के रूप में विभाजन किया है। इन दोनों का वर्णन निम्नांकित है-

(1) **सतही शीलगुण (Surface trait)** -जैसा कि नाम से भी स्पष्ट है, इस तरह का शीलगुण व्यक्तित्व की ऊपरी सतह या परिधि पर होता है यानी, इस तरह के शीलगुण ऐसे होते हैं जो व्यक्ति के दिन-प्रतिदिन की अन्तःक्रिया (interaction) में आसानी में अभिव्यक्त हो जाते हैं। इसकी अभिव्यक्ति इतनी स्पष्ट होती हे कि सम्बन्धित शीलगुण के बारे में व्यक्ति में कोई दो मत हो ही नहीं सकते हैं। जैसे-प्रसन्नता, परोपकारिता, सत्यनिष्ठा कुछ एसे शीलगुण हैं जो सतही शीलगुण के उदाहरण हैं जिनकी अभिव्यक्ति व्यक्ति के दिन-प्रतिदिन की अन्तःक्रिया में स्पष्ट रूप से होती है।

(2) **स्त्रोत या मूल शीलगुण (Source trait)** - कैटेल के अनुसार मूल शीलगुण व्यक्तिव की अधिक महत्वपूर्ण संरचना है तथा इसकी संख्या सतही शीलगुण की अपेक्षा कम होती है। मूल शीलगुण सतही शीलगुण के समान, व्यक्ति के दिन-प्रतिदिन की अन्तःक्रिया में स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं हो पाते हैं। अतः इसका प्रेक्षण (observation) सीधे नहीं किया जा सकता है। कैटेल के अनुसार मूल शीलगुण व्यक्तित्व की भीतरी संरचना होती है जिसके बारे में हमें ज्ञान तब होता है जब हम उससे सम्बन्धित सतही शीलगुण को एक साथ मिलाने की कोशिश करते हैं। जैसे- सामुदायिकता (gregariousness), नि:स्वार्थता (unselfishness) तथा हास्य (humor) तीन ऐसे सतही शीलगुण हैं जिन्हें एक साथ मिलाने से एक नया मूल शीलगुण बनता है जिसे मित्रता की संज्ञा दी जाती है।

सामान्य रूप से मूल शीलगुण (Source trait)को कैटेल (Cattell) ने दो भागों में बाँटा है-

a. पर्यावरण-प्रभावित शीलगुण (Environmental-mold traits) तथा

b. स्वाभाविक शीलगुण (Constitutional traits)

a. **पर्यावरण-प्रभावित शीलगुण (Environmental-mold traits)** - कुछ मूल शीलगुण ऐसे होते हैं जिनके विकास में आनुवंशिकता (heredity) की अपेक्षा वातावरण-सम्बन्धी कारकों का अधिक प्रभाव पड़ता है। इन्हें पर्यावरण-प्रभावित शीलगुण (environmental-mold traits) कहा जाता है।

b. **स्वाभाविक शीलगुण (Constitutional traits)** - कुछ ऐसे शीलगुण होते हैं जिनके विकास में वातावरण की अपेक्षा आनुवंशिकता का प्रभाव अधिक पड़ता है। इस तरह के शीलगुण को स्वाभाविक शीलगुण (constitutional traits) कहा जाता है।

कैटेल ने शीलगुणों का विभाजन उस व्यवहार पर भी किया है जिससे वे सम्बन्धित होते हैं। इस कसौटी के आधार पर शीलगुण के तीन प्रकार हैं-

a. गत्यात्मक शीलगुण (**dynamic trait**)

b. क्षमता शीलगुण (**ability traits**)

c. चित्तप्रकृति शीलगुण (**temperament trait**)

a. **गत्यात्मक शीलगुण (dynamic trait)**- गत्यात्मक शीलगुण वैसे शीलगुण को कहा जाता है जिससे व्यक्ति का व्यवहार एक खास लक्ष्य की ओर अग्रसित होता है। मनोवृत्ति (attitude), लालसा (urge) तथा मनोभाव (sentiments) गत्यात्मक शीलगुण के कुछ उदाहरण हैं।

b. **क्षमता शीलगुण** (**Ability traits**)- क्षमता शीलगुण से तात्पर्य कुछ वैसे शीलगुणों से होता है जो व्यक्ति को किसी लक्ष्य तक पहुँचाने में काफी प्रभावकारी सिद्ध होते हैं।

c**. चित्तप्रकृति शीलगुण** (**Temperament trait**)- चित्तप्रकृति शीलगुण से तात्पर्य, वैसे शीलगुणों से होता है जो किसी लक्ष्य पर पहुँचने के प्रयास से उत्पन्न होता है तथा जिसका सम्बन्ध व्यक्ति की संवेगात्मक स्थिति (emotional state) अनुक्रिया करने की शक्ति (energy) तथा दर (rate) आदि से सम्बन्धित होता है। सांवेगिक स्थिरता, मस्तमौलापन आदि चित्तप्रकृति शीलगुण के कुछ उदाहरण हैं।

कैटेल ने यह भी बतलाया है कि व्यक्तित्व के शीलगुणों का अध्ययन करने के लिए मूलतः तीन स्त्रोत (source) हैं-जीवन अभिलेख (life record) आत्म रेटिंग (self-rating) तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षण (objective test) पहले स्त्रोत से प्राप्त आँकड़ों को L-data, दूसरे स्त्रोत से प्राप्त आँकड़ों को Q-data तथा तीसरे स्त्रोत से प्राप्त आँकड़ों को OT-data कहा जाता है।

5.3.2.3. एच.जे. आइजेंक का योगदान (Contribution of Eysenck)-

आइजेंक ने भी अपने अध्ययन में गणितीय उपागम को अपनाया है। उन्होंने विज्ञान में मापन की आवश्यकता पर बल दिया है और अनेक मनोवैज्ञानिक परीक्षण निर्मित किए हैं। व्यक्तित्व सिद्धान्त के सम्बन्ध में उनका कहना है कि इस दिशा में अभी बहुत कुछ करना शेष है फिर भी व्यक्तित्व के सम्बन्ध में उन्होंने जो विचार प्रस्तुत किए हैं वे अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने अपने पूर्ववर्ती मनोवैज्ञानिकों के विचारों को ग्रहण करते हुए एक अत्यन्त तर्कसंगत व्यक्तित्व सिद्धांत की स्थापना की है। व्यक्तित्व के सम्बन्ध में उनके प्रमुख विचार इस प्रकार हैं-

5.3.2.3.1. व्यक्तित्व का स्वरूप- आइजेंक के अनुसार व्यक्तित्व के स्वरूप पर विचार करते समय उसके संज्ञानात्मक, चारित्रिक, भावनात्मक तथा शारीरिक पक्ष पर ध्यान देना आवश्यक है। आइजेंक ने व्यक्तित्व की परिभाषा करते हुए लिखा है-

‘‘व्यक्तित्व प्राणी के वास्तविक एवं सम्भाव्य व्यवहार संरूप का वह समग्र है जिसका निर्धारण आनुवंशिकता और वातावरण करता है। इसका प्रारम्भ तथा गठन व्यवहार संरूप से सम्बन्धित अनुभागों के गठन तथा उनसे सम्बन्धित प्रकार्यात्मक अन्तर्क्रिया के द्वारा होता है।

एक अन्य परिभाषा में आइजेंक ने व्यक्तित्व को व्यवहार बताया है-

‘‘व्यक्तित्व व्यवहार है, बशर्ते व्यवहार में संगत वाचिक एवं स्वायत्त अनुक्रिया तथा प्रेक्षणीय निष्पादन सम्मिलित हो। यह केवल विशिष्ट उद्दीपक-अनुक्रिया यांत्रिकी का समुच्चय नहीं है।’’

आलपोर्ट द्वारा प्रस्तुत व्यक्तित्व की परिभाषा को आइजेंक ने स्वीकार किया है। इस प्रकार आइजेंक के अनुसार व्यक्तित्व सभी संज्ञानात्मक, भावनात्मक, क्रियात्मक और शारीरिक लक्षणों का एक समग्र समुच्चय है।

5.2.3.2. व्यक्तित्व के प्रकार -

जिस प्रकार कैटेल ने अपने सिद्धान्त में शीलगुणों पर अत्यधिक बल दिया है उसी प्रकार आइजेंक ने व्यक्तित्व निरूपण में प्रकारों को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना है। आइजेंक ने कारक विश्लषण के आधार पर व्यक्तित्व के तीन प्राथमिक आयाम बताए हैं-

a. अन्तर्मुखता- बहिर्मुखता (Introversion-Extroversion)

b. मनस्तापीयता- स्थिरता (Neuroticism- Stability)

c. मनोविक्षिप्तता - पराहं की क्रियाये (Psychoticism- Superego function)

a. अन्तर्मुखता-बहिर्मुखता**(Introversion-Extroversion)-**अन्तर्मुखी व्यक्तियों में पराहं की प्रधानता होती है और बहिर्मुखी व्यक्तियों के कार्य एवं व्यवहार अधिकतर इदं से प्रेरित होते हैं।

b. मनस्तापीयता- स्थिरता **(Neuroticism- Stability)** - मनस्तापी व्यक्ति में मनस्ताप के और मनोविक्षिप्त व्यक्ति में मनोविक्षिप्तता के शीलगुण और लक्षण पाये जाते हैं।

c. मनोविक्षिप्तता- पराहं की क्रियाये **(Psychoticism- Superego function)** - मनोविक्षिप्त व्यक्ति में मनोविक्षिप्तता के शीलगुण और लक्षण पाये जाते हैं।

आइजेंक ने अनेक प्रयोगों के आधार पर यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्तित्व प्रकार और व्यक्तित्व आयाम आनुवंशिकता से अत्यधिक प्रभावित होते हैं। अन्तर्मुखी और बहिर्मुखी व्यक्तित्व में शारीरिक दृष्टि से पाये जाने वाले अन्तर का आधार मस्तिष्क का एक गुण है जिसके कारण व्यक्ति किन्हीं परिस्थितियों में जागृत और बहिर्मुखी हो जाता है और किन्हीं में वह शान्त और अन्तर्मुखी रहता है व्यक्तित्व के इस आयाम के शारीरिक पक्ष पर आइजेंक ने समुचित प्रकाश डाला है। आइजेंक के अनुसार व्यक्तित्व तीन प्रकार के होते हैं फिर भी उनका मत है कि किसी व्यक्ति को पूर्णरूप से एक प्रकार का नहीं माना जा सकता। दूसरे प्रकार की विशेषतायें भी व्यक्ति में पायी जाती है। व्यवहार की दृष्टि से बहुत से व्यक्तियों में मनस्तापी और मनोविक्षिप्तता दोनों के लक्षण होते हैं और बहुत से व्यक्तियों में सामान्य तथा मनस्तापी दोनों की विशेषतायें पायी जाती है।

व्यक्तित्व के कारकों का अध्ययन करके आइजेंक ने यह बताया कि इन कारकों में पदानुक्रमिक सम्बन्ध पाया जाता है। हॉल एवं लिण्डजे के अनुसार आइजेंक व्यक्तित्व को पदानुक्रम में संगठित मानते हैं। आइजेंक ने व्यक्तित्व के चार प्रमुख कारक बताए हैं-

1. त्रुटि कारक
2. विशिष्ट कारक
3. सामूहिक कारक

4. सामान्य कारक

1. सबसे निचले स्तर पर त्रुटि कारक पाया जाता है। यह सबसे कम महत्वपूर्ण होता है। इस कारक के फलस्वरूप व्यक्तित्व सम्बन्धी कुछ विशिष्ट अनुक्रियाएँ होती हैं जिनका कोई विशेष महत्व नहीं होता।

2. दूसरे सोपान पर आइजेंक ने विशिष्ट कारक को रखा है। इस कारक के फलस्वरूप होने वाली अनुक्रियाओं को आदतजन्य अनुक्रियाएँ कहते हैं। व्यक्ति की आदतों के मूल में विशिष्ट कारक होते हैं।

3. तीसरे सोपान पर सामूहिक कारक होते हैं। इन कारकों का सम्बन्ध उस समूह से होता है जिसमें व्यक्ति रहता है। सामूहिक कारक से ही व्यक्ति के शीलगुण प्रेरित होते हैं। आइजेंक के अनुसार शीलगुण ऐसी आदतें हैं जिनमें निरन्तरता और समरूपता पाई जाती है। इन सामूहिक कारकों द्वारा व्यक्ति के शीलगुणों एवं अभिवृत्तियाँ उत्पन्न होती हैं।

4. चौथे और अन्तिम सोपान पर आइजेंक ने सामान्य कारक को स्थान दिया है। ये कारक सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इनके द्वारा व्यक्तित्व के प्रकार निर्धारित होते हैं। आइजेंक ने शीलगुणों के पुन्ज को प्रकार कहा है। व्यक्ति के शीलगुणों से अधिक महत्वपूर्ण उनके प्रकार हैं क्योंकि वे ही शीलगुणों के पुन्ज हैं।

आइजेंक ने व्यक्तित्व का जो सिद्धान्त प्रस्तुत किया है उसका आधार गणितीय एवं मात्रात्मक है परन्तु वह पूर्णरूपेण इन्द्रियानुभविक नहीं है। उसमें सामान्य तथा विशेष तत्वों का सुन्दर समन्वय पाया जाता है। आइजेंक की यह मान्यता उसके सिद्धान्त का मूल आधार है। आइजेंक यह भी मानते हैं कि व्यक्तित्व का वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए उसकी पूर्ववर्ती और अनुवर्ती परिस्थितियों का सही-सही निरीक्षण करना आवश्यक है। इस प्रकार आइजेंक ने व्यक्तित्व को एक मध्यवर्ती चर माना है क्योंकि इसका सम्बन्ध पूर्ववर्ती और अनुवर्ती परिस्थितियों से होता है।

आइजेंक ने व्यक्तित्व अध्ययन के व्यष्टिवादी उपागम को स्वीकार नहीं किया है। वह व्यक्तित्व की अनन्यता को महत्त्व नहीं देता।

व्यक्तित्व की संकल्पना को प्रायोगिक एवं सामाजिक मनोविज्ञान में उपयोगी बनाने की दृष्टि से आइजेंक इस बात पर बल देता है कि व्यक्तित्व का विश्लेषण गणितीय आधार पर किया जाय क्योंकि न तो व्यक्तित्व अनन्य है, न सार्वभौम। गणितीय आधार पर अध्ययन करने से इसके कुछ आयाम सामने उपस्थित होते हैं। आइजेंक ने व्यक्तित्व के तीन प्रकार बतलाए हैं, वे वास्तव में व्यक्तित्व के तीन ऐसे आयाम हैं जो उसके व्यक्तित्व सिद्धान्त पर समुचित प्रकाश डालते हैं।

मूल्यांकन -

1. आइजेंक ने व्यक्तित्व अध्ययन के लिए गणितीय उपागम अपनाया।

2. उसने व्यक्तित्व सम्बन्धी शोध कार्य के लिए ऐसी विधियों का उपयोग किया जिनको पहले प्रयुक्त नहीं किया गया।

3. ऐसी ही एक विधि है निष्कर्ष विश्लेषण। निष्कर्ष विश्लेषण के ही आधार पर आइजेंक ने व्यक्तित्व के तीन प्रकार एवं तीन आयाम बताए हैं।

4. आइजेंक की निकष विश्लेषण की विधि कारक विश्लेषण में मिलती जुलती है।

5. हॉल एवं लिण्डजे के अनुसार आइजेंक ने व्यक्तित्व सम्बन्धी धारणाओं की जाँच करके उनके मध्य पाये जाने वाले अनावश्यक भ्रम के जाल को काट-छाँट व्यक्तित्व सिद्धांत को एक सुचारु स्वरूप देने का प्रयास किया।

6. बिस्काफ के अनुसार फ्रायड के बाद आइजेंक ऐसा मनोवैज्ञानिक था जिसने व्यक्तित्व मनोविज्ञान के मनोचिकित्सा के क्षेत्र में महान योगदान किया।

7. आइजेंक ने व्यक्तित्व के जैविक निर्धारकों पर अधिक बल दिया है।

8. आइजेंक ने अपने व्यक्तित्व सिद्धांत के विषय में अत्यधिक शोध कार्य को प्रोत्साहन दिया है।

9. उसकी धारणा है कि उसके व्यक्तित्व सिद्धांत का ठोस आधार निर्मित करने के लिए अभी और अधिक व्यक्तित्व सम्बन्धी खोज की आवश्यकता है।

आइजेंक ने व्यक्तित्व मापन हेतु जिन परीक्षणों का निर्माण किया है वे व्यक्तित्व के क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

ऊपर वर्णित आलपोर्ट, कैटेल तथा आइजेंक के योगदानों पर विचार करने पर एक प्रश्न उठकर जो सामने आता है, वह यह है कि मानव व्यक्तित्व के प्रमुख शीलगुण या विमा कौन-कौन हैं? सचमुच में शीलगुण उपागम इस प्रश्न का उत्तर संतोषजनक ढंग से देने में सफल नहीं हो पाया है।

5.3.2.4. व्यक्तित्व के पञ्च आयामी सिद्धांत -

गत दो दशकों में किए गए महत्वपूर्ण शोधों के आधार पर मनोविज्ञानिकों में इस सिलसिले में कुछ खास विमाओं के बारे में सहमति होती नजर आती है। ऐसे प्रमख शोधकर्ता हैं - कोस्टा एवं मैकक्रे (Costa & MC Crae, 1989) , होगान (Hogan, 1983) मैकक्रे (McCrae,1989) नौलर, ला एवं कोमरे (Noller, Law & Comrey, 1987) इन शोधकर्ताओं के बीच लगभग इन बात को

सहमति है कि व्यक्तित्व के निम्नांकित पाँच महत्वपूर्ण तथा हृस्ट-पुष्ट (robust) विमाएँ हैं जो सभी द्विध्रुवीय (bipolar) हैं-

(1) बहिर्मुखता (**Extraversion or E**)- व्यक्तिव का यह एक ऐसा विमा है जिसमें एक परिस्थिति में व्यक्ति सामाजिक, मजाकिया, 'स्नेहपूर्ण', वातूनी ¼talkavtive½ आदि का शीलगुण दिखाता है तो दूसरी परिस्थिति में वह संयमी, गम्भीर, रूखापन, शांत, सचेत रहने आदि का शीलगुण भी दिखता है। इस तरह से वहिर्मुखता को एक द्विध्रुवीय विमा माना गया है।

(2) सहमतिजन्यता (**Agreeableness or A**) - इस विमा के भी दो छोर या ध्रुव बतलाये गए हैं। इस विमा के अनुसार व्यक्ति एक परिस्थिति में सहयोगी, दूसरों पर विश्वास करने वाला, उदार, सीधा, सादा, उत्तम प्रकृति (good natured) आदि से सम्बद्ध व्यवहार दिखाता है तो दूसरी परिस्थिति में वह असहयोगी, शंकालु, चिड़चिड़ा, जिद्दी, बेरहम आदि बनकर भी व्यवहार करता पाया जाता है।

(3) कर्तव्यनिष्ठता (**Conscientiousness or C**) - इस विमा में एक परिस्थिति में व्यक्ति आत्म अनुशासित, उदारदायी, सावधान एवं काफी सोच-विचार कर व्यवहार करने से सम्बद्ध शीलगुण दिखाता है तो दूसरी परिस्थिति में वही व्यक्ति बिना सोच-समझे, असावधानीपूर्वक, कमजोर या आधे मन से भी व्यवहार करने से सम्बद्ध शीलगुण दिखाता है।

(4) स्नायुविकृति (**Neuroticism or N**) - इस विमा में व्यक्ति एक ओर कभी-कभी तो सांवेगिक रूप से काफी शांत, संतुलित, रोगभ्रमी विचारों (hypochondriac thoughts) से अपने आप को मुक्त पाता है तो दूसरी आरे वह कभी-कभी अपने आप को सांवेगिक रूप से काफी उत्तेजित, असंतुलित तथा रोगभ्रमी विचारों से घिरा हुआ पाता है।

(5) अनुभूतियों का खुलापान या संस्कृति (**Openness to experiences or culture or O**) - इस विमा में कभी-कभी व्यक्ति एक तरह काफी संवेदनशील, काल्पनिक, बौद्धिक, भद्र आदि व्यवहार से सम्बद्ध शीलगुण दिखाता है तो दूसरी ओर वह काफी असंवेदनशील, रुखा, संकीर्ण, असभ्य एवं अशिष्ट व्यवहारों से सम्बद्ध शीलगुण भी दिखाता है।

उपर्युक्त पाँच शीलगुणों को नोरमैन (Norman, 1963) ने 'दी विग फाइव' (The Big Five) कहा है जो आलपोर्ट, गोल्डवर्ग (Goldberg, 1980) तथा कैटेल द्वारा किये गए शोधों पर आधृत है। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा इन पाँचों शीलगुणों को सबसे अधिक मान्यता दी जा रही है क्योंकि इन लोगों का मत है कि चाहे व्यक्ति किसी समाज या संस्कृति का हो, उसके बारे में इन पाँचों शीलगुणों के बारे में जानकर उसके व्यक्तित्व के बारे में सही-सही एवं वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। उसके महत्व पर बहुत स्टीक टिप्पणी एक महिला व्यक्तित्व मनोवैज्ञानिक जिसका नाम हैम्पसन (Hampson, 1988) द्वारा की गयी है जो इस प्रकार है-

''व्यक्तित्व वर्णन के ये पाँच विस्तृत क्षेत्रों द्वारा उन सभी प्रमुख तरोकों को अभिग्रहित किया है जिसमें मानव एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। गोल्डवर्ग (1981) ने तो यहाँ तक सुझाव दिया है कि उसे सार्वनिक रूप से भाष्ज्ञा के रूप में उपयोग किया जा सकता है, क्योंकि इनके द्वारा उन सभी महत्वपूर्ण प्रश्नों के पहचान होती है जिसे व्यक्ति सांस्कृतिक विभिन्नताओं के बावजूद एक-दूसरे के बारे में जानना चाहते हैं।''

उपर्युक्त पाँच विमाओं को याद रखने के खयाल से 'OCEAN'के रूप में कूटसंकेतीकरण (coding) किया जा सकता है। इस विमाओं को माने के लिए कोस्टा तथा मैकक्रे (Costa & McCrae, 1992) ने एक प्रश्नावली भी विकसित की है, जिसे एनईओ-व्यक्तित्व आविष्कारिका (संशोधित) (NEO-Personality Inventory Revised / NEO- PI-R) कहा गया है।

5.3.3 शीलगुण सिद्धान्त का मूल्यांकन -

यद्यपि शीलगुण सिद्धान्त प्रकार सिद्धान्त से अधिक वैज्ञानिक एवं पूर्ण लगता है, फिर भी मनोवैज्ञानिकों ने इसकी भी कुछ आलोचनाएँ की हैं जो निम्नांकित हैं-

(1) शीलगुण सिद्धान्त में कारक विश्लेषण (factor analysis) कर शीलगुण सिद्धान्तवादी (trait theorists) शीलगुणों की कोई एक निश्चित संख्या निर्धारित करने में अबतक असमर्थ रहे हैं।

(2) शीलगुण सिद्धान्तवादियों द्वारा बताये गये प्रमुख शीलगुण की संख्या के बारे में असहमति तो है ही, साथ-ही-साथ ऐसे शीलगुण एक-दूसरे से पूर्णतः स्पष्ट, भिन्न एवं स्वतंत्र नहीं है।

(3) शीलगुण सिद्धान्त में व्यक्तित्व की व्याख्या अलग-अलग शीलगुणों के रूप में की जाती है।

(4) शीलगुण सिद्धान्त में परिस्थितिजन्य कारकों (situational factors) के महत्व को स्वीकार नहीं किया गया है।

(5) शीलगुण उपागम का स्वरूप वर्णनात्मक (descriptive) है। इसमें व्यक्तित्व के मौलिक एवं महत्वपूर्ण विमाओं (dimensions) का सिर्फ वर्णन किया जाता है, परंतु इस बात की व्याख्या नहीं की जाती है कि किस तरह से विभिन्न शीलगुणों का विकास होता है।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद व्यक्तित्व का शीलगुण उपागम एक महत्वपूर्ण उपागम है जिसके माध्यम से व्यक्तित्व के स्वरूप को समझने की कोशिश की गयी है।

5.4 प्रकार सिद्धान्त (Type Theory)-

प्रकार सिद्धान्त की मान्यता यह है कि सभी व्यक्ति प्रकृति समानता के आधार पर कुछ निश्चित प्रकारों में बँटे होते हैं और प्रत्येक प्रकार में कुछ निश्चित एवं स्पष्ट शीलगुण होते हैं। व्यक्तित्व के प्रकारा

सिद्धान्त के समर्थकों में हिपोक्रेट्स, क्रेश्मर, शेल्डन, युंग आदि का नाम उल्लेखनीय है। इन मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व को कई प्रकारों में विभाजित करके व्यक्तित्व के वास्तविक स्वरूप को समझाने का प्रयास किया। यह सिद्धान्त इस विश्वास पर आधारित है कि सभी व्यक्ति प्रकृति समानता के आधार पर कुछ निश्चित प्रकारों में बँटे होते हैं, प्रत्येक प्रकार के व्यक्तियों में कुछ स्पष्ट शीलगुण होते हैं, जो दूसरे प्रकार के व्यक्तियों में उसी मात्रा में नहीं होते हैं।

5.4.1. प्रकार सिद्धान्त की प्रमुख विशेषतायें - इस सिद्धान्त की प्रमुख विशेषतायें निम्न प्रकार हैं-

1. इस सिद्धांत में गेस्टाल्टवाद की झलक दिखाई देती है। इस सिद्धान्त के अनुसार 'प्रकार' आकृति के समान पूर्ण होता है। व्यक्तित्व का मूल्यांकन इनके विभिन्न अंशों (शीलगुणों) को देखने से नहीं बल्कि इसके संगठित रूप (प्रकार) को देखने से सम्भव है।

2. प्रकार सिद्धान्त के आधार पर व्यावहारिक समस्याओं के समाधान में सहायता मिलती है जैसे- व्यवसायिक चयन भिन्न-भिन्न व्यवसाय के लिये अलग-अलग स्वभाव वाले व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। अतः इस सिद्धान्त के प्रकाश में अपेक्षित प्रकार के व्यक्ति के चयन में सुविधा होती है।

3. इस सिद्धान्त से व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित अनुसन्धानों में बहुत सहायता मिलती है। हिपोक्रेट्स के वर्गीकरण की चाहे जितनी आलोचना की जाय, लेकिन इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि हिपोक्रेट्स के वर्गीकरण से प्रेरित होकर क्रेश्मर और शेल्डन ने इस क्षेत्र में सराहनीय अनुसंधान किया। इसी तरह युंग के वर्गीकरण से लाभान्वित होकर आइजेंक ने सामान्य और असामान्य व्यक्तित्व से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण शोधकार्य किया।

4. इस सिद्धान्त की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इससे व्यक्तित्व के अध्ययन का एक संकेत अथवा आरम्भ बिन्दु मिलता है। 'प्रकार' व्यक्तित्व के मानक रूप हैं, जिनके साथ विभिन्न व्यक्तियों की तुलना की जा सकती है और प्रत्येक व्यक्ति का पूरा चित्रण प्राप्त किया जा सकता है।

5.4.2. प्रकार सिद्धान्त में मनोवैज्ञानिकों के विचार-

व्यक्तित्व में भिन्न-भिन्न शीलगुणों व प्रकारों का एक ऐसा गत्यात्मक संगठन होता है जिसके कारण व्यक्ति का व्यवहार तथा विचार किसी भी वातावरण में अपने ढंग का अर्थात अपूर्व होता है। व्यक्तित्व के प्रकारा सिद्धान्त के समर्थकों में हिपोक्रेट्स, क्रेश्मर, शेल्डन, युंग आदि का नाम उल्लेखनीय है।

यदि व्यक्तित्व के अध्ययन के इतिहास पर ध्यान दिया जाय तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि आज से 2400 वर्ष पहले भी इस सिद्धान्त के द्वारा व्यक्तित्व की व्याख्या कि जाती थी। सबसे पहला व्यक्तित्व प्रकार सिद्धान्त थियोफेस्ट्स का था जो अरस्तु के शिष्य थे।सिकंदर (356-323) BC के

समय में थियोफेस्ट्स एक लोकप्रिय एवं चर्चित व्यक्ति थे इनके द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व प्रकार की लोकप्रियता उस समय काफी थी। इसमें खुशमदी प्रकार एक महत्वपूर्ण प्रकार था। परन्तु इनके द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व प्रकार चूंकि क्रमबद्ध प्रेक्षण पर आधारित नहीं था, और न ही बहुत विस्तृत था अतः लोगों द्वारा एक नए प्रकार की आवश्यकता महसूस की गयी। इसके बाद हिपोक्रेट्स ने एक नया व्यक्तित्व प्रकार 400 BC में प्रतिपादित किया। इन्होंने शरीर द्रवों के आधार पर व्यक्तित्व के चार प्रकार बतलाए है। इनके अनुसार हमारे शरीर में चार मुख्य द्रव पाये जाते है- पीला पित्त, काला पित्त, रक्त तथा कफ या श्लेष्मा। प्रत्येक व्यक्ति में इन चारों द्रवों में कोई एक द्रव अधिक प्रधान होता है और व्यक्ति का स्वभाव या चित्तप्रकृति इसी की प्रधानता से निर्धारित होता है।

1. पीला पित्त- जिस व्यक्ति में पीले पित्त की प्रधानता होती है, उस व्यक्ति का चित्त प्रकृति या स्वभाव चिड़चिडा होता है और व्यक्ति प्रायः बेचैन दिख पड़ता है अैसे व्यक्ति तुनुकमिजाजी भी होते है। इस तरह के प्रकार को हिपोक्रेट्स ने गुस्सैल कहा है।

2. काला पित्त- जब व्यक्ति में काले पित्त की प्रधानता होती है, तो वह प्रायः उदास तथा मंदित नजर आता है इस तरह के प्रकार को विषादी या निराशावादी कहा जाता है।

3. रक्त- जिस व्यक्ति में अन्य द्रवों की अपेक्षा रक्त की प्रधानता होती है, वह प्रसन्न तथा खुशमिजाज होता है इस तरह के व्यक्तित्व के प्रकार को उत्तसाही या आशावादी कहा गया है।

4. कफ या श्लेष्मा- जिस व्यक्ति में कफ या श्लेष्मा जैसे द्रव की प्रधानता होती है, वह शान्त स्वभाव का होता है तथा उसमें निष्क्रियता पायी जाती है। इसमें भावशून्यता के गुण भी पाये जाते है। इस तरह के व्यक्तित्व के प्रकार को विरक्त कहा गया है।

हिपोक्रेट्स के बाद रोसटन, 1824 ने सबसे प्रभावकारी व्यक्तित्व प्रकार विकसित किया जिसका आधार शारीरिक डील-डॉल था। इन्होंने व्यक्तित्व के चार प्रकार बतलाए-

1. प्रमस्तिष्कीय प्रकार- ऐसे व्यक्ति दुबले पतले तथा लम्बे डील-डॉल के होते है।

2. पेशीय प्रकार- ऐसे व्यक्तियों के शरीर की मांसपेशियां गठी होती है।

3. आत्मसात्करणी प्रकार- ऐसे लोग गोल मटोल शारीरिक संरचना वाले होते है।

4. श्वसनी प्रकार- ऐसे लोगों की शारीरिक कद कोई एक विशेष श्रेणी का न होकर मिला जुला प्रकार का होता है।

भायोला, (1909) ने उक्त श्रेणी को उन्नत बनाने की कोशिश की है और उपरोक्त श्रेणीयों को मात्र तीन श्रेणी में ही रखकर व्यक्तित्व के एक प्रकार सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। भायोला के अनुसार तीन प्रकार है-

1. माइक्रोस्पालनकिक
2. नोरमोसप्लानकिक तथा
3. मैक्रोस्पलानकिक

इन तीनों का व्यक्तित्व प्रकार की विशेषताएँ रोस्ट्न द्वारा बतलाये गये क्रमशः प्रथम तीन प्रकार की विशेषताओं के समान होते है। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रकार सिद्धान्त को दो भागों में बॉटकर व्यक्तित्व की व्याख्या की गयी है।

5.4.2.1 . शारीरिक संरचना के आधार पर -व्यक्ति के व्यक्तित्व में शारीरिक तथा मानसिक दोनों ही प्रकार के गुण सन्निहित होते हैं। किसी व्यक्ति का शारीरिक आकार-प्रकार उसके व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण भाग होता है। एक सामान्य व्यक्ति दूसरे के शारीरिक रूप-रंग को देखकर ही उसके व्यक्तित्व की जानकारी प्राप्त करता है।

5.4.2.1.1. क्रैश्मर का योगदान- क्रैश्मर ने शारीरिक संरचना के आधार पर ही व्यक्तित्व के चार प्रकार बताये थे -

(अ) पिकनिक - ये मोटे और नाटे शरीर के होते हैं। इनका स्वभाव हँसमुख होता है। ये आराम-पसंद, वार्तालाप पसन्द, मिलनसार तथा सुख-दुःख में जल्दी प्रभावित होने वाले होते हैं।

(ब) एस्थेनिक - ये दुबले –पतले और लम्बे शरीर वाले होते हैं। मुख्यतः ये बुद्धिवादी और चिन्तनशील होते हैं। इनमें शारीरिक शक्ति की कमी पाई जाती है।

(स) एथलेटिक - इनका शारीरिक गठन अच्छा होता है। कन्धा चौड़ा तथा माँसपोशियाँ मजबूत होती है। ये शक्तिशाली, साहसी, निभी्रक, प्रभुत्व की इच्छा रखने वाले तथा समाज में अधिक सफल होते हैं।

(द) डिस्प्लास्टिक- ये व्यक्ति उपर्युक्त तीनों प्रकार का मिश्रित रूप होते हैं। ऐसे व्यक्ति बहुत कम पाये जाते हैं।

5.4.2.1.2. शेल्डन का योगदान- शेल्डन ने भी शारीरिक संरचना के आधार पर व्यक्तित्व के तीन प्रकार बताये थे ।

(अ) एण्डोमार्फिक- ये कोमल तथा गोल-मटोल शरीर वाले होते हैं। इनका शरीर चिकनाहटपूर्ण होता है।

(ब) मीसोमार्फिक- ये शारीरिक दृष्टि से अधिक हृष्ट-पुष्ट होते हैं। इनकी हड्डियों और माँसपेशियों में अधिक बल होता है। ये लोग अधिक स्वस्थ, अधिक ठोस शरीर वाले तथा अधिक शक्तिशाली होते हैं।

(स) एक्टोमार्फिक- ये व्यक्ति दुबले पतले शरीर वाले, लम्बे, दुर्बल माँसपेशियों वाले तथा शारीरिक दृष्टि से हीन होते हैं।

क्रेश्मर तथा शेल्डन द्वारा वर्णित उपर्युक्त व्यक्ति-प्रकारों से यह स्पष्ट होता है कि किस प्रकार शारीरिक संरचना व्यक्तित्व के शीलगुणों के निर्धारण में भूमिका निर्वाह करती है।

5.4.2.2. मनोवैज्ञानिक गुणों के आधार पर (On the basis of psychological characteristics)- कुछ मनोवैज्ञानिकों ने वयक्तित्व का वर्गीकरण मनोवैज्ञानिक गुणों के आधार पर किया है। इसमें युग,आइजेन्क तथा गिलफोर्ड का नाम अत्यधिक मशहूर है।

5.4.2.2.1. युंग के व्यक्तित्व प्रकार - युंग ने व्यक्तित्व के निम्नांकित दो प्रकार बतलायें हैं-

(a) बहिर्मुखी (**Extrovert**) इस तरह के व्यक्ति की अभिरूचि विशेषकर समाज के कार्यों की ओर होता है। वह अन्य लोगों से मिलना-जुलना पसंद करता है तथा प्रायः खशमिजाज होता है। ऐसे व्यक्ति आशावादी (व्चजपउपेजपब) होते हैं तथा अपना संबंध यथार्थता से अधिक आदर्शवादी से कम रखते हैं। ऐसे लोगों को खाने-पीने की ओर भी अधिक अभिरूचि होती है। ऐसे लोग समाज के लिए काफी उपयोगी होते हैं।

(b) अन्तर्मुखी (**Introvert**) ऐसे व्यक्ति में वहिर्मुखी के विपरीत गुण पाये जाते हैं। इस तरह के व्यक्ति बहुत लोगों से मिलना-जुलना पसंद नहीं करते हैं और उनकी दोस्ती कुछ ही लोगों तक सीमित होती है। इनमें आत्मकेन्द्रिता (self-centeredness) का गुण अधिक पाया जाता है। इन व्यक्तियों को अकेलापन अधिक पसंद होता है तथा ऐसे लोग रूढ़िवादी प्रकृति के होते हैं तथा पुराने रीति-रिवाजों एवं नियमों को आदर देने वाले होते हैं।

आधुनिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा युग के इन दो प्रकारों की आलोचना की गयी है और इनलोगों ने कहा कि सभी लोग इन दोनों में से किसी एक श्रेणी में आए ही यह जरूरी नहीं है। अधिकतर लोगों में इन दोनों श्रेणियों के गुण पाये जाते हैं। फलस्वरूप एक परिस्थिति में वे वहिर्मुखी के रूप में व्यवहार करते हैं तथा दूसरी परिस्थिति में वे अन्तर्मुखी के रूप में व्यवहार करते हैं। एसे व्यक्तियों को आधुनिक मनोवैज्ञानिकों ने उभयमुखी (ambivert)की संज्ञा दी है।

5.4.2.2. आइजेन्क के व्यक्तित्व प्रकार - आइजेन्क (Eysenck, 1947) ने भी मनोवैज्ञानिक गुणों के आधार पर व्यक्तित्व के तीन प्रकार बतलायें हैं। इन्होंने युग के अन्तर्मुखी-वहिर्मुखी सिद्धान्त की सत्यता की जांच करने के लिए 10,000 सामान्य (normal) एवं तंत्रिका रोगियों (neurotics) पर अध्ययन किया और विशेष सांख्यिकीय विश्लेषण (statistical analysis)कर यह बतलाया कि व्यक्तित्व के निम्नांकित तीन प्रकार होते हैं जो द्विध्रुवीय (dipolar) हैं-

(a)अन्तर्मुखता-बहिर्मुखता (**Introversion-Extraversion**)- आइजेन्क ने युग के अन्तर्मुखता तथा वहिर्मुखता के सिद्धान्त को तो स्वीकार किया परन्तु युग के समान उन्होंने इसे व्यक्तित्व का दो अलग-अलग प्रकार नहीं माना। उनका कहना था कि चूँकि ये दोनों प्रकार एक-दूसरे के विपरीत हैं, अतः इन्हें एक साथ मिलाकर रखा जा सकता है तथा एक ही मापनी (scale) बनाकर अध्ययन किया जा सकता है। चूँकि ऐसा नहीं होता है कि ये दोनों तरह के गुण एक ही व्यक्ति में एक साथ अधिक या कम हों, अतः इसे आइजेन्क ने व्यक्ति का एक ही विमा माना है जो स्पष्टतः द्विधुरवीय हैं।

जैसे-किसी व्यक्ति में यदि सामाजिकता अधिक है तथा वह लोगों से मिलना-जुलना अधिक पसंद करता है तो यह कहा जाता है तो यह कहा जाता हे कि व्यक्ति इस बिम्ब के वहिर्मुखता पक्ष में अधिक ऊँचा है।

(b) स्नायुविकृति-स्थिरता (**Neuroticism-Stability**)- आइजेन्क के अनुसार व्यक्तित्व का यह दूसरा प्रमुख विमा है। व्यक्तित्व के इस प्रकार के पहले छोर पर होने पर व्यक्ति में सांवेगिक नियंत्रण कम होता है तथा उनकी इच्छा शक्ति (will power) कमजोर होती है। इनके विचारों एवं क्रियाओं में मन्दता पायी जाती है। इनमें अन्य व्यक्तियों के सुझाव (suggestion) को चुपचाप स्वीकार कर लेने की प्रवृत्ति अधिक होती है। तथा इनमें सामाजिकता (sociability) का अभाव पाया जाता है। ऐसे व्यक्तियों द्वारा प्रायः अपनी इच्दाओं का दमन (repression) किया जाता है। इस प्रकार के दूसरे छोन पर स्थिरता होती है जिसकी ओर बढ़ने पर उक्त व्यवहारों या लक्षणों की मात्रा घटती जाती है और व्यक्ति में स्थिरता की मात्रा बढ़ती है।

(c)मनोविकृतता-पराहं की क्रियाएँ (**Psychoticism-Superego function**)- आइजेन्क ,1952 ने व्यक्तित्व के इस विमा को बाद में किये गये शोध के आधार पर जोड़ा है। आइजेन्क ने इस प्रकार की व्याख्या करते हुए कहा कि व्यक्तित्व का यह विमा मानसिक रोग की एक विशेष श्रेणी जिसमें मनोविक्षिप्ति (psychosis) रोग से पीड़ित व्यक्ति नहीं है। हाँ, इतना अवश्य है कि मनोविक्षिप्ति रोगों से पीड़ित व्यक्ति में मनोविक्षिप्ति के गुण अधिक होंगे। आइजेन्क के अनुसार मनोविकृति वाले व्यक्तित्व के विमा में क्षीण एकाग्रता (poor concentration) क्षीण स्मृति (poor memory) तथा क्रूरता (cruelty) का गुण अधिक होता है। इसके अलावा ऐसे व्यक्ति में असंवेदनशीलता (insensitivity) दूसरों के प्रति सौहार्दपूर्ण संबंध की कमी, किसी प्रकार के खतरे के प्रति असतर्कता, सृजनात्मकता (creativity) की कमी आदि गुण पाये जाते हैं। इस विमा के दूसरे छोर पर पराहं की क्रियाएँ (super-ego functions) होती हैं जैसे-जैसे इस छोर की ओर हम बढ़ते हैं, उक्त लक्षणों या व्यवहारों की मात्रा घटती जाती है तथा व्यक्ति में आदर्शत्व (ideality) तथा नैतिकता (morality) की मात्रा बढ़ती जाती है।

इस तरह से हम देखते हैं कि आइजेन्क के तीनों विमा या प्रकार द्विध्रुवीय हैं। मतबल यह कदापि नहीं है कि अधिकतर व्यक्तियों को दो छोरों में से किसी एक छोर पर रखा जा सकता है। सच्चाई यह है कि प्रत्येक 'प्रकार' या विमा के बीच में ही अधिकतर व्यक्तियों को रखा जाता है।

गिलफोर्ड (Guilford, 1959) ने आइजेन्क के अन्तर्मुखता-वर्हिमुखता के 'विमा' का काफी विस्तृत रूप से विश्लेषण किया और पाया कि इन प्रकारों में व्यक्तित्व के कई तरह के शीलगुण पाये जाते हैं। इस तरह से उन्होंने अपने अध्ययन के आधार पर आइजेन्क (1947) के विचारों की पुष्टि की है।

5.4.2.3. प्रकार सिद्धान्त का मूल्यांकन –

ऊपर के विवरण से स्पष्ट है कि व्यक्तित्व के प्रकार सिद्धान्त में व्यक्तित्व के समान शीलगुणों को एक साथ मिलाकर एक विशेष 'प्रकार' का निर्माण किया जाता है और उसी विशेष प्रकार के अनुसार व्यक्तित्व की व्याख्या की जाती हैं इस सिद्धान्त की सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि इसमें व्यक्तित्व को एक संगठित एवं समग्र (as a whole) रूप से अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। इन गुण के बावजूद भी इस सिद्धान्त की आलोचना की गयी है जो निम्नांकित है-

(1) प्रकार सिद्धान्त मे इस बात की पूर्वकल्पना (assumption) की गयी है कि सभी व्यक्ति किसी न किसी प्रकार या श्रेणी में निश्चित रूप से आते हैं। परन्तु सच्चाई यह है कि एक ही व्यक्ति में व्यक्तित्व के कई प्रकारों का गुण मिलता है जिसके कारण उन्हें किसी एक 'प्रकार 'में रखना संभव नहीं है।

(2) प्रकार सिद्धान्त के अनुसार जब किसी व्यक्ति को एक विशेष 'प्रकार 'में रखा जाता है तो यह पूर्वकल्पना भी साथ-साथ कर ली जाती है कि उसमें उस 'प्रकार 'से संबंधित सभी गुण होंगे। परन्तु सच्चाई इस तरह की नहीं होती है।

(3) प्रकार सिद्धान्त द्वारा व्यक्ति के संरचना (structure)की व्याख्या तो होती है परन्तु व्यक्तित्व विकास (Personality development) की व्याख्या नहीं होती है। इस सिद्धान्त में उन कारकों का उल्लेख नहीं है जिससे व्यक्तित्व का विकास प्रभावित होता है तथा इस सिद्धान्त से व्यक्त्वि विकास की अवस्थाओं का भी पता नहीं चलता है।

(4) कुछ मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि प्रकार सिद्धान्त में विशेषकर शारीरिक गठनों (body builds) के आधार पर किए गए वर्गीकरण में सामाजिक तथा सांस्कृतिक कारक के महत्व को बिल्कुल ही गौण रखा गया है।

(5) शेल्डन ने अपने प्रकार सिद्धान्त में शारीरिक गठ0928 तथा स्वभाव से संबंधित शीलगुणों के बीच उच्च सहसंबंध (high correlation) यानी 0.78 से अधिक सहसंबंध पाया है। कुछ आलोचकों का मत है कि यह सहसंबंध वास्तविक नहीं था।

(6) सैनफोर्ड (1961) के अनुसार प्रकार सिद्धान्त में किसी व्यक्ति को एक विशेष प्रकार में रखते समय उसके कुछ ही शीलगुणों पर ध्यान दिया जाता है और अधिकांश शीलगुणों की उपेक्षा कर दी जाती है।

इन आलोचनाओं के बावजूद भी प्रकार सिद्धान्त की मान्यता आज भी बनी हुई है। जिसका प्रमाण हमें इस बात से मिल जाता है कि इन विभिन्न प्रकारों के क्षेत्र में मनोवैज्ञानिकों द्वारा विशेष रूप से अध्ययन किया जा रहा है।

5.5. व्यक्तित्व के प्रकार एवं शीलगुण सिद्धान्त में विभिन्नताएं –

व्यक्तित्व के प्रकार एवं शीलगुण सिद्धान्तों के अध्ययन पर इनमें कुछ अंतर दृष्टिगत होते है, जो निम्नवत् है-

1. प्रकार सिद्धान्त के अनुसार व्यक्तित्व का मूल्यांकन इनके संगठित रूप को देखने से संभव जबकि शीलगुण सिद्धान्त के अनुसार व्यक्तित्व का मूल्यांकन उनके विभिन्न अंशों को देखने से संभव है।

2. प्रकार सिद्धान्त के आधार व्यवहारिक समस्याओं के समाधान में सहायता मिलती है जबकि शीलगुण सिद्धान्त व्यक्ति के व्यवहार की स्थिरता एवं संगतिपूर्णता पर बल देता है।

3. प्रकार सिद्धान्त में व्यक्तित्व में अध्ययन का एक संकेत अथवा आरंभ बिन्दु मिलता है जबकि शीलगुण सिद्धान्त में कोई आरम्भ बिन्दु नहीं होता है।

4. प्रकार सिद्धान्त व्यक्तित्व को कई प्रकारों में विभाजित कर समझने का प्रयास करता है जबकि व्होलर, 1963 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति स्वयं में एक पूर्ण प्रकार है। शीलगुण सिद्धान्त व्यक्तित्व के अनेक शीलगुणों को महत्व देकर उसके समग्र का अध्ययन करता है।

5. प्रकार सिद्धान्त इस विश्वास पर आधारित है कि व्यक्तित्व प्रकार में स्थिरता होती है, जबकि शीलगुण सिद्धान्त किसी भविष्यवाणी पर आधारित नहीं है।

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि व्यक्तित्व के प्रकार एवं शीलगुण सिद्धान्त में विभिन्नताएं हैं परन्तु इन सिद्धान्तों की महत्ता भी व्याप्त है।

5.6 सारांश

1. व्यक्तित्व की परिभाषा कई तरह से दी गयी है इसकी सर्वमान्य परिभाषा यह है कि व्यक्तित्व मनोदैहिक गुणों का एक ऐसा गत्यात्मक संगठन है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने वातावरण के साथ समायोजन करता है।

2. व्यक्तित्व में दो उपागमों अर्थात प्रकार उपागम तथा शीलगुण उपागम की एक सैद्धांतिक व्याख्या प्रस्तुत की गयी है।

3. व्यक्तित्व कें स्टेट निर्धारक के रूप में मनोवैज्ञाकि कारक का वर्णन किया गया है। क्योकि यह क्षणिक होता है।

5.7 शब्दावली

स्थूलकाय प्रकार- ऐसे व्यक्ति का कद छोटा होता है तथा शरीर भारी एवं गोलाकार होता है।

मेसोमार्फी- इस प्रकार के व्यक्तित्व के शरीर की हड्डीयॉ एवं मांसपेशियॉ काफी विकसित होती है।

बर्हिमुखी- इस तरह के व्यक्ति की अभिरूचि विशेकर समाज के कार्यो की ओर होता है।

सतही शीलगुण- इस तरह का शीलगुण व्यक्ति के दिन प्रतिदिन की अन्तः क्रिया में आसानी से अभिव्यक्त होता है।

सहमतीजन्यता- इसके अनुसार व्यक्ति एक परिस्थिति में सहयोगी तो दूसरी परिस्थिति असहयोगी व्यवहार करता पाया जाता है।

5.8 अभ्यास प्रश्न -

निम्नलिखित कथनों में असत्य कथन बताइये-

1. व्यक्तित्व शीलगुण व्यक्ति की स्थायी विशेषता है|
2. मनोवृत्ति गत्यात्मक शीलगुण का उदाहरण है।
3. प्रकार सिद्धांत में व्यक्तित्व को एक असंगठित रूप से अध्ययन करने का प्रयास किया गया है|
4. आलपोर्ट ने व्यक्तित्व शीलगुणों के चार प्रकार बताये हैं।
5. परिस्थिति के अनुसार व्यवहार में परिवर्तन ..... उपागम है।
6. महात्मा गाँधी के व्यक्तित्व का..... शीलगुण शान्ति एवं अहिंसा में अटूट विश्वास था।
7. व्यक्तित्व के पंच द्विध्रुवीय आयाम का निर्माण ..... ने किया है।

उत्तर -- 1. सत्य २.सत्य ३. सत्य ४. असत्य 5. स्टेट 6. कार्डिनल प्रवृत्ति 7. कोस्टा एवं मैकक्रे

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, सीताराम जायसवाल, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
2. व्यक्तित्व मनोविज्ञान, अरूण कुमार सिंह, एवं आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास
3. उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान-अरूण कुमार सिंह- मोतीलाल - बनारसी दास
4. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, डी.एन. श्रीवास्तव, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा-2
5. प्रतियोगिता मनोविज्ञान, अरूण कुमार सिंह, एवं आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास
6. व्यक्तित्व मनोविज्ञान, मधु अस्थाना एवं किरण बाला वर्मा, मोतीलाल बनारसी दास

5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. व्यक्तित्व के प्रकार सिद्धांत को स्पष्ट कीजिए।

2. शीलगुण सिद्धांत किसे कहते हैं? इस सम्बन्ध में आलपोर्ट के विचारों पर प्रकाश डालिये।

3. प्रकार एवं शीलगुण सिद्धांत में अंतर स्पष्ट कीजिए।

4. निम्नलिखित पर संक्षिप्त नोट लिखिए-

a. सतही शीलगुण

b. कार्डिनल शीलगुण

c. प्रकार सिद्धान्त की प्रमुख विशेषतायें

इकाई 6. व्यक्तित्व के सामाजिक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त (अल्फ्रेड एडलर, करेन हॉर्नी)

इकाई संरचना

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 व्यक्तित्व के सामाजिक-मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त का अर्थ

6.4 अल्फ्रेड ऐडलर का व्यक्तित्व सिद्धान्त

6.5 कारेन हार्नी का व्यक्तित्व सिद्धान्त

6.6 सार संक्षेप

6.7 पारिभाषिक शब्दावली

6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.9 संदर्भ ग्रन्थ

6.10 निबन्धात्मक प्रष्न

6.1 प्रस्तावना-

पूर्व की इकाई में आपने व्यक्तित्व के प्रकार एवं शीलगुण सिद्धान्त पढ़ा और इसके अन्तर्गत आपने आलपोर्ट एवं कैटेल के सिद्धान्तों का अध्ययन किया। इन्होंने सामाजिक-मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में व्यक्तित्व की व्याख्या करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत इकाई में हम लोग सामाजिक परिप्रेक्ष्य में मानव व्यक्तित्व की व्याख्या करने वाले फ्रायडवादी मनोवैज्ञानिक अल्फ्रेड ऐडलर तथा नव-फ्रायडवादी मनोवैज्ञानिक कारेन हार्नी के व्यक्तित्व सिद्वान्त का अध्ययन करेंगे|

6.2 उद्देश्य -

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पष्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप-

1. व्यक्तित्व के सामाजिक-मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का अन्य सिद्धान्तों से तुलना कर सकें।
2. ऐडलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त पर प्रकाष डाल सकें,
3. कारेन हार्नी के व्यक्तित्व सिद्धान्त की व्याख्या कर सकें|

6.3 व्यक्तित्व के सामाजिक-मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त का अर्थ-

व्यक्तित्व को समझने एवं उसकी व्याख्या हेतु मनोवैज्ञानिकों द्वारा जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन हुआ है उसमें कुछ तो पूर्णतः मनोवैज्ञानिक स्वरूप के सिद्धान्त हैं, जैसे-फ्रायड एवं युंग का सिद्धान्त; कुछ पूर्णतः अधिगम आधारित सिद्धान्त है, जैसे-स्कीनर, पैवलव, बन्डूराका सिद्धान्त तथा कुछ ऐसे भी सिद्धान्त हैं जो सामाजिक-मनोवैज्ञानिक पहलुओं के परिप्रेक्ष्य में व्यक्तित्व की व्याख्या करते हैं-जैसे-ऐडलर, हार्नी आदि का सिद्धान्त।

दरअसल, सामाजिक-मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के पक्षधर व्यक्तित्व मनोवैज्ञानिकों ने जहाँ मानव स्वभाव की व्याख्या में कुछ मनोवैज्ञानिक संप्रत्ययों जैसे-इच्छा शक्ति, मूल चिन्ता, स्नायनिक आवश्यकता आदि का सहारा लिया है वहीं जीवन शैली, जन्मक्रम, दूसरों पर नियंत्रण पाना, सत्तावादिता, सम्बद्धता आवश्यकता आदि जैसे सामाजिक संप्रत्ययों के परिप्रेक्ष्य में व्यक्तित्व एवं मानव व्यवहार की व्याख्या करने का प्रयास किया है। अतः व्यक्तित्व के उन सिद्वान्तों को जो व्यक्तित्व की व्याख्या उसके सामाजिक मनोवैज्ञानिक संप्रत्ययों के परिप्रेक्ष्य में करता है, व्यक्तित्व का सामाजिक-मनोवैज्ञानिक सिद्वान्त कहते हैं। यहाँ कतिपय ऐसे सिद्धान्तों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

6.4 अल्फ्रेड ऐडलर का व्यक्तित्व सिद्धान्त-

फ्रायड ने लैंगिकता को मानव व्यवहार का एक मात्र प्रेरणात्मक आधार माना, जिसे ऐडलर ने स्वीकार नहीं किया और फ्रायड से अलग होकर वैयक्तिक मनोविज्ञान की स्थापना की। इसे ही ऐडलर का व्यक्तित्व

सिद्धान्त कहते हैं। व्यक्तित्व रचना एवं व्यक्तित्व विकास के सम्बन्ध में ऐडलर के विचारों को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता हैं-

1. व्यक्तित्व गतिकी-

ऐडलर ने फ्रायड के लिबिडो के स्थान पर इच्छा-शक्ति को व्यक्ति के व्यवहारों का मौलिक प्रेरणात्मक निर्धारक माना। परन्तु, बाद में उन्होंने श्रेष्ठता प्रवृत्ति को व्यक्तित्व निर्माण का मौलिक प्रेरक माना। आरंम्भ में बच्चे अपने आपको असहाय एवं निर्बल पाते हैं। फलतः उनमें हीनता भाव विकसित हो जाता है। इस भाव की क्षति-पूर्ति के लिए वह ऐसे कार्यो को करने हेतु प्रेरित होता है, जिससे उसे श्रेष्ठता प्राप्त हो सके। जब वह उपलब्धि-स्तर प्राप्त हो जाता है तो वह पुनः हीन भाव महसूस करने लगता है और पुनः ऊँची उपलब्धि प्राप्त करने के लिए प्रेरित हो जाता है तो असमान्यता के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं।

2. सामाजिक रूचि-

ऐडलर (1939) ने सामाजिक रूचि या सामाजिक प्रेरक को मानव व्यवहारों का एक मौलिक निर्धारक माना और कहा कि सामाजिक रूचि जन्मजात होती है। इस प्रकार, उन्होंने प्रभुत्व आकांक्षा के साथ-साथ सामाजिक प्रेरक को भी व्यक्तित्व का आवश्य क अंग माना। सामाजिक रूचि की अभिव्यक्ति सहकारिता, आत्मीकरण, परस्पर सामाजिक सम्बन्ध आदि रूपों में देखी जाती है। ऐडलर के अनुसार व्यक्ति स्वभावतः सामाजिक है।

जीवन शैली-

ऐडलर के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में व्यवहार करने की अपनी विशेष शैली होती है, जिससे उसका व्यक्तित्व अपूर्व बन जाता है। सभी व्यक्तियों का लक्ष्य होता है-श्रेष्ठता प्राप्त करना। परन्तु उसको प्राप्त करने के ढंग अलग-अलग होते हैं, जिसे जीवन-शैली कहा जाता है। इस शैली का निर्माण 4.5 वर्ष की आयु तक हो जाता है और इसके बाद अनुभवों का समावेष तथा उपयोग इसी शैली के अनुकूल होता है।

सर्जनात्मक व्यक्तित्व-

व्यक्तित्व-संरचना की व्याख्या करते हुए ऐडलर ने सर्जनात्मक आत्मा या व्यक्तित्व के प्रत्यय की कल्पना की तथा इसे वंषपरम्परा तथा अनुभव का परिणाम माना। उनके अनुसार सर्जनात्मक आत्मा ही मानव जीवन का आधार तथा वास्तविक संचालक है। ऐडलर का यह प्रत्यय वास्तव में बहुत कीमती है और आत्मा के पुराने प्रत्यय से भिन्न है।

जन्मक्रम-

व्यक्तित्व विकास के सम्बन्ध में जन्मक्रम के महत्व की चर्चा करते हुए ऐडलर ने कहा कि अन्य परिस्थितियाँ समान होने पर भी जन्मक्रम के कारण बच्चों का व्यक्तित्व भिन्न हो जाता है। पहला बच्चा को माता-पिता की ओर से अधिक स्नेह मिलता है और दूसरे बच्चे के जन्म लेने पर यह स्नेह बांट जाता है

या इसमें कमी आ जाती है। इस अनुभव की अभिव्यक्ति पहला बच्चा कई रूपों में करता है। स्नायुविकृत, अपराधी, शराबी तथा भ्रष्ट प्रायः प्रथम जन्मक्रम के होते हैं। यदि माता-पिता पहले बच्चे को प्रतिस्पर्धा से बचा लेते हैं तो ऐसे बच्चे विवकेषील तथा उच्च उपलब्धि आवश्यकता वाले होते हैं। जो बच्चा दूसरे जन्मक्रम में होता है, वह अभिलाषी होता है। सबसे छोटा बच्चा दुर्बलित होता है। जोन्स के अनुसार सभी परिस्थितियों में ऐडलर का यह विचार सही सिद्ध नहीं होता है।

ऐडलर के सिद्धान्त पर आलोचनात्मक दृष्टि डालने पर इसके कई गुणों तथा अवगुणों का पता चलता है। इस सिद्धान्त के निम्नलिखित गुण हैं-

1. व्यक्तित्व विकास में ऐडलर ने सामाजिक कारकों के महत्व पर बल देकर एक सराहनीय काम किया। उनका यह विश्वास आज भी मान्य है कि व्यक्तित्व विकास पर जैविक कारकों की अपेक्षा सामाजिक कारकों का भाव अधिक पड़ता है। ऐडलर ने मानव को जैविक प्राणी नहीं माना, बल्कि सामाजिक प्राणी माना।
2. समग्रता-मापदण्ड पर जेली एवं जिगलर ने ऐडलर के सिद्धान्त को प्रथम श्रेणी में रखा है। इस आधार पर यह सिद्धान्त फ्रायड के सिद्धान्त के बराबर है।
3. मितव्ययिता मापदण्ड पर भी ऐडलर का सिद्धान्त काफी संतोषप्रद है। ऐडलर ने बहुत थोड़े प्रत्ययों के आधार पर व्यक्तित्व संरचना की व्याख्या प्रस्तुत की है। जेली एवं जिगलर के शब्दों में ''ऐडलर का सिद्धान्त इस अर्थ में अत्यधिक किफायती है कि इसमें सीमित मौखिक प्रत्ययों की सहायता से सम्पूर्ण सैद्धान्तिक प्रणाली की व्याख्या प्रस्तुत की गयी है।''
4. आंतरिक संगति मापदण्ड के आधार पर भी ऐडलर का सिद्धान्त सफल प्रतीत होता है। ऐडलर ने अपने सिद्धान्त में जिन बातों का उल्लेख किया है, उनके बीच कोई विरोध या असंगति नहीं है, बल्कि काफी संगति है।

इस दृष्टिकोण से ऐडलर का सिद्धान्त फ्रायड या युंग के सिद्धान्त से श्रेष्ठकर है। इस कसौटी पर जेली तथा जिगलर ने ऐडलर को प्रथम श्रेणी में तथा फ्रायड को द्वितीय श्रेणी में रखा है। डीकैप्रियो के अनुसार मनोचिकित्या के क्षेत्र में ऐडलर का महत्वपूर्ण योगदान है। आज भी पाष्चात्य देषों में सलाहकार तथा चिकित्सक ऐडलर के प्रत्ययों तथा उनकी विधियों का अनुसरण कर रहे हैं।

उपर्युक्त गुणों/विशेषताओं के रहते हुए भी ऐडलर का व्यक्तित्व सिद्धान्त आलोचना से परे नहीं है।

1. जेली तथा जिगलर के अनुसार इस सिद्धान्त में प्रमाणनीयता का बहुत अभाव है। ऐडलर ने अपने सिद्धान्त में ऐसे प्रत्ययों का उल्लेख किया है, जिन्हें न तो आनुभविक आधार पर परिभाषित किया जा सकता है और न प्रमाणित किया जा सकता है। इस कसौटी पर उन्होंने इस सिद्धान्त की गणना तीसरी श्रेणी में की है। उनके अनुसार आल्पोर्ट की समकलनात्मक एकता की तरह ऐडलर ने सर्जनात्मक व्यक्तित्व का अनुभविक परीक्षण यदि असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है।

2. एडलर के सिद्धान्त में शोध-मूल्य भी सीमित है। इस सिद्धान्त से शोधकार्य में बहुत कम सहायता मिली है। ऐडलर के जन्मक्रम के प्रत्यय को छोड़कर उनके दूसरे प्रत्ययों के सम्बन्ध में बहुत कम शोध हुए है। इसी कारण जेली तथा जिगलर ने इस कसौटी पर इस सिद्धान्त को दूसरी श्रेणी में रखा है जबकि फ्रायड के सिद्धान्त को प्रथम श्रेणी में रखा है।
3. व्यावहारिक महत्व के दृष्टिकोण से ऐडलर का सिद्धान्त फ्रायड के सिद्धान्त से बहुत पीछे है। इस सिद्धान्त का प्रभाव मनोचिकित्सा तथा माता-पिता एवं बच्चों के बीच सम्बन्ध के अतिरिक्त दूसरे क्षेत्रों पर बहुत कम पड़ा है, जबकि फ्रायड के सिद्धान्त का प्रभाव जीवन के अनेक क्षेत्रों पर पड़ा है। इसी कारण जेली तथा जिगलर ने इस कसौटी पर जहाँ फ्रायड के सिद्धान्त को प्रथम श्रेणी में रखा है, वहाँ ऐडलर के सिद्धान्त को दूसरी श्रेणी में।
4. मानव-व्यवहार के मूल स्रोत के सम्बन्ध में ऐडलर का विचार स्पष्ट नहीं है। उन्होंने कभी सामाजिक रूचि को, कभी प्रभुत्व-शक्ति को और कभी जीवन शैली को प्रेरणात्मक स्रोत माना। सर्जनात्मक व्यक्तित्व तथा जीवन-शैली के निर्माण में इसकी भूमिका से संबंधित ऐडलर का विचार अस्पष्ट है।
5. डी कैप्रिया के अनुसार ऐडलर के सिद्धान्त के विरूद्ध एक गम्भीर आरोप यह है कि व्यक्तित्व-निर्माण में प्रारंभिक बचपन पर अनावष्यक बल दिया गया है। उनका यह विश्वास कि व्यक्तित्व का निर्माण प्रारंभिक वर्षो में ही पूरा हो जाता है, युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता है। आल्पोर्ट का कहना है कि व्यक्तित्व की दिषायें किषोराअवस्था या वयस्क-अवस्था में बदल सकती है। वैलेन्ट के अनुसार कॉलेज के अनुभवों के कारण लड़के तथा लड़कियों के प्रारंभिक व्यक्तित्व में कठोर परिवर्तन हो सकते है। थॉमस एवं चेस ने इसी तरह का विचार प्रस्तुत किया है।

6.5 कारेन हार्नी का व्यक्तित्व सिद्धान्त-

कारेन हार्नी एक महिला मनोवैज्ञानिक थी जिन्हें फ्रायड का न तो सहकर्मी और न ही शिष्य ही कहा जा सकता है, परंतु इतना जरूर कहा जा सकता है कि उनके प्रषिक्षण पर फ्रायडियन मनोविष्लेषण का प्रभाव काफी पड़ा। हार्नी कई बिन्दुओं पर फ्रायड से अलग विचार व्यक्त की; परंतु उसने उनके विचारों को ऐडलर एवं युंग के समान तिरस्कृत नहीं किया बल्कि उनमें संषोधन कर उन्हें उन्नत बनाने की कोषिष की। उन्होंने स्वयं ही कहा है ‘‘मैं कोई नये स्कूल की स्थापना नहीं करना चाहती, परंतु फ्रायड द्वारा डाले गये नींव पर ही कुछ बनाना चाहती हूँ’’। उनके द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व के सिद्धान्त पर उनके अपने यौन अर्थात् स्त्रैण दृष्टिकोण तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों का पर्याप्त प्रभाव झलकता है। उनके इस सिद्धान्त को निम्नांकित प्रमुख शीर्षकों में बाँटकर वर्णन किया जा सकता है-

1. बाल्यावस्था की आवश्यकता
2. मूल चिन्ता

3. स्नायुविकृत आवश्यकता तथा स्नायुविकृत प्रवृत्ति

4. चिन्ता दूर करने के उपाय

बाल्यावस्था की आवश्यकताएँ

हार्नी, फ्रायड के इस मत से सहमत थी कि वयस्क व्यक्तित्व के निर्धारण में बाल्यावस्था के आरंभिक वर्षो का महत्व काफी होता है। परंतु हार्नी इस बिन्दु पर फ्रायड से अलग विचार रखती है कि व्यक्तित्व का निर्माण किस तरह से होता है। हार्नी का मत है कि बाल्यावस्था के सामाजिक बल न कि जैविक बलों द्वारा व्यक्तित्व का विकास प्रभावित होता है। बच्चों तथा माता-पिता के साथ सामाजिक संबंध से व्यक्तित्व विकास प्रभावि होता है।

हार्नी का यह मत था कि बाल्यावस्था की दो आवश्यकताएँ प्रमुख होती हैं जिनका व्यक्तित्व विकास पर प्रत्यक्षः प्रभाव पड़ता है। ये दो आवश्यकताएँ हैं-संतुष्टि आवश्यकता तथा सुरक्षा आवश्यकता । संतुष्टि आवश्यकता में मौलिक दैहिक आवश्यकताएँ जैसे-भोजन, पानी, लैंगिक क्रिया, नींद आदि की आवश्यकता को सम्मिलित किया गया है। सुरक्षा आवश्यकता में डर से स्वतंत्रता तथा सुरक्षा की आवश्यकता सम्मिलित होती है। इन दोनों आवश्यकता ओं का स्वरूप सार्वभौमिक होता है। इन दोनों में हार्नी ने सुरक्षा आवश्यकता को व्यक्तित्व विकास के लिए अधिक महत्वपूर्ण बतलाया है। सुरक्षा आवश्यकता की तुष्टि इस बात पर निर्भर करती है कि बच्चा को माता-पिता से कितना स्नेह मिलता है और माता-पिता द्वारा किस हद तक वह एक वांछित बच्चा समझा जाता है। हार्नी का मत है कि जब सुरक्षा आवश्यकता की तुष्टि नहीं होती है तो बच्चों में विद्वेष उत्पन्न हो जाता है। बच्चे कुछ कारणों से जैसे-निःसहायता का भाव, माता-पिता के डर आदि से अपने विद्वेष भाव का दमन कर देते हैं। जब विद्वेष भाव का दमन हो जाता है, तो उससे बच्चों में चिन्ता की उत्पत्ति होती है जिसे मूल चिन्ता कहा जाता है।

मूल चिन्ता-

हार्नी द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त में मूल चिन्ता एक महत्वपूर्ण संप्रत्यय है। मूल चिन्ता से हार्नी का तात्पर्य बच्चों में अकेलापन तथा निःसहायता का भाव से होता है, जो विद्वेष के भाव के दमन से जुड़ा होता है। हार्नी के अनुसार मूल चिन्ता एक ऐसी चिन्ता है जिसके कारण बाद में व्यक्ति में तंत्रिकातापी रोग विकसित होता है।

हार्नी के अनुसार मूल चिन्ता के तीन तत्व होते हैं-असमर्थता या निःसहायता का भाव, विद्वेष तथा अलगाव। जब बच्चों को घर में वास्तविक प्यार एवं स्नेह नहीं मिलता है, तो इनमें इन तत्वों का विकास हो जाता है। जब माता-पिता से बच्चों को तिरस्कार मिलता है, तो उनमें असमर्थता तथा अलगाव का भाव विकसित हो जाता है तथा वे इन भावों को दूर करने का असफल प्रयत्न भी करते हैं। इसका स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि उनमें विद्वेष विकसित हो जाता है जिसके कारण वे दूसरों के प्रति

आषंकित रहते हैं जो धीरे-धीरे उन्हें दूसरों के प्रति आक्रमक बना देता है। उनमें दोष-भाव विकसित हो जाते हैं जिसका पहले तो वे दमन कर देते हैं परंतु बाद में इससे उनमें चिन्ता विकसित हो जाती है। इस तरह से हार्नी के अनुसार मूल चिन्ता विकसित होने का कारण एक ऐसा घरेलू वातावरण बतलाया गया है जिसमें माता-पिता एवं बच्चों के संबंध में सच्चा प्यार एवं स्नेह की कमी होती है।

हार्नी के अनुसार मूल चिन्ता से बच्चा अपने आप को बचाने के लिए कुछ तरीका अपनाता है जिसमें निम्नांकित प्रमुख हैं-

1. स्नेह प्राप्त करना-

इसमें बच्चे दूसरों से स्नेह एवं प्यार पाने की भरपूर कोषिष करते हैं। दूसरों द्वारा किये गये आज्ञा का पालन करने के लिए तैयार रहते हैं।

2. विन्रमता दिखाना-

विनम्रता आत्म-रक्षा का एक दूसरा प्रमुख उपाय है। इसमें व्यक्ति किसी एक व्यक्ति या प्रत्येक व्यक्ति के विचारों को काफी विनम्रता से स्वीकार करता है। वह कभी भी ऐसा कुछ नहीं करता है जिससे दूसरे व्यक्ति को क्रोध उत्पन्न हो जाए। परिस्थिति यदि ऐसी होती भी है, तो वह अपनी इच्छा एवं आवश्यकता का दमन कर देता है। व्यक्ति में यह विश्वास होता है कि यदि हम विनम्रता दिखायेंगे तो मुझे लोग चोट नहीं पहुँचायेंगे।

3. दूसरों पर नियंत्रण पाना-

दूसरों पर नियंत्रण पाना या अपने बल का उपयोग करने में सफल होना आत्म-रक्षा का तीसरा महत्वपूर्ण प्रक्रम है। जब व्यक्ति अपने आप को दूसरों से श्रेष्ठ या उत्तम समझता है या अपने को अधिक सबल या अपनी उपलब्धियों को अधिक महत्वपूर्ण समझता है, तो वह एक तरह से निःसहायता की क्षतिपूर्ति करता है तथा सुरक्षा के भाव को मजबूत करता है।

4. प्रत्याहार या निवर्तन-

मूल चिन्ता से आत्म-रक्षा का एक चौथा तरीका वह है जिसमें व्यक्ति मनोवैज्ञानिक अर्थ में दूसरों से एक तरह से अपने आपको पीछे खींच लेता है। यहाँ व्यक्ति एक तरह से दूसरों से पूर्णतः स्वतंत्र हो जाता है तथा वह बाह्य एवं भीतरी आवश्यकता ओं की तुष्टि के लिए किसी अन्य व्यक्ति पर निर्भर नहीं रहता है।

आत्म-रक्षा के इन चारों प्रक्रमों का एक सामान्य लक्ष्य है- व्यक्ति को चिन्ता से बचना। ये सभी प्रक्रम व्यक्ति में सुरक्षा तथा पुनर्विष्वास उत्पन्न करते हैं।

स्नायुविकृत आवश्यकता तथा स्नायुविकृत प्रवृत्ति-

जब व्यक्ति अपनी जिन्दगी की बहुत सारी समस्याओं का समाधान नहीं कर पाता है जिसके कारण उसे बार-बार असफलता ही हाथ लगती है, तो उसमें कुछ विषेष आवश्यकता एँ उत्पन्न हो जाती हैं जो उसके व्यक्तित्व का एक स्थायी अंग बन जाती है। इसे हार्नी ने स्नायुविकृत आवश्यकता कहा है। इसे स्नायुविकृत आवश्यकता इसलिए कहा जाता है क्योंकि इससे व्यक्ति समस्या का कोई संगत समाधान नहीं कर पाता है। ऐसी आवश्यकता एँ सामान्य तथा मनःस्नायुविकृत दोनों ही व्यक्तियों में पाये जाते हैं, परंतु मनःस्नायुविकृत व्यक्तियों में इसकी प्रबलता अधिक होती है। हार्नी के अनुरूप ऐसे स्नायुविकृत आवश्यकताएँ निम्नांकित दस हैं -स्नेह एवं अनुमोदन की आवश्यकता, प्रबल जीवन साथी की आवश्यकता, जिन्दगी का संकुचित एवं सख्त घेरे में रखने की आवश्यकता, सत्ता की आवश्यकता , शोषण की आवश्यकता, सम्मान की आवश्यकता , व्यक्तिगत प्रशंसा की आवश्यकता , व्यक्तिगत उपलब्धि तथा आकांक्षा की आवश्यकता, आत्म-पर्याप्तता तथा स्वतंत्रता की आवश्यकता, पूर्णता तथा अनाक्रमण की आवश्यकता ।

स्पष्टतः उपर्युक्त आवश्यकता एँ हम सभी व्यक्तियों में होती है। परंतु जब कोई व्यक्ति उनमें से किसी आवश्यकता की गहन तुष्टि को ही मूल चिन्ता को दूर करने के उपाय के रूप में स्वीकार कर लेता है, तो उसका स्वरूप स्नायुविकृत या तंत्रिका रोगी हो जाता है। बाद में हार्नी ने स्नायुविकृत आवश्यकता के इस सिद्धान्त में परिवर्तन किया क्योंकि ये इनसे संतुष्ट नहीं थी। उन्होंने बाद में कहा कि इन सभी दसों आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति मात्र तीन तरह की मनोवृत्ति द्वारा की जा सकती है जिसे उन्होंने स्नायुविकृत प्रवृत्ति कहा है। स्नायुविकृत प्रवृत्ति एक ऐसा व्यवहार एवं मनोवृत्ति है जिसे व्यक्ति अपनी ओर तथा अन्य दूसरे व्यक्ति की ओर विकसित करता है तथा इन मनोवृत्तियों द्वारा वह अपनी स्नायुविकृति आवश्यकता ओं की अभिव्यक्ति करता है। इस तरह की व्यवहारात्मक तथा मनोवृत्ति प्रवृत्तियों का वर्णन निम्नांकित है-

व्यक्तियों की ओर झुकने की प्रवृत्ति-

इस तरह की प्रवृत्ति में व्यक्ति में अति अनुपालनषीलता का गुण पाया जाता है। व्यक्ति दूसरों का स्नेह, स्वीकृति एवं अनुमोदन प्राप्त करने के लिए उनकी प्रत्येक इच्छा के अनुसार कार्य करने के लिए तत्पर रहता है। इसमें स्नेह एवं अनुमोदन की आवश्यकता तथा प्रबल जीवन साथ प्राप्त करने की आवश्यकता आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

व्यक्तियों के विरूद्ध होने की प्रवृत्ति-

इस तरह की प्रवृत्ति में व्यक्ति में दूसरों के प्रति आक्रामकता तथा विद्वेष अधिक मात्रा में पाया जाता है। इसमें सत्ता की आवश्यकता, शोषण की आवश्यकता, प्रशांसा एवं आकांक्षा आदि की आवश्यकता को सम्मिलित किया जा सकता है।

व्यक्तियों से दूर हटने की प्रवृत्ति-

इस तरह की प्रवृत्ति में व्यक्ति दूसरों का सामना नहीं करना चाहता है और उनसे दूर हटने की कोशिश करता है। उसे लोगों से मिलना-जुलना अच्छा नहीं लगता है तथा वह एकान्तप्रिय हो जाता है।

इन तीनों तरह के स्नायुविकृत प्रवृत्तियों के पीछे एक उभयनिष्ठ कारक होता है जिसे उन्होंने सामाजिक कुसमायोजन कहा है। ये तीनों तरह की प्रवृत्तियों का स्वरूप बाध्यकर होता है जिसका मतलब यह हुआ कि स्नायुविकृत व्यक्ति उनमें से किसी एक ढंग की मनोवृत्ति दिखलाते हुए व्यवहार करने के लिए बाध्य होता है। इन तीनों तरह की प्रवृत्तियों से तीन अलग-अलग व्यक्तित्व प्रकारों का जन्म होता है जिनका वर्णन निम्नांकित है-

फरियादी व्यक्तित्व प्रकार-

इस तरह का व्यक्तित्व, व्यक्तियों की ओर झुकने की प्रवृत्ति से उत्पन्न होती है। ऐसे व्यक्ति जरूरत से ज्यादा दूसरों पर निर्भर करते हैं एवं दूसरों के स्नेह एवं अनुमोदन को जरूरत से ज्यादा महत्व देते हैं। दूसरे लोगों के साथ व्यवहार करते समय ऐसे लोगों का दृष्टिकोण मैत्रीपूर्ण होता है तथा दूसरों की भलाई करने के ख्याल से अपनी इच्छा एवं आकांक्षा की कुर्बानी भी देते हैं। अक्सर वे एक निःसहायता एवं कमजोरी की मनोवृत्ति इस ख्याल से दिखलाते हैं कि दूसरे लोग उन्हें ऐसा समझकर स्नेह एवं सुरक्षा प्रदान कर सके।

विद्वेषी या आक्रामक व्यक्तित्व प्रकार-

इस तरह का व्यक्तित्व प्रकार व्यक्तियों के विरूद्ध होने की प्रवृत्ति से विकसित होता है। ऐसे व्यक्ति आक्रामक, शक्की, समाज विरोधी तथा विद्वेषी प्रकृति के होते हैं। ऐसे लोगों को अपनी क्षमता पर जरूरत से ज्यादा भरोसा रहता है तथा दूसरों पर नियंत्रण एवं अपनी श्रेष्ठता बनाये रखने के ख्याल से वे हमेशा आधिपत्य दिखाने की कोशिाशा करते हैं। ऐसे लोग दूसरों के साथ व्यवहार करने में या किसी तरह का संबंध स्थापित करने में इस बात का ख्याल अधिक करते हैं कि उन्हें उस संबंध से क्या लाभ होगा। वे यह नहीं सोचते हैं कि उससे दूसरों को क्या लाभ होगा।

असम्बद्ध व्यक्तित्व प्रकार-

इस तरह का व्यक्तित्व प्रकार व्यक्तियों से दूर हटने की प्रवृत्ति से विकसित होता है। ऐसे व्यक्तियों में आत्म केन्द्रिता, एकान्तप्रियता तथा असामाजिकता अधिक होता है। दूसरे शब्दों में, ऐसे लोग अन्य सभी लोगों से एक सांवेगिक दूरी बनाकर रखते हैं। ऐसे लोग दूसरों को न तो प्यार करते हैं, न घृणा करते हैं और न ही उनके साथ किसी तरह का सहयोग करते हैं। ऐसे लोग अधिक से अधिक समय अकेले होकर व्यतीत करना चाहते हैं।

हार्नी ने अपने सिद्धान्त में ये भी स्पष्ट किया है कि एक तंत्रिका रोगी व्यक्ति में उपर्युक्त तीन तरह की प्रवृत्तियों में से एक प्रवृत्ति अधिक प्रबल होता है। जबकि अन्य दो कुछ ही मात्रा में उपस्थित होते हैं। परंतु

वे दमित होते हैं। जब कोई दमित प्रवृत्ति अपनी अभिव्यक्ति के लिए सक्रिय प्रयास जारी करता है, तो इससे व्यक्ति में मानसिक संघर्ष होता है।

मूल चिन्ता को कम करने के प्रयास-

हार्नी ने अपने व्यक्तितव सिद्धान्त में कुछ वैसे उपायों का भी वर्णन किया है जिनके माध्यम से व्यक्ति अपने में उत्पन्न मूल चिन्ता को कम करता है। ऐसे उपायों को निम्नांकित दो भागों में बाँटा जा सकता है।

आदर्शवादी आत्म-छवि-

हार्नी का मत है कि मूल चिन्ता को दूर करने के ख्याल से अपने आप के बारे में व्यक्ति एक आदर्शवादी छवि विकसित कर लेता है जिसमें वह अपने आप को सभी तरह के गुणों से युक्त पाता है। यह आदर्शवादी छवि प्रायः अवास्तविक एवं अतिरंजित होता है। ऐसी परिस्थिति में वास्तविक आत्मन् तथा आदर्शवादी आत्मन् में काफी अन्तर होता है। आदर्शवादी आत्मन् के माँगों को पूरा करने के लिए सामान्यतः एक स्नायुविकृत प्रयास होता है। ऐसा प्रयास बाध्यकर, अविभेदी तथा अतुष्टनीय होता है। अपने आदर्शवादी आत्मन् को समर्थन प्रदान करने के लिए व्यक्ति एक विशेष तंत्र विकसित कर लेता है जिसे घमंड तंत्र कहा जाता है जिसमें व्यक्ति घमंड से व्यवहार करता है तथा अपने आप में वह विशेष शक्ति, बुद्धि, धन प्राप्त कर लेने की बात सोच रखता है जो अन्य किसी में नहीं होता है। इतना ही नहीं, वह अपने आदर्शवादी आत्म-प्रतिभा को समर्थन देने के लिए व्यवहारों का कुछ महत्वपूर्ण मानकों को मन में बैठा लेता है और उसी के अनुरूप व्यवहार करता है।

रक्षा प्रक्रम-

हार्नी का मत है कि व्यक्ति मूल चिन्ता को दूर करने के लिए कुछ रक्षा प्रक्रम का भी सहारा लेता है। उनके अनुसार ऐसे रक्षा प्रक्रम दो प्रकार के होते हैं-यौक्तिकीकरण तथा बाह्याता। यौक्तिकीकरण एक ऐसा रक्षा प्रक्रम है जिसमें अयुक्तिसंगत अभिप्रेरकों एवं इच्छाओं से उत्पन्न मानसिक संघर्ष या तनाव का समाधान उन अभिप्रेरकों एवं इच्छाओं को युक्तिसंगत बनाकर अर्थात तर्कपूर्ण एवं विवेकपूर्ण व्याख्या कर किया जाता है और मानसिक संघर्ष को दूर करने की कोशिश की जाती है। इस तरह से हार्नी ने यौक्तिकीकरण का उपयोग फ्रायड के ही अर्थ में किया। बाह्याता को हार्नी ने प्रक्षेपण के तुल्य माना है जिसमें व्यक्ति अपनी क्रिया की व्याख्या, कुछ बाह्या कारकों में दोषारोपण करके करता है। प्रायः दोषारोपण में वह अपने से कमजोर तत्वों को ही निशाना बनाता है।

स्पष्ट हुआ कि हार्नी द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व के सिद्धान्त का समग्र बल जैविक कारक न होकर सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारक है।

हार्नी ने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में जिन तथ्यों पर प्रकाश डाला है उसके आलोक में इस सिद्धान्त की निम्नलिखित विशेषताएँ कही जा सकती है।

1. मनोवैज्ञानिकों ने हार्नी द्वारा जैविक कारक को गौण तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों को प्रधान माना जाना एक महत्वपूर्ण उपलब्धि बतलाया है और कहा है कि सचमुच में व्यक्तित्व के निर्धारण में सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों की श्रेष्ठता पर बल डालकर अन्य कई मनोवैज्ञानिकों को इस क्षेत्र में शोध एवं मंत्रणा करने का उत्तम प्रोत्साहन दिया गया है।

2. मनोवैज्ञानिकों ने हार्नी के कुछ संप्रत्ययों जैसे-मूल चिन्ता, स्नायुविकृत आवश्यकता एवं स्नायुविकृत प्रवृत्ति को अधिक महत्वपूर्ण बतलाया है। कई मनोवैज्ञानिकों ने उनके द्वारा प्रतिपादित स्नायुविकृत प्रवृत्ति को विचलित व्यवहार के बारे में जानने का एक उत्तम तरीका बतलाया है।

3. कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा आत्म-सम्मान, सुरक्षा की आवश्यकता तथा आदर्शवादी आत्म-प्रतिभा को हार्नी द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व सिद्धान्त का मुख्य पहलू माना गया है क्योंकि इसके द्वारा दो बातों अर्थात् व्यक्तित्व का विकास तथा स्नायुविकृत प्रवृत्तियों से व्यक्तित्व किस तरह से प्रभावित होता है, की सफल व्याख्या होती है। सामाजिक अन्तःक्रियाओं के आलोक में ऐसी व्याख्या व्यक्तित्व के अन्य सिद्धान्त में नहीं मिलता है।

इन गुणों के बावजूद निम्नांकित बिन्दुओं पर हार्नी द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त की आलोचना की गयी है-

1. हार्नी के व्यक्तित्व सिद्धान्त का शोधपरक मूल्य कम बतलाया गया है। इनके संप्रत्ययों पर अधिक शोध नहीं किये गये हैं तथा इनकी लोकप्रियता इतनी नहीं है जितना कि फ्रायड, एडलर एवं युंग के सिद्धान्तों की थी। इसका एक मुख्य कारण यह था कि हार्नी के शिष्य भी कम थे जो उनके विचारों एवं सिद्धान्तों पर गहन अध्ययन करते।

2. फ्रायडवादी मनोवैज्ञानिकों का मत है कि हार्नी ने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में जैविक मूलप्रवृत्तियों की उपेक्षा करके तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों पर जरूरत से ज्यादा बल डालकर व्यक्तित्व के सिद्धान्त की एक अधूरी व्याख्या प्रस्तुत की है।

3. कुछ आलोचकों ने यह भी कहा है कि व्यक्तित्व विकास की व्याख्या में लैंगिकता, बाल्यावस्था विकास, आक्रमकता तथा अचेतन की उपेक्षा करके हार्नी ने बहुत बड़ी भूल की है।

4. कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि व्यक्तित्व विकास की व्याख्या में यद्यपि हार्नी ने सामाजिक तथा सांस्कृतिक कारकों को महत्वपूर्ण माना है, फिर भी उन्होंने समाजशास्त्र तथा मानवशास्त्र में उपलब्ध आँकड़ों जिनसे उनके सिद्धान्त में मजबूती आती, का उपयोग नहीं किया है। उन्होंने यह भी विस्तृत रूप से नहीं बतलाया है कि किस तरह से सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों द्वारा व्यक्तित्व का विकास हो पाता है।

5. यह भी कहा गया है कि हार्नी के सिद्धान्त में उतनी संगति नहीं है जितना कि फ्रायड के सिद्धान्त में है तथा इनका सिद्धान्त मध्यवर्गीय अमेरिकन संस्कृति से जरूरत से ज्यादा प्रभावित होता पाया गया है मानों यह सिद्धान्त सिर्फ इस वर्ग के व्यक्तियों के व्यक्तित्व की व्याख्या करने के लिए बना हो।

इन आलोचनाओं के बावजूद हार्नी द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व सिद्धान्त के महत्व का अंदाज हम इस बात से भी लगा सकते हैं कि न्यूयार्क शहर में हार्नी के नाम पर दो संस्थान खोले गये हैं जो मानसिक समस्याओं के उपचार से संबंद्ध प्रशिक्षण प्रदान करता है। ये संस्थान हैं-कारेन हार्नी क्लिनिक तथा कारेन हार्नी साइकोएनालिटिक एन्स्टीट्यूट।

अभ्यास प्रश्न

1. अल्फ्रेड एडलर के अनुसार, इंसानी व्यवहार में मुख्य प्रेरक शक्ति है:

अ. यौन प्रवृत्ति

ब. श्रेष्ठता के लिए प्रयास करना

स. सामूहिक अचेतन

द. कंडीशन्ड प्रतिक्रियाएं

2. अल्फ्रेड एडलर का मानना था कि हीन भावना:

अ. असामान्य और अस्वास्थ्यकर होती है

ब.हमेशा मानसिक बीमारी की ओर ले जाती है

स. व्यक्तियों को लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती है

द. केवल बचपन के आघात के कारण होती है

3. करेन हॉर्नी ने इस बात पर ज़ोर दिया कि व्यक्तित्व विकास मुख्य रूप से इससे प्रभावित होता है:

अ. जैविक प्रवृत्ति

ब. अचेतन संघर्ष

स. सामाजिक और सांस्कृतिक कारक

द. आनुवंशिक विरासत

6.6 सार-संक्षेप-

व्यक्तित्व का सामाजिक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त मानव स्वभाव की व्याख्या कुछ मनोवैज्ञानिक सम्प्रत्ययों, जैसे-इच्छाशक्ति, मूल चिन्ता, स्नायविक आवश्यकता आदि तथा कुछ सामाजिक, सम्प्रत्ययों, जैसे-जीवन शैली, जन्म-क्रम, दूसरों पर नियंत्रण पाना, सत्तावादिता, सम्बद्धता आवश्यकता आदि के परिप्रेक्ष्य में करने का प्रयास करता है।

अल्फ्रेड ऐडलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त को निम्नलिखित वर्गो में विभाजित किया जा सकता है- व्यक्तित्व गतिकी, सामाजिक रूचि, सर्जनात्मक व्यक्तित्व, जन्मक्रम आदि।

कारेन हार्नी के व्यक्तित्व सिद्धान्त में स्त्रैण दृष्टिकोण तथा सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों का पर्याप्त प्रभाव झलकता है। इनके सिद्धान्त को निम्नलिखित भागों में बांटा गया है- बाल्यावस्था की आवश्यकता, मूल चिन्ता, स्नायुविकृत आवश्यकता तथा स्नायुविकृत प्रवृत्ति, चिन्ता दूर करने के उपाय आदि।

6.7 पारिभाषिक शब्दावली-

मूल चिन्ता-बच्चों में पाया जाने वाला अकेलापन एवं निःसहायता का भाव जो विद्वेष के भाव के दमन से जुड़ा होता है।

शवकामुक व्यक्तित्व-इसमें बर्बादी, मृत्यु, पतन आदि से विशेष लगाव होता है तथा ऐसे लोगों में इन सब कार्यो से विशेष आनन्द की प्राप्ति होती है।

जीव कामुक व्यक्तित्व-इन्हें अपनी जिन्दगी से प्यार होता है तथा इसमें वर्द्धन, सृजन एवं निर्माण के प्रति विशेष उन्मुखता होती है।

6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1.ब 2.स 3. स

6.9 संदर्भ-ग्रन्थ-

1. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान- अरूण कुमार सिंह/आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास।

2. सामान्य मनोविज्ञान- सिन्हा एवं मिश्रा, भारती भवन।

3. आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान- सुलैमान एवं खान, शुक्ला बुक डिपो, पटना-

4. Walter Mischel – Introduction to Personality.

5- Shaffer & Lazarus – Theories of Personality.

6 Eysenck – The scientific study of personality.

6.10 निबन्धात्मक प्रश्न-

1. व्यक्तित्व के सम्बन्ध में कारेन हार्नी के सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या करें।
2. इरिक फ्रॉम ने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में किन-किन मूल आवश्यकताओं पर बल दिया है? वर्णन करें।
3. व्यक्तित्व पर जन्म-क्रम के प्रभाव के सम्बन्ध में ऐडलर के विचारों का उल्लेख करें।

इकाई 7 बैंडुरा का व्यक्तित्व का सामाजिक संज्ञानात्मक सिद्धान्त

इकाई संरचना

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 बन्डूरा का व्यक्तित्व सिद्धान्त

7.4 बन्डूरा के व्यक्तित्व सिद्धान्त की विशेषताएं

7.5 सार संक्षेप

7.6 पारिभाषिक शब्दावली

7.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

7.8 संदर्भ ग्रन्थ

7.9 निबन्धात्मक प्रष्न

7.1 प्रस्तावना-

पिछली इकाई में आपने सामाजिक परिप्रेक्ष्य में मानव व्यक्तित्व की व्याख्या करने वाले फ्रायडवादी मनोवैज्ञानिक अल्फ्रेड ऐडलर तथा नव-फ्रायडवादी मनोवैज्ञानिक इरिक फ्रॉम एवं कारेन हार्नी के व्यक्तित्व सिद्वान्त का अध्ययन किया|

प्रस्तुत इकाई में हम लोग सामाजिक परिप्रेक्ष्य में मानव व्यक्तित्व की व्याख्या करने वाले बन्डूरा के सामाजिक सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में व्यक्तित्व को समझने का प्रयास करेंगे।

7.2 उद्देश्य -

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पष्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप-

1. व्यक्तित्व के सामाजिक-मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का अन्य सिद्धान्तों से तुलना कर सकें।
2. बन्डूरा के व्यक्तित्व सिद्धान्त के मूल तत्वों की विवेचना कर सकें।

7.3 बन्डूरा का व्यक्तित्व सिद्धान्त-

बन्डूरा का व्यक्तित्व सिद्धान्त स्कीनर के व्यवहारवादी सिद्धान्त का ही विस्तृत रूप है जिसमें वैसे आन्तरिक संज्ञानात्मक चरों को भी महत्व दिया गया है जो उद्धीपक तथा अनुक्रिया के बीच मध्यस्थता करते हैं, जैसे-आवश्यकता, प्रणोद, इच्छा, संवेग इत्यादि। यानी, बन्डूरा ने अपने सामाजिक-सीखना सिद्धान्त में सीखने के महत्वपूर्ण नियमों को तो महत्व दिया ही है, साथ-ही व्यक्ति की संज्ञानात्मक क्षमताओं को भी इसमें काफी महत्व दिया गया है।

इसलिए व्यक्तित्व के सामाजिक-सीखना सिद्धान्त को संज्ञानात्मक सीखना सिद्धान्त की भी संज्ञा दी गयी है। व्यक्तित्व के सामाजिक सीखना सिद्धान्त में तीन मनोवैज्ञानिकों के सिद्धान्तों को रखा गया है-अलबर्ट बन्डूरा, मार्टिन सेलिगमैन तथा वाल्टर मिशेल। इन तीनों में अलबर्ट बन्डूरा के सिद्धान्त को सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना गया है तथा इस सिद्धान्त ने व्यक्तित्व मनोविज्ञान के क्षेत्र में अन्य सामाजिक-सीखना सिद्वान्त की तुलना में अधिक शोध करने के लिए मनोवैज्ञानिकों को आकर्षित किया है।

बन्डूरा द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व का सिद्धान्त अन्य सामाजिक-सीखना सिद्धान्तों के अनुरूप निम्नांकित दो मुख्य प्रस्तावनाओं पर आधारित है-

1. अधिकतर मानव व्यवहार अर्जित होते हैं, अर्थात् व्यक्ति उन्हें अपने जीवन-काल में सीखता है।
2. मानव जीवन व व्यवहार के सम्पोषण एवं विकास की व्याख्या करने के लिए सीखने का नियम पर्याप्त है।

बण्डुरा के सामाजिक-सीखना सिद्धान्त में मानव स्वभाव के कुछ खास-खास पूर्वकल्पनाओं जैसे-विवेकपूर्णता, पर्यावरणीयता, परिवर्तनशीलता तथा ज्ञेयता आदि पर अधिक बल डाला गया है परन्तु

अधिभूतवाद जैसी पूर्वकल्पना पर नाम मात्र का बल डाला गया है। समस्थिति-विषमस्थिति की पूर्वकल्पना को बाण्डुरा सिद्धान्त में महत्व नहीं दिया गया है। बाण्डुरा के सामाजिक-सीखना के सिद्धान्त को निम्नांकित 6 प्रमुख भागों में बाँट कर प्रस्तुत किया जा सकता है-

1. अन्योन्यनिर्धार्यता का संप्रत्यय
2. आत्म-तंत्र
3. प्रेरणा
4. मॉडलिंग: प्रेक्षण द्वारा सीखना
5. प्रेक्षणात्मक सीखना की प्रक्रियाएँ
6. मापन एवं शोध

अन्योन्यनिर्धार्यता का संप्रत्यय-

बन्डूरा के सिद्धान्त में अन्योन्यनिर्धार्यता का संप्रत्यय एक महत्वपूर्ण संप्रत्यय है। इस संप्रत्यय के माध्यम से बन्डूरायह स्पष्ट करना चाहते थे कि मानव व्यवहार संज्ञानात्मक, व्यवहारात्मक तथा पर्यावरणी निर्धारकों के बीच सतत अन्योन्य अन्तःक्रिया का एक प्रतिफल होता है। इस तरह के अन्योन्य अन्तःक्रिया की प्रक्रिया को बन्डूरा ने अन्योन्य निर्धार्य्ता की संज्ञा दी है। इस संप्रत्यय के अनुसार मानव क्रिया में तीन कारकों का परस्पर प्रभाव हमेशा पड़ता है। वे तीन कारक हैं-

1. बाह्य वातावरण
2. संज्ञानात्मक एवं आन्तरिक घटनाएँ
3. व्यवहार

इन तीनों के अन्योन्य प्रभावों को ऊपर के चित्र में दिखलाया गया है चित्र से स्पष्ट है कि तीनों कारक त्रिभुज के प्रत्येक कोना में एक-दूसरे से संबंद्ध एवं अन्तःनिर्भर दिखलाये गए हैं। चित्र से यह भी स्पष्ट है कि इन तीन तत्वों में से कोई भी एक तत्व या कारक अन्य दोनों को प्रभावित कर सकता है। जैसे, किसी व्यक्ति का यह विशवास कि वह क्या कर सकता है और यदि वह अमुक कार्य करे तो उसका क्या परिणाम होगा (संज्ञानात्मक कारक) से उसका वास्तविक व्यवहार प्रभावित होता है और फिर उसके वास्तविक व्यवहार से उसका वातावरण प्रभावित हो जात है जो बाद में चलकर व्यक्ति के प्रत्याशा को काफी हद तक प्रभावित कर सकता है।

अन्योन्य निर्धार्यता के संप्रत्यय को एक उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझाया जा सकता है। उदाहरण के रूप में टेलीविजन पर जो दिखलाया जाने वाला कार्यक्रम है वह तो सभी व्यक्तियों के लिए एक ही समान होता

है। परन्तु कोई व्यक्ति विशेष के लिए यह कार्यक्रम अलग हो सकता है जो यह इस पर निर्भर करता है कि वह क्या देखना पसंद करता है। दर्शकों की पसंद से भविष्य में दिखलाये जाने वाले कार्यक्रम प्रभावित होते हैं क्योंकि इनके पसंद के अनुरूप ही कार्यक्रम तैयार करने की आवश्यकता महसूस की जाती है। इसके अलावा कार्यक्रम को तैयार करने में लगा धन तथा अन्य जरूरतों से भी यह प्रभावित होता है कि भविष्य में दर्शकों के लिए कैसा कार्यक्रम तैयार होगा। इस तरह से दिखलाया गया कार्यक्रम अंशातः दर्शकों के पसन्द को प्रभावित करता है। इस उदाहरण में बाण्डुरा के अनुसार सभी तीन कारक दर्शक का पसंद, टेलीविजन देखने का व्यवहार तथा दिखलाया गया कार्यक्रम परस्पर एक-दूसरे को प्रभावित कर रहे हैं।

आत्म-तंत्र-

अन्योन्य निर्धार्यता के संप्रत्यय से स्पष्ट है कि प्रत्येक चीज परस्पर ढंग से अन्तःक्रियात्मक होते हैं। प्रशन यह उठता है कि क्या इनका कोई केन्द्र बिन्दु भी होता है? बन्डूराने इस प्रशन का उत्तर 'हाँ' के रूप में दिया है और वह केन्द्र बिन्दु है-आत्म-तंत्र।

बन्डूरा ने यह स्पष्ट किया कि आत्म-तंत्र कोई मानसिक एजेन्ट नहीं है जिससे व्यवहारों का नियंत्रण होता है बल्कि यह एक ऐसा संज्ञानात्मक संरचना है जो व्यक्ति को एक संदर्भ प्रक्रम प्रदान तो करता ही है साथ-ही-साथ प्रत्यक्षण, मूल्यांकन एवं व्यवहारों के संचालन के लिए रास्ता भी प्रशस्त करता है। आत्म-तंत्र का संबंध चिन्तन तथा प्रत्यक्षण से विशेष रूप से होता है। आत्म-तंत्र का एक महत्वपूर्ण कार्य आत्म-नियमन है। आत्म-नियमन से तात्पर्य चिन्तन द्वारा अपने वातावरण में जोड़-तोड़ करने तथा अपने कार्यो के परिणामों को स्पष्ट करने की क्षमता से होता है। आत्म-नियमन व्यवहार में तीन प्रक्रियाएँ सम्मिलित होती हैं-

क. आत्म-प्रेक्षण

ख. निर्णय प्रक्रिया

ग. आत्म-अनुक्रिया

आत्म-प्रेक्षण-

आत्म-प्रेक्षण में व्यक्ति अपने आप को कुछ खास-खास कारकों जैसे निष्पादन के गुण, मौलिकता आदि के रूप में प्रेक्षण करता है। निर्णयन प्रक्रिया में व्यक्ति अपने व्यवहार को वैयक्तिक मानदंडों के रूप में तथा दूसरों के साथ तुलना करके किसी निर्णय पर पहुँचता है। आत्म-अनुक्रिया में व्यक्ति पहले किये गये प्रेक्षणों एवं निर्णयों के आधार पर अपने आप को धनात्मक एवं ऋणात्मक ढंग से मूल्यांकन करता है और उसी के संदर्भ में अपने आप को पुरस्कृत करता है या दंड देता है।

आत्म-तंत्र का एक महत्वपूर्ण तत्व आत्म-सामर्थ्य है। बन्डूराके अनुसार आत्म-सामर्थ्य से तात्पर्य ऐसे आत्म-प्रत्यक्षण से होता है जिसमें व्यक्ति यह अनुमान लगाता है कि वह किसी दी हुई परिस्थिति में कितने

प्रभावकारी ढंग से कार्य कर सकता है। दूसरे शब्दों में, आत्म-सामर्थ्य से तात्पर्य व्यक्ति द्वारा किये गये इस उम्मीद या प्रत्याशा से होता है कि वह अमुक परिस्थिति में कितना प्रभावकारी ढंग से कार्य कर सकता है। ऐसे प्रत्याषा के दो प्रकार हैं-सामर्थ्य प्रत्याशा तथा परिणाम प्रत्याशा। सामर्थ्य प्रत्याशा से तात्पर्य व्यक्ति में उस तरह के विशवास से होता है जिसके सहारे वह यह उम्मीद करता है कि किसी खास तरह के परिणाम की प्राप्ति के लिए जो व्यवहार या कार्य की जरूरत है, उसे वह सफलतापूर्वक कर सकता है। जैसे यदि कोई यह विशवास करता है कि वर्ग में दिये गए समस्या का समाधान करने के लिए उसके पास पर्याप्त कौशल है, तो कहा जाएगा कि उसमें सामर्थ्य प्रत्याशा अधिक है। परिणाम प्रत्याशा से तात्पर्य व्यक्ति के उस विशवास से होता है जिसके सहारे वह यह समझता है कि अमुक व्यवहार करने से अमुक परिणाम निशिचत रूप से मिलेंगे। जैसे, यदि छात्र वर्ग में दिये गए समस्या का समाधान कर लेता है और यह उम्मीद करता है कि उसका समाधान शत-प्रतिशत सही होगा और यदि सचमुच में ऐसा होता है, तो यह कहा जाएगा कि छात्रों में परिणाम प्रत्याशा अधिक मजबूत थे। यदि किसी व्यक्ति में सामर्थ्य प्रत्याशा ऊँचा है तथा परिणाम प्रत्याशा वास्तविक है, तो व्यक्ति कड़ी मेहनत करेगा और जब तक लक्ष्य पर पहुँच नहीं जाता है अपना प्रयास जारी रखेगा। बन्डूराके अनुसार सामर्थ्य प्रत्याशा समायोजनशीलता का एक महत्वपूर्ण भाग होता है।

प्रेरणा-

बन्डूरा के लिए प्रेरणा एक संज्ञानात्मक व्याकृति यानी, कन्स्ट्रक्ट है तथा इसके दो स्रोत होते हैं-पहला स्रोत भविष्य में मिलने वाला पुनर्बलन है। इस तरह के पुनर्बलन से व्यक्ति एक खास ढंग से व्यवहार करने के लिए प्रेरित होता है। दूसरा स्रोत एक निश्चित लक्ष्य या निष्पादन के वांछित स्तर को निर्धारित करके उसी के आलोक में अपने निष्पादन का मूल्यांकन करता है। इससे भी व्यक्ति उस वांछित स्तर के अनुरूप निष्पादन करने के लिए प्रेरित होता है। बन्डूरातथा शुन्क ने इस सम्बन्ध में एक प्रयोग भी किया है। इस अध्ययन के परिणाम में यह देखा गया कि गणितीय कौशलों में कमजोर बच्चे जब अपने लिये निश्चित किये गए छोटे-छोटे लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रयास करते हैं तो उनका निष्पादन उस परिस्थिति की तुलना में काफी उन्नत हो जाता है जब उसके द्वारा निर्धारित किये गए लक्ष्य सुदूर थे तथा जिन पर पहुंचने में उसे अधिक समय लगता था। इस प्रयोग के आधार पर बन्डूरातथा शुन्क द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया कि व्यक्ति जब अपने व्यवहार पर सतत मनन करता है तथा अपने व्यवहारों का मूल्यांकन करते रहता है, तो इससे एक तरह की आत्म प्रेरणा मिलती है और वह पूर्वनिर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप और अधिक कार्य करने के लिए प्रेरित होता है।

मॉडलिंग: प्रेक्षण द्वारा सीखना

बन्डूराका मत है कि व्यक्ति दूसरों (या मॉडल) के व्यवहारों का प्रेक्षण करके तथा उसे दोहराकर वैसा ही व्यवहार करना सीख लेता है। इसे ही मॉडलिंग की संज्ञा दी जाती है। इस सिलसिले में बन्डूरारॉस तथा रॉस ने एक लोकप्रिय प्रयोग किया है। इस प्रयोग में स्कूल के बच्चों को वयस्क द्वारा तीन से चार फीट की एक गुड़िया जिसे बौब गुड़िया का नाम दिया गया था, को उछालते हुए, मारते हुए एवं उसके प्रति

आक्रात्मकता करते हुए दिखलाया गया है। जब इन बच्चों को उसी गुड़िया के साथ अकेला छोड़ दिया गया तो देखा गया कि उनके द्वारा भी वैसा ही आक्रामक व्यवहार उस गुड़िया के प्रति दिखलाया गया। बाद के प्रयोगों में जब बच्चों के टेलीविजन पर ऐसे ही आक्रामक दृश्य दिखलाये गए, तो उनका व्यवहार उन बच्चों की तुलना में अधिक आक्रामक हो गए जिन्हें ऐसे दृश्य टेलीविजन पर नहीं दिखलाये गए थे। बन्डूराद्वारा किये गए शोधों के आधार पर मॉडल के निम्नांकित तीन कारकों को अधिक महत्वपूर्ण बतलाया गया है जिसमें मॉडलिंग प्रभावित होता है:-

मॉडल की विशेषताएं

प्रेक्षक की विशेषताएं

व्यवहार के पुरस्कार परिणाम

मॉडल की विशेषताएं-

बन्डूरा ने मॉडल के कुछ ऐसी विशेषताओं का वर्णन किया है जिनसे मॉडलिंग की प्रक्रिया प्रभावित होती है अर्थात जिसे मॉडल के व्यवहारों के अनुकरण करने की प्रक्रिया प्रभावित होती है। इन विशेषताओं में मॉडल तथा प्रयोज्य के बीच समानता प्रयोज्य के अनुपात में मॉडल के उम्र एवं यौन, मॉडल का स्तर एवं प्रतिष्ठा तथा मॉडल द्वारा किया गया व्यवहार आदि प्रमुख हैं। जब प्रयोज्य एवं मॉडल के बीच समानता घटती है, तो इससे मॉडलिंग में कमी आती है। प्रयोज्य उन मॉडलों से ज्यादा प्रभावित होते हैं जो समान उम्र एवं यौन के होते हैं।उसी तरह से जब मॉडल के रूप में किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति द्वारा अमुक व्यवहार करते दिखलाया जाता है, तो ऐसी परिस्थिति में प्रयोज्य उसके व्यवहारों का नकल तेजी से करते हैं। अर्थात मॉडलिंग की प्रक्रिया तीव्र हो जाती है। जब मॉडल उसी तरह से कोई जटिल व्यवहार करता पाया जाता है, तो प्रयोज्य उसका अनुकरण साधारण व्यवहार की तुलना में कम करता है।

स्पष्ट हुआ कि मॉडल की कुछ विशेषताएं हैं जिनमें मॉडलिंग की प्रतिक्रिया तीव्र हो जाती है। जब मॉडल उसी तरह से कोई जटिल व्यवहार करता पाया जाता है, तो प्रयोज्य उसका अनुकरण साधारण व्यवहार की तुलना में कम करता है।

प्रेक्षक की विशेषताएं -

प्रेक्षक या प्रयोज्य की भी कुछ विशेषताएं होती हैं जिनसे मॉडलिंग प्रभावित होती है। जिस प्रेक्षक या दर्शक या प्रयोज्य में आत्म-विश्वास तथा आत्म-सम्मान कीकमी होती है, वे उन दर्शकों या व्यक्तियों की तुलना में मॉडल के व्यवहारों का अनुकरण अधिक करते हैं जिनमें आत्म-विश्वास तथा आत्म-सम्मान का भाव अधिक होता है। उसी तरह से जिन व्यक्तियों के अपने बीते दिनों में दूसरों के व्यवहारों का अनुकरण करने के लिए पुरस्कार दिया गया होता है, वे दिये गए मॉडल के व्यवहारों का अनुकरण उन व्यक्तियों की तुलना में तेजी से करते हैं जिन्हें ऐसे पुरस्कार पाने का कोई अनुभव नहीं होता है।

व्यवहार का पुरस्कार परिणाम -

मॉडलिंग की प्रक्रिया मॉडल के व्यवहारों को अनुकरण करने के बाद मिलने वाले पुरस्कार पर भी निर्भर करता है। बन्डूराके अनुसार यह कारक इतना अधिक प्रभावशाली है कि इसके सामने उपुर्यक्त दोनों कारकों या विशेषताओं का महत्व गौण हो जाता है। जैसे, बन्डूराका मत है कि व्यक्ति निश्चित रूप से एक प्रतिष्ठित मॉडल के व्यवहारों का अनुकरण करता है परन्तु यदि इस अनुकरणित व्यवहार के बाद व्यक्ति को पुरस्कार नहीं मिलता है या कोई धनात्मक लाभ नहीं होता है, तो प्रतिष्ठित मॉडल का भी मॉडलिंग पर कोई प्रभाव नहीं रह जाता है।

प्रेक्षणात्मक सीखना की प्रक्रियाएं-

बन्डूरा ने अपने सिद्धान्त में मॉडलिंग को प्रभावित करने वाले कारकों की सिर्फ पहचान ही नहीं की है बल्कि प्रेक्षणात्मक सीखना के स्वरूप का विश्लेषण भी किया है और पाया कि इस तरह का सीखना निम्नांकित चार अन्तर्सम्बन्धित प्रक्रियाओं द्वारा नियंत्रित होती है-

अवधान-सम्बन्धी प्रक्रियाएं

धारणात्मक प्रक्रियाएं

पुनरूत्पादक प्रक्रियाएं

प्रेरणात्मक प्रक्रियाएं

अवधान-सम्बन्धी प्रक्रियाएं-

मॉडलिंग की सबसे पहली महत्वपूर्ण प्रक्रिया यह है कि प्रयोज्य मॉडल पर ठीक से ध्यान दें। मॉडल का एक मात्र प्रत्यक्षण कर लेने से ही इस बात की गारंटी नहीं हो जाती है कि मॉडलिंग होगा ही। सच्चाई यह है कि जब तक व्यक्ति मॉडल के संगत तथा उपयुक्त संकेत पर सही-सहीं ध्यान नहीं देगा तथा उपयुक्त उद्दीपक घटनाओं का ठीक ढंग से चयन नहीं करेगा, तब तक मॉडलिंग की प्रक्रिया आरम्भ नहीं होगी। व्यक्ति द्वारा मॉडल पर ध्यान दिया जाना कई बातों पर निर्भर करता है जिसमें मॉडल की उम्र, यौन, प्रतिष्ठा आदि प्रधान है। यदि मॉडल का उम्र एवं यौन व्यक्ति के उम्र एवं यौन से समान है तथा मॉडल की प्रतिष्ठा व्यक्ति की नजर से अधिक है तो व्यक्ति सामान्यतः मॉडल पर अधिक ध्यान देता पाया जाता है।

धारणात्मक प्रक्रियाएँ-

प्रेक्षणात्मक सीखना की दूसरी महत्वपूर्ण प्रक्रिया धारणा से संबंद्व है। प्रेक्षणात्मक सीखना के लिए यह आवशयक है कि व्यक्ति मॉडल के सभी सार्थक व्यवहारों को याद रखे या उसे धारण कर रखे। ऐसा नहीं करने से प्रेक्षणात्मक सीखना की प्रक्रिया सम्पन्न नहीं होगी। मॉडल के सार्थक व्यवहार को धारण कर रखने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति उसे कोडित करे तथा संकेत रूप में चित्रित करे। सांकेतिक

चित्रण के इस आन्तरिक प्रक्रिया के दो महत्वपूर्ण तंत्र बन्डूराद्वारा बतलाये गए हैं-प्रतीकात्मक तंत्र तथा शाब्दिक तंत्र। बन्डूराका मत है कि जब व्यक्ति मॉडल पर ध्यान से देखता है, तो वह उसके महत्वपूर्ण पहलुओं की एक पुनः प्राप्यणीय प्रतिमा मन में बना लेता है जो मॉडल के संबंधित व्यवहार को बाद में याद करने में मद्द करता है। शाब्दिक तंत्र प्रतिमा निर्णय के समान होता है और इसमें जो कुछ भी व्यक्ति प्रेक्षण करता है उसका एक तरह से शाब्दिक कोडिंग होता है। मूल प्रेक्षण के दौरान व्यक्ति अपने-आप से यह वर्णन करता है कि मॉडल क्या कर रहा है। ये शाब्दिक वर्णन एक तरह का कोड बन जाते हैं जिसे बाद में व्यक्ति बिना स्पष्ट व्यवहार किये ही मन-ही-मन आसानी से पूर्वाभ्यास कर लेता है।

पुनरूत्पादक क्रियाएँ-

बन्डूराका पुनरूत्पादक क्रियाओं से तात्पर्य सांकेतिक चित्रण को क्रिया या व्यवहार में परिणत करने से होता है। बन्डूराका मत है कि मॉडल के व्यवहार को ध्यान में रखने, उसका सांवेगिक चित्रण कर लेने तथा मन-ही-मन उसका पुनर्भ्यास कर लेने मात्र से ही व्यक्ति उस व्यवहार को सही-सही नहीं कर पाता है। यह बात विशेषकर उस परिस्थिति में अधिक स्पष्ट हो जाती है जहाँ व्यक्ति को जटिल एवं कौशल व्यवहार सीखना होता है। इस तरह की परिस्थिति में मॉडल के व्यवहारों का क्रिया में परिणत करके पुनर्भ्यास करना आवशयक हो जाता है। उदाहरणस्वरूप, मान लिया जाए कि कोई व्यक्ति कार चलाना सीख रहा है। कार चलाने में जो मौलिक क्रियाएँ हैं उसे तो व्यक्ति दूसरों को (मॉडल) कार चलाते देखकर सीख सकता है तथा मॉडल के व्यवहार का सांकेतिक चित्रण को व्यक्ति मन-ही-मन कई बार दोहरा सकता है लेकिन इसका वास्तविक व्यवहार में परिणत किया जाना अर्थात् कार चलाना प्रारंभ में काफी फूहड़ एवं स्थूल होगा। इसके लिए मात्र प्रेक्षण पर्याप्त नहीं होगा। इसके लिए कार चलाने का वास्तविक अभ्यास तथा इस व्यवहार की परिशुद्वता से मिलने वाला पर्याप्त पुनर्निवेशन अनिवार्य है।

प्रेरणात्मक प्रक्रियाएँ-

प्रेक्षणात्मक सीखना की यह चौथी प्रक्रिया है जिसका संबंध प्रेरणात्मक प्रक्रियाओं से है। चाहे व्यक्ति मॉडल के व्यवहार को कितना ही ध्यानपूर्वक क्यों न देखे और उसे धारण करके रखे तथा उसमें व्यवहार को करने की क्षमता चाहे कितनी भी अधिक क्यों न हो उस व्यवहार को तब तक ठीक ढंग से नहीं कर पाता है जब तक कि वह उसे करने के लिये प्रेरित न हो या उसे करने के पर्याप्त प्रोत्साहन या पुनर्बलन नहीं दिया गया हो। जब पर्याप्त पुनर्बलन दिया जाता है तो मॉडलिंग या प्रेक्षणात्मक सीखना को व्यक्ति तुरन्त ही कार्य में परिणत कर लेता है। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि उचित प्रोत्साहन या उचित पुनर्बलन से व्यवहार का वास्तविक निष्पादन प्रभावित नहीं होता है बल्कि उससे अवधानात्मक एवं धारणात्मक प्रक्रियाएँ भी प्रभावित होती हैं।

बन्डूराके अनुसार ऐसे पुनर्बलन दो प्रकार के होते हैं- स्थानापन्न पुनर्बलन तथा आत्म पुनर्बलन। जब व्यक्ति यह देखता है कि मॉडलद्वारा अमुक व्यवहार करने पर उसे धनात्मक पुनर्बलन मिलता है, तो इस तरह के पुनर्बलित व्यवहार को मात्र देखकर वह भी ऐसा व्यवहार करना सीख लेता है। इस तरह के पुनर्बलन को स्थानापन्न पुनर्बलन कहा जाता है। जब व्यक्ति को किसी कार्य के करने के आत्म-संतुष्टि एवं

गर्व महसूस होता है, तो उसे आत्म-पुनर्बलन की संज्ञा दी जाती है। इन दोनों तरह के पुनर्बलन का महत्व प्रेक्षणात्मक सीखना में काफी अधिक बतलाया गया है।

मापन एवं शोध-

बन्डूराने अपने सिद्धान्त में व्यक्तित्व मापन के लोकप्रिय प्रविधियों जैसे-स्वतंत्र साहचर्य, स्वप्न विशलेषण या प्रेक्षण प्रविधि का प्रयोग नहीं किया है। उनके अनुसार व्यवहारात्मक तथा संज्ञानात्मक चरों का मापन महत्वपूर्ण है। संज्ञानात्मक चरों का मापन के लिए आत्म-प्रतिवेदन प्रविधियों की सिफारिश की गयी है। जैसे आत्मसामर्थ्यता का मापन उन्होंने कई व्यवहारात्मक परिहार्य परीक्षण जिसमें 29 एकांश थे पर रेटिंग्स करवा कर किया। छात्रों में परीक्षण दुशिंचता को मापने के लिए एक व्यक्तित्व परीक्षण का निर्माण किया था। इसके अलावा मॉडलिंग अध्ययन में बच्चों के व्यवहारों का अध्ययन प्रत्यक्ष प्रेक्षण तथा दैहिक मापों के भी आधार पर किया गया।

जहां तक शोध का प्रश्न है बन्डूराने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में प्रयोगशाला प्रयोग शोध पर अधिक बल डाला है उन्होंने मांडलिंग के अध्ययन में विशेषकर टेलीविजन का आक्रामक व्यवहार की उत्पत्ति में पड़ने वाले प्रभावों के अध्ययन में प्रयोगात्मक समूह तथा नियंत्रित समूह में प्रयोज्यों को बांटकर अध्ययन करने में विशेष अभिरूचि दिखलायी है।

7.4 बन्डूरा के व्यक्तित्व सिद्धान्त की विशेषताएं:

बन्डूरा के व्यक्तित्व सिद्धान्त की निम्नलिखित विशेषताएं हैं।

1. सामाजिक-सीखना सिद्धान्त काफी वस्तुनिष्ठ सिद्धान्त है तथा इसे प्रयोगशाला विधि के लिए काफी उपयुक्त माना गया है। बन्डूराके सिद्धान्त पर कई आनुभाविक शोध किये गए हैं जिनसे इस सिद्धान्त को काफी समर्थन मिला है।

2. बन्डूराके सामाजिक सीखना सिद्धान्त को अधिकतर शोध मनोवैज्ञानिकों एवं नैदानिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा बीसवीं शताब्दी का व्यक्तित्व के अध्ययन एवं उपचार में अधिक उत्तेजनपूर्ण एवं रचनात्मक क्रान्ति माना है।

3. बन्डूराके प्रेरेक्षणात्मक सीखना तथा उसका व्युत्पन्न व्यवहार परिमार्जन को प्रयोगशाला परिस्थिति से अलग करके दिन-प्रतिदिन की वास्तविक समस्याओं को सुलझाने में लोगों ने उसे काफी उपयोगी बतलाया है।

4. बन्डूराके सामाजिक सीखना सिद्धान्त से लोगों ने कई संगत एवं महत्वपूर्ण मूल्यांकन प्रविधि ज्ञात करने में सफल हुए हैं। इनके सिद्धान्त से निकाली नयी मॉडलिंग की प्रविधि एक ऐसी ही प्रविधि है जो मनोविज्ञान के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हुई है।

इन गुणों के बावजूद सामाजिक सीखना सिद्धान्त के कुछ अवगुण हैं जो निम्नांकित हैं -

1. आलोचकों का मत है कि बन्डूराका सामाजिक सीखना सिद्धान्त व्यक्तित्व के सिर्फ परिधीय पहलू की व्याख्या करता है। इन आलोचकों का मत है कि इस सिद्धान्त में मात्र स्पष्ट व्यवहार पर बल डालकर मानव व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण पहलुओं जैसे, चेतन एवं अचेतन प्रेरणात्मक बलों की पूर्णरूपेण उपेक्षा की गयी है। फलतः इस सिद्धान्त में जो व्यक्तित्व की व्याख्या की गयी है उसे पूर्णतः वैज्ञानिक नहीं माना जा सकता है।

2. स्कीनर जैसे व्यवहारवादियों का कहना है कि बन्डूराने अपने सिद्धान्त में जिस संज्ञानात्मक चरों को सम्मिलित किया है, वह अनावश्यक होने के साथ-ही-साथ अस्पष्ट स्वरूप के हैं जिन्हें आसानी से मापा नहीं जा सकता है। इन चरों में चूंकि उतनी वस्तुनिष्ठता नहीं है जितनी कि स्पष्ट व्यवहार में है, अतः इसे अधिक संगत नहीं माना जा सकता है।

3. बन्डूराने, जैसा कि कुछ आलोचकों ने कहा है, अपने सिद्धान्त में यह स्पष्ट नहीं किया है कि संज्ञानात्मक चरों द्वारा व्यक्ति का व्यवहार किस तरह से प्रभावित होता है।

4. कुछ आलोचकों, जिसमें शुल्ज प्रधान हैं, का कहना है कि बन्डूराने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में यह स्पष्ट नहीं किया है कि संवेग तथा संघर्ष किस तरह से मानव व्यवहार को दिशा-निर्देशित तथा नियंत्रित करता है।

इन आलोचनाओं के बावजूद बन्डूराका सामाजिक-सीखना सिद्धान्त जिसमें संज्ञानात्मक चरों पर बल डाला गया है, व्यक्तित्व के अध्ययन के लिए नए द्वार खोल रखा है जिसे कई आधुनिक मनोवैज्ञानिक एक महत्वपूर्ण योगदान समझते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1.अल्बर्ट बंडूरा किस थ्योरी के लिए सबसे ज़्यादा जाने जाते हैं?

A. साइकोएनालिटिक थ्योरी

B. ऑपरेंट कंडीशनिंग

C. सोशल लर्निंग थ्योरी

D. कॉग्निटिव डेवलपमेंट थ्योरी

2. बंडूरा के अनुसार, सीखना मुख्य रूप से किसके माध्यम से होता है?

A. ट्रायल एंड एरर

B. क्लासिकल कंडीशनिंग

C. इनसाइट लर्निंग

D. ऑब्ज़र्वेशन और इमिटेशन

3. बंडूरा द्वारा इस्तेमाल किए गए एक गुड़िया वाले प्रसिद्ध प्रयोग को क्या कहा जाता है?

A. लिटिल अल्बर्ट प्रयोग

B. स्किनर बॉक्स प्रयोग

C. पावलोव का कुत्ते का प्रयोग

D. बोबो डॉल प्रयोग

4. बंडूरा की थ्योरी में, जिस व्यक्ति को ऑब्ज़र्व किया जाता है, उसे क्या कहा जाता है?

A. रीइन्फोर्सर

B. स्टिमुलस

C. मॉडल

D. ऑब्ज़र्वर

5. निम्नलिखित में से कौन सा ऑब्ज़र्वेशनल लर्निंग में एक प्रोसेस नहीं है?

A. अटेंशन

B. रिटेंशन

C. मोटिवेशन

D. पनिशमेंट

6 . बंडूरा के अनुसार कौन सा फैक्टर इमिटेशन की संभावना को बढ़ाता है?

A. मॉडल को सज़ा मिलती है

B. मॉडल आकर्षक नहीं है

C. मॉडल का स्टेटस कम है

D. मॉडल को इनाम मिलता है

7.5 सार-संक्षेप-

व्यक्तित्व का सामाजिक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त मानव स्वभाव की व्याख्या कुछ मनोवैज्ञानिक सम्प्रत्ययों, जैसे-इच्छाशक्ति, मूल चिन्ता, स्नायविक आवश्यकता आदि तथा कुछ सामाजिक, सम्प्रत्ययों, जैसे-जीवन शैली, जन्म-क्रम, दूसरों पर नियंत्रण पाना, सत्तावादिता, सम्बद्धता आवश्यकता आदि के परिप्रेक्ष्य में करने का प्रयास करता है।

अल्फ्रेड ऐडलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त को निम्नलिखित वर्गो में विभाजित किया जा सकता है- व्यक्तित्व गतिकी, सामाजिक रूचि, सर्जनात्मक व्यक्तित्व, जन्मक्रम आदि।

कारेन हार्नी के व्यक्तित्व सिद्धान्त में स्त्रैण दृष्टिकोण तथा सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों का पर्याप्त प्रभाव झलकता है। इनके सिद्धान्त को निम्नलिखित भागों में बांटा गया है- बाल्यावस्था की आवश्यकता, मूल चिन्ता, स्नायुविकृत आवश्यकता तथा स्नायुविकृत प्रवृत्ति, चिन्ता दूर करने के उपाय आदि।

इरिक फ्रॉम ने व्यक्तित्व की व्याख्या ऐतिहासिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक कारकों के परिप्रेक्ष्य में की। उनके व्यक्तित्व सिद्धान्त को निम्नलिखित वर्गो में विभाजित किया गया है-स्वतंत्रता बनाम सुरक्षाः मौलिक माननीय दुविधा, पलायन के प्रक्रम, मूल आवयकताएं, बाल्यावस्था में व्यक्तित्व विकास तथा व्यक्तित्व प्रकार।

बन्डूराके व्यक्तित्व सिद्धान्त में सीखने के महत्वपूर्ण नियमों के साथ-साथ व्यक्ति की संज्ञानात्मक क्षमताओं को भी काफी महत्व दिया गया है। इनके सिद्धान्त के प्रमुख भाग हैं-अन्योन्य निर्धार्यता, आत्म-तंत्र, प्रेरणा, मॉडलिंग, प्रेक्षणात्मक सीखना की प्रक्रियाएं, मापन एवं शोध।

7.6 पारिभाषिक शब्दावली-

आदर्श=Model

अनुकरण=Imitation

दंड=Punishment

पुनर्बलन= Reinforcement

अन्योन्यनिर्धार्यता=Reciprocal Determinism

7.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1. C

2. D

3. D

4. C

5. D

6. D

7.8 संदर्भ-ग्रन्थ-

1. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान- अरूण कुमार सिंह/आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास।
2. सामान्य मनोविज्ञान- सिन्हा एवं मिश्रा, भारती भवन।
3. आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान- सुलैमान एवं खान, शुक्ला बुक डिपो, पटना-
4. Walter Mischel – Introduction to Personality.
5. Shaffer & Lazarus – Theories of Personality.
6. Eysenck – The scientific study of personality.

7.9 निबन्धात्मक प्रश्न-

1. व्यक्तित्व के सम्बन्ध में बन्डूरा के विचारों की समीक्षा करें।
2. शिक्षकों और छात्रों के लिए बंडूरा की सोशल लर्निंग थ्योरी के शैक्षिक प्रभावों पर चर्चा करें।
3. बंडूरा की सोशल कॉग्निटिव थ्योरी का आलोचनात्मक मूल्यांकन करें, इसकी खूबियों और सीमाओं पर प्रकाश डालें।

इकाई 8. व्यक्तित्व का डोलार्ड एवं मिलर सिद्धान्त

इकाई संरचना

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 डोलार्ड एवं मिलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त का परिचय

8.4 डोलार्ड एवं मिलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त का मूल्यांकन

8.5 सार संक्षेप

8.6 पारिभाषिक शब्दावली

8.7 स्व-मूल्यांकन हेतु प्रश्न

8.8 संदर्भ-ग्रन्थ

8.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

8.1 प्रस्तावना-

व्यक्तित्व की व्याख्या हेतु विकसित विभिन्न सिद्धान्तों में डोलार्ड एवं मिलर का उद्धीपक-अनुक्रिया सिद्धान्त एक अधिगम आधारित सिद्धान्त है जो व्यक्तित्व की व्याख्या सीखे गये व्यवहार के साथ-साथ मनोविष्लेषमात्मक दृष्टिकोण से भी करता है।

प्रस्तुत इकाई में डोलार्ड एवं मिलर द्वारा वर्णित विभिन्न संप्रत्ययों पर प्रकाश डाला गया है तथा इन संप्रत्ययों के आलोक में व्यवहार के विभिन्न आयामों को समझने की कोशिश की गई है।

इस सिद्धान्त के अध्ययन से आपको व्यक्तित्व के अन्य अधिगम सिद्धान्तों से इस सिद्धान्त की तुलना करना आसान होगा, साथ-ही, व्यक्तित्व को नये ढंग से समझने में मदद मिलेगी।

8.2 उदेश्य -

इस इकाई का अध्ययन करने के पष्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि-

1. डोलार्ड एवं मिलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त की व्याख्या कर सकें,
2. इस व्यक्तित्व सिद्धान्त के प्रमुख संप्रत्ययों का उल्लेख कर सकें तथा
3. इस सिद्धान्त की तुलना दूसरे व्यक्तित्व सिद्धान्तों से कर सकें।

8.3 डोलार्ड एवं मिलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त का परिचय-

व्यक्तित्व का यह एक ऐसा सिद्धान्त है जिसका प्रतिपादन एक समाजशास्त्री और एक मनोवैज्ञानिक ने मिलकर किया। अतः व्यक्तित्व का यह सिद्धान्त एक अन्तर्विषयक उपागम (इन्टर डिसिलिनरी अप्रोच) है।

इस सिद्धान्त के प्रतिपादक जॉन डोलार्ड एक समाजशास्त्री थे, जबकि नील मिलर एक मनोवैज्ञानिक थे।

इनके सिद्धान्त में हमें तीन तत्वों का एक अनोखा संगम देखने को मिलता है। वे तीन तत्व हैं-सीखने का प्रयोगात्मक अध्ययन, व्यक्तित्व विकास का मनोविष्लेषणात्मक उपागाम तथा व्यवहार को समझने में अंतर्दृष्टि।

अगर ध्यानपूर्वक देखा जाए तो डोलार्ड तथा मिलर का व्यक्तित्व सिद्धान्त हल-स्पेन्स उपागम पर आधारित हैं जिसका संबंध व्यवहार की उत्पत्ति में अभिप्रेरण के महत्व को दिखलाना एवं उन तरीकों को बतलाना है जिससे सीखे गये अभिप्रेरक का विकास व्यक्तियों में होता है। इसीलिए इस सिद्धान्त को व्यक्तित्व का उद्धीपक-अनुक्रिया सिद्धान्त भी कहते हैं।

डोलार्ड तथा मिलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त में उद्धीपक तथा अनुक्रिया के बीच में सीखे गए साहचर्य पर अधिक बल डाला गया है और इसी के सहारे कई महत्वपूर्ण संप्रत्ययों की व्याख्या की गयी है। इस सिद्धान्त के प्रमुख संप्रत्यय इस प्रकार हैं-

1. सीखने के मूल-तत्व
2. उच्चतर मानसिक प्रक्रियाएँ
3. अनुकरण
4. भय एवं चिन्ता
5. संघर्ष
6. दमन एवं अचेतन
7. व्यक्तित्व का असामान्य विकास
8. मनोचिकित्सा

इन संप्रत्ययों तथा उनके महत्व का वर्णन निम्नांकित हैं-

8.3.1 सीखने के मूल-तत्व

डोलार्ड तथा मिलर (1950) का मत है कि अधिकतर मानव व्यवहार अर्जित होते हैं। इनका कहना है कि सीखने की परिस्थितियाँ चाहे कितनी भी असमान क्यों न हों, किसी भी व्यवहार को सीखने में चार मूल-तत्व सम्मिलित होते हैं। इन्हीं चारों तत्वों के आधार पर साधारण सीखना या जटिल सीखना की व्याख्या की जा सकती है। इनके चार मूल तत्व निम्नलिखित हैं-

1. प्रणोद

2. संकेत

3. अनुक्रिया

4. पुनर्बलन

इन चारों के महत्व को दिखलाने के लिए उन्होंने एक प्रयोग किया है जिसका वर्णन यहाँ अपेक्षित है। यह प्रयोग एक 6 साल की लड़की पर किया गया। इस प्रयोग में एक कमरा में रखे आलमारी के सबसे नीचे वाले खाने में रखे कई किताबों में से बीच के एक किताब में उस लड़की की मनपसंद मीठा टॉफी छिपा कर रख दिया गया है। कमरे में लड़की को, जो कुछ घंटों से भूखी थी, बुलाकर यह कहा गया कि आलमारी के एक किताब में मीठी टॉफी छुपाकर रखी गयी है। वह उसे ढूँढ निकाले। यह भी कहा गया कि

इस खोज के सिलसिले में वह एक-एक करके जिन किताबों को हटाये, उसे वह अलग रखते जाय। परिणाम में देखा गया कि प्रयोग के प्रथम चरण में लड़की ने कई तरह के यादृच्छिक व्यवहार, जैसे-ऊपरी खाने के किताबों को ढूँढना, आलमारी में रखे मैगजीन एवं टेबुल पर रखे किताबों को उलटना पुलटना आदि, किया। अन्त में करीब 210 सेकंड लगाकर एवं 36 गलत किताबों को प्रतिस्थापित करने के बाद वह मीठी टॉफी ढूँढ निकालने में समर्थ हो गयी। पुरस्कार के रूप में लड़की को टॉफी खाने दिया गया। दूसरी बारी में दूसरी मीठी टॉफी उसी किताब में छिपाकर रखा गया। लड़की को कमरे में बुलाकर पहले की तरह ही निर्देश दिये गये और वह टॉफी खोजना प्रारंभ कर दी। इस बार वह सीधे निचले खाने में खोजना प्रारंभ कर दी और करीब 12 किताबों को प्रतिस्थापन करने के बाद तथा मात्र 86 सेकंड में वह टॉफी खोज निकालने में समर्थ हुई। यह प्रयोग 10 प्रयासों तक चला और 10 वें प्रयास के अन्त में लड़की ने टॉफी खोजने में कोई भी त्रुटि नहीं की तथा इस प्रयास में वह मात्र 2 सेकेंड का समय ली।

इस प्रयोग के माध्यम से उन्होंने उपर्युक्त चारों संप्रत्ययों के महत्व का वर्णन किया है जो निम्नलिखित है-

1. अन्तोंद या प्रणोद-

प्रणोद से तात्पर्य किसी भी ऐसी शक्तिशाली उद्धीपक से होता है जो प्राणी को क्रिया करने के लिए तो प्ररित करता है परन्तु उस क्रिया के स्वरूप का निर्धारण नहीं करता है। प्रणोद की शक्ति उद्धीपक की शक्ति, जिससे प्रणोदन उत्पन्न होता है, पर निर्भर करता है। जितना ही प्रणोद मजबूत होगा, उससे प्राणी में उतना सतत व्यवहार उत्पन्न होता है। उपर्युक्त प्रयोग में भूख लड़की में एक प्रणोद का उदाहरण है जो सचमुच में एक तरह का जन्मजात प्रणोद है। इसके अलावा कुछ प्रणोद जन्मजात न होकर अर्जित होते हैं। ऐसे प्रणोद को व्यक्ति अपने जीवनकाल में सीखता है। जैसे, रूपया-पैसा प्रारंभ में शिशु के लिये न तो धनात्मक होता है और न ही ऋणात्मक होता है। परन्तु धीरे-धीरे वह उसके प्रति धनात्मक महत्व देना सीख लेता है।

2. संकेत-

संकेत से डोलार्ड एवं मिलर का तात्पर्य वैसे उद्धीपक से है, जो यह बतलाता है कि कब, कहाँ तथा कैसे प्राणी द्वारा अनुक्रियाएँ की जाती हैं। संकेत तीव्रता एवं प्रकार के दृष्टि से भिन्न होता है। जैसे, प्रकार की दृष्टि से संकेत श्रव्य तथा चाक्षुष मुख्य दो तरह के होते हैं तथा तीव्रता के दृष्टिकोण से संकेत कमजोर या तीव्र कुछ भी हो सकता है। उपर्युक्त उदाहरण में लड़की श्रव्य संकेत के आधार पर अर्थात् प्रयोगकर्ता से मिले शाब्दिक निर्देश के आधार पर अनुक्रिया अर्थात् टॉफी खोजने की अनुक्रिया कर रही थी। इसके अलावा चाक्षुष संकेत जैसे आलमारी के एक खाने से दूसरे खाने में अन्तर करना, किताबों के बीच अन्तर करना आदि के आधार पर भी अनुक्रिया कर रही थी।

3. अनुक्रिया-

डोलार्ड तथा मिलर (1950) के अनुसार अनुक्रिया से तात्पर्य प्राणी द्वारा प्रणोद तथा संकेत के प्रतिक्रिया के रूप में होने वाला व्यवहार से होता है। उपर्युक्त उदाहरण में लड़की द्वारा उस उपयुक्त एवं सही किताब को उठाना जिसमें टॉफी छिपायी गयी थी, एक अनुक्रिया का उदाहरण है। किसी भी दी हुई परिस्थिति में

कुछ अनुक्रियाएँ की होने की संभावनाएँ अन्य अनुक्रियाओं की तुलना में अधिक होती है। अनुक्रिया के होने के इस मौलिक क्रम को अनुक्रिया का प्रारंभिक पदानुक्रम कहा जाता है। इससे फिर अनुक्रिया के होने की संभावना में भी परिवर्तन हो जाता है। इसे अनुक्रिया का परिणामी पदानुक्रम कहा जाता है। जैसे, उपर्युक्त उदाहरण में लड़की द्वारा प्रारंभ में कई किताबों में टॉफी का खोजा जाना, कई तरह से संबंधित प्रश्नों को करना तथा अन्य कई संबंधित व्यवहारों को करना आदि अधिक की जाती थीं परन्तु बाद के प्रयासों में ऐसी गलत अनुक्रियाएँ कम की जाती थीं तथा सही अनुक्रिया के होने की संभावना अधिक होती थी।

4. पुनर्बलन-

पुनर्बलन से डोलार्ड तथा मिलर का तात्पर्य एक ऐसी घटना से था जो संकेत तथा अनुक्रिया के बीच के संबंध को मजबूत करके भविष्य में अनुक्रिया के होने की संभावना को बढ़ाता है। इन लोगों के अनुसार किसी अनुक्रिया को सीखने के लिए पुनर्बलन या पुरस्कार का होना अनिवार्य है। इन लोगों ने पुनर्बलन को प्रणोद में कमी के रूप में परिभाषित किया है और कहा है कि जब कोई घटना से प्राणी के प्रणोद जैसे- भूख, प्यास आदि में कमी हो जाती है तो इसके बाद होने वाली अनुक्रिया पुनर्बलित हो जाती है और बाद में फिर उसी अनुक्रिया को व्यक्ति दोहराना चाहता है। उपर्युक्त उदाहरण में लड़की द्वारा उपयुक्त अनुक्रिया के बाद टाफी प्राप्त कर लेना एक पुनर्बलन का उदाहरण है। टॉफी खा लेने से लड़की की भूख अर्थात् प्रणोद में कमी आ जाती है जिसके परिणामस्वरूप टॉफी खोजने की अनुक्रिया पुनर्बलित हो जाती है। यही कारण है कि लड़की आगे के प्रयासों में इस अनुक्रिया को अधिक दृढ़ता के साथ दोहराती है।

डोलार्ड तथा मिलर (1959) ने अपने सिद्धान्त में सीखने के सिद्धान्त के कुछ अन्य संप्रत्ययों की भी व्याख्या की है जिनमें प्रमुख हैं-प्रयोगात्मक विलोपन, स्वतः पुनर्लाभ, सामान्यीकरण तथा विभेद।

1. प्रयोगात्मक विलोपन-

जब सीखी गयी अनुक्रिया धीरे-धीरे अपुनपुर्बलित होती जाती है, तो अन्त में एक ऐसी अवस्था आती है जहाँ प्राणी उस अनुक्रिया को करना पूर्णतः बन्द कर देता है। इसे ही प्रयोगात्मक विलोपन की संज्ञा दी जाती है। एक धूम्रपान करने वाला व्यक्ति जब यह अनुभव करने लगता है कि सिगरेट पीने से उसे संतुष्टि नहीं हो रही है, तो वह धीरे-धीरे सिगरेट पीना कम कर दे सकता है और अन्त में वह सिगरेट पीना बन्द भी कर दे सकता है। कुछ अनुक्रियाएँ ऐसी होती हैं जिनकी विलोपन गति तीव्र होती है तथा कुछ ऐसी अनुक्रियाएँ होती हैं जिनकी विलोपन गति धीमी होती है। डोलार्ड तथा मिलर (1959) ने अपने शोधों के आधार पर यह स्पष्ट किया है कि अन्य बातों के अलावा विलोपन गति इस कारक या तथ्य से प्रभावित होती है कि वह आदत जिसका विलोपन होता है, कितनी मजबूत होती है। आदत जितनी ही मजबूत होगी, उसके विलोपन की गति उतनी ही धीमी होगी।

2. स्वतः पुर्नलाभ-

जब कोई विलोपित अनुक्रिया अचानक बिना किसी पुनर्बलन के ही पुनः प्राणी द्वारा की जाती है तो उसे स्वतः पुनर्लाभ कहा जाता है। जैसे, यदि कुछ दिनों या महीनों तक धूम्रपान बन्द कर देने के बाद प्राणी भयानक धूम्रपान करना प्रारंभ कर देता है, तो वह स्वतः पुनर्लाभ का उदाहरण होगा। विलोपन तथा स्वतः पुनर्लाभ दोनों से ही व्यक्ति में अनुकूली व्यवहार विकसित होते हैं। चूँकि अपुनर्बलित अनुक्रियाएँ धीरे-धीरे विलोपित हो जाती हैं, व्यक्ति उसके जगह पर पहले से अधिक संतुष्टि प्रदान करने वाली क्रिया को सीखकर अपने व्यवहार को अधिक अनुकूली बनाता है।

3. सामान्यीकरण-

एक सीखी गयी अनुक्रिया का प्रभाव दूसरी अनुक्रिया पर होना ही सामान्यीकरण कहलाता है। दो परिस्थितियों में संकेतों का पैटर्न लगभग समान होता है, तो इससे सामान्यीकरण अधिक होता है। जैसे, कोई व्यक्ति यदि ब्राण्ड 'अ' सिगरेट पी लेता है तो वह ब्राण्ड 'ब' सिगरेट भी पीने में कोई हिचकिचाहट नहीं दिखलायेगा। डोलार्ड तथा मिलर ने यह बतलाया है कि जैसे-जैसे प्रणोद की शक्ति बढ़ती जाती है, सामान्यीकृत अनुक्रिया की शक्ति भी बढ़ती जाती है। जैसे, यदि कोई व्यक्ति ब्राण्ड 'अ' सिगरेट ही अधिक पीता है परन्तु कई हतों से किसी कारण से वह उसे नहीं पी पाया है, तो वह एक ऐसा सिगरेट भी पीने के लिए तैयार हो जाएगा जिसकी महक एवं कष उसे बिल्कुल ही पसंद नहीं है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि उसमें कई हतों से सिगरेट नहीं पीने से प्रणोद में वृद्धि हो गयी थी।

4. विभेद-

विभिन्न संकेत के पैटर्नो में अन्तर के प्रत्यक्षण को ही विभेदन कहा जाता है। जब एक संकेत पैटर्न के प्रति की गयी अनुक्रिया पुरस्कृत होती है परन्तु दूसरा संकेत पैटर्न के प्रति की गयी अनुक्रिया पुरस्कृत नहीं होती है तो इससे विभेद की उत्पत्ति होती है और व्यक्ति दो संकेत पैटर्न के बीच विभेदन करना सीख लेता है। विभेदन का आधार प्रायः संकेत का रंग, आकार, प्रकार, समय, जगह आदि होता है। डोलार्ड तथा मिलर (1950) के अनुसार व्यक्तित्व में जो अन्तर देखने को मिलता है, उसका आंशिक कारण व्यक्ति के विभेदन करने की परिवर्ती क्षमताएँ तथा समान अनुक्रियाओं के पुनर्बलन एवं अपुनर्बलन से उत्पन्न होने वाली विभिन्न अनुभूतियाँ होती हैं।

8.3.2 उच्चतर मानसिक प्रक्रियाएँ-

डोलार्ड तथा मिलर (1959) का मत है कि वातावरण के साथ व्यक्ति की अन्तःक्रियाएं दो तरह की होती है। पहले प्रकार की अन्तःक्रियाएँ वे हैं जिनका प्रभाव वातावरण पर तुरंत पड़ता है और ऐसे अन्तःक्रिया में प्रायः एक ही संकेत होते हैं। जैसे, चलते साइकिल के सामने किसी व्यक्ति के आ जाने पर अचानक साइकिल को रोक देना एक ऐसी ही अन्तःक्रिया के उदाहरण हैं। दूसरे तरह की अन्तःक्रियाओं को संकेत उत्पन्न अनुक्रिया कहा जाता है जिसमें व्यक्ति के मन में एक संकेत से ही कई तरह की अनुक्रियाएँ एक-एक करके उत्पन्न होने लगती हैं। ऐसी अन्तःक्रियाओं में कई तरह की आन्तरिक घटनाएँ जिसे चिन्ता कहा जाता है, सम्मिलित होती है। जैसे, जनरल ओर देखकर मन में यह याद आ जाना कि दंतमंजन लेना

है, और फिर यह देखना कि पॉकेट में पर्याप्त रूपया है या नहीं, संकेत उत्पन्न अनुक्रिया के उदाहरण हैं। संकेत उत्पन्न व्यवहार स्पष्ट एवं अस्पष्ट कुछ भी हो सकता है। संकेत उत्पन्न व्यवहार द्वारा कई तरह के कार्य किये जाते हैं जिनमें सामान्यीकरण तथा विभेदीकरण प्रधान है। डोलार्ड तथा मिलर के अनुसार, बोली गयी भाषा, चिन्तन, लिखित भाषा तथा भावभंगिमा सभी संकेत उत्पन्न अनुक्रिया के उदाहरण हैं। बहुत-सी ऐसी अनुक्रियाओं से दूसरों के साथ संचार स्थापित करने में मदद मिलती है।

तर्कणा एक दूसरा प्रमुख उच्चतर मानसिक प्रक्रिया है जिस पर डोलार्ड तथा मिलर ने बल डाला है। तर्कणा को प्रयत्न एवं भूल की अपेक्षा समस्या समाधान की एक अधिक उपयुक्त विधि समझा गया है। तर्कणा द्वारा व्यक्ति उपयुक्त अनुक्रियाओं को चुनने में सफल हो जाता है जिससे समाधान में तीव्रता आ जाती है। इससे भविष्य में किए जाने वाले कार्यों को योजना बनाने में मदद मिलती है। चूँकि तर्कणा में संकेत उत्पन्न अनुक्रियाओं का प्रयोग होता है, इसलिए कई प्रयत्न एवं भूल वाले कदम अपने-आप समाप्त हो जाते हैं और कुछ पूर्व पुनर्बलित अनुक्रियाएँ एक क्रम में आगे आने लगती है। कुछ तर्कणा में व्यक्ति लक्ष्य से ही प्रारंभ कर पीछे की ओर तब तक जाता है जब तक कि वह सही अनुक्रिया नहीं कर लेता है। कई समस्याओं का समाधान व्यक्ति इस दूसरे तरह की तर्कणा के आधार पर भी करता है।

8.3.3 अनुकरण-

डोलार्ड तथा मिलर (1950) ने प्रारंभ में अनुकरण को एक सीखा गया व्यवहार माना था। परन्तु बाद में उन्होंने इसे एक जन्मजात प्रवृत्ति माना है जो सीखना या प्रशिक्षण द्वारा परिवर्तित होती है। उन्होंने अनुकरण के तीन प्रकार बतलाये हैं-समान व्यवहार, नकल उतारने वाला व्यवहार तथा समेल आधारित व्यवहार।

1. समान व्यवहार-

समान व्यवहार दूसरों को देखकर या बिना देखे हुए ही सीखा जाता है। जब किसी संकेत के प्रति प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र होकर एक समान व्यवहार करता है, तो इसे ही डोलार्ड एवं मिलर ने समान व्यवहार की संज्ञा दी है। घंटी की आवाज सुनकर वर्ग से बच्चों का निकलना एक समान व्यवहार का उदाहरण है।

2. नकल उतारने वाला व्यवहार-

जब कोई व्यक्ति सचेत होकर किसी खास उदेश्य से दूसरे के व्यवहार के समान अपना व्यवहार बनाने की कोषिष करता है, तो उसे नकल उतारने वाला व्यवहार कहा जाता है। इस तरह का व्यवहार समान व्यवहार से इस अर्थ में भिन्न होता है कि इसमें व्यक्ति में सचेतता एवं एक उद्देश्य होता है जबकि समान व्यवहार करने में व्यक्ति में कोई ऐसा निष्चित प्रयोजन नहीं होता है। नकल उतारने वाला व्यवहार करने में व्यक्ति अपने व्यवहार तथा दूसरे व्यक्ति के व्यवहार में जो अन्तर देखता है, उसे कम करने का भरसक प्रयास करता है।

3. समेल-आधारित व्यवहार-

समेल आधारित व्यवहार तीसरे तरह का अनुकरण है जिसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के व्यवहारों को संकेत मानकर उसका अनुकरण करता है। यहाँ वह अपने व्यवहार तथा दूसरों के व्यवहार की समानताओं एवं विभिन्नताओं पर अधिक ध्यान नहीं देता है। नकल उतारने वाला व्यवहार तथा समेल आधारित व्यवहार में अन्तर यह है कि नकल उतारने वाला व्यवहार में नकल उतारने वाला व्यक्ति तथा जिसके व्यवहारों का नकल उतारने वह जा रहा है, में सामाजिक समानता होती है अर्थात, वे दोनों ही सामाजिक रूप से लगभग समान होते है जबकि समेल आधारित व्यवहार में ऐसे दोनों व्यक्तियों में सामाजिक असमानता पायी जाती है। इस तरह के व्यवहार में एक व्यक्ति जिसके व्यवहारों को संकेत मानकर अनुकरण किया जाता है पहले व्यक्ति से अधिक योग्य कुशल एवं अनुभवी होते हैं। छोटे भाई द्वारा बड़े भाई के व्यवहारों को संकेत मानकर अनुकरण करना समेल आधारित व्यवहार का उदाहरण है।

8.3.4 भय एवं चिन्ता-

डोलार्ड तथा मिलर के अनुसार भय एवं चिन्ता मानव व्यवहार के दो ऐसे शक्तिषाली प्रेरणात्मक बल है जिसे व्यक्ति सीखता है।इन मनोवैज्ञानिकों का मत है कि भय एवं चिन्ता प्रणोद, संकेत, अनुक्रिया एवं पुनर्बलन के रूप में कार्य करके व्यक्ति को कुछ सीखने की प्रेरणा देता है। भय से तात्पर्य किसी बाह्य या भीतरी, वास्तविक या काल्पनिक खतरों के प्रति एक आषंका से होता है जबकि चिन्ता से तात्पर्य एक ऐसे भय से होता है जिसका स्रोत अस्पष्ट होता है और दमन के कारण छिपा होता है। चिन्ता तथा भय के बीच का संबंध इतना अधिक घनिष्ठ है कि डोलार्ड तथा मिलर ने इसकी एक ही संप्रत्यय के रूप में व्याख्या की है जो निम्नांकित है-

1. प्रणोदन के रूप में भय-

डोलार्ड तथा मिलर ने भय एवं चिन्ता को प्रणोद कहा है। उससे नयी अनुक्रियाएँ करने के लिए व्यक्ति को प्रेरणा मिलती है। भय या डर के कारण हम घरों में या अन्य सुरक्षा प्रदान करने वाले स्थानों में छिप जाते हैं। भय या डर से हम सड़क पर कार या अन्य सवारी को सतर्कता से चलाते हैं। इसी ढंग से चिन्ता के कारण हम अध्ययन में अधिक मन लगाते हैं या कभी-कभी नख को दाँत से काटने लगते हैं। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि भय तथा चिन्ता प्रणोद के रूप में कार्य करके हमें कुछ व्यवहार करने के लिए प्रेरित करते हैं।

2. अनुक्रिया के रूप में भय-

भय तथा चिन्ता व्यक्ति की आन्तरिक अनुक्रिया हैं जो बाह्य अनुक्रियाओं के समान सीखे जाते हैं तथा वे विलोपित होते हैं एवं उनका स्वतः पुनर्लाभ भी होता है। यद्यपि भय तथा चिन्ता आन्तरिक अनुक्रियाएँ हैं, वे कई तरह की बाह्य अनुक्रिया पैदा करती हैं। भय प्रायः भाग जाने की अनुक्रिया उत्पन्न करता है जबकि चिन्ता प्रायः रक्षात्मक प्रक्रमों की उत्पत्ति करती है।

3. संकेत के रूप में भय-

भय का संकेत मूल्य भी होता है क्योंकि यह एक उद्धीपक होता है जो अन्य उद्धीपकों से भिन्न होता है। संकेत के रूप में भय अधिक तीव्र मात्रा में हो सकता है या कम तीव्र मात्रा में हो सकता है। व्यक्ति कुछ आन्तरिक संकेतों को 'भय' की संज्ञा देकर उसके प्रति अनुक्रिया करना सीख लेता है।

4. पुनर्बलन के रूप में संकेत-

भय एवं चिन्ता अपने आप में पुनर्बलन या पुरस्कार नहीं है परन्तु उसमें कमी का होना एक पुनर्बलन है। एक बालक बड़ा कुत्ता देखकर डर जाता है और भाग जाता है। यहाँ भाग जाना अपने आप में पुनर्बलन नहीं है परन्तु इससे प्रणोद में कमी उत्पन्न होती है जो एक पुनर्बलन कारक के रूप में कार्य करता है।

8.3.5 संघर्ष-

डोलार्ड तथा मिलर (1959) का मत है कि जब दो समान परन्तु अमेल अनुक्रियाएँ करने के लिए व्यक्ति एक ही समय में बाध्य हो जाता है, तो इससे उसमें संघर्ष उत्पन्न होता है। जब व्यक्ति इस संघर्ष की स्थिति में होता है, तो उसमें तनाव, चिन्ता, दुविधा आदि पाये जाते हैं। डोलार्ड तथा मिलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त में संघर्ष पर गंभीर रूप से एवं गहन रूप से शोध किया गया है और इसके लिए इनके सिद्धान्त की ख्याति काफी है। अपने शोधों के आधार पर इन्होंने चार तरह के संघर्ष का वर्णन किया है तथा कुछ महत्वपूर्ण पूर्वकल्पनाओं का भी वर्णन किया है। संघर्ष प्रकारों का वर्णन करने के पहले यह आवश्यक है कि उन पूर्वकल्पनाओं पर एक नजर डाली जाय। ऐसी पूर्वकल्पानाएँ निम्नांकित चार हैं-

1. डोलार्ड तथा मिलर (1950) की एक महत्वपूर्ण पूर्वकल्पना यह थी कि जब व्यक्ति लक्ष्य के नजदीक आ जाता है, तो व्यक्ति में लक्ष्य पर पहुँचने की प्रवृत्ति हो जाती है। इसे इन लोगों ने उपागम की क्रमिकता की संज्ञा दी है।

2. जब व्यक्ति किसी उद्धीपक के नजदीक पहुँच जाता है, तो उससे दूर होने की प्रवृत्ति उसमें मजबूत हो जाती है। इसे डोलार्ड तथा मिलर ने परिहार की क्रमिकता की संज्ञा दी है।

3. जब एक ही लक्ष्य का धनात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही मूल्य होते हैं, तो व्यक्ति जैसे-जैसे ऐसे लक्ष्य के करीब आता है, उसमें परिहार की शक्ति उपागम की शक्ति से अधिक मजबूत होती है।

4. जब व्यक्ति में प्रणोद की मात्रा अधिक होती है, तो उसमें धनात्मक मूल्य के लक्ष्य पर पहुँचने की प्रवृत्ति तथा ऋणात्मक मूल्य के लक्ष्य से दूर रहने की प्रवृत्ति अधिक मजबूत होती है।

डोलार्ड तथा मिलर (1950) ने निम्नांकित चार तरह के संघर्ष के प्रकार वर्णन किया-

1. उपागम-उपागम संघर्ष
2. परिहार-परिहार संघर्ष
3. उपागम-परिहार संघर्ष

4. द्विउपागम-परिहार संघर्ष

1. उपागम-उपागम संघर्ष-

जब व्यक्ति के सामने दो धनात्मक लक्ष्य होते हैं जो समान रूप से महत्वपूर्ण एवं आकर्षक होते हैं तथा जब व्यक्ति इन दोनों की प्राप्ति एक ही समय में कर लेना चाहता है तो इससे उत्पन्न मानसिक संघर्ष को उपागम-उपागम संघर्ष कहा जाता है। जैसे, यदि कोई व्यक्ति एक ही समय में अपने दोस्त के बारात में शामिल होना चाहता है तथा साथ-ही-साथ उसी समय अपने बीमार पिता के पास भी जाना चाहता है, तो इससे जो संघर्ष उसके मन में उत्पन्न होगा, वह उपागम-उपागम संघर्ष होगा।

2. परिहार-परिहार संघर्ष -

इस तरह के संघर्ष में व्यक्ति दो ऋणात्मक लक्ष्यों के बीच घिर जाता है और इन दोनों से छुटकारा पाना चाहता है क्योकि इनमें से किसी भी एक की पूर्ति उसके लिए हानिकारक होती है। परन्तु यदि उसे बाध्य होकर किसी एक लक्ष्य के पक्ष में निर्णय लेना पड़ा तो वह मानसिक संघर्ष से गुजरने लगता है। उसकी स्थिति 'इधर गढ्डा उधर खाई' वाली हो जाती है।

3. उपागम-परिहार संघर्ष-

इस तरह के संघर्ष में व्यक्ति के सामने लक्ष्य तो एक ही होता है परन्तु उसके प्रति परस्पर विरोधी भाव उसमें उत्पन्न हो जाते हैं। इस लक्ष्य पर वह पहुँचना भी चाहता है तथा साथ-ही-साथ उससे दूर भी रहना चाहता है। इस तरह का संघर्ष अन्य संघर्षो की अपेक्षा अधिक घातक होता है।

4. **द्विउपागम-परिहार संघर्ष-**

इस तरह के संघर्ष में दो या कभी-कभी दो से अधिक भी, धनात्मक लक्ष्य व्यक्ति को एक साथ अपनी-अपनी ओर खींचने लगते हैं। जीवन की अधिकांश परिस्थितियाँ इसी प्रकार की होती हैं जिसमें व्यक्ति को कई धनात्मक एवं ऋणात्मक लक्ष्यों का सामना एक साथ करना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में उत्पन्न संघर्ष को द्विउपागम-परिहार संघर्ष या बहु-उपागम परिहार संघर्ष कहा जाता है।

8.3.6 दमन एवं अचेतन-

वैसे प्रणोद, संकेत तथा अनुक्रियाएँ जिससे कभी भी व्यक्ति अवगत नहीं हो पाया है या जिसकी संज्ञा नहीं दे पाया है, अचेतन में चला जाता है। फ्रायड के समान ही डोलार्ड तथा मिलर 1950 का मत है कि लैंगिक एवं आक्रामक अनुक्रियाएँ व्यक्ति के अचेतन में रहती हैं। दमन से तात्पर्य उन विचारों से होता है जो व्यक्ति के शाब्दिक नियंत्रण में नहीं होता है। दूसरे शब्दों में, ऐसे विचारों के लिए व्यक्ति कोई पर्याप्त शाब्दिक लेबल नहीं दे पाता है। चूँकि दमन प्राक्षाब्दिक तथा स्वचालित होता है, अतः व्यक्ति चाहकर भी दमन को रोक नहीं पाता है। डोलार्ड तथा मिलर के अनुसार दमन की प्रक्रिया इसलिए होती है क्योंकि जब व्यक्ति कुछ खास-खास अनुभूतियों के बारे में सोचना बन्द कर देता है, तो वह अपने आप में पुरस्कृत हो जाता है।

चूँकि दमन में व्यक्ति कुछ खास-खास विचारों के बारे में चिन्ता करना बन्द कर देता है, अतः व्यक्ति इन विचारों को उत्पन्न करने वाले संकेतों के बीच के संबंधों को ठीक ढंग से प्रत्यक्षण नहीं कर पाता है। दमन की मात्रा साधारण से पूर्ण स्मृति-लोप तक की हो सकती है। चूँकि दमन व्यक्ति को अपने चिन्तन एवं भावों को शब्दों के रूप में अभिव्यक्त करने से रोकता है तथा वह फिर अपनी समस्याओं के बारे में तर्कसंगत ढंग से सोचना असंभव कर देता हैद्व इससे जो व्यवहार उत्पन्न होता है, उसे डोलार्ड एवं मिलर ने मूढ़ व्यवहार कहा है।

8.3.7 व्यक्तित्व का असामान्य विकास-

डोलार्ड तथा मिलर (1959) का मत है कि व्यक्तित्व का असामान्य व्यवहार संघर्ष, दमन तथा पुनर्बलन आदि के परिणामस्वरूप विकसित होता है। अधिकतर असामान्य व्यवहारों को बचपनावस्था में सीखा जाता है और इसे माता-पिता तथा अन्य सामाजिक एजेण्टों द्धारा उद्देश्य रहित रूप से सिखलाये जाते हैं। इनका कहना है कि तीव्र भय से व्यक्ति प्रायः असामान्य व्यवहार को विकसित कर लेता है। भय की स्थिति में व्यक्ति के मन में संघर्ष उत्पन्न होता है। संघर्ष से व्यक्ति अपने लक्ष्य पर नहीं पहुँच पाता है और इससे प्रणोद में कमी नहीं आती है और व्यक्ति उच्च प्रणोद की स्थिति में सतत बना होता है। इससे उसमें तनाव एवं चिड़चिड़ापन उत्पन्न होता है जिसे डोलार्ड तथा मिलर (1959) ने विशेष संज्ञा अर्थात् दुर्दशा कहा है। दुर्दषा से घिरे हुए व्यक्ति में कई तरह के असामान्य लक्षण जैसे अनिद्रा, दुर्भीति, बेचैनी, भावषून्यता आदि प्रधान रूप से देखे जाते हैं। संघर्ष से व्यक्ति में अवरोध उत्पन्न होता है अर्थात् विचारों एवं चिन्तन का अवरोध उत्पन्न होता है जिससे दमन उत्पन्न होता है। दमन से व्यक्ति में विवकी एवं अविवेकी क्रियाओं के बीच अन्तर करने की क्षमता समाप्त हो जाती है और इस तरह की स्थिति को डोलार्ड तथा मिलर ने मूढ़ता की संज्ञा दी है। ऐसे मूढ़ व्यक्ति आत्म-दोषयुक्त ढंग से व्यवहार करते हैं जिससे व्यक्ति में असामान्यता उत्पन्न हो जाती है।

8.3.8 मनोचिकित्सा-

डोलार्ड तथा मिलर (1950) यह मानते हैं कि असामान्य व्यवहार सीखा हुआ व्यवहार होता है और मनोचिकित्सा में व्यक्ति को नये ढंग से समायोजन करने की क्षमता को सिखलाया जाता है। इन लोगों ने मनोचिकित्सा में फ्रायड द्वारा प्रतिपादित प्रविधियों जैसे स्पप्न विष्लेषण, स्वतंत्र साहचर्य तथा हस्तान्तरण आदि को महत्वपूर्ण बतलाया है तथा साथ-ही-साथ सामान्यीकरण, विभेदीकरण तथा विलोपन को उपयोगी बतलाया है। इन प्रक्रियाओं के माध्यम से रोगी को उच्चतर मानसिक प्रक्रियाओं का प्रयोग अधिक-से-अधिक करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। जब रोगी सही-सही ढंग से विवकी एवं अविवेकी क्रियाओं में अन्तर करना सीख लेता है, तो उससे दमन एवं स्पष्ट अवरोध अपने आप समाप्त हो जाते हैं और उसमें दूरदर्षिता, वास्तविक प्रत्याषाएँ, अनुकूली योजना एवं सूझ-बूझ आदि काफी बढ़ जाते है।

8.4 डोलार्ड तथा मिलर सिद्धान्त का मूल्यांकन-

डोलार्ड तथा मिलर द्वारा प्रतिपादित उद्धीपक अनुक्रिया सिद्धान्त का मूल्यांकन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इस सिद्धान्त के कुछ गुण एवं परिसीमाएँ हैं। इसके प्रमुख गुण निम्नांकित हैं-

1. डोलार्ड तथा मिलर द्वारा प्रतिपादित व्यक्ति के सिद्धान्त को वैण्डुरा के सामाजिक-सीखना सिद्धान्त की तुलना में अधिक विस्तृत माना जाता है। इस सिद्धान्त में व्यवहारवादी नियमों को मनोविश्लेषण तथा सामाजिक विज्ञानों से जोड़ने की कोशिश की गयी है। फलस्वरूप, इसमें व्यक्तित्व की एक विस्तृत एवं सामान्य व्याख्या प्रस्तुत की गयी है।

2. डोलार्ड एवं मिलर द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व का सिद्धान्त पहले ऐसा सिद्धान्त है जिसमें स्पष्ट एवं अस्पष्ट दोनों ही तरह के शाब्दिक व्यवहार पर संकेत तथा अनुक्रिया के रूप में बल डाला गया है। संकेत उत्पन्न अनुक्रिया के आधार पर व्यक्तित्व के उच्चतर मानसिक क्रियाओं की संतोषजनक व्याख्या हो पायी है।

3. इस सिद्धान्त के सभी प्रमुख संप्रत्यय स्पष्ट रूप से एवं वैज्ञानिक ढंग से परिभाषित है तथा आनुभाविक घटनाओं से वस्तुनिष्ठ रूप से संबंधित है। इससे इस सिद्धान्त की विश्वसनीयता एवं निर्भरता अधिक बढ़ जाती है।

4. इस सिद्धान्त की व्याख्या से स्पष्ट है कि इसमें एक ठोस एवं प्रत्यक्षवादी उपागम पर अधिक बल डाला गया है तथा आत्मनिष्ठ संप्रत्यय जैसे अन्तर्ज्ञान आदि का सहारा व्यक्तित्व की व्याख्या में नहीं की गयी है।

5. डोलार्ड एवं मिलर का सिद्धान्त विशिष्ट रूप से एवं सावधानीपूर्वक सीखने की प्रक्रिया का विश्लेषण करता है तथा उस पर व्यक्तित्व की व्याख्या को आधारित किया गया है। फलस्वरूप, इस क्षेत्र में अन्य सिद्धान्तों के लिए यह सिद्धान्त एक मॉडल के रूप में कार्य करता है।

6. इस सिद्धान्त में व्यक्तित्व की व्याख्या करने में सामाजिक सांस्कृतिक चरों का खुलकर प्रयोग किया गया है। फलस्वरूप, इस सिद्धान्त को सांस्कृतिक मानवषास्त्रियों द्वारा भी अधिक प्रयोग में लाया गया है।

इन गुणों के बावजूद व्यक्तित्व के इस सिद्धान्त के कुछ परिसीमाएँ हैं जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं-

1. डोलार्ड एवं मिलर द्वारा प्रतिपादित उद्धीपक-अनुक्रिया सिद्धान्त की सबसे जबर्दस्त आलोचना यह है कि इस सिद्धान्त में न तो उद्धीपक और न ही अनुक्रिया को ही विषिष्ट रूप से समझने की कोषिष की गयी है। दूसरे शब्दों में, इस सिद्धान्त में मानव व्यवहार के उपयुक्त उद्धीपकों को तथा उन अनुक्रियाओं जिससे व्यवहार की उत्पत्ति होती है, को वस्तुनिष्ठ रूप से नहीं परिभाषित नहीं किया गया है। आलोचकों ने व्यंग्यात्मक टिप्पणी करते हुए कहा है कि इस सिद्धान्त में उद्धीपक एवं

अनुक्रिया के संबंध के बारे में अधिक कहा गया है जबकि स्वयं उद्धीपक तथा अनुक्रिया के बारे में कोई खास बात नहीं कही गयी है।

2. इस सिद्धान्त की एक अन्य आलोचना यह है कि यह अत्यन्त सरल सिद्धान्त है जिसमें मान व्यवहारों को छोटी-छोटी इकाइयों में बाँट कर अध्ययन करने पर बल डाला गया है। पूर्णतावादी सिद्धान्तवादियों का मत है कि प्राणी को जब तक कार्यात्मक रूप से एक सम्पूर्ण प्राणी के रूप में नहीं समझा जाता है, उनके व्यवहारों को समझना एवं उसके बारे में पूर्वकथन करना संभव नहीं है।

3. उद्धीपक-अनुक्रिया सिद्धान्त की आलोचना इसलिए भी की गयी है क्योंकि इसमें व्यक्तित्व की व्याख्या करने में भाषा एवं चिन्तन प्रक्रियाओं के महत्व की उपेक्षा की गयी है। दूसरे शब्दों में इस सिद्वान्त द्धारा इस तथ्य की व्याख्या नहीं होती है कि व्यक्ति जटिल संज्ञानात्मक कार्यो को किस प्रकार सम्पन्न कर पाता है।

4. कुछ आलोचकों का मत है कि मिलर तथा डोलार्ड द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धान्त की मूल प्राक्कल्पनाएँ पषुओं पर न कि मानव पर किये गए तथ्यों पर आधारित है। क्या पषुओं पर किये गए अध्ययनों के आधार पर मनुष्यों की उन विशेषताओं के बारे में समझा जा सकता है जो पषुओं की विशेषताओं से भिन्न होते हैं? इस प्रश्न का संतोषजनक उत्तर हमें अभी तक इस सिद्धान्त के आधार पर नहीं मिल पाया है।

इन आलोचनाओं के बावजूद मिलर तथा डोलार्ड द्वारा प्रतिपादित उद्धीपक अनुक्रिया सिद्धान्त को एक प्रमुख सिद्धान्त माना गया है क्योंकि यह वस्तुनिष्ठ एवं आनुभाविक शोधों पर आधारित है।

अभ्यास प्रश्न -

1. व्यक्तित्व के डोलार्ड एवं मिलर द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त में जॉन डोलार्ड थे-

क. एक मनोवैज्ञानिक ख. एक समाजशास्त्री

ग. एक इतिहासकार घ. इसमें से कोई नहीं

2. डोलार्ड एवं मिलर ने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में कितनी तरह के संघर्ष का वर्णन किया है।

क. दो ख. तीन

ग. चार घ. पाँच

8.5 सार संक्षेप

डोलार्ड एवं मिलर का व्यक्तित्व सिद्धान्त एक अधिगम सिद्धान्त है जिसमें निम्नलिखित तीन तत्वों का अनोखा संगम देखने को मिलता है-सीखने का प्रयोगात्मक अध्ययन, व्यक्तित्व विकास का मनोविष्लेषणात्मक उपागम तथा व्यवहार को समझने में अन्तर्दृष्टि।

इस सिद्धान्त के प्रमुख सम्प्रत्यय निम्नलिखित हैं-सीखने के मूलतत्व उच्चतर मानसिक क्रियाएं, अनुकरण, भय एवं चिन्ता, संघर्ष, दमन एवं अचेतन, व्यक्तित्व का असामान्य विकास तथा मनोचिकित्सा।

8.6 पारिभाषिक शब्दावली-

प्रणोदः एक ऐसा शक्तिषाली उद्धीपक जो व्यक्ति/प्राणी को क्रिया करने के लिए प्रेरित तो करता है, परन्तु उस क्रिया के स्वरूप का निर्धारण नहीं करता।

पुनर्बलनः एक ऐसी घटना जो संकेत या अनुक्रिया के बीच के सम्बन्ध को मजबूत करके भविष्य में अनुक्रिया के होने की संभावना को बढ़ाता है।

8.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख 2. ग

8.8 संदर्भ-ग्रन्थ सूची-

1. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान- अरूण कुमार सिंह/आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास।

2. सामान्य मनोविज्ञान- सिन्हा एवं मिश्रा, भारती भवन।

3. आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान- सुलैमान एवं खान, शुक्ला बुक डिपो, पटना-

4. Walter Mischel – Introduction to Personality.

5. Shaffer & Lazarus – Theories of Personality.

6. Eysenck – The scientific study of personality.

8.9 स्व-मूल्यांकन हेतु प्रश्न -

1. डोलार्ड एवं मिलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त की समीक्षा करें।

2. डोलार्ड एवं मिलर के व्यक्तित्व सिद्धान्त के प्रमुख संप्रत्यय कौन-कौन से हैं? सीखने के मूल तत्वों की व्याख्या करें।

3. डोलार्ड एवं मिलर के अनुसार व्यक्तित्व के लिए विभिन्न तरह के मानसिक संघर्ष की संगतता बतायें।

इकाई 9 फ्राइड एवं एरिक्सन का व्यक्तित्व सिद्धान्त

इकाई संरचना-

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 व्यक्तित्व के मनोगत्यात्मक सिद्धान्त का परिचय

9.4 फ्रायड का व्यक्तित्व सिद्धान्त

9.5 इरिक्सन का व्यक्तित्व सिद्धान्त

9.6 सार-संक्षेप

9.7 पारिभाषिक शब्दावली

9.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.9 संदर्भ-ग्रन्थ

9.10 निबन्धात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना-

पिछली इकाई में डोलार्ड एवं मिलर द्वारा वर्णित विभिन्न संप्रत्ययों पर प्रकाश डाला गया था तथा इन संप्रत्ययों के आलोक में व्यवहार के विभिन्न आयामों को समझने की कोशिश की गई।

आइए, अब प्रस्तुत इकाई में यह जानने का प्रयास करें कि व्यक्तित्व की व्याख्या हेतु जिन विभिन्न सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है उनमें से वैसे सिद्धान्त जो व्यक्तित्व की व्याख्या मनोगत्यात्मक दृष्टिकोण से करते है-क्या हैं तथा कौन-कौन से हैं? इस परिप्रेक्ष्य में आप फ्रायड, इरिक्सन, के व्यक्तित्व सिद्धान्त का विस्तृत अध्ययन कर सकेंगे एवं व्यक्तित्व के सम्बन्ध में मनोगत्यात्मक दृष्टिकोण को भली-भाँति समझ सकेंगे।

9.2 उद्देश्य-

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप-

1. व्यक्तित्व के गत्यात्मक सिद्धान्त पर चर्चा कर सकें।
2. फ्रायड के व्यक्तित्व सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या कर सकें।
3. इरिक्सन के व्यक्तित्व सिद्धान्त की तुलना फ्रायड एवं फ्रायडवादी सिद्धान्तों से कर सकें तथा

9.3 व्यक्तित्व के मनोगत्यात्मक सिद्धान्त का परिचय-

मनोगत्यात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत व्यक्तित्व के उन सिद्धान्तों को रखा गया है जो मानव व्यवहार की व्याख्या अचेतन प्रेरकों के संदर्भ में करते हैं तथा जिनका आधार मूलतः व्यक्ति के जैविक प्रणोद होते हैं। मनोगत्यात्मक सिद्धान्त मानव व्यवहार के घटित होने में बाल्यावस्था के अनुभवों की महत्वपूर्ण भूमिका का पक्षधर है और व्यवहार के पूर्व-निर्धार्यता में विश्वास रखता है। जहाँ एक ओर मनोगत्यात्मक उपागम के समर्थक व्यवहार की व्याख्या जन्मजात एवं जैविक मूल प्रवृत्ति के आधार पर करते हैं। वहीं बाल्यावस्था में पालन-पोषण की प्रणाली पर बल देकर अन्तःक्रियात्मक दृष्टिकोण के पक्षधर भी हैं।

मनोविज्ञान में व्यक्तित्व की व्याख्या हेतु मनोगत्यात्मक उपागम ने एक नया द्वार खोला, जो न केवल विभिन्न प्रकार के मानसिक रोगों को समझने में वैज्ञानिक अवधारणा को जन्म दिया बल्कि कला, साहित्य, विज्ञापन आदि के क्षेत्रों में भी नये-नये आयाम दिये।

9.4 फ्रायड का व्यक्तित्व सिद्धान्त-

फ्रायड के व्यक्तित्व सिद्धान्त का आधार मानसिक रोगियों से प्राप्त नैदानिक प्रदत्त है जिसे उन्होंने मूलतः उन्मादग्रस्त रोगियों के इलाज के क्रम में प्राप्त किया था और इसी के आधार पर मनोविज्ञान का एक स्वतंत्र स्कूल मनोविश्लेषणवाद सन् 1912 ई0 में स्थापित किया।

इसके दो रूपों का उल्लेख किया गया- एक सैद्धान्तिक पक्ष तथा दूसरा व्यावहारिक पक्ष। सैद्धान्तिक पक्ष के रूप में मनोविश्लेषण को व्यक्तित्व-सिद्धान्त माना गया और व्यावहारिक पक्ष के रूप में इसे मनोचिकित्सा-विधि माना गया। यहाँ मनोविश्लेषण का मूल्यांकन व्यक्तित्व-सिद्धांत के अर्थ में किया जायेगा। व्यक्तित्व के सम्बन्ध में मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त की मुख्य बातें निम्नलिखित हैं-

1. व्यक्तित्व-गतिकी -

फ्रायड ने व्यक्ति के व्यवहारों की व्याख्या कार्य-कारण सिद्धान्त के आलोक में करने का सफल प्रयास किया। उन्होंने सामान्य तथा असामान्य व्यवहारों की एक मानसिक शक्ति की कल्पना की, जिसे जीवन-इच्छा या कामवृत्ति की संज्ञा दी गयी। इस शक्ति या इच्छा को प्रधानतः लैंगिक माना गया। लैंगिकता से उनका तात्पर्य शरीर के दो अंगों के सम्पर्क से उत्पन्न आनन्द से था। उनका विश्वास था कि यह लैंगिकता बच्चों में भी जन्म के समय उपस्थित होती है। आरम्भ में बच्चों के होंठ तथा दाँत में रहती है और आयु-वृद्धि के साथ इसका स्थान बदलता रहता है।

मानव व्यवहारों के निर्धारक के रूप में फ्रायड ने कामवृत्ति को ही मौलिक स्रोत माना। लेकिन, बाद में उन्होंने

आक्रमणशील मूलप्रवृत्ति को स्वीकार किया और कामवृत्ति के अन्तर्गत जीवन-मूलप्रवृत्ति तथा मृत्यु-मूलप्रवृत्ति की कल्पना की। उन्होंने सभी प्रकार के रचनात्मक व्यवहारों का आधार जीवन-मूलप्रवृत्ति को और सभी प्रकार के ध्वंसात्मक व्यवहारों का आधार मृत्यु मूल प्रवृत्ति को माना। इन दोनों प्रकार की मूलप्रवृत्तियों का बहाव अन्दर की ओर भी होता है और बाहर की ओर भी। जब जीवन प्रवृत्ति का बहाव अन्दर की ओर होता है तो व्यक्ति अपने लिए रचनात्मक कार्य करता है और अपने आप से प्रेम करता है। अतः आत्म प्रेम का आधार जीवन-प्रवृत्ति का अन्तर्मुखी बहाव है। जब इस प्रवृत्ति का बहाव बाहर की ओर होता है तो व्यक्ति दूसरों के लिए रचनात्मक एवं लाभकारी कार्य करता है। इसी तरह, मृत्यु-प्रवृत्ति के अन्तर्मुखी होने पर व्यक्ति अपने आप से घृणा करने लगता है तथा अपने आपको पीड़ा पहुँचाने लगता है और जब यह प्रवृत्ति बहिर्मुखी होती है तो व्यक्ति दूसरों से घृणा करने लगता है तथा ध्वंसात्मक कार्य द्वारा दूसरों को नुकसान पहुँचाता है। इन दोनों मूलप्रवृत्तियों का अर्न्मुखी तथा बहिर्मुखी बहाव जिस सीमा तक संतुलित होता है, व्यक्ति का व्यक्तित्व उसी सीमा तक संगठित एवं संतुलित होता है।

2. व्यक्तित्व-संरचना-

फ्रायड ने व्यक्तित्व रचना के दो पक्षों की चर्चा की, जिन्हें आकारात्मक पक्ष तथा गत्यात्मक पक्ष कहते हैं। आकारात्मक पक्ष के अन्तर्गत मन के तीन स्तरों की चर्चा की गयी-चेतन मन, अर्धचेतन मन तथा अचेतन मन। चेतन मन का तात्पर्य मन के उस भाग से है जिसमें ऐसे विचार या इच्छायें रहती हैं, जिनका तात्कालिक ज्ञान व्यक्ति को रहता है। अर्धचेतन मन का तात्पर्य मन के उस भाग से है जिसमें ऐसे विचार या इच्छायें होती हैं, जिनका तात्कालिक ज्ञान तो व्यक्ति को नहीं रहता है, परन्तु साधारण प्रयास से उनका ज्ञान हो जाता है। अचेतन मन का तात्पर्य मन के उस भाग से है, जिसमें ऐसे विचार या इच्छायें रहती हैं, जिनका न तो तात्कालिक ज्ञान होता है और न मामूली कोशिश से उनका ज्ञान हो पाता है, बल्कि इसके

लिए सम्मोहन आदि मनोवैज्ञानिक प्रविधियों की आवश्यकता होती है। फ्रायड के अनुसार अचेतन मन व्यक्तिगत होता है और इसमें बचपन से लेकर वर्तमान तक की ऐसी इच्छायें दमित होती हैं, जिनकी संतुष्टि चेतन स्तर पर नहीं हो सकी हो। अचेतन इच्छायें एवं प्रेरणायें प्रधानतः लैंगिक होती है। फ्रायड का विचार है कि व्यक्ति के व्यवहारों के निर्धारण में अचेतन प्रेरणाओं का बहुत बड़ा हाथ होता है। उनके इसी विचार को मानसिक निर्धारण कहते हैं। अपनी इसी अभिधारणा के आधार पर उन्होंने दैनिक जीवन की भूल, स्वप्न आदि की व्याख्या प्रस्तुत की।

गत्यात्मक पक्ष के अन्तर्गत तीन गत्यात्मक शक्तियों अर्थात् ईड, ईगो तथा सुपर ईगो की चर्चा की गयी। व्यक्तित्व के उस गत्यात्मक भाग को ईड कहा गया जो जन्मजात, अचेतन, अतार्किक तथा अनैतिक होता है और सुख के नियम पर कार्यरत होता है। ईगो उस गत्यात्मक भाग को कहा गया जो अर्जित, तार्किक, विवेकशील तथा अवसरवादी होता है और यथार्थता के नियम पर कार्यरत होता है। सुपर ईगो व्यक्तित्व के उस गत्यात्मक भाग को कहा गया जो अर्जित, नैतिक तथा अलैंगिक होता है और नैतिक नियम पर कार्यरत होता है। ईड तथा सुपर ईगो के विरोधी स्वरूप के कारण चेतन तथा अचेतन स्तरों पर मानसिक संघर्ष उत्पन्न होते हैं और ईगो के कारण उनका समाधान होता है। सबल ईगो के कारण सामान्य व्यवहार तथा दुर्बल ईगो के कारण असामान्य व्यवहार या मानसिक विकृतियाँ उत्पन्न होती है। मानसिक संघर्षो के समाधान में कई प्रकार की मनोरचनाओं का हाथ है, जिनमें दमन, उदात्तीकरण, रूपान्तर, युक्ताभ्यास, प्रतिक्रिया-निर्माण, प्रक्षेपण आदि मुख्य हैं। इन मनोरचनाओं के सहारे ईगो मानसिक संघर्षो का समाधान करके व्यक्ति के मानसिक संतुलन को कायम रखता है। इसलिए, इन्हें रक्षात्मक मनोरचना भी कहते हैं।

3. व्यक्तित्व-विकास-

फ्रायड ने व्यक्तित्व विकास में कामवृत्ति के विकास पर बल दिया और इसकी पाँच अवस्थाओं का वर्णन किया जो निम्नलिखित हैं-

1. मौखिक अवस्था-

व्यक्तित्व विकास की इस पहली अवस्था में कामवृत्ति बच्चे के होंठ तथा दाँत में रहती है। दूध पीने की अवस्था में यह होंठ में रहती है और दूध पीते समय माता के स्तन से स्पर्श होने पर लैंगिक आनन्द मिलता है। दाँत काटने की अवस्था में कामवृत्ति दाँत में चली जाती है और दूध पीते समय स्तन को दाँत काटने पर इनमें स्पर्श होने के कारण कामानन्द मिलता है। मौखिक अवस्था लगभग 18 महीने तक रहती है। इस अवस्था में केवल ईड होता है और वह अचेतन होता है। दूध पीने की अवधि लम्बी होने पर बच्चा आगे चलकर आशावादी बन जाता है। इस अवस्था में कामवृत्ति सामान्य रूप से निकलकर दूसरी अवस्था में पहुँच जाती है तो सामान्य व्यक्तित्व का निर्माण होता है। इस अवस्था में कामवृत्ति के स्थिरीकरण के कारण असामान्य व्यक्तित्व के निर्माण की संभावना बन जाती है। युवा अवस्था में लैंगिक विकृतियों के साथ-साथ मनोविदलता आदि मानसिक विकृतियों के विकसित होने की पूरी संभावना बन जाती है।

2. गुदा अवस्था-

इस अवस्था में कामवृत्ति गुदा में चली जाती है। बच्चे जब मलमूत्र अधिक करने लगते हैं या मलमूत्र को रोके रखने लगते हैं तो इससे कामवृत्ति में स्पर्श होने पर उन्हें लैंगिक आनन्द मिलता है। मौखिक अवस्था में बच्चे को पहली निराशा तब होती है जब उन्हें दूध छुड़ा दिया जाता है। इस निराशा के कारण ईगो तथा चेतन मन का उद्भव आरंभ होता है। गुदा अवस्था में बच्चों को साफ-सुथरा रहने तथा समय पर मलमूत्र करने के लिए बाध्य किया जाता है, जिससे वे निराशा महसूस करते हैं और इसी के साथ ईगो तथा चेतन मन का विकास होने लगता है। वह अवस्था लगभग 12 महीने से आरम्भ होकर 2 वर्ष तक जारी रहती है। यदि इस अवस्था से कामवृत्ति का गुजर सामान्य रूप से हो जाता है तो सामान्य व्यक्तित्व के विकास की संभावना बन जाती है। इस अवस्था में कामवृत्ति के स्थिरीकरण होने पर लैंगिक विकृतियों के साथ-साथ स्थिर-व्यामोह आदि मानसिक विकृतियों के युवा अवस्था में विकसित होने की सम्भावना बन जाती है।

3. लिंग प्रधानवास्था अवस्था-

इस अवस्था में कामवृत्ति लड़के के शिश्न तथा लड़की के गुप्तांग के ऊपर के भाग में रहती है। अतः इन अंगों को रगड़ने में हस्तमैथुन, लैंगिग प्रदर्शन आदि देखे जाते हैं। अब उनमें यौन-भिन्नता की चेतना होने लगती है। लैंगिग क्रियाओं में अधिक रूचि लेने पर माता-पिता उन्हें बधियाकरण से डराते हैं। इस अवस्था में मातृप्रेमग्रंथी तथा पितृप्रेमग्रंथी अर्थात् लड़के की लैंगिग प्रवृत्ति माता की ओर तथा लड़की की लैंगिग प्रवृत्ति पिता की ओर देखी जाती है। जब इन प्रवृत्तियों का समाधान सामान्य रूप से संभव होता है तो सामान्य व्यक्तित्व तथा इसके अभाव से असामान्य व्यक्तित्व के निर्माण की सम्भावना बन जाती है। इस अवस्था में कामवृत्ति के स्थिरीकरण के कारण आगे चलकर लैंगिक विकृतियों के साथ-साथ उन्माद आदि मानसिक रोग के विकास की सम्भावना बन जाती है। यह अवस्था 2-3 साल से प्रारंभ होकर 5-6 साल तक रहती है।

4. अव्यक्त अवस्था-

यह अवस्था लगभग 6-7 वर्ष की आयु से आरम्भ होती है और लगभग 12 वर्ष की आयु तक बनी रहती है इसमें कामवृत्ति अव्यक्त रहती है। इसी अवस्था से बच्चों की शिक्षा आरम्भ होती है। अब वे लैंगिक क्रियाओं में रूचि नहीं लेते हैं बल्कि शिक्षा के प्रति जागरूक हो जाते हैं। नैतिक नियमों को सीखने के कारण इसी अवस्था में सुपर ईगो का विकास होता है। जिस सीमा तक उन्हें नैतिक शिक्षा दी जाती है, उसी सीमा तक उनके व्यक्तित्व का नैतिक पक्ष सबल हो पाता है।

5. जननेन्द्रिय अवस्था-

इस अवस्था में कामवृत्ति पुनः सक्रिय हो जाती है और शिश्न तथा गुप्तांग के अन्तः भाग में अवस्थित हो जाती है। इसलिए, उन्हें विषमजाति लैंगिकता द्वारा कामानन्द प्राप्त होता है। यह अवस्था लगभग 12-13 वर्ष की आयु से प्रारम्भ होती है अतः इस अवस्था का कोई सार्थक प्रभाव व्यक्तित्व-विकास पर नहीं पड़ता है। इस अवस्था के आते-आते सामान्य या असामान्य व्यक्तित्व का निर्माण हो चुका होता है। असल में यह अवस्था स्वयं पहली चार अवस्थाओं का परिणाम है।

मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत व्यक्तित्व के भिन्न-भिन्न पक्षों की व्याख्या की गयी है, जिससे इस सिद्धान्त के कई गुणों की जानकारी होती है-

1. इस सिद्धान्त की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि अचेतन प्रेरणाओं का मानव व्यवहारों की उत्पत्ति पर चेतन प्रेरणाओं एवं संघर्षो के साथ-साथ अचेतन प्रेरणाओं एवं संघर्षो का भी गहरा प्रभाव पड़ता है। उनकी यह उपलब्धि वस्तुतः एक बहुत बड़ी उपलब्धि है, जिसके बिना मानव व्यवहार का सही एवं पूर्ण मूल्यांकन सम्भव नहीं है।

2. बचपन के अनुभव का प्रभाव व्यक्तित्व विकास पर पड़ता है, इसे आज सभी मनोवैज्ञानिक स्वीकार करते हैं। फ्रायड का यह विचार आज मान्य है कि व्यक्तित्व के निर्माण की आधारशिला प्राक्जननेन्द्रिय अवस्थायें हैं।

3. मानसिक संघर्षो के समाधान से सम्बन्धित मनोरचनाओं की खोज भी इस सिद्धान्त की एक बड़ी उपलब्धि है। आज सभी मनोवैज्ञानिक इस विचार से सहमत है कि संघर्षो के समाधान में दमन प्रतिगमन, प्रक्षेपण आदि मनोरचनायें सहायक होती हैं।

4. इस सिद्धान्त का एक योगदान यह भी है कि इसके आलोक में व्यक्तित्व के क्षेत्र में व्यापक रूप से अनुसंधान होने लगे, जिससे व्यक्तित्व की जटिल रचना तथा इसके निर्माण को समझने में सुविधा हुई। मानव व्यवहार को समझने में मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त से जितनी सहायता मिली है, उतनी सहायता शायद किसी दूसरे सिद्धान्त से नहीं मिली है। युंग, ऐडलर, एरिक्सन आदि ने मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त से ही प्रभावित होकर व्यक्तित्व के सम्बन्ध में नई-नई बातों की खोज की, भले ही उनकी खोज इस सिद्धान्त के विपक्ष में हो। शोध-मूल्य के मापदण्ड पर जेली एवं जिगलर (1981, 1983) ने इस सिद्धान्त को प्रथम श्रेणी में रखा है।

5. कार्यात्मक सार्थकता मापदण्ड पर यह सिद्धान्त काफी सफल प्रमाणित होता है। व्यावहारिक दृष्टिकोण से इस सिद्धान्त ने मानव जीवन को काफी लाभान्वित किया है। जेली तथा जिगलर (1981, 1983) ने इस मापदण्ड पर भी फ्रायड के सिद्धान्त को प्रथम श्रेणी में रखा और कहा कि, ''फ्रायड के सिद्धान्त को कई विभिन्न विद्या क्षेत्रों (जैसे-मानव शास्त्र, इतिहास, साहित्य) में मानव-व्यवहार की व्याख्या हेतु उपयोग किया गया है, और मनोविश्लेषण ने बीसवीं शताब्दी में मानव-स्वभाव से सम्बन्धित हमारी धारणा को बदल दिया है।''

फ्रायड के मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त की आलोचना कई आधारों पर की गयी है तथा इसके दोषों को स्पष्ट किया गया है।

1. इस सिद्धान्त के खिलाफ एक आलोचना यह है कि यह सिद्धान्त मानसिक रोगियों के निरीक्षण पर आधारित है। अतः इसके सभी प्रत्ययों का व्यवहार उसी रूप में सामान्य व्यक्ति पर नहीं किया जा सकता है।

2. इस सिद्धान्त में वैज्ञानिकता की कमी पाई जाती है। फ्रायड ने अनियंत्रित अवस्थाओं में मनोविश्लेषण तथा जीवन इतिहास-विधि का उपयोग कर अध्ययन किया। इसके अतिरिक्त उनके अध्ययन में परिमाणन का भी अभाव रहा है।

3. फ्रायड का अध्ययन केवल एक संस्कृति तक सीमित था। व्यक्तित्व के निर्माण में संस्कृति की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अतः सभी संस्कृतियों के लोगों के व्यक्तित्व का समुचित अध्ययन करने में यह सिद्धान्त असफल है।

4. फ्रायड ने व्यक्तित्व-निर्माण में लैंगिक शक्ति या कामवृत्ति को एक मात्र प्रेरणात्मक शक्ति माना, जिसकी कड़ी आलोचना की गयी और युंग तथा ऐडलर ने व्यक्तित्व की व्याख्या में क्रमशः जातीय अचेतन तथा सामाजिक शक्ति के महत्व पर बल दिया।

5. फ्रायड ने व्यक्तित्व-विकास में केवल जैविक आवश्यकताओं तथा मूल-प्रवृत्तियों के महत्व पर बल दिया और वातावरण तथा सांस्कृतिक कारकों के महत्व को गौण कर दिया। नव-फ्रायड-वादियों ने मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त की इस कमी को पूरा करने का प्रयास किया। ऐडलर, हार्नी, फ्रौम, एरिक्सन आदि ने इस बात पर बल दिया कि व्यक्तित्व के निर्माण में सामाजिक तथा सांस्कृतिक कारकों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। एरिक्सन ने मनोवैज्ञानिक विकास की 5 अवस्थाओं के बदले 8 अवस्थाओं का उल्लेख किया और ईगो को ईड से स्वतन्त्र माना।

9.5 एरिक्सन का व्यक्तित्व सिद्धान्त-

एरिक्सन के व्यक्तित्व सिद्धान्त को मनोसामाजिक सिद्धान्त भी कहते है। इन्होंने व्यक्तित्व के सिद्धान्त के प्रतिपादन में फ्रायड द्वारा प्रस्तावित विकासात्मक अवस्थाओं को स्वीकार करते हुए उसे व्यक्ति के पूरे जीवनकाल तक विस्तृत किया तथा व्यक्तित्व निर्माण पर जैविक कारकों के साथ-साथ सामाजिक एवं ऐतिहासिक कारकों के प्रभाव पर भी बल दिया। उन्होंने फ्रायड के विभिन्न प्रत्ययों ईड, ईगो, सुपर ईगो तथा मनोलैंगिक-विकास की अवस्थाओं को मानते हुए बच्चों के व्यक्तित्व विकास पर सामाजिक कारकों के प्रभावों पर बल दिया।

एरिक्सन ने व्यक्तित्व के विकास में ईड से अधिक ईगो पर बल दिया। इसलिए, उनके सिद्धान्त को ईगो-मनोविज्ञान भी कहा जाता है। जहाँ फ्रायड ने व्यक्तित्व-विकास की पाँच अवस्थाओं का उल्लेख किया, वहाँ एरिक्सन ने अहम् व्यक्तित्व की आठ अवस्थाओं का वर्णन किया और कहा कि आठवीं अवस्था में व्यक्तित्व का विकास पूरा हो जाता है।

ये अवस्थायें निम्नलिखित हैं-

1. विश्वास-अविश्वास अवस्था-

यह अवस्था फ्रायड की मौलिक अवस्था के समान है। इस अवस्था में माता के अनुकूल या प्रतिकूल व्यवहार के कारण बच्चे में क्रमशः विश्वास या अविश्वास विकसित होता है। माता के अनुकूल व्यवहार के कारण बच्चे में विश्वास विकसित होता है और बच्चे की यही प्रथम सामाजिक उपलब्धि होती है।

2. स्वतन्त्रता-लज्जा एवं संदेह अवस्था-

यह अवस्था फ्रायड की गुदा अवस्था के समान है। इस अवस्था में भी लैंगिक इच्छा से अधिक प्रबल सामाजिक प्रेरक होता है। इस अवस्था में धारण करने अथवा बहिष्कार करने की प्रवृत्ति का नियंत्रण माता-पिता द्वारा उचित ढंग से होता है तो बच्चे में स्वतन्त्रता की चेतना विकसित होती है, जिससे उनमें आत्म नियंत्रण तथा आत्म-विश्वास विकसित होता है। ऐसा नहीं होने से उनमें लज्जा तथा संदेह विकसित होते हैं।

3. पहल – दोषिता अवस्था-

यह अवस्था फ्रायड की यौन प्रधान-अवस्था के समान है। इस अवस्था में बच्चे मातृप्रेम संघर्ष का समाधान करते हैं। एरिक्सन के अनुसार लड़के में माता के प्रति लैंगिक प्रवृति नहीं होती है, बल्कि वह पिता से बिना मुकाबला किए ही माता के साथ अधिक-से-अधिक रहना चाहता है। अपने इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए वह पिता की आज्ञा मानने लगता है, जिससे सुपर ईगो का विकास होता है। इसमें पहल करने की चेतना पाई जाती है। यदि वह भय के कारण अपने इस लक्ष्य को छोड़ देता है तो दोषभाव विकसित हो जाता है। इस अवस्था में क्रूर तथा कठोर सुपर ईगो के विकसित होने पर इसका पूरा प्रभाव उसके समस्त जीवन पर पड़ता है।

4. व्यवसाय-हीनता अवस्था-

यह अवस्था फ्रायड की अव्यक्त अवस्था के समान है। इस अवस्था में बालक अपने घर से बाहर निकल जाता है, शिक्षालय जाता है तथा खेलकूद में भाग लेता है। अब वह किसी निश्चित उद्देश्य के साथ विशेष क्रियाओं को करके अपने व्यक्तित्व के समरूपण का प्रयास करता है। इसमें असफल होने पर वह हीनता महसूस करता है तथा असमर्थ होने का स्थाई विश्वास विकसित हो जाता है।

5. तादात्म्य प्रसारण अवस्था-

यह अवस्था फ्रायड की प्रारंभिक जननेन्द्रिय अवस्था के समान है। इस अवस्था में व्यक्ति यह महसूस करता है कि उसका अपना अलग व्यक्तित्व है और उसे सामाजिक स्वीकृति प्राप्त है अथवा यह महसूस करता है कि उसे समाज में कोई स्थान प्राप्त नहीं है। पहली स्थिति होने पर आत्म-विश्वास विकसित होता है और दूसरी स्थिति होने पर भय, अतिआत्मीकरण आदि विकसित होते हैं। किशोर-अवस्था के इस प्रथम चरण में भूमिका प्रसारण का आधार व्यावसायिक तथा लैंगिक तादात्म्य है।

6. आत्मीयता-पृथकीकरण अवस्था-

यह अवस्था फ्रायड की विलंबित जननेन्द्रिय अवस्था के समान है। इस अवस्था में आत्मीयता की इच्छा प्रबल होती है। प्रेम-सम्बन्ध की आवश्यकता सबल होती है। विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण होता है। इस आत्मीयता की प्राप्ति नहीं होने पर पृथकीकरण देखा जाता है।

7. उत्पादकता-निश्चलता अवस्था-

फ्रायड के मनोलैंगिक विकास में इस अवस्था का उल्लेख नहीं मिलता है। एरिक्सन के अनुसार इस प्रौढ़ा-अवस्था में व्यक्ति अपने भावी जीवन के कई विकल्पों में से किसी विशेष विकल्प को चुनता है और निर्णय लेता है कि उसे केवल बच्चा पैदा करना है अथवा कोई रचनात्मक कार्य (उत्पादकता) करना है।

8. अहम् सम्पूर्णता-निराशा अवस्था-

इस अंतिम अवस्था में व्यक्ति की मनोवृत्ति अपने जीवन के प्रति सकारात्मक या नकारात्मक होती है। सकारात्मक मनोवृत्ति होने पर अपने द्वारा किए गये अच्छे बुरे कार्यो को स्वीकार करता है तथा सम्मान के साथ मरने के लिए तैयार होता है। नकारात्मक मनोवृत्ति होने पर वह निराशा से पीड़ित रहा करता है और चैन से मरता भी नहीं है।

स्पष्ट है कि फ्रायड के मनोविश्लेषण का समर्थन करते हुए भी एरिक्सन ने फ्रायड के कई प्रत्ययों में परिमार्जन लाया तथा व्यक्तित्व-निर्माण में सामाजिक कारकों के महत्व पर बल देते हुए मनोविश्लेषण के क्षेत्र को व्यापक बनाने का सफल प्रयास किया। उन्होंने स्वयं कहा कि उनका एक प्रधान योगदान तादात्म्य संकट का प्रत्यय है। उन्होंने ईगो सम्बन्धी फ्रायड के विचार में परिमार्जन लाया और कहा कि ईगो वास्तव में ईड पर आश्रित नहीं है, बल्कि वह ईड के प्रभाव से मुक्त एवं स्वतन्त्र है। इस प्रकार, एरिक्सन ने हार्टमैन की तरह अहम् मनोवैज्ञानिकों की पहली पंक्ति में अपना स्थान सुरक्षित कर लिया।

जेली तथा जिगलर (1983) के अनुसार इस सिद्धान्त में ऐसे प्रत्ययों का उल्लेख किया गया है, जिनके बीच पर्याप्त संगति है। इसी प्रकार इस सिद्धान्त में मिव्ययिता का गुण उपलब्ध है। इन दोनों कसौटियों पर यह सिद्धान्त काफी संतोषजनक है।

फिर भी, एरिक्सन के सिद्धान्त में कुछ दोष भी हैं। इस सिद्धान्त में प्रमाणीयता की बड़ी कमी है। इसके प्रत्ययों को आनुभविक आधार पर प्रमाणित करना कठिन है। इस सिद्धान्त का शोध-मूल्य भी काफी सीमित है। लेकिन, डीकैप्रियो (1983) ने इस आरोप को खंडित करने का प्रयास किया है। उनके अनुसार एरिक्सन ने विकासात्मक मनोविज्ञान, अहम् मनोविज्ञान, व्यक्तित्व तथा सांस्कृतिक, मनोऐतिहासिक विश्लेषण आदि क्षेत्रों में शोधकार्य का मार्गदर्शन किया है।

अभ्यास प्रश्न

1. फ्रायड के अनुसार, पर्सनैलिटी को इन भागों में बांटा गया है:

A. चेतन और अचेतन

B. प्रकृति और पालन-पोषण

C. इड, ईगो और सुपरईगो

D. स्वयं और समाज

2. पर्सनैलिटी का वह हिस्सा जो आनंद के सिद्धांत पर काम करता है, वह है:

A. ईगो

B. सुपरईगो

C. चेतन मन

D. इड

3. एरिकसन ने किस अवधारणा पर सबसे ज़्यादा ज़ोर दिया है?

A. यौन प्रवृत्तियाँ

B. कंडीशनिंग

C. बुद्धिमत्ता

D. सामाजिक संबंध

9.6 सार-संक्षेप-

व्यक्तित्व के मनोगत्यात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत उन सिद्धान्तों को रखा गया है जो मानव व्यवहार की व्याख्या अचेतन प्रेरकों के संदर्भ में करते हैं।

फ्रायड का व्यक्तित्व सिद्धान्त मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त के रूप में भी जाना जाता है। इसके अन्तर्गत फ्रायड ने व्यक्तित्व गतिकी, व्यक्तित्व संरचना, व्यक्तित्व विकास आदि के परिप्रेक्ष्य में व्यक्तित्व की व्याख्या की है।

इरिक्सन के व्यक्तित्व सिद्धान्त को मनोसामाजिक सिद्धान्त भी कहते हैं। इरिक्सन ने व्यक्तित्व की व्याख्या इसे निम्नलिखित आठ अवस्थाओं में बांटकर की है- विश्वास-अविश्वास अवस्था, स्वतंत्रता-लज्जा एवं संदेह अवस्था, अगुआई-दोष अवस्था, व्यवसाय-हीनता अवस्था, तादात्म्य-प्रसारण अवस्था, आत्मीयता-पृथकीकरण अवस्था, उत्पादकता-निश्चलता अवस्था, अहम्-सम्पूर्णता-निराशा अवस्था।

हार्नी के व्यक्तित्व सिद्धान्त को नव फ्रायडवादी सिद्धान्त के अन्तर्गत रखा जाता है। फ्रायड से कई बिन्दुओं पर सहमति तो कई पर विरोध रखते हुए इन्होंने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में बाल्यावस्था की आवश्यकता, मूल चिन्ता, स्नायुविकृत आवश्यकता आदि पर काफी बल दिया।

सुलीवान को भी एक नव-फ्रायडवादी मनोवैज्ञानिक माना जाता है। इन्होंने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में व्यक्तित्व की गतिकी, व्यक्तित्व के टिकाऊ पहलू तथा विकासात्मक अवस्थाओं की चर्चा की।

9.7 पारिभाषिक शब्दावली-

मातृ-प्रेमगन्थी: लड़के की लैंगिक प्रवृत्ति माता की ओर।

पितृ-प्रेमग्रन्थी: लड़की की लैंगिक प्रवृत्ति पिता की ओर।

आत्म-तंत्र: एक ऐसा जटिल तंत्र जो अन्तःवैयक्तिक सुरक्षा को बरकरार रखते हुए व्यक्ति को दुष्चिन्ता से बचाता है।

9.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1. उत्तर: C
2. उत्तर: D
3. उत्तर: D

9.9 संदर्भ - ग्रन्थ

1. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान- अरूण कुमार सिंह/आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास।
2. सामान्य मनोविज्ञान- सिन्हा एवं मिश्रा, भारती भवन।
3. आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान- सुलैमान एवं खान, शुक्ला बुक डिपो, पटना-
4. Walter Mischel – Introduction to Personality.

5- Shaffer & Lazarus – Theories of Personality.

6 Eysenck – The scientific study of personality.

9.10 निबन्धात्मक प्रश्न-

1. व्यक्तित्व के फ्रायडवादी सिद्धान्त की समीक्षा करें।
2. इरिक्सन के व्यक्तित्व सिद्धान्त पर प्रकाश डालें।
3. इरिक्सन एंव फ्रायड के व्यक्तित्व सिद्धान्त की तुलना करें।
4. टिप्पणी लिखें- क. अचेतन ख. अहं-तादात्म्य ग. आत्म-तंत्र

इकाई 10. व्यक्तित्व के अधिगम सिद्धान्त (स्कीनर), मानवतावादी एवं स्व सिद्धान्त (मेसलो, रोजर्स)

इकाई संरचना

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 व्यक्तित्व के अधिगम सिद्धान्त से तात्पर्य

10.4 स्कीनर का व्यक्तित्व सिद्धान्त

10.5 व्यक्तित्व के मानवतावादी एवं आत्म सिद्धान्त का तात्पर्य

10.6 मैसलो का व्यक्तित्व सिद्धान्त

10.7 रोजर्स का व्यक्तित्व सिद्धान्त

10.8 सार संक्षेप

10.9 पारिभाषिक शब्दावली

10.10 निबन्धात्मक प्रश्न

10.11 संदर्भ-ग्रन्थ

10.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

10.1 प्रस्तावना-

पिछली इकाई में आपने व्यक्तित्व के सामाजिक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का अध्ययन किया। इस सिलसिले में फ्रायड एवं एरिक्सन के व्यक्तित्व सिद्धान्त की चर्चा की गई।

आइए, अब व्यक्तित्व के अधिगम सिद्धान्त तथा मानवतावादी एवं आत्म-सिद्धान्त पर चर्चा करें। अधिगम सिद्धान्त के अन्तर्गत यहां स्कीनर के सिद्धान्त पर प्रकाश डाला गया है तथा मानवतावादी एवं आत्म-सिद्धान्त के अन्तर्गत अब्राहम मासलो एवं काले रोजर्स के व्यक्तित्व सिद्धान्त की चर्चा की गई है।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपको अधिगम सिद्धान्तों तथा मानवतावादी सिद्धान्तों के परिप्रेक्ष्य में व्यक्तित्व को समझने एवं इसकी व्याख्या करने में मद्द मिलेगी।

10.2 उद्देश्य-

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप-

1. व्यक्तित्व के अधिगम सिद्धान्तों की तुलना कर सकें।
2. 3. मासलो के व्यक्तित्व सिद्धान्त की व्याख्या कर सकें।
4. रोजर्स के आत्म-सिद्धान्त के तत्वों को समझ सकें।
5. उपर्युक्त व्यक्तित्व सिद्धान्तों के गुण-दोषों पर प्रकाश डाल सकें।

10.3 व्यक्तित्व के अधिगम सिद्धान्त से तात्पर्य-

अधिगम सिद्धान्त से तात्पर्य व्यक्तित्व के उन सिद्धान्तों से है जो मानव स्वभाव की व्याख्या सीखे हुए व्यवहार के आधार पर करता है। इसके अन्तर्गत मूलतः व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिक आते हैं जिन्होंने मानव स्वभाव को सीखे हुए व्यवहार का समुच्चय माना। इसका पहला श्रेय रूसी मनोवैज्ञानिक पैवलव को जाता है जिन्होंने क्लासिकी अनुकूलन या अनुबन्धन द्वारा व्यवहार सीखने की क्रिया का प्रायोगिक अध्ययन किया। इस क्षेत्र में दूसरा महत्वपूर्ण कार्य स्कीनर ने क्रियाप्रसूत व्यवहार का अध्ययन कर किया तथा मानव स्वभाव की व्याख्या पुनर्बलन द्वारा सीखने के आधार पर की। इस प्रकार, व्यक्तित्व का अधिगम सिद्धान्त मानव स्वभाव एवं व्यवहार की व्याख्या क्लासिकी एवं प्रवर्तन अनुकूलन के आधार पर करता है।

व्यक्तित्व के अधिगम सिद्धान्तवादियों का मानना है कि व्यक्तित्व उन आदत-तंत्रों का समुच्चय है जिसे वस्तुनिष्ठ रूप से अवलोकित किया जा सकता है। इस समूह के मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व को समझने का प्रयास प्रयोगशालाओं में किए गये अध्ययनों तथा वस्तुनिष्ठ प्रदत्तों के माध्यम से किया, न कि उपचार-गृह में किए गये अध्ययनों या केस-इतिहास द्वारा प्राप्त प्रदत्तों के माध्यम से।

10.4 स्कीनर का व्यक्तित्व सिद्धान्त-

एक व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिक होने के कारण स्कीनर ने व्यक्तित्व की व्याख्या भी उद्धीपकों के प्रति सीखी गई अनुक्रियाओं के संग्रहण एवं स्पष्ट व्यवहारों या आदत-तंत्रों के एक समुच्चय के रूप में की। इसीलिए व्यक्तित्व से स्कीनर का तात्पर्य सिर्फ उन व्यवहारों से है जिसे वस्तुनिष्ठ रूप में अवलोकित किया जाय तथा जिसमें आसानी से हेर-फेर किया जा सके। स्कीनर के व्यक्तित्व सिद्धान्त को व्यक्तित्व का व्यवहारात्मक-सीखना सिद्धान्त भी कहते हैं। इन्होंने व्यक्तित्व को समझने का प्रयास प्रयोगशालाओं में किए गए अध्ययनों के माध्यम से किया, न कि उपचार गृह में किए गए अध्ययनों के माध्यम से।

इनका व्यक्तित्व सिद्धान्त कुछ सिद्धान्तों, जैसे-मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त, संज्ञानात्मक सिद्धान्त, मानवतावादी सिद्धान्त का विरोधी है। स्कीनर ने व्यक्तित्व की व्याख्या करने में आन्तरिक प्रक्रियाओं जैसे-प्रणोद, अभिप्रेरकों तथा अचेतन आदि के महत्व को अस्वीकार कर दिया, क्योंकि इनका प्रेक्षण नहीं किया जा सकता है। उसी तरह से उन्होंने दैहिक प्रक्रियाओं को भी यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि उन्हें चूँकि स्पष्ट रूप से प्रेक्षण नहीं किया जा सकता है, अतः उस पर वैज्ञानिक व्याख्या के लिए भरोसा नहीं किया जा सकता है। स्कीनर ने मानव जीव को एक रिक्त जीव कहा है। रिक्त जीव कहने का उद्देश्य मानव व्यवहार की उत्पत्ति में आन्तरिक प्रक्रियाओं की भूमिकाओं पर कटाक्ष करना तथा इस पर बल डालना था कि मानव जीव के भीतर कुछ भी ऐसा नहीं होता है जो वैज्ञानिक ढंग से व्यक्ति के व्यवहारों की व्याख्या कर सके। स्कीनर ने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में वैयक्तिक विभिन्नता के अध्ययन में रूचि नहीं दिखलायी है बल्कि उनकी मुख्य अभिरूचि मानव व्यवहार के सामान्य नियमों की खोज में अधिक थी। स्कीनर के सिद्धान्त की एक विशेषता यह भी है कि इन्होंने अपना अध्ययन सामान्य, असामान्य या असाधारण व्यक्तियों पर न करके पशुओं पर विशेषकर चूहों एवं कबूतरों पर किया और कहा कि चूँकि उनके सिद्धान्त का संबंध सभी तरह के व्यवहारों से है, अतः इन पशुओं के व्यवहार का अध्ययन करके मानव के व्यवहारों को भी आसानी से समझा जा सकता है। उन्होंने पशु व्यवहार के अध्ययन पर इसलिए भी जोर दिया है क्योंकि ऐसे व्यवहारों का अध्ययन सरल है। स्कीनर के अनुसार जीव का व्यवहार किसी स्पष्ट नियमों से निर्धारित होता है तथा वातावरण के कारकों द्वारा नियंत्रित होता है।

स्कीनर का व्यक्तित्व सिद्धान्त मानव प्रकृति के कुछ खास-खास पहलुओं जैसे-निर्धार्यता, अधिभूतवाद, पर्यावरणीयता, परिवर्तनशीलता, वस्तुनिष्ठता, प्रतिक्रियाशीलता, तथा ज्ञेयता पर अधिक बल डालता है तथा अन्य पहलुओं जैसे विवेकपूर्णता-अविवेकपूर्णता तथा समस्थिति-विषमस्थिति को पूर्णरूपेण अस्वीकृत करता है क्योंकि स्कीनर ने मानव व्यवहार के आन्तरिक स्रोतों पर बल नहीं दिया है।

स्कीनर के व्यक्तित्व सिद्धान्त के अनुसार व्यक्तित्व का अध्ययन व्यक्ति के जननिक पृष्ठभूमि तथा विशिष्ट शिक्षण इतिहास का क्रमबद्ध एवं परिशुद्ध मूल्यांकन के आधार पर संभव है। इसका मतलब यह हुआ कि स्कीनर के लिये व्यक्तित्व के अध्ययन में जीव के व्यवहार तथा उसके पुनर्बलित परिणामों के विशिष्ट संबंधों की खोज सम्मिलित होता है। स्कीनर के व्यक्तित्व सिद्धान्त की व्याख्या निम्नांकित आधारों पर की जा सकती है-

1. क्रियाप्रसूत व्यवहार

2. पुनर्बलन अनुसूची

3. क्रमिक सन्निकटन: व्यवहारों को रूप-ग्रहित करना

4. अंधविश्वासी व्यवहार

5. व्यवहारों का आत्म-नियंत्रण

6. व्यक्तित्व मापन

7. क्रियाप्रसूत अनुबन्धन का अनुप्रयोग

स्कीनर ने निम्नलिखित तीन पूर्वकल्पनाएं अभिव्यक्त की थीं-

1. व्यवहार वैध होता है- उनका मत था कि मनोविज्ञान चूँकि एक विज्ञान है, अतः विभिन्न घटनाओं से संबंधित व्यवहारों में एक क्रमबद्धता की खोज उसमें की जाती है।

2. व्यवहार को पूर्वानुमानित किया जा सकता है- मनोविज्ञान का संबंध सिर्फ भूत से ही नहीं होता है बल्कि भविष्य से भी होता है। इसमें भविष्य में होने वाले व्यवहारों के बारे में एक पूर्वकथन किया जाता है।

3. व्यवहार को नियंत्रित किया जा सकता है- स्कीनर का मत था कि हम लोग अपने व्यवहारों के बारे में सिर्फ पूर्वकथन ही नहीं करते बल्कि उसका काफी हद तक नियंत्रण भी कर पाते हैं।

आइए, अब स्कीनर के व्यक्तित्व सिद्धान्त की व्याख्या उपर्युक्त सातों आधारों पर करें-

क्रियाप्रसूत व्यवहार-

स्कीनर के अनुसार व्यक्तित्व का सापेक्ष पहलू यदि कोई है, तो वह व्यवहार है जिसका गहन प्रयोगात्मक अध्ययन करके व्यक्तित्व के बारे में समझा जा सकता है। उन्होंने व्यवहार के दो प्रकार बतलाये हैं- क्रियाप्रसूत व्यवहार तथा प्रतिवादी व्यवहार। प्रतिवादी व्यवहार से तात्पर्य वैसे व्यवहार से होता है जिसे व्यक्ति वातावरण के ज्ञात उद्धीपकों के प्रति करता है। साधारण स्तर पर प्रतिवादी व्यवहार स्वतः एवं अनैच्छिक होता है। जैसे रोशनी से प्रभावित होकर पुतली का फैलना या सिकुड़ना, भोजन देखकर मुँह में पानी (लार) आना, ठंढक से काँपना आदि साधारण स्तर के प्रतिवादी व्यवहार हैं जिन्हें व्यक्ति सीखता नहीं है। परन्तु अधिक जटिल स्तर पर प्रतिवादी व्यवहार को व्यक्ति सीखता है और ऐसे सीखना को अनुबन्धन कहा जाता है। जैसे, किसी वक्ता द्वारा मुख्य भाषण देने के लिये बने सेट एवं उसकी चमक-दमक देखकर पसीना-पसीना होना तथा घबड़ा जाना एक ऐसे ही प्रतिवादी व्यवहार का उदाहरण है। इस तरह के प्रतिवादी व्यवहार के सीखने का प्रयोगात्मक अध्ययन पैवलव द्वारा एक कुत्ते पर प्रयोग कर किया

गया तथा वाटसन एवं रेनर द्वारा मानव पर (अल्बर्ट नामक शिशु पर) एक प्रयोग करके सफलतापूर्वक किया गया।

क्रियाप्रसूत व्यवहार से तात्पर्य वैसे व्यवहार से होता है जो वातावरण के किसी स्पष्ट उद्धीपक द्वारा उत्पन्न नहीं होता है। प्रायः ऐसे व्यवहारों को व्यक्ति अपनी इच्छा से न कि उद्धीपक से प्रभावित होकर करता है। स्कीनर का यह मत है कि अधिकतर मानव व्यवहार क्रियाप्रसूत व्यवहार की श्रेणी के ही होते हैं हालांकि उन्होंने पैवलोवियन अनुबन्धन के कई नियमों का सहर्ष स्वागत भी किया है। स्कीनर का मत था कि क्रियाप्रसूत व्यवहार के करने के बाद की घटनाओं का प्रभाव जीव पर काफी अधिक पड़ता है। यदि इस तरह के व्यवहार को करने के बाद पशु या मानव को पुरस्कार मिलता है तो इससे वह अधिक प्रोत्साहित होकर भविष्य में फिर उस व्यवहार को दोहराता है, परन्तु यदि उस तरह के व्यवहार करने के बाद उसे दंड मिलता है, तो वह भविष्य में उस व्यवहार की पुनरावृत्ति नहीं करना चाहता है। स्कीनर ने स्कीनर बक्स में चूहों पर तथा कबूतर बक्स में कबूतरों पर कई प्रयोग करके उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि की है। जिस प्रक्रिया द्वारा क्रियाप्रसूत व्यवहार का अनुबन्धन होता है उसे क्रियाप्रसूत अनुबन्धन कहा जाता है।

जन्म के बाद से व्यक्ति कई तरह के व्यवहार करता है और उसमें से जो व्यवहार पुनर्बलित होते हैं, वे अपने आप ही अधिक मजबूत होकर एक निश्चित पैटर्न का निर्माण करते हैं। स्कीनर का व्यक्तित्व से मतलब ऐसे ही मजबूत क्रियाप्रसूत व्यवहारों के एक पैटर्न या संग्रहण से था।

पुनर्बलन अनुसूची-

पुनर्बलन अनुसूची से स्कीनर का तात्पर्य क्रियाप्रसूत अनुक्रिया को करने के बाद पुनर्बलन के देने या रोकने के लिए तैयार किया गया एक विशेष पैटर्न या अनुसूची से होता है। अपने शोध के प्रारंभिक अवस्था में स्कीनर ने प्रत्येक सही अनुक्रिया को पुनर्बलित किया। इसे सतत पुनर्बलन कहा गया है। परन्तु शीघ्र ही स्कीनर ने यह पाया कि दिन प्रतिदिन की अधिकतर परिस्थितियाँ इस प्रकार की होती है जहाँ व्यक्ति को प्रत्येक अनुक्रिया व्यवहार करने के बाद पुरस्कार या पुनर्बलन नहीं मिल पाता है। सच्चाई यह है कि कुछ ऐसी परिस्थिति में कुछ व्यवहार के बाद तो पुनर्बलन मिलता है तो कुछ के बाद पुनर्बलन नहीं मिलता है। इस तरह के पुनर्बलन को उन्होंने आंशिक पुनर्बलन या आंतरायिक पुनर्बलन कहा है। उन्होंने आंतरिक पुनर्बलन के चार प्रकार बतलाये हैं-निश्चित अनुपात अनुसूची, परिवर्त्य-अनुपात अनुसूची, निश्चित अन्तराल अनुसूची तथा परिवर्त्य अन्तराल अनुसूची। निश्चित अनुपात अनुसूची में प्राणी को एक निश्चित संख्या जैसे, 5, 10, 12 आदि में सही अनुक्रिया करने के बाद ही उसे पुनर्बलन मिलता है। परिवर्तय अनुपात अनुसूची में पुनर्बलन देने के लिये कोई ऐसी संख्या पूर्व निश्चित नहीं होती हैं। प्रयोगकर्ता कभी तीन सही अनुक्रिया तो कभी पाँच तो कभी सात (या कोई भी संख्या) के बाद अपने मन से पुनर्बलन देता है। निश्चित अंतराल अनुसूची में सही अनुक्रिया की संख्या चाहे कुछ भी हो, एक निश्चित समय बीतने के बाद ही पुनर्बलन दिया जाता है। परिवर्त्य अंतराल अनुसूची में पुनर्बलन देने का कोई निश्चित समय अंतराल नहीं होता है। समय अंतराल की सीमा कुछ भी हो सकती है, अर्थात् कभी दो मिनट तो कभी

पाँच मिनट तो कभी तीन मिनट आदि-आदि। इसमें से निश्चित अनुपात अनुसूची दिन-प्रतिदिन की जिन्दगी में सबसे अधिक सामान्य है और व्यक्ति के व्यवहार पर यह काफी नियंत्रण रखता है। अधिकतर नौकरियों में व्यक्ति द्वारा किये गए कामों की इकाइयों को मापकर उसी के अनुरूप उनका वेतन दिया जाता है। अधिक ऐसे इकाई होने पर उन्हें अधिक वेतन दिया जाता है। दिन-प्रतिदिन की जिन्दगी में व्यक्ति द्वारा जुआ खेलना परिवर्त्य अनुपात अनुसूची के उदाहरण हैं। जब किसी व्यक्ति को कुछ निश्चित घंटे काम करने या एक-एक हफ्ता पर अपने काम के लिये उसे वेतन दिया जाता है तो यह निश्चित अंतराल अनुसूचित का उदाहरण है। माता-पिता द्वारा बच्चों को उनके व्यवहारों को यदा-कदा प्रशंसा करना परिवर्त्य अंतराल अनुसूची के उदाहरण है। दोनों तरह के परिवर्त्य अनुसूचियों द्वारा सीखे गए व्यवहारों को व्यक्ति जल्दी नहीं भूलता है। क्योंकि वह यह नहीं जान पाता है कि उसे कब पुनर्बलन मिलेगा।

क्रमिक सन्निकटन: व्यवहारों को रूप-ग्रहित करना-

क्रमिक सन्निकटन की विधि जिसे रूप ग्रहित करना भी कहा जाता है, एक ऐसी प्रविधि है जिसमें धीरे-धीरे एक-एक करके अनुक्रिया को पुनर्बलित किया जाता है और उसे वैसे व्यवहारों से प्रतिस्थापित किया जाता है जो वांछित व्यवहार जिसे प्रयोगकर्ता सीखना चाहता है, के काफी हद तक सादृश्य होता है। जैसे, स्कीनर ने इस प्रविधि द्वारा कबूतर को एक निर्दिष्ट जगह पर चोंच मारना सिखलाने के लिए इस प्रकार की योजना बनाया-पहले जब कबूतर उस निर्दिष्ट जगह की ओर मुड़ा तो उसे पुनर्बलन प्रदान किया गया। इसके बाद कबूतर को पुनर्बलन तब दिया गया जब वह उस निर्दिष्ट स्थान की ओर किसी प्रकार की गति किया। इसके बाद कबूतर को पुनर्बलन तब दिया गया जब वह उस निर्दिष्ट स्थान के नजदीक आने की अनुक्रिया किया और अन्त में कबूतर को पुनर्बलन तब दिया गया जब उसकी चोंच उस निर्दिष्ट स्थान को स्पर्श किया। इस तरह से कबूतर को उस निर्दिष्ट स्थान पर चोंच मारना सीखलाया गया। इस तरह से क्रमिक सन्निकटन की प्रविधि में जीव को पुनर्बलन तभी प्रदान किया जाता है जब उसका व्यवहार धीरे-धीरे वांछित व्यवहार अर्थात् सिखाने वाले व्यवहार के नजदीक आते जाते हैं। इस प्रविधि का प्रयोग बच्चों में बोलना सिखलाना तथा सही शब्दों का उच्चारण सिखलाने में काफी किया गया है।

अंधविश्वासी व्यवहार-

स्कीनर के अनुसार अंधविश्वासी व्यवहार से तात्पर्य वैसे अनुबन्धन से है जिसमें अनुक्रिया तथा पुनर्बलन के बीच एक स्पष्ट परन्तु अकार्यात्मक या संयोग संबंध होता है। ऐसी परिस्थिति में प्राणी को यह अनुभव होता है कि उसके अमुक व्यवहार का कारण अमुक पुनर्बलन ही है जबकि सच्चाई यह है कि उस व्यवहार तथा पुनर्बलन में कोई वास्तविक संबंध नहीं होता है। स्कीनर ने इस तरह के व्यवहार को प्रयोगशाला में देखा। उदाहरण के लिए मान लिया जाय कि चूहा को स्कीनर बक्स में निश्चित अंतराल अनुसूची जिसमें प्रत्येक 15 सेकंड पर पुनर्बलन दिया जाता है लीवर दबाने की अनुक्रिया को सिखलाया जा रहा है। इस

अनुसूची में चूहा चाहे वांछित व्यवहार करे या न करे, उसे प्रत्येक 15 सेकंड पर पुनर्बलन मिलेगा। ऐसा संभव है कि जिस समय पुनर्बलन दिया जा रहा हो, वह कुछ-न-कुछ व्यवहार जैसे, पूँछ हिलाना, पिछले दोनों पैरों पर खड़ा होकर आगे के दोनों पैरों से मुँह खुजलाना, आदि कर रहा हो। उस समय जो भी व्यवहार चूहा कर रहा होता है, वह पुनर्बलित हो जाता है। इस तरह का व्यवहार आकस्मिक रूप से पुनर्बलित हो जाता है और स्कीनर ने देखा कि ऐसा व्यवहार बाद में चूहा प्रायः यह सोचकर संभवतः करता है कि ऐसा करने से उसे आगे फिर पुनर्बलन मिलेगा। इस तरह के व्यवहार को स्कीनर ने अंधविश्वास व्यवहार कहा है। दिन-प्रतिदिन की जिन्दगी में अंधविश्वासी व्यवहार के अनेक उदाहरण मिलते हैं-छात्रों द्वारा परीक्षा के दिन दही खाकर परीक्षा-भवन में जाना, बिल्ली द्वारा रास्ता काटने को अशुभ मानना, शीशे के टूटने को अशुभ मानना, सोना खो जाने को अशुभ मानना, आदि-आदि। स्कीनर ने यह भी स्पष्ट किया है कि अंधविश्वासी व्यवहार निश्चित रूप से व्यक्ति के अपने अनुबन्धन इतिहास का ही परिणाम नहीं होता है बल्कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में सांस्कृतिक एवं सामाजिक कहानियों एवं रूपक कथाओं के रूप में हस्तांतरित होते रहता है।

व्यवहारों का आत्म-नियंत्रण-

स्कीनर के सिद्धान्त का मुख्य सार-तत्व यह था कि प्राणी का व्यवहार वाह्य उद्धीपकों द्वारा परिवर्तित होता है तथा प्राणी के भीतर कोई वैसा आन्तरिक बल नहीं होता है जो उसके व्यवहार को परिवर्तित करे। उन्होंने यह भी कहा है कि बाह्य उद्धीपकों से यद्यपि प्राणी का व्यवहार परिवर्तित होता है, प्राणी भी अपने व्यवहार से बाह्य उद्धीपकों को प्रभावित करता है। स्कीनर का आत्म-नियंत्रण से तात्पर्य यह नहीं था कि प्राणी का व्यवहार कुछ आन्तरिक रहस्यमुक्त बलों से नियंत्रित होता है बल्कि इनका तात्पर्य यह था कि प्राणी उन चरों पर अपना नियंत्रण रखता है जिससे उसका व्यवहार प्रभावित होता है। जैसे, यदि आपको अपने पड़ोसी के रेडियो की आवाज पढ़ने में विध्न डालता है, तो आप उस कमरे से स्थान बदलकर एक ऐसे कमरे में कर लेते हैं जहाँ उसके रेडियो की आवाज से आपको पढ़ने में कोई विध्न नहीं पहुँचता हो। यह आत्म-नियंत्रण का उदाहरण है। स्कीनर ने आत्म-नियंत्रण के कई प्रविधियों का वर्णन किया है जिसमें प्रमुख निम्नांकित हैं-

1. संतुष्टि प्रविधि-

यह एक ऐसी प्रविधि है जिसमें व्यक्ति अपने आप को बुरी आदतों से छुटकारा पाने के लिए उसे बार-बार तब तक दोहराते जाता है। जब तक कि उससे वह ऊब न जाए। इस प्रविधि द्वारा सिगरेट पीने की बुरी आदत को छोड़ने के लिए व्यक्ति तब तक सिगरेट एक के बाद एक करके पीते जायेगा, जब तक उसे सिगरेट से विरूचि न उत्पन्न हो जाय।

2. असुखद या विरूचिपूर्ण उद्धीपकों का प्रयोग-

आत्म-नियंत्रण की इस प्रविधि में व्यक्ति वातावरण में कुछ ऐसा परिवर्तन करता है कि उसे असुखद या विरूचिपूर्ण उद्धीपकों का सामना करना पड़ता है और इस तरह से वह अपनी आदतों से छुटकारा पा जाता है। जैसे, यदि कोई व्यक्ति शराब की अपनी बुरी आदत को छोड़ना चाहता है, तो वह अपने इस विचार की घोषणा अपने दोस्तों एवं रिश्तेदारों के बीच करता है। यदि वह अपने इस घोषणा पर अटल नहीं रहता है, तो उसे अपने दोस्तों एवं रिश्तेदारों की आलोचना का सामना करना पड़ता है जो स्पष्टतः व्यक्ति के लिए एक तरह का असुखद या विरूचिपूर्ण उद्धीपक होगा। अतः उम्मीद की जाती है कि वह ऐसे उद्धीपकों से बचने के लिए अपनी घोषणा पर अमल करेगा।

3. आत्म-पुनर्बलन-

आत्म-नियंत्रण की इस प्रविधि में व्यक्ति अपने द्वारा किये गये उत्तम व्यवहारों या वांछित व्यवहारों को दिखलाने के लिए अपने आपको पुनर्बलित करता है। जैसे, अपने उस व्यवहार से खुश होना या उससे पूर्णतः संतुष्टि एवं प्रसन्नता व्यक्त करना, आदि-आदि आत्म-पुनर्बलन के कुछ उदाहरण हैं। इस तरह के आत्म-पुनर्बलन से व्यक्ति में आत्म-नियंत्रण पर पकड़ मजबूत होती है।

व्यक्तित्व मापन-

स्कीनर ने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में व्यक्तित्व मापन के लिए कुछ वैसी प्रविधियों का जिक्र नहीं किया है जैसा कि हम अन्य सिद्धान्तों में पाते हैं। अतः उन्होंने स्वतंत्र साहचर्य, स्वप्न विश्लेषण तथा प्रक्षेपी प्रविधियाँ जैसी प्रविधियों का वर्णन अपने सिद्धान्त में नहीं किया है। यद्यपि स्कीनर की अभिरूचि व्यक्तित्व मापन की ऐसी प्रविधियों में नही थी, फिर भी उन्होंने व्यवहारों के मापन में अभिरूचि दिखलायी है। उनका मत था कि व्यवहार चाहे वांछनीय हो या अवांछनीय हो, उसे मापना आवश्यक है। जब तक व्यवहार को मापा नहीं जाता, उसमें परिमार्जन भी नहीं लाया जा सकता है। अतः व्यवहार मापन व्यवहार परिमार्जन के लिए आवश्यक माना गया।

स्कीनर ने व्यवहार मापन का कार्यात्मक विश्लेषण किया है जिसमें व्यवहार के तीन पहलू शामिल होते हैं- व्यवहार की आवृत्ति, परिस्थिति जिसमें व्यवहार उत्पन्न होता है तथा व्यवहार से संबंधित पुनर्बलन। जब तक इन तीन पहलुओं को पहले से मापा नहीं जाता है, व्यवहार परिमार्जन के प्रोग्राम को प्रारंभ करना संभव नहीं है। स्कीनर के अनुसार व्यवहार परिमार्जन के औपचारिक प्रोग्राम में व्यवहार मापन के लिए निम्नांकित तीन प्रविधियाँ महत्वपूर्ण हैं-

1. व्यवहार का प्रत्यक्ष प्रेक्षण
2. आत्म-प्रतिवेदन विधि

3. व्यवहार का दैहिक मापन

इन तीनों का वर्णन निम्नांकित हैं-

1. व्यवहार का प्रत्यक्ष प्रेक्षण-

इस प्रविधि में दो या दो से अधिक प्रेक्षक व्यक्ति या व्यक्तियों के व्यवहारों का सीधा प्रेक्षण करके उसकी विश्वसनीयता तथा यथार्थता का निर्धारण करते हैं। हाकिन्स, पेटरसन, स्कीविड तथा विजोऊ ने माँ तथा उसके 4 साल के बच्चे के अन्तःक्रियाओं का सीधा प्रेक्षण करके 9 अवांछित व्यवहारों की पहचान किया है। इन्हीं अवांछित व्यवहारों के कारण माँ को नैदानिक मनोवैज्ञानिक के पास बच्चे का उपचार के लिए लाना पड़ा था। इस केस में मनोवैज्ञानिकों द्वारा माँ को यह सख्त निर्देश दिया गया कि वे उस बच्चा पर तभी ध्यान दे जब वह धनात्मक ढंग से व्यवहार करे और जब वह 9 अवांछित व्यवहारों में से कोई भी व्यवहार करे, तो उस पर वह बिल्कुल ही ध्यान न दे। इससे उस बच्चा में व्यवहार परिमार्जन करना संभव हो सका।

2. आत्म-प्रतिवेदन विधि-

इस प्रविधि में व्यक्ति एक तरह से अपने व्यवहार का प्रेक्षण स्वयं करता है और वह ऐसा करके परीक्षक को बतलाता है कि प्रश्नावली आत्म-प्रतिवेदन का सबसे प्रमुख एवं उत्तम तरीका है जिसमें छपे प्रश्नों को एक-एक करके व्यक्ति पढ़ते जाता है और उसका उत्तर भी देते जाता है। गीर (1965) ने एक ऐसा ही उत्तम प्रश्नावली विकसित किया है जिसका नाम 'फियर सर्वे अनुसूची' रखा गया हैं इस अनुसूची द्वारा इस तथ्य का मापन होता है कि व्यक्ति कुछ खास-खास परिस्थितियों, जैसे-कार चलाना, शल्य कार्य के लिए डॉक्टर के यहाँ जाना तथा लोगों के बीच भाषण देने जाने में कितन डर का अनुभव करता है। स्वयं स्कीनर ने इस विधि का प्रयोग अपने पूरे जीवन अवधि में दो बार ही किया था (स्कीनर (1933, 1979)। वे कई कारणों से इस प्रविधि को अधिक महत्व नहीं देते थे।

3. व्यवहार का दैहिक माप-

इस प्रविधि में व्यवहार का मापन करने के लिए कुछ शारीरिक प्रक्रियाओं जैसे-हृदय की गति, मांसपेशियों का तनाव तथा मस्तिष्कीय तरंग आदि का मापन किया जाता है। इस तरह से इन सूचकों द्वारा व्यक्ति पर विभिन्न उद्धीपकों के प्रभावों को मापना संभव हो पाता है। इस प्रविधि का प्रयोग अन्य विधियों द्वारा किये गए मापनों की वैधता की जाँच के लिये भी की जाती है।

व्यवहार मापन की चाहे जो भी प्रविधि क्यों न अपनायी जाय, इसका उद्देश्य विभिन्न उद्धीपक परिस्थितियों में व्यवहारों को मापना है। यहाँ हमेशा ध्यान इस बात पर दिया जाता है कि व्यक्ति क्या करता है न कि इस बात पर कि व्यक्ति को वह व्यवहार करने के लिये क्या प्रेरित कर रहा है।

क्रियाप्रसूत अनुबन्धन का अनुप्रयोग-

स्कीनर का मत है कि व्यक्ति में असामान्य व्यवहार का विकास उन्हीं नियमों के अनुरूप होता है जिससे सामान्य व्यवहार का विकास प्रभावित होता है। उन्होंने यह भी कहा है कि वातावरण में जोड़-तोड़ करके असामान्य व्यवहार के जगह पर सामान्य व्यवहार को स्थापित किया जा सकता है। उनके अनुसार असामान्य व्यवहार को क्रियाप्रसूत अनुबन्धन के नियमों के अनुसार परिवर्तित किया जा सकता है। इस प्रविधि को व्यवहार परिवर्तन या व्यवहार परिमार्जन या व्यवहार चिकित्सा की संज्ञा दी दी जाती हैं उन्होंने व्यवहार परिमार्जन के कई विधियों का वर्णन किया है जिसमें विभेदी पुनर्बलन, सांकेतिक व्यवस्था तथा विलोपन प्रमुख हैं। इन तीनों का वर्णन निम्नांकित हैं-

1. विभेदी पुनर्बलन-

व्यवहार चिकित्सा की यह एक ऐसी विधि है जिसमें चिकित्सक रोगी के कुसमायोजित व्यवहार को हटाने के लिये उसकी जगह पर समायोजित व्यवहार धनात्मक पुनर्बलन देकर तथा ऐसा व्यवहार नहीं करने पर उसे धनात्मक पुनर्बलन से वंचित करके उपचार करता है।

2. सांकेतिक व्यवस्था-

इस प्रविधि में व्यक्ति विशेष प्रयास करके कुछ वस्तु अर्जित करता है। उस वस्तु को संकेत या प्रतीक कहा जाता है। संकेत मुद्रा के रूप में कार्य करता है जिससे व्यक्ति वांछित वस्तुओं को खरीद सकता है। व्यक्ति जितना ही अधिक समायोजित व्यवहार करता है, उतना ही अधिक वह प्रतीक या संकेत अर्जित करता है। कुसमायोजित व्यवहार को करने से उसे कोई ऐसा प्रतीक या संकेत नहीं मिलता है। इसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति धीरे-धीरे कुसमायोजित व्यवहार करना छोड़ देता है तथा उसकी जगह पर समायोजित व्यवहार सीख लेता है।

3. विलोपन-

इस प्रविधि में किसी अपअनुकूलित या कुसमायोजित व्यवहार को दूर करने के लिए उसे पुनर्बलित करने वाले कारकों को हटा दिया जाता हैं प्रबलित करने वाले तत्वों को हटा देने से धीरे-धीरे अपअनकूलित व्यवहार या कुसमायोजित व्यवहार अपने आप ही विलोपित हो जाता है।

स्कीनर के व्यक्तित्व सिद्धान्त के कुछ गुण एवं अवगुण हैं। इसके प्रमुख गुण निम्नांकित हैं-

1. स्कीनर के सिद्धान्त द्वारा कई तरह के प्रयोगात्मक शोधों का जन्म हुआ है। इससे इस सिद्धान्त की सुस्पष्ट वैधता की झलक मिलती है।

2. स्कीनर के व्यक्तित्व सिद्धान्त के मूल-भूत तत्वों का अनुप्रयोग कई तरह की परिस्थितियों में किया गया है। इसका प्रयोग नैदानिक परिस्थिति, शिक्षा तथा उद्योग के क्षेत्र में सर्वाधिक किया गया है। नैदानिक परिस्थिति में व्यवहार चिकित्सा के रूप में, शिक्षा में शिक्षण मशीन तथा कार्यक्रमिक

सीखना के रूप में तथा उद्योग में उन्नत कार्य निष्पादन तथा सुरक्षा उपायों के रूप में अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है।

कुछ खास-खास कारकों के आधार पर स्कीनर द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व सिद्धान्त की आलोचना भी की गयी है। इनमें निम्नांकित प्रमुख हैं-

1. कुछ आलोचकों का मत है कि स्कीनर का व्यक्तित्व सिद्धान्त एक वैज्ञानिक सिद्धान्त के समान बिल्कुल ही नहीं लगता है। इनका सिद्धान्त इतना सरल तथा तात्विक है कि उससे जटिल मानव व्यवहार की व्याख्या नहीं हो पाती है।

2. आलोचकों का मत है कि स्कीनर ने अपना अधिकतर प्रयोग चूहों एवं कबूतरों पर किया है और उससे प्राप्त तथ्यों के आधार पर मानव व्यवहार की व्याख्या की है। इसे कई मनोवैज्ञानिकों ने न केवल अनुचित बल्कि अवैज्ञानिक भी माना है।

3. स्कीनर ने प्राणी को एक रिक्त जीव कहा है जो पूर्णरूपेण बाह्य, उद्धीपक-अनुक्रिया पुनर्बलन, रूपावली से नियंत्रित होता है। इस पर आलोचकों ने आपत्ति उठायी है और कहा कि प्राणी का व्यवहार सिर्फ बाह्य उद्धीपकों तथा पुनर्बलन से ही निर्धारित नहीं होता है बल्कि प्रेरणाओं, इच्छाओं, संवेगों आदि से भी नियंत्रित होता है। स्कीनर ने इन आन्तरिक बलों के महत्व की अवहेलना करके बहुत भारी भूल की है।

4. स्कीनर ने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में वैयक्तिक विभिन्नता के अध्ययन में कोई अभिरूचि नहीं दिखलाया है हालांकि उन्होंने वैयक्तिक प्रयोज्यों का गहन रूप से अध्ययन किया है। उनकी अभिरूचि व्यवहार के सामान्य नियम के प्रतिपादन में अधिक थी।

5. हॉल तथा उनके सहयोगियों ने स्कीनर के सिद्धान्त पर व्यंगात्मक टिप्पणी करते हुए कहा है कि स्कीनर के सिद्धान्त को एक ऐसा व्यक्तित्व का सिद्धान्त कहा जा सकता है जो उन घटनाओं या व्यवहारों की व्याख्या करने की कोशिश करता है जिसे हम सामान्यतः व्यक्तित्व कहते हैं। परन्तु इसे एक व्यक्तित्व सिद्धान्त नहीं कहा जा सकता है क्योंकि इनके सिद्धान्त में व्यवहारों का पूर्वकथन करने तथा उसकी व्याख्या करने के लिए किसी व्यक्तित्व व्याकृति का उपयोग नहीं किया गया है।

इन आलोचनाओं के बावजूद स्कीनर द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व का सिद्धान्त काफी महत्वपूर्ण सिद्धान्त माना गया है। इस सिद्धान्त के समर्थन में स्वयं स्कीनर द्वारा तथा साथ-ही-साथ उनके शिष्यों द्वारा काफी शोध किये गए हैं और अमेरिकी मनोविज्ञानी स्कीनर के इन महत्वपूर्ण योगदानों के प्रति काफी आभारी हैं।

10.5 व्यक्तित्व के मानवतावादी एवं आत्म-सिद्धान्त का तात्पर्य-

व्यक्तित्व के सम्बन्ध में मानवतावादी दृष्टिकोण एक सबल ''तृतीय बल'' के रूप में स्थापित हुआ जो मूलतः मनोविश्लेषण (प्रथम बल) एवं व्यवहारवाद (द्वितीय बल) का विरोधी था। इसके संस्थापक

अब्राहम मासलो थे जिन्होंने मनोविश्लेषण को असामान्य व्यक्तियों का अध्ययन करने वाला दृष्टिकोण बताया तो व्यवहारवाद को पशु व्यवहार की यांत्रिक व्याख्या करने वाला। मासलो के अनुसार मानवों की प्रकृति आदरणीय एवं आत्म-सिद्धि से युक्त होती है। उनमें वर्द्धन तथा अन्तःशक्ति जैसे सर्जनात्मक क्षमता पायी जाती है। मानवतावादी विचारधारा के समर्थक कार्ल रोजर्स ने बताया कि मानव प्रकृति की व्याख्या स्वतंत्रता, विवेकपूर्णता, आत्मनिष्ठता, पूर्णतावाद, अग्रलक्षता आदि के परिप्रेक्ष्य में किया जाना चाहिए तथा व्यक्ति की अनुभूतियों, भावों, मनोवृत्तियों तथा उसके आत्मन् के बारे में तथा दूसरों के बारे में व्यक्तिगत विचारों के अध्ययन पर बल दिया जाना चाहिए।

10.6 मैसलो का व्यक्तित्व सिद्धान्त-

अब्राहम मैसलो एक मानवतावादी मनोविज्ञानी थे। इन्होंने व्यक्तित्व के प्रति भी मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाया व्यवहारवाद तथा मनोविश्लेषण की आलोचना करते हुए इन्होंने कहा कि व्यक्तित्व के अर्थ को इन दोनों ही विचार धाराओं ने अत्यन्त ही संक्षिप्त एवं सीमित कर दिया है तथा व्यक्तित्व का अध्ययन अत्यन्त ही सीमित दृष्टिकोण से किया है।

मैसलो ने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में प्राणी के अनूठापन पर, उसके मूल्यों के महत्व पर तथा व्यक्तिगत वर्धन एवं आत्म-निर्देश की क्षमता पर सर्वाधिक बल डाला है। इस बल के कारण ही उनका मानना है कि सम्पूर्ण प्राणी का विकास उसके भीतर से एक संगठित ढंग से होता है। इन आन्तरिक कारकों की तुलना में बाह्य कारकों जैसे आनुवंशिकता तथा गत अनुभूतियों का महत्व नगण्य होता है। व्यक्तित्व विकास में आन्तरिक बलों पर इतना अधिक बल दिये जाने के कारण उनके व्यक्तित्व सिद्धान्त को व्यक्तित्व का सम्पूर्ण गत्यात्मक सिद्धान्त भी कहा गया है। मैसलो के व्यक्तित्व सिद्धान्त को निम्नांकित तीन मुख्य भागों में बाँट कर प्रस्तुत किया जा सकता है-

(क) व्यक्तित्व एवं अभिप्रेरण का पदानुक्रमिक मॉडल

(ख) स्वस्थ व्यक्तित्व: आत्म-सिद्ध व्यक्ति का विकास

(ग) व्यक्तित्व का मापन एवं शोध

व्यक्तित्व एवं अभिप्रेरण का पदानुक्रमिक मॉडल-

मैसलो के व्यक्तित्व सिद्धान्त का सबसे महत्वपूर्ण पहलू उसका अभिप्रेरण सिद्धान्त है। इनका विश्वास था कि अधिकांश मानव व्यवहार कोई-न-कोई व्यक्तिगत लक्ष्य पर पहुँचने की प्रवृत्ति से निर्देशित होता है। सचमुच में, उनके व्यक्तित्व सिद्धान्त में यही अभिप्रेरणात्मक प्रक्रियाएँ मूल सारतत्व है।

शारीरिक या दैहिक आवश्यकता शारीरिक या दैहिक आवश्यकता शारीरिक या दैहिक आवश्यकतामैसलो का मत था कि मानव अभिप्रेरक जन्मजात होते हैं और उन्हें प्राथमिकता या शक्ति के

आरोही पदानुक्रम में सुव्यवस्थित किया जा सकता है। ऐसे अभिरकों को प्राथमिकता या शक्ति के आरोही क्रम में इस प्रकार बतलाया गया है-

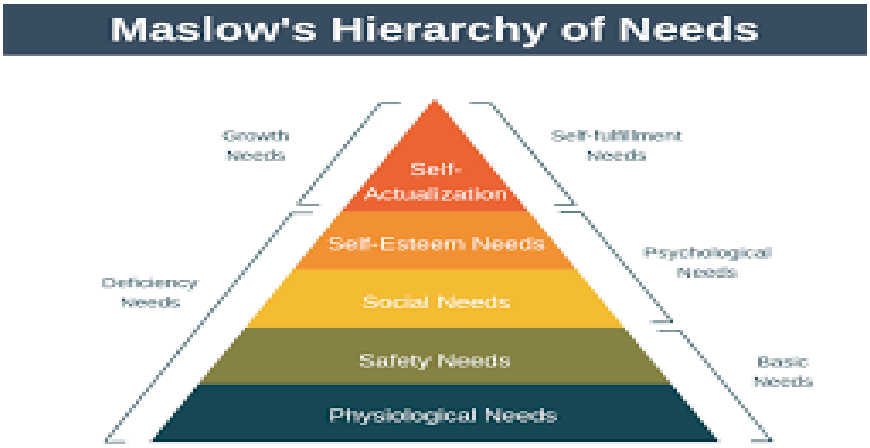

मैसलो का पदानुक्रम मॉडल

1. शारीरिक या दैहिक आवश्यकता
2. सुरक्षा की आवश्यकता
3. संबद्धता एवं स्नेह की आवश्यकता
4. सम्मान की आवश्यकता
5. आत्म-सिद्धि की आवश्यकता

इनमें से प्रथम दो आवश्यकताओं अर्थात् शारीरिक या दैहिक आवश्यकता तथा सुरक्षा की आवश्यकता को निचले स्तर की आवश्यकता तथा अन्तिम तीन आवश्यकताओं अर्थात् संबंद्धता एवं स्नेह की आवश्यकता, सम्मान की आवश्यकता तथा आत्म-सिद्धि की आवश्यकता को एक साथ मिलाकर उच्च-स्तरीय आवश्यकता कहा है। इस पदानुक्रमिक मॉडल में जो आवश्यकता जितनी ही नीचे हैं, उसकी प्राथमिकता या शक्ति उतनी ही अधिक मानी गयी है। इस तरह से व्यक्ति में सबसे प्रबल आवश्यकता शारीरिक या दैहिक आवश्यकता होती है जिसकी संतुष्टि तात्कालिक होना अनिवार्य है तथा सबसे कम प्रबल या कमजोर आवश्यकता आत्म-सिद्धि की आवश्यकता होती है।

इस मॉडल की एक प्रमुख बात यह है कि मॉडल के किसी भी स्तर की आवश्यकता को उत्पन्न होने के लिये यह आवश्यक है कि उससे नीचे वाले स्तर की आवश्यकता की संतुष्टि पूर्णतः नहीं तो कम-से-कम अंशतः अवश्य ही हो जाय। मैसलो ने यह भी स्पष्ट किया है कि हम पदानुक्रमिक मॉडल में जैसे-जैसे नीचे से ऊपर की ओर बढ़ते जाते हैं, प्रत्येक स्तर पर आवश्यकताओं की संतुष्टि का प्रतिशत भी धीरे-धीरे कम होता जाता है। उनके अनुसार शारीरिक आवश्यकताओं की संतुष्टि लगभग 85 प्रतिशत, सुरक्षा आवश्यकताओं की संतुष्टि लगभग 70 प्रतिशत, संबद्धता एवं स्नेह की आवश्यकता की संतुष्टि लगभग

50 प्रतिशत, सम्मान की आवश्यकता की संतुष्टि लगभग 40 प्रतिशत, तथा आत्म-सिद्धि की आवश्यकता की संतुष्टि लगभग 10 प्रतिशत ही होती है।

पदानुक्रमिक मॉडल के पाँच स्तरों की आवश्यकताओं का वर्णन निम्नांकित हैं-

1. दैहिक या शारीरिक आवश्यकता-

इस श्रेणी की आवश्यकता में भोजन करने की आवश्यकता, पानी पीने की आवश्यकता, सोने की आवश्यकता, यौन की आवश्यकता तथा सीमान्त तापक्रम के बचने की आवश्यकता आदि को सम्मिलित किया गया है। ये सारे जैविक प्रणोदन का सीधा संबंध प्राणी के जैविक सम्पोषण से होता है। इस श्रेणी की आवश्यकता की प्राथमिकता या प्रबलता सबसे अधिक है। फलस्वरूप, व्यक्ति को इससे ऊपर के स्तर की आवश्यकता की ओर बढ़ने के पहले इन जैविक आवश्यकताओं की संतुष्टि एक न्यूनतम स्तर पर करना अनिवार्य है।

2. सुरक्षा की आवश्यकता-

जब व्यक्ति की जैविक आवश्यकताओं की संतुष्टि हो जाती है तो वह पदानुक्रम के दूसरे स्तर की आवश्यकता अर्थात् सुरक्षा की आवश्यकता की ओर अग्रसर होता है और उसका व्यवहार इस आवश्यकता से काफी प्रभावित होने लगता है। इस श्रेणी की आवश्यकता में शारीरिक सुरक्षा, स्थिरता, निर्भरता, बचाव, डर, चिन्ता आदि की अनुभूतियों से मुक्ति आदि सम्मिलित होते हैं। मैसलो (1970) ने नियम-कानून बनाये रखने की आवश्यकता, विशेष क्रम आदि बनाये रखने की आवश्यकता को भी इसी श्रेणी में सम्मिलित किया है। इस तरह की आवश्यकता बच्चों में अधिक प्रबल होती है क्योंकि वे अन्य लोगों की अपेक्षा अपने आप को अधिक निःसहाय एवं दूसरों पर आश्रित समझते हैं। एक स्वस्थ एवं परिपक्व वयस्क में सुरक्षा की आवश्यकता होती है और वह उसमें संतुलित ढंग से संतुष्ट होता है। मैसलो के अनुसार सुरक्षा की आवश्यकता कुछ खास तरह के तंत्रिकातापी या स्नायुविकृत व्यक्ति जैसे मनोग्रस्ति-वाध्यता के रोगियों में अधिक सुस्पष्ट होता है। ऐसे लोग इर्द-गिर्द के हालातों को खौफनाक एवं खतरनाक समझकर अपने में सुरक्षा की आवश्यकता पर अधिक जोर डालते हैं तथा अधिक समय एवं शारीरिक ऊर्जा की खपत करते हैं और यदि इसके बावजूद भी इन्हें अपने प्रयास में सफलता नहीं मिलती है, तो इससे उनमें एक विशेष तरह की चिन्ता जिसे मैसलो ने मूल चिन्ता कहा है, की उत्पत्ति होती है।

3. संबद्धता एवं स्नेह की आवश्यकता-

मैसलो के पदानुक्रम मॉडल में यह तीसरे स्तर की आवश्यकता है। जब व्यक्ति की जैविक आवश्यकता तथा सुरक्षा की आवश्यकता की पूर्ति बहुत हद तक हो जाती है, तो उसमें संबद्धता एवं स्नेह की आवश्यकता उत्पन्न होती है। संबद्धता की आवश्यकता से तात्पर्य अपने परिवार या समाज में एक प्रतिष्ठित स्थान पाने की इच्छा से तथा किसी संदर्भ समूह की सदस्यता प्राप्त करने से, अच्छे पड़ोसी से संबंध बनाये रखने से होता है। स्नेह की आवश्यकता से तात्पर्य दूसरों को स्नेह देने एवं दूसरों से स्नेह पाने की आवश्यकता से होती है। संबंद्धता की आवश्यकता तथा स्नेह की आवश्यकता चूँकि एक-दूसरे से

काफी जुड़े होते हैं, अतः मैसलो ने इसे एक ही श्रेणी में रखा है। स्नेह की आवश्यकता में मैसलो ने यौन को भी रखा है परन्तु इस आवश्यकता को यौन आवश्यकता के तुल्य नहीं माना है। उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि यौन स्नेह की आवश्यकता को अभिव्यक्त करने का मात्र एक तरीका है। मैसलो (1968) ने यह स्पष्ट किया कि स्नेह की आवश्यकता की संतुष्टि नहीं होने से व्यक्ति में कुसमायोजन होता है। मैसलो (1968) ने इस बिन्दु पर टिप्पणी करते हुए कहा है, ''स्नेह पाने की भूख एक तरह का अपर्याप्तता रोग है।''

4. सम्मान की आवश्यकता-

सम्मान की आवश्यकता पदानुक्रमिक मॉडल में चौथे स्तर की आवश्यकता है। सम्मान की आवश्यकता व्यक्ति में तब उत्पन्न होती है जब इससे नीचे की तीनों श्रेणियों की आवश्यकताएँ अर्थात् जैविक आवश्यकता, सुरक्षा की आवश्यकता तथा संबद्धता एवं स्नेह की आवश्यकता की पूर्ति संतोषजनक ढंग से हो जाती है। सम्मान की आवश्यकता में मैसलो ने दो प्रकार की आवश्यकताओं को सम्मिलित किया है- आत्म-सम्मान की आवश्यकता तथा दूसरों से सम्मान पाने की आवश्यकता। पहले प्रकार की आवश्यकता में उत्तम क्षमता प्राप्त करने की इच्छा, आत्म-विश्वास, व्यक्तिगत वर्धन, उपयुक्तता, उपलब्धि, स्वतंत्रता आदि की भावना सम्मिलित होती है। दूसरों से सम्मान पाने की आवश्यकता में दूसरों से सम्मान, पहचान, प्रशंसा, ध्यान तथा स्वीकृति आदि पाने की इच्छा से होती है। आत्म-सम्मान की आवश्यकता की पूर्ति होने से व्यक्ति में आत्म-विश्वास, शक्ति पर्याप्तता एवं श्रेष्ठता के गुण विकसित होते हैं। इन गुणों के परिणामस्वरूप व्यक्ति सभी क्षेत्रों में अपने आप को अधिक योगय एवं उत्पादक समझने लगता है। दूसरी तरफ यदि व्यक्ति में आत्म-सम्मान की आवश्यकता की पूर्ति नहीं होती है, तो व्यक्ति अपने आप को लाचार, कमजोर, हतोत्साहित तथा सम्सयाओं से निपटने की पर्याप्त क्षमता की कमी आदि गुणों से युक्त मानता है। मैसलो ने यह भी स्पष्ट किया कि सही अर्थ में आत्म-सम्मान व्यक्ति की योग्यताओं एवं क्षमताओं के वास्तविक मूल्यांकन पर तथा साथ-ही-साथ दूसरों से प्राप्त वास्तविक सम्मान पर आधारित होता है। यह आवश्यक है कि व्यक्ति को दूसरों से मिलने वाला मान-सम्मान अवास्तविक या छिछला न होकर उनके अर्जित योग्यताओं एवं क्षमताओं पर आधारित हो।

5. आत्म-सिद्धि की आवश्यकता-

मैसलो के पदानुक्रमिक मॉडल का यह सबसे अन्तिम चरण होता है जहाँ व्यक्ति तब पहुँचता है जब इसके नीचे की चारों आवश्यकताओं अर्थात् जैविक आवश्यकता, सुरक्षा की आवश्यकता, संबद्धता एवं स्नेह की आवश्यकता तथा सम्मान की आवश्यकता की पूर्ति संतोषजनक ढंग से हुई हो। आत्म-सिद्धि से तात्पर्य आत्म-उन्नति की एक ऐसी अवस्था से होती है जहाँ व्यक्ति अपनी योग्यताओं एवं अन्तःक्षमताओं से पूर्णरूपेण अवगत होता है तथा उसके अनुरूप अपने आप को विकसित करने की इच्छा करता है। संक्षेप में, आत्म-सिद्धि से तात्पर्य अपनी अन्तःक्षमताओं के अनुरूप अपने आप को विकसित करना होता है।

मैसलो (1968) ने यह स्पष्ट किया कि आत्म-सिद्धि की आवश्यकता की अवस्था पदानुक्रमिक मॉडल के अन्य अवस्थाओं से इस अर्थ में भिन्न है कि इसके ठीक निचली अवस्था अर्थात् सम्मान की

आवश्यकता की पूर्ति हो जाने पर व्यक्ति अन्य अवस्थाओं के समान स्वतः इस अवस्था में अर्थात् आत्म-सिद्धि की अवस्था में नहीं आ जाता है। मैसलो द्वारा आत्म-सिद्ध व्यक्तियों पर किये गए शोधों से यह स्पष्ट हो गया है कि इस अंतिम अवस्था में सिर्फ वही लोग आ पाते हैं जिनमें सम्मान की आवश्यकता की पूर्ति हुई हो, साथ-ही-साथ, जिनमें बी मूल्यों की परिपूर्णता हो। अगर व्यक्ति ऐसा है जिन्हें सम्मान की आवश्यकता की पूर्ति तो हुई है परन्तु बी-मूल्यों की कमी हे, तो वैसे लोग आत्म-सिद्धि के इस अंतिम अवस्था में नहीं आ पाते हैं।

मैसलो ने अपने शोध के आधार पर निम्नांकित चार और अन्य ऐसे कारक बतलाये हैं जिसके चलते व्यक्ति इस अंतिम अवस्था में पहुँचने से वंचित रह जाता है। वे चार कारण हैं-

1. आत्म-सिद्धि की आवश्यकता एक कमजोर या सबसे कम प्रबल आवश्यकता है। फलतः यह अन्य आवश्यकताओं से आसानी से दब जाती है और व्यक्ति इस अवस्था पर पहुँचने की तमन्ना खो देता है।

2. जिन व्यक्तियों में अपनी अन्तःक्षमताओं एवं अन्तःशक्तियों को उन्नत करने पर एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न होने की आशंका हो जाती है जिसके साथ उनका निपटना संभव नहीं हो सकता है, तो वैसे लोग भी इस अंतिम अवस्था तक पहुँचने से वंचित रह जाते हैं। इस तरह की मनोग्रन्थि को मैसलो ने जोनाह मनोग्रन्थि कहा है।

3. आत्म-सिद्धि की आवश्यकता की अवस्था पर व्यक्ति इसलिए भी नहीं पहुँच पाता है क्योंकि इस अवस्था पर जाने के लिए व्यक्ति में पर्याप्त अनुशासन, प्रयास, आत्म-नियंन्त्रण एवं आत्म-साहस की आवश्यकता होती है। इन गुणों के अभाव में व्यक्ति इस अंतिम अवस्था पर पहुँचने से वंचित रह जाता है।

4. जिन व्यक्तियों को बाल्यावस्था में अत्यधिक स्नेह एवं स्वतंत्रता या फिर अत्यधिक तिरस्कार एवं नियंत्रण का सामना करना होता है, वह भी इस अवस्था तक नहीं पहुँच पाते हैं।

स्वस्थ व्यक्तित्व: आत्मसिद्ध व्यक्ति का विकास-

मैसलो के व्यक्तित्व सिद्धान्त की एक मुख्य विशेषता यह है कि यह सिद्धान्त मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्तियों के अध्ययन पर आधारित है। मैसलो ने इन व्यक्तियों का अध्ययन करके आत्मसिद्ध व्यक्तियों की पहचान करने के लिए कुछ खास-खास विशेषताओं का वर्णन किया है। ऐसी विशेषताएँ की संख्या सोलह हैं-

1. ऐसे व्यक्तियों का प्रत्यक्षण वास्तविक होता है अर्थात् उसमें पूर्वाग्रह, अनियमितता आदि की बू नहीं होती है।

2. ऐसे व्यक्ति अपने आप का, दूसरों का तथा वातावरण के अन्य वस्तुओं का प्रत्यक्षण ठीक वैसे ही करते हैं जैसा कि वे होते हैं।

3. ऐसे लोगों में सरलता, स्वाभाविकता तथा सहजता का गुण होता है।

4. ऐसे लोग समस्या-केन्द्रित व्यवहार करते हैं न कि आत्म-केन्द्रित व्यवहार करते हैं।

5. ऐसे लोगों में अनासक्ति का भाव होता है तथा वे गोपनीयता को पसंद करते है।

6. ऐसे लोग स्वतंत्रता तथा स्वायत्ता को पसंद करते हैं।

7. ऐसे लोगों में अन्य लोगों एवं घटनाओं को नवीनतम दृष्टिकोण से न कि घिसी-पिटी ढंग से अवलोकन करने की विशेष शक्ति होती है।

8. ऐसे लोगों में कुछ विशेष अलौकिक शक्ति एवं अनुभूतियाँ होती है जिनसे व्यक्ति अपने आप को काफी आश्वस्त, साहसी एवं निर्णायक समझता है। इसे मैसलो ने शीर्ष अनुभूति कहा है।

9. ऐसे लोगों का संबंध कुछ विशेष महत्वपूर्ण लोगों के साथ अधिक घनिष्ठ होता है तथा ऐसे लोगों में बहुत सारे लोगों के साथ सतही संबंध बनाये रखने की बुरी आदत नहीं होती है।

10. ऐसे लोग प्रजातन्त्रात्मक मूल्य एवं मनोवृत्ति अधिक दिखलाते हैं।

11. ऐसे लोग साधन एवं साध्य में स्पष्ट अन्तर रखकर उस पर पहल करते हैं।

12. ऐसे लोगों के मनोविनोद का भाव विद्वेषी न होकर दार्शनिक होता है।

13. ऐसे लोग सर्जनात्मक प्रवृत्ति के होते हैं।

14. ऐसे लोग संस्कृति के प्रति अनुरूपता नहीं दिखलाते हैं।

15. ऐसे लोग अपने वातावरण के साथ सिर्फ समायोजन ही नहीं करते हैं बल्कि उसकी उत्कृष्टता को भी समझने की कोशिश करते हैं।

मैसलो (1971) ने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्त में यह भी बतलाया है कि व्यक्ति में आत्म-सिद्धि को किस तरह से प्रोत्साहित किया जा सकता है। इन्होंने आत्म-सिद्धि को बढ़ाने या प्रोत्साहित करने के लिए स्कूल को सबसे उत्तम स्थान बतलाया है और कहा है कि छात्रों को अपनी स्वतंत्र पहचान बनाने में रूचियुक्त व्यवसाय की खोज करने तथा उत्तम मूल्यों को समझने के लिये किये गए प्रयासों से आत्म-सिद्धि का विकास होता है।

व्यक्तित्व का मापन एवं शोध-

ऐसे तो स्वयं मैसलो ने व्यक्तित्व मापन के लिए कोई प्रविधि का प्रतिपादन नहीं किया है लेकिन एवरेट शोस्ट्रोम ने आत्म-सिद्धि को मापने के लिये एक विशेष प्रश्नावली का निर्माण किया है जिसे पर्सनल ऑरियन्टेशन इन्वेन्ट्री (पी.ओ.आई.) की संज्ञा दी गयी है। इस परीक्षण में कथनों का 150 युग्म होते हैं और उनमें से व्यक्ति को यह बतलाना होता है कि युग्म का कौन कथन उसके लिये सबसे अधिक उपयुक्त है। पी. ओ. आई में दो मुख्य मापनी हैं-समय सामर्थ्यता मापनी तथा आन्तरिक निर्देशन मापनी। समय सामर्थ्यता मापनी द्वारा इस तथ्य का मापन होता है कि व्यक्ति की गतिविधियाँ कहाँ तक अपने वर्तमान समय के अनुरूप होती है तथा आन्तरिक-निर्देशन मापनी इस तथ्य का मापन करता है कि कहाँ तक व्यक्ति महत्वपूर्ण निर्णय एवं मूल्यों के लिये अपने ऊपर न कि दूसरों के ऊपर निर्भर करता है। बाद में शोस्ट्रोम ने पी .ओ. आई. को अधिक उन्नत बताया और उसका नाम पर्सनल ऑरियन्टेशन डाइमेन्सन या पी. ओ. डी. रखा। इसमें 240 एकांश हैं और पी. ओ. आई. से इसका सहसंबंध धनात्मक पाया गया। जोन्स एवं क्रैन्डला (1986) आत्म-सिद्धि को मापने के लिए 15 एकांश वाला एक परीक्षण विकसित किया है। आत्म-सम्मान के दो महत्वपूर्ण तत्व अर्थात् विश्वास तथा लोकप्रियता को मापने के लिये लोर्र एवं ऊण्डर्लिक (1986) ने एक आविष्कारिका विकसित किया है जिसे आत्म-मनोवृत्ति आविष्कारिका कहा गया। स्वयं मैसलो ने व्यक्तित्व मापन के लिए साक्षात्कार, स्वतंत्र साहचर्य, प्रक्षेपण प्रविधियाँ एवं जीवन-संबंधी सामग्रियों का उपयोग करने पर अधिक बल डाला गया था।

स्वयं मैसलो अपने सिद्धान्त के किसी पहलू पर कोई विशेष शोध तो नहीं किये परन्तु अन्य मनोवैज्ञानिकों ने पी. ओ. आई की मदद से कुछ शोध किये हैं। अधिकतर ऐसे शोध सहसंबंधात्मक हैं जिनमें पी. ओ. आई. पर आये प्राप्तांक को व्यक्तित्व या व्यवहार के अन्य मापकों के साथ सहसंबंधित किया गया है।

मैसलो के व्यक्तित्व सिद्धान्त के कुछ गुण एवं परिसीमाएँ हैं। इसके प्रमुख गुण निम्नांकित हैं-

1. मैसलो के व्यक्तित्व सिद्धान्त ने सबसे प्रथम बार व्यक्ति के व्यवहारों को आशावादी एवं मानवतावादी दृष्टिकोणों से समझने की प्रेरणा प्रदान की। सचमुच में लोग व्यवहारवादी दृष्टिकोण एवं मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण से व्यक्तित्व की गई व्याख्या से ऊब गये थे। मैसलो के सिद्धान्त ने लोगों को इस ऊब से छुटकारा दिलाया।

2. मैसलो के व्यक्तित्व सिद्धान्त का सामाजिक, नैदानिक एवं वैयक्तिक परिस्थितियों में काफी सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है। इससे इस सिद्धान्त की उपयोगिता काफी विस्तृत है। सुल्ज (1990) के अनुसार इस सिद्धान्त की उपयोगिता मनोचिकित्सा, शिक्षा, चिकित्साशास्त्र तथा संगठनात्मक व्यवस्था आदि में काफी अधिक है।

3. मैसलो द्वारा प्रतिपादित आत्म-सिद्धि का संप्रत्यय आधुनिक मनोवैज्ञानिकों के लिए एक वरदान साबित हुआ है क्योंकि इस संप्रत्यय के आधार पर मानव की आन्तरिक अंतःशक्तियों को समझने में काफी मदद मिली है।

इन गुणों के बावजूद मैसलो के व्यक्तित्व सिद्धान्त में कुछ खामियाँ हैं जिन पर भी लोगों ने प्रकाश डाला है। इन खामियों में निम्नांकित प्रमुख हैं-

1. मैसलो के व्यक्तित्व सिद्धान्त के विभिन्न संप्रत्यय एक-दूसरे पर काफी अतिच्छादित है। फलतः किसी एक संप्रत्यय का दूसरे संप्रत्यय से अलग कर वर्णन करना या उस पर शोध करना संभव नहीं है। इससे इनके सिद्धान्त में अनावश्यक जटिलता उत्पन्न हो गयी है।

2. सुल्ज (1990) के अनुसार मैसलो ने अपने सिद्धान्त के प्रतिपादन के लिये मात्र 49 प्रयोज्यों का साक्षात्कार लिया तथा उन पर कुछ मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का क्रियान्वयन कर आँकड़े इकट्ठा किये। सुल्ज ने इस पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि इतना कम प्रयोज्यों से प्राप्त आँकड़ों पर आधारित सिद्धान्त को एक वैज्ञानिक सिद्धान्त नहीं माना जा सकता है।

3. कुछ आलोचकों का मत है कि मैसलो ने अपने अध्ययन में आत्म-सिद्ध व्यक्तियों के बारे में जिन साधनों के माध्यम से आँकड़ों का संग्रहण किया है, वह काफी अस्पष्ट एवं अयथार्थ है। उन्होंने कुछ मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं जीवन-कथा संबंधी सामग्रियों के सहारे आत्म-सिद्ध व्यक्तित्यों के बारे में सूचना इकट्ठा किया था। आलोचकों का मत है कि मैसलो ने परीक्षण एवं जीवन-कथा संबंधी सामग्रियों का विश्लेषण कैसे किया था, यह कभी भी उन्होंने स्पष्ट नहीं किया तथा साथ-ही-साथ उन्होंने यह भी स्पष्ट नहीं किया है कि जीवित व्यक्तियों पर साक्षात्कार एवं स्वतंत्र साहचर्य से प्राप्त अनुक्रियाओं के आधार पर वे यह निष्कर्ष कैसे निकाल पाये कि ऐसे व्यक्ति में से कुछ व्यक्ति आत्म-सिद्ध हैं।

10.7 रोजर्स का व्यक्तित्व सिद्धान्त-

अब्राहम मैसलों के समान ही रोजर्स का व्यक्तित्व सिद्धान्त भी मानवतावादी विचारधारा से ओत-प्रोत है। इन्होंने व्यक्तित्व की व्याख्या संवृतिशास्त्र या घटना विज्ञान के नियमों के आधार पर की जिसमें व्यक्ति की अनुभूतियों, भावों एवं मनोवृत्तियों तथा उनके अपने बारे में या आत्मन् के बारे में तथा दूसरों के बारे में व्यक्तिगत विचारों का अध्ययन विशेष रूप से किया जाता है। यही कारण है कि रोजर्स के सिद्धान्त को मानवतावादी आन्दोलन के तहत एक पूर्णतः सांवृत्तिक सिद्धान्त माना गया है। रोजर्स के व्यक्तित्व सिद्धान्त को आत्म् सिद्धान्त या व्यक्ति-केन्द्रित सिद्धान्त के नाम से भी जाना जाता है।

रोजर्स द्वारा प्रस्तुत व्यक्तित्व सिद्धान्त में मानव प्रकृति के बारे में जो पूर्वकल्पनाएँ की गयीं हैं, वे निम्नांकित हैं-

1. इस सिद्धान्त में मानव प्रकृति के कुछ खास-खास पूर्वकल्पनाओं जैसे-स्वतंत्रता, विवेकपूर्णता, पूर्णतावाद, परिवर्तनशीलता, आत्मनिष्ठता, अग्रलक्षता, विषमस्थिति, तथा अज्ञेयता पर अधिक बल डाला गया है।

2. दूसरी तरफ, इस सिद्धान्त में मानव प्रकृति के शरीरगठनात्मक पूर्वकल्पना पर नाम मात्र का बल डाला गया है।

रोजर्स के व्यक्तित्व सिद्धान्त को निम्नांकित तीन प्रमुख भागों में बाँटा जा सकता है-

क. व्यक्तित्व के स्थायी पहलुएँ

ख. व्यक्तित्व की गतिकी

ग. व्यक्तित्व का विकास

व्यक्तित्व के स्थायी पहलू -

रोजर्स का व्यक्तित्व सिद्धान्त उनके द्वारा प्रतिपादित रोगी-केन्द्रित मनोचिकित्सा से प्राप्त अनुभूतियों पर आधारित है। चूँकि उनके सिद्धान्त का मुख्य उद्देश्य व्यक्तित्व में होने वाले परिवर्तनों एवं वर्धनों का अध्ययन करना है, अतः इस सिद्धान्त में व्यक्तित्व संरचना का गहन अध्ययन उस ढंग से नहीं किया गया जिस ढंग से फ्रायड ने अपने सिद्धान्त में किया था। फिर भी इन्होंने व्यक्तित्व की संरचना के दो महत्वपूर्ण पहलुओं पर बल डाला है जिससे व्यक्तित्व की संरचना के वर्धन में परिवर्तन की संतोषजनक व्याख्या हो पाती है। ये दो पहलू हैं-प्राणी तथा आत्मन्।

1. प्राणी-

रोजर्स (1959) के अनुसार प्राणी एक ऐसा दैहिक जीव है जो शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक दोनों ही तरह से कार्य करता है। इसमें प्रासंगिक क्षेत्र तथा आत्मन् दोनों ही सम्मिलित होते हैं। रोजर्स का मत है कि प्राणी सभी तरह की अनुभूतियों का केन्द्र होता है। इन अनुभूतियों में अपने दैहिक गतिविधियों से संबंधित अनुभूतियाँ, साथ-ही-साथ, बाह्य वातावरण की घटनाओं के प्रत्यक्षण की अनुभूतियाँ, दोनों ही सम्मिलित होती हैं। रोजर्स के अनुसार सभी तरह की चेतन एवं अचेतन अनुभूतियों के योग से जिस क्षेत्र का निर्माण होता है, उसे प्रासंगिक क्षेत्र कहा जाता है। मानव व्यवहार के होने का कारण यही प्रासंगिक क्षेत्र होता है न कि कोई बाह्य उद्दीपक, जैसा कि स्कीनर ने कहा था। प्रासंगिक क्षेत्र की एक मुख्य विशेषता यह है कि इसके बारे में स्वयं व्यक्ति ही सही-सही जानता है। कोई दूसरा व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के प्रासंगिक क्षेत्र के बारे में नहीं जान सकता है। हाँ, परानुभूतिक अनुमान के आधार पर कभी-कभी किसी व्यक्ति के प्रासंगिक क्षेत्र के बारे में जाना जा सकता है

2. आत्मन्-

रोजर्स के व्यक्तित्व सिद्धान्त का यह सबसे महत्वपूर्ण संप्रत्यय है। धीरे-धीरे अनुभव के आधार पर प्रासंगिक क्षेत्र का एक भाग अधिक विशिष्ट हो जाता है जिसे रोजर्स ने आत्मन् की संज्ञा दी है। रोजर्स के अनुसार आत्मन् व्यक्तित्व का एक अलग विमा नहीं होता है जैसा कि फ्रायड के अनुसार अहं व्यक्तित्व

का एक अलग विमा होता है। रोजर्स का मत है किसी व्यक्ति में आत्मन् नहीं होता है बल्कि स्वयं आत्मन् का अर्थ ही सम्पूर्ण प्राणी से होता है।

रोजर्स के अनुसार आत्मन् का विकास शैशवावस्था में होता है जब शिशु की अनुभूतियों का एक अंश या भाग अधिक मूर्त रूप प्राप्त करने लगता है और ''मैं'' या ''मुझको'' के रूप में धीरे-धीरे विशिष्ट होने लगता है। इसका परिणाम यह होता है कि शिशु धीरे-धीरे अपनी पहचान से अवगत होने लगता है। फलतः उसे अच्छे-बुरे का ज्ञान होने लगता है, उसे सुखद एवं दुखद अनुभूतियों में अन्तर का प्रत्यक्षण होने लगता है तथा वह किसी कसौटी पर अपनी अनुभूतियों की प्रभावशीलता की परख भी करना प्रारंभ कर देता है। रोजर्स के अनुसार आत्मन् के दो उपतंत्र हैं -

क. आत्म-संप्रत्यय

ख. आदर्श-आत्मन्

क. आत्म-संप्रत्यय-

आत्म-संप्रत्यय से तात्पर्य व्यक्ति के उन सभी पहलुओं एवं अनुभूतियों से होता है जिससे व्यक्ति अवगत होता है, हालांकि उसका यह प्रत्यक्षण हमेशा सही नहीं होता है। आत्म-संप्रत्यय को व्यक्ति प्रायः विशेष कथनों के रूप में व्यक्त करता है जैसे- ''मैं एक ऐसा व्यक्ति हूँ जो.....''। आत्म-संप्रत्यय की दो विशेषताएँ हैं। पहली विशेषता यह है कि आत्म-संप्रत्यय का एक बार निर्माण हो जाने से उसमें सामान्यतः परिवर्तन नहीं होता है। हाँ, बहुत कोशिश करने से उसमें परिवर्तन हो सकता है। जो अनुभूतियाँ व्यक्ति के आत्म-संप्रत्यय के साथ असंगत होती हैं, उसे व्यक्ति स्वीकार नहीं करता है और यदि स्वीकार भी करता है तो विकृत रूप में। दूसरी विशेषता यह है कि व्यक्ति का आत्म-संप्रत्यय उसके वास्तविक या जैविक आत्मन् से भिन्न होता है। जैविक आत्मन् का कुछ अंश या भाग ऐसा होता है जिससे व्यक्ति अवगत नहीं होता है। अतः इसे आत्म-संप्रत्यय नहीं कहा जा सकता है। परन्तु जैसे ही व्यक्ति उस अंश या भाग से अवगत हो जाता है, वह आत्म-संप्रत्यय बन जाता है। जैसे-यकृत हमारे जैविक संप्रत्यय का एक अंश या भाग है न कि हमारे आत्म-संप्रत्यय का। परन्तु यदि व्यक्ति का यकृत खराब ढंग से कार्य करने लगता है, तो वह उससे अवगत हो जाता है और अब यह आत्म-संप्रत्यय का उदाहरण होगा।

ख.आदर्श आत्मन्-

आत्मन् का दूसरा उपतंत्र आदर्श-आत्मन् है। आदर्श-आत्मन् से तात्पर्य अपने बारे में विकसित किये गए एक ऐसी छवि से होता है जिसे वह आदर्श मानता है। दूसरे शब्दों में, आदर्श आत्मन् में वे सभी गुण आते हैं जो प्रायः धनात्मक होते हैं तथा जिसे व्यक्ति अपने में विकसित होने की तमन्ना करता है। रोजर्स का मत है कि आदर्श आत्मन् तथा प्रत्यक्षित आत्मन् में अन्तर एक सामान्य व्यक्तित्व में नहीं होता है। परन्तु जब इन दोनों में असंगतता विकसित हो जाती है ताकि इन दोनों में स्पष्ट अंतर हो जाता है, तो इससे एक अस्वस्थकर व्यक्तित्व होने का संकेत मिलता है। मनोवैज्ञानिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति ''जो वे हैं'' और ''जो वे होना चाहते हैं,'' में कोई अन्तर महसूस नहीं करते हैं।

व्यक्तित्व की गतिकी-

रोजर्स ने अपने व्यक्तित्व गतिकी की व्याख्या करने के लिए एक महत्वपूर्ण अभिप्रेरक का भी वर्णन किया है जिसे उन्होंने वस्तुवादी प्रवृत्ति कहा है। रोजर्स (1959) के शब्दों में, ''वस्तुवादी प्रवृत्ति से तात्पर्य प्राणी में सभी तरह की क्षमताओं को विकसित करने की जन्मजात प्रवृत्ति से होती है जो व्यक्ति को उन्नत बनाने या प्रोत्साहन देने का काम करता है।'' दूसरे शब्दों में वस्तुवादी प्रवृत्ति व्यक्ति की जिन्दगी का एक ऐसा अभिप्रेरक होता है जो व्यक्ति को अपने आत्मन् को उन्नत बनाने तथा प्रोत्साहन देने का काम करता है। रोजर्स के सैद्धान्तिक तंत्र में वस्तुवादी प्रवृति मात्र अकेला अभिप्रेरणात्मक संरचना है। वस्तुवादी प्रवृत्ति के कुछ खास-खास गुण होते हैं जिनमें निम्नांकित प्रमुख है-

1. वस्तुवादी प्रवृत्ति पूरे शरीर की दैहिक क्रियाओं में सुदृढ़ होती है। इसका मतलब यह हुआ कि यह एक जैविक तथ्य है न कि मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति। आंगिक स्तर पर वस्तुवादी प्रवृत्ति व्यक्ति की न्यून आवश्यकताओं जैसे-भूख, प्यास, हवा आदि की आवश्यकता की तो पूर्ति करता ही है साथ-ही-साथ, शरीर के अंगों की संरचनाओं एवं कार्यो को भी सुदृढ़ एवं मजबूत बनाता है।

2. वस्तुवादी प्रवृत्ति का उद्देश्य मात्र तनाव में कमी करना नहीं होता है बल्कि इससे तनाव में वृद्धि भी होती है। दूसरे शब्दों में, रोजर्स का मत था कि व्यक्ति द्वारा लक्ष्य पर पहुँचने से तनाव में जो कमी आती है उससे तो मानव व्यवहार प्रभावित होता ही है साथ-ही-साथ, व्यक्ति का व्यवहार अपने आप को सतत विकसित करने एवं उन्नत बनाने के प्रयास से भी प्रभावित होता है।

3. रोजर्स का मत है कि वस्तुवादी प्रवृत्ति सभी तरह के प्राणियों अर्थात् मानव एवं पशुओं दोनों में ही होती है।

4. वस्तुवादी प्रवृत्ति एक ऐसी कसौटी के रूप में कार्य करती है जिस पर रखकर व्यक्ति अपनी जिन्दगी की अनुभूतियों की परख या मूल्यांकन करता है। मूल्यांकन को इस प्रक्रिया को जैविक मूल्य निर्धारण प्रक्रिया कहा जाता है। मूल्यांकन के बाद जिन अनुभूतियों द्वारा व्यक्ति अपने आत्मन् को प्रोत्साहित कर पाता है, उसे व्यक्ति स्वीकारात्मक मूल्य देता है तथा जिन अनुभूतियों द्वारा व्यक्ति अपने आत्मन् का विरोध होते पाता है, उसे नकारात्मक मूल्य प्रदान करता है। रोजर्स का मत है कि व्यक्तित्व की दो मुख्य आवश्यकताएँ होती हैं जिनसे उनका व्यवहार लक्ष्य की ओर निर्देशित होता है।

1. अनुरक्षण आवश्यकता
2. संवृद्धि आवश्यकता

1. अनुरक्षण आवश्यकता-

इस आवश्यकता के माध्यम से व्यक्ति अपने आप को ठीक ढंग से अनुरक्षित करके रखता है। इससे व्यक्ति अपनी मूल आवश्यकताओं जैसे-भोजन की आवश्यकता, हवा की आवश्यकता तथा सुरक्षा

की आवश्यकता आदि की संतुष्टि की ओर अग्रसर होता है। इससे व्यक्ति अपने आत्म-संप्रत्यय के विचारों को सुरक्षा भी प्रदान करता है। शायद यही कारण है कि व्यक्ति किसी नये विचार जो उसके आत्म-संप्रत्यय के विपरीत होता है, उसका विरोध करता है या व्यक्ति उन अनुभूतियों को विकृत कर देता है, जिसे वह अपने आत्म-संप्रत्यय के अनुकूल नहीं पाता है।

2. संवृद्धि आवश्यकता-

यद्यपि व्यक्ति अपने आत्म-संप्रत्यय को यथावत बनाये रखता है और उसमें परिवर्तन साधारणतः नहीं चाहता है, फिर भी उसमें अपने आप को विकसित करने की तथा पहले से और भी अधिक उन्नत बनाने की भी एक प्रेरणा होती है। इसी प्रेरणा को रोजर्स ने संवृद्धि आवश्यकता कहा है। इस संवृद्धि आवश्यकता की अभिव्यक्ति कई रूपों में होती है। जैसे-व्यक्ति द्वारा उन चीजों को सीखना जिनसे उन्हें तुरंत पुरस्कार नहीं मिलता है, एक ऐसी ही आवश्यकता का उदाहरण है। इसके अलावा उत्सुकता, आत्म-अन्वेषण, परिपक्वता, तथा दोस्ती आदि के रूप में भी संवृद्धि आवश्यकता की अभिव्यक्ति होती है।

रोजर्स का मत है कि ऐसे तो वस्तुवादी प्रवृत्ति द्वारा बहुत तरह की आवश्यकताओं की उत्पत्ति होती है परन्तु इनमें दो तरह की आवश्यकताएँ प्रधान होती हैं-

1. स्वीकारात्मक सम्मान तथा

2. आत्म-सम्मान

स्वीकारात्मक सम्मान से तात्पर्य दूसरों द्वारा स्वीकार किये जाने, दूसरों का स्नेह पाने एवं उनके द्वारा पसंद किये जाने की इच्छा से होती है। जैसे-जैसे बच्चों में आत्मन् विकसित होते जाता है, इस तरह के स्वीकारात्मक सम्मान की आवश्यकता तीव्र होने लगती है। दूसरों से बच्चों को सम्मान मिलने पर उत्पन्न संतुष्टि तथा ऐसा सम्मान नहीं मिलने पर उत्पन्न असंतोष के रूप में इस आवश्यकता की अभिव्यक्ति होती हैं इस तरह की आवश्यकता का स्वरूप पारस्परिक होता है। दूसरे शब्दों में, जब कोई व्यक्ति दूसरों को स्नेह, प्यार एवं अनुराग देकर दूसरे के स्वीकारात्मक सम्मान की आवश्यकता को संतुष्ट करता है तो उससे उसे अपने में भी एक तरह की संतुष्टि होती है। रोजर्स के अनुसार स्वीकारात्मक सम्मान की आवश्यकता दो तरह की होती है- शर्तपूर्ण स्वीकारात्मक सम्मान तथा शर्तरहित स्वीकारात्मक सम्मान। शर्तपूर्ण स्वीकारात्मक सम्मान में दूसरों का स्नेह, प्यार एवं अनुराग प्राप्त करने के लिए उनके द्वारा निश्चित किये गए मानदण्डों के अनुरूप व्यक्ति को व्यवहार करना पड़ता है। रोजर्स का मत था कि बच्चों को इस तरह से शर्त रखकर उन्हें प्रेम या स्नेह देना उनके मानसिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है और ऐसे बच्चे एक पूर्णरूपेण सफल व्यक्ति बनने से वंचित रह जाते हैं। शर्तहीन स्वीकारात्मक सम्मान में दूसरों का स्नेह, प्यार एवं मान-सम्मान पाने के लिए कोई शर्त नहीं रखी जाती है। माता-पिता द्वारा बच्चों को दिया गया स्नेह एवं

मान-सम्मान इसी श्रेणी का सम्मान होता है। इस तरह के सम्मान पाने से बच्चे बहुत तेजी के साथ एक पूर्णरूपेण सफल व्यक्ति बनने की ओर अग्रसर होते हैं और रोजर्स ने इस पर अत्यधिक बल डाला है।

आत्म-सम्मान से तात्पर्य इस बात से होता है कि व्यक्ति में अपने-आप को सम्मान एवं स्नेह देने की आवश्यकता होती है। यह आवश्यकता भी अर्जित होती है और व्यक्ति में संतोषजनक आत्म-अनुभूतियों से उत्पन्न होती है। दूसरे शब्दों में, जब व्यक्ति को महत्वपूर्ण व्यक्तियों से मान-सम्मान मिलता है, तो इससे उसमें धनात्मक आत्म-सम्मान की भावना या प्रेरणा भी मजबूत हो जाती है। इस तरह से आत्म-सम्मान की आवश्यकता की उत्पत्ति तो स्वीकारात्मक सम्मान की आवश्यकता से ही होती है, परन्तु एक बार उत्पन्न हो जाने के बाद यह एक स्वतंत्र एवं आत्म-सतत प्रकृति की हो जाती है।

व्यक्तित्व का विकास-

रोजर्स ने फ्रायड एवं इरिक्सन के समान व्यक्तित्व का कोई अवस्था सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं किया है। दूसरे शब्दों में, रोजर्स ने व्यक्तित्व के विकास का वर्णन विभिन्न चरणों या अवस्थाओं में फ्रायड एवं इरिक्सन के समान नहीं किया है। उन्होंने व्यक्तित्व के विकास में आत्मन् तथा व्यक्तित्व की अनुभूतियों में संगतता को महत्वपूर्ण बतलाया है। जब इन दोनों में अर्थात् व्यक्ति की अनुभूतियों तथा उनके आत्म-संप्रत्यय के बीच अन्तर हो जाता है तो इससे व्यक्ति में चिन्ता उत्पन्न होती है। असंगतता के अन्तर से उत्पन्न इस चिन्ता की रोकथाम के लिए व्यक्ति कुछ बचाव प्रक्रियाएँ प्रारंभ कर देता है। इसे प्रतिरक्षा की संज्ञा दी गयी है। रोजर्स ने दो तरह के प्रतिरक्षात्मक उपायों को महत्वपूर्ण बतलाया है-विकृति तथा खंडन। विकृति में व्यक्ति अपनी अनुभूतियों की एक अनुपयुक्त व्याख्या करता है ताकि वह आत्म-संप्रत्यय के कुछ अनुकूल दिख पड़े। यहाँ व्यक्ति अनुभूतियों का प्रत्यक्षण तो करता है परन्तु उसका वास्तविक अर्थ वह नहीं समझ पाता है। खंडन में व्यक्ति विरोधी अनुभूतियों को चेतना में लाने से ही इनकार कर देता है, फलतः व्यक्ति में चिन्ता की मात्रा निश्चित रूप से कम हो जाती है। इन दोनों तरह के रक्षात्मक उपायों अर्थात खंडन एवं विकृति का अधिक प्रयोग करने से व्यक्तित्व में दृढ़ता का विकास हो जाता है। यौक्तिकीकरण, क्षतिपूर्ति, स्थिर-व्यामोह, विभ्रम, गलत विश्वास, तथा अन्य तंत्रिकातापी व्यवहार इस तरह की दृढ़ता से उत्पन्न होते हैं।

दूसरी तरफ, यदि व्यक्ति की अनुभूतियों एवं आत्म-संप्रत्यय में कोई अन्तर नहीं होता है, अर्थात् उनमें संगति होती है, तो इससे एक स्वस्थ व्यक्ति का विकास होता है। इस तरह के स्वस्थ व्यक्तित्व को रोजर्स ने एक तकनीकी नाम अर्थात् पूर्णरूपेण सफल व्यक्ति कहा है। ऐसे व्यक्ति से रोजर्स का तात्पर्य उन व्यक्तियों से होता है जो अपनी क्षमताओं एवं योग्यताओं का सही-सही प्रयोग करते हैं, अपनी अन्तःशक्तियों की अच्छी पहचान करते हैं तथा अपनी अनुभूतियों एवं पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने की दिशा में विश्वास के साथ अग्रसर होते हैं। रोजर्स (1961) ने एक पूर्णरूपेण सफल व्यक्ति के निम्नांकित पाँच गुण बतलाये हैं-

1. एक पूर्णरूपेण सफल व्यक्ति अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति स्पष्ट शब्दों में करते हैं। ऐसे व्यक्ति अपनी अनुभूतियों की माँगों पर ध्यान देते हैं और उसके अनुरूप व्यवहार करने की कोशिश करते हैं। वे इन अनुभूतियों का दमन नहीं करते हैं । ऐसे व्यक्ति अपने धनात्मक अनुभूतियों, जैसे-प्रशंसा, प्रोत्साहन आदि में बचाव प्रक्रियाओं का प्रयोग कम-से-कम करते हैं। ऐसे व्यक्ति की प्रकृति अधिक सांवेगिक होती है क्योंकि वे दोनों तरह की अनुभूतियों का, अर्थात् धनात्मक अनुभूतियों एवं ऋणात्मक दोनों तरह की अनुभूतियों का सामना करते हैं।

2. एक पूर्णरूपेण सफल व्यक्ति की दूसरी विशेषता यह है कि जिन्दगी के प्रत्येक क्षण का उपयोग ऐसे व्यक्ति सही अर्थ में करते हैं तथा प्रत्येक क्षण में कैसे रहना चाहिए, उसका उन्हें पूरा-पूरा ज्ञान होता है। इस तरह की अवस्था को रोजर्स ने 'अस्तित्वात्मक रहन-सहन' कहा है। ऐसे व्यक्ति जिन्दगी के प्रत्येक क्षण में एक नया अनुभव प्राप्त करते हैं। फलस्वरूप प्रत्येक क्षण उनके लिए नया होता है और किसी क्षण में वे क्या करेंगे या नहीं करेंगे, इसका पहले कोई भी व्यक्ति अनुमान नहीं लगा सकता है।

3. एक पूर्णरूपेण सफल व्यक्ति की तीसरी विशेषता यह है कि ऐसे व्यक्ति एक निश्चित विश्वास के साथ व्यवहार करते हैं और उन्हें अपने व्यवहार की सार्थकता पर पूर्ण विश्वास होता है। ऐसे व्यक्ति कोई व्यवहार करते समय सामाजिक मानकों द्वारा कम निर्देशित होते हैं तथा अपने जैविक अनुभूतियों से प्राप्त अनुभूतियों की पुकार के अनुरूप यह निश्चित करते हैं कि उन्हें क्या करना चाहिए या क्या नहीं करना चाहिए। इसे रोजर्स ने एक तकनीकी नाम दिया है जिसे जैविक विश्वास कहा जाता है।

4. रोजर्स के अनुसार एक पूर्णरूपेण सफल व्यक्ति की चौथी विशेषता आनुभाविक स्वतंत्रता है। आनुभाविक स्वतंत्रता से तात्पर्य व्यक्ति की इस अनुभूति से होता है कि वह कोई भी कार्य करने के लिए पूर्णतः स्वतंत्र होता है तथा अपने प्रत्येक व्यवहार एवं उसके परिणाम के लिए वह स्वयं ही जिम्मेवार है।

5. पूर्णरूपेण सफल व्यक्ति की एक विशेषता यह भी है कि इसमें सर्जनात्मकता का गुण होता है। ऐसे व्यक्ति रचनात्मक ढंग से अपना समय व्यतीत करते हैं तथा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ण भरपाई करने की कोशिश करते हैं। ऐसे व्यक्ति बदलती हुई परिस्थितियों के साथ रचनात्मक ढंग से समायोजन कर लेते हैं।

रोजर्स के व्यक्तित्व सिद्धान्त का मूल्यांकन करते हुए यह कहा जा सकता है कि इस सिद्धान्त के कुछ गुण है तो कुछ परिसीमाएँ भी हैं। इसके प्रमुख गुण निम्नांकित है-

1. रोजर्स का व्यक्तित्व सिद्धान्त मनोचिकित्सा तथा वर्ग शिक्षण के लिए एक महा वरदान साबित हुआ है, विशेषकर मनोचिकित्सा के क्षेत्र में अनेकों मनोवैज्ञानिकों ने रोजर्स के व्यक्तित्व सिद्धान्त की उपयोगिताओं की संपुष्टि की है।

2. रोजर्स के व्यक्तित्व सिद्धान्त का अन्य महत्वपूर्ण गुण रोजर्स द्वारा आत्मन् पर बल दिया जाना है। उन्होंने मानवतावादी आन्दोलन के तहत जो सांवृत्तिक व्याख्या प्रदान की है, वह अपने आप में अनूठा है। इस तरह की व्याख्या कि प्रत्येक व्यक्ति में अपनी अन्तःशक्तियों को पहचानने और उसके अनुरूप व्यवहार करने की अद्भुत क्षमता होती है, हमें व्यक्तित्व के किसी और सिद्धान्त में देखने को नहीं मिलता है।

3. रोजर्स के व्यक्तित्व सिद्धान्त में आन्तरिक संगतता अधिक है तथा प्रत्येक संप्रत्यय को ठोस शब्दों में परिभाषित करने की कोशिश की गयी है। इस सिद्धान्त से भविष्य के व्यक्तित्व सिद्धान्तवादी अच्छा सबक ले सकते है और उसी के अनुरूप व्यक्तित्व सिद्धान्त तैयार करने में सही मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

इन गुणों के बावजूद रोजर्स के व्यक्तित्व सिद्धान्त की दो प्रमुख आलोचनाएँ हैं जो निम्नांकित है-

1. रोजर्स ने अपने इस सिद्धान्त में यह स्पष्ट नहीं किया है कि संवृद्धि तथा वस्तुवादिता के जन्मजात अन्तःशक्तियों से उनका क्या तात्पर्य था। सचमुच में संवृद्धि एवं वस्तुवादिता इस सिद्धान्त के दो प्रमुख स्तंभ हैं जिसके बारे में आलोचकों ने उपर्युक्त प्रश्न को उठाया है। इनसे संबंधित कई प्रश्नों का उत्तर हमें रोजर्स के सिद्धान्त में नहीं मिलता है। जैसे, क्या ऐसी अन्तःशक्तियाँ मूलतः शारीरिक होती हैं या मूलतः मनोवैज्ञानिक होती हैं ? क्या इन अन्तःशक्तियों में वैयक्तिक विभिन्नता होती है अर्थात् क्या ऐसी अन्तःशक्तियाँ कुछ व्यक्तियों में अधिक तथा कुछ व्यक्तियों में कम पायी जाती है?

2. रोजर्स के व्यक्तित्व सिद्धान्त पर गौर करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने व्यक्तित्व के अध्ययन करने का सबसे उत्तम तरीका व्यक्ति की अनुभूतियों की परख करना बतलाया है। उन्होंने ऐसा इसलिए दावा किया है क्योंकि वे प्रायः मनोचिकित्सा करते समय रोगियों के आत्म-निवेदनों को सुनते थे तथा उनकी अनुभूतियों को ठीक ढंग से परखने की कोशिश करते थे। आलोचकों का मत है कि इस तरीके को सही नहीं माना जा सकता है क्योंकि इससे उन कारकों तथा बलों का पता नहीं चलता है जिससे रोगी सामान्यतः अवगत नहीं होता है अर्थात् संभवतः वे उसके अचेतन अवस्था में होते हैं परन्तु रोगी के व्यवहार को काफी हद तक प्रभावित करते हैं।

इन आलोचनाओं के बावजूद रोजर्स का व्यक्तित्व सिद्धान्त अपनी अहमियत रखता है क्योंकि इसमें मानव व्यक्तित्व के प्रति विवेकी एवं स्वीकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है।

अभ्यास प्रश्न

2 व्यवहार की व्याख्या के लिए पुनर्बलन अनुसूची किस मनोवैज्ञानिक ने प्रस्तुत की-

(अ) बन्दुरा (ब) पैवलव

(स) स्कीनर (द) टॉलमैन

3. मासलो के व्यक्तित्व सिद्धान्त को किस उपागम के अन्तर्गत रखा गया है -

(अ) मनोगत्यात्मक उपागम (ब) मानवतावादी उपागम

(स) अधिगम उपागम (द) मनो-सामाजिक उपागम

3.कार्ल रोजर्स किस सिद्धांत से जुड़े हैं?

(अ) मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत (ब) व्यवहारवादी सिद्धांत

(स) संज्ञानात्मक विकास सिद्धांत (द) मानवतावादी सिद्धांत

4.. रोजर्स के अनुसार, मानव व्यवहार का सबसे महत्वपूर्ण मकसद है:

(अ) सुदृढ़ीकरण

(ब) अचेतन संघर्ष

(स) आत्म-बोध

(द) जैविक प्रेरणाएँ

5.. रोजर्स के सिद्धांत में कौन सी अवधारणा केंद्रीय है?

(अ) इड

(ब) कंडीशनिंग

(स) आत्म-अवधारणा

(द) लिबिडो

10.8 सार-संक्षेप-

व्यक्तित्व का अधिगम सिद्धान्त व्यक्तित्व के निर्माण और विकास में क्लासिकी तथा क्रियाप्रसूत अनुकूलन की भूमिका को महत्वपूर्ण मानता है तथा मानव स्वभाव की व्याख्या सीखे गये व्यवहार के समुच्चय के रूप में करता है।

स्कीनर ने क्रियाप्रसूत व्यवहार के आधार पर व्यक्तित्व की व्याख्या की तथा व्यवहार घटित होने में पुनर्बलन की भूमिका को महत्वपूर्ण माना।

मैस्लो ने व्यक्तित्व की व्याख्या मानवतावादी दृष्टिकोण के परिप्रेक्ष्य में की तथा आत्म-सिद्धि की प्राप्ति ही जीवन का लक्ष्य माना।

रोजर्स ने आत्म-सिद्धान्त के स्थापन में व्यक्ति की अनुभूतियों, भावों एवं मनोवृत्तियों को महत्वपूर्ण स्थान दिया तथा मानव स्वभाव की व्याख्या उसकी व्यक्तिगत अनुभूतियों का अध्ययन कर करने पर बल दिया।

10.9 पारिभाषिक शब्दावली-

अनुकूलन-किसी अस्वाभाविक या तटस्थ उत्तेजना से किसी स्वाभाविक अनुक्रिया का जुड़ जाना अनुकूलन कहलाता है।

प्रतिवादी व्यवहार-वैसा व्यवहार जो व्यक्ति वातावरण के ज्ञात उद्धीपकों के प्रति स्वतः एवं अनैच्छिक रूप से करता है।

क्रियाप्रसूत व्यवहार-वैसा व्यवहार जो वातावरण के किसी स्पष्ट उद्धीपक द्वारा उत्पन्न नहीं होता, बल्कि इसे व्यक्ति स्वयं अपनी इच्छा से करता है।

आत्म-सिद्धी - आत्म-उन्नति की एक ऐसी अवस्था जहाँ व्यक्ति अपनी योग्यताओं एवं अन्तःक्षमताओं को विकसित करने की इच्छा करता है।

आदर्श आत्मन्-व्यक्ति के स्वयं के बारे में विकसित की गई एक ऐसी छवि जिसे वह आदर्श मानता है।

10.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1. स 2. ब 3. द 4. स 5. स

10.11 संदर्भ-ग्रन्थ

1. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान- अरूण कुमार सिंह/आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास।
2. सामान्य मनोविज्ञान- सिन्हा एवं मिश्रा, भारती भवन।
3. आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान- सुलैमान एवं खान, शुक्ला बुक डिपो, पटना-
4. Walter Mischel – Introduction to Personality.
5. Shaffer & Lazarus – Theories of Personality.
6. Eysenck – The scientific study of personality

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न-

1. व्यक्तित्व के सम्बन्ध में स्कीनर के विचारों को प्रस्तुत करें।

2. व्यक्तित्व के सम्बन्ध में मानवतावादी विचारधारा से आप क्या समझते हैं? मासलो के आत्म-सिद्धि सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या करें।

3. रोजर्स द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व सिद्धान्त पर प्रकाश डालें।

4. टिप्पणी लिखें-

1. पुनर्बलन अनुसूची

2. मेटा-आवश्यकता

3. आत्म-संप्रत्यय

इकाई 11. आइसेंक का व्यक्तित्व सिद्धान्त एवं व्यक्तित्व के पाँच बड़े सिद्धान्त

इकाई संरचना

11.1. प्रस्तावना:

11.2. उद्देश्य

11.3 आइजेंक व्यक्तित्व सिद्धांत

11.4 व्यक्तित्व के पंचआयामी कारक सिद्धांत

11.5 सारांश

11.6 शब्दावली

11.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

11.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

11.9 निबन्धात्मक प्रश्न

11.1. प्रस्तावना:

व्यक्तित्व मनोविज्ञान (Personality Psychology) मनोविज्ञान की वह शाखा है जो व्यक्तित्व एवं व्यक्तिगत अन्तरों का अध्ययन करती है। सामान्यतया व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के उपरी हावभाव उसके पहनावे से लिया जात है परन्तु मनोविज्ञान मे व्यक्तित्व से आशय व्यक्ति के मनोभावों से लिया जाता हैं। व्यक्तित्व व्यक्ति के मनोदैहिक संस्थानो का गत्यामक संघठन है जो वातावरण के प्रति व्यक्ति के अपुर्व समायोजन को निर्धारित करता है। अर्थात व्यक्तित्व व्यक्ति के मनोदैहिक संस्थानो अथवा मानसिक एवं शारीरिक संस्थानों का गत्यामक संगठन है क्यूंकी व्यक्ति का व्यक्तित्व बाल्यावस्था से लेकर जीवनपर्यन्त परिवर्तित होता रहता है और यहि व्यक्ति का जीवनपर्यन्त मार्गान्तिकरण करते है। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का सम्यक चित्रण करना तथा उसके व्यक्तित्व के प्रमुख प्रक्रमों का चित्रण व्यक्तिगत अन्तरों का अध्ययनय अर्थात लोग एक-दूसरे से किस प्रकार भिन्न होते हैं। मानव की प्रकृति का अध्ययन अर्थात किस प्रकार सभी लोगों की प्रकृति समान है। व्यक्तित्व सिद्धांतवादियो में यह पूर्णसहमति है कि शीलगुण व्यक्तित्व के मौलिक इकाई होते है जो व्यक्ति में एक खास ढंग से व्यवहार करने की पूर्वप्रवृत्ति उत्पन्न करता है।

11.2. उद्देश्य

1. आइजेंक के व्यक्तित्व सिद्धांत का अध्ययन
2. व्यक्तित्व की पंचआयामी सिद्धांत का अध्ययन

11.3. आइजेंक व्यक्तित्व सिद्धांत

आइजनेक (1916-1997) का जन्म जर्मनी में हुआ लेकिन उनकी पढ़ाइ्र-लिखाई लन्दन में हुई। आइजनेक सवयं को व्यकितत्व सिद्धान्तवादी नहीं मानते हैं। उन्होंने अपने को व्यक्तित्व सिद्धान्तवादी कहे जाने को उपयुक्त नहीं बताया है। इसके बाद भी उन्होंने व्यकितत्व के क्षेत्र में महत्वपूर्ण शोध कार्य किए हैं, उनके यह शोध अध्ययन व्यक्तित्व की गइ्र विमाओं से सम्बन्धित हैं। आइजनेक ने व्यक्तित्व के सम्बन्ध में जो शोधकार्य किए हैं, उनमें तथ्यों का संकलन के लिए प्रश्नावली विधि वस्तुनिष्ठ परीक्षण शारीरिक गठन का मापन, देहशास्त्रीय मापन ऐतिहासिक और जीवन सम्बन्धी सूचना विधियाँ आदि का उपयोग किया है। आइजेंक ने अपने अध्ययन में गणितीय उपागम को अपनाया है। उन्होंने विज्ञान में मापन की आवश्यकता पर बल दिया है और अनेक मनोवैज्ञानिक परीक्षण निर्मित किए हैं। व्यक्तित्व सिद्धान्त के सम्बन्ध में उनका कहना है कि इस दिशा में अभी बहुत कुछ करना शेष है फिर भी व्यक्तित्व के सम्बन्ध में उन्होंने जो विचार प्रस्तुत किए हैं वे अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने अपने पूर्ववर्ती मनोवैज्ञानिकों के विचारों को ग्रहण करते हुए एक अत्यन्त तर्कसंगत व्यक्तित्व सिद्धांत की स्थापना की है।

आइजनेक के व्यक्तित्व को जैविक शीलगुण सिद्धान्त के नाम से जाना जाता है। हॉल और उनके साथियों ने भी आजनेक के व्यक्तित्व सिद्धान्त को जैविक शीलगुण सिद्धान्त के नाम से सम्बोधित किया है। आइजनेक ने सन् 1947 से व्यक्तित्व विमाओं के क्षेत्र में महत्वपूर्ण शोध कार्य किये इसके बाद निरन्तर इस क्षेत्र इस क्षेत्र में वह अपनी मृत्यु तक शोध कार्य किए। इसके बाद निरन्तर इस क्षेत्र में वह अपनी मृत्यु तक शोध कार्यरत रहे और व्यक्तित्व विमाओं में नई-नई खोजें करते रहे। उनके अनुसंधान के फलस्वरूप व्यक्तित्व विमाओं की संख्या में वृद्धि हुई। आइजनेक ने यह स्वीकार किया है कि व्यक्तित्व के अधिकांश शीलगुण जन्मजात होते हैं और उसने यह भी माना है कि सभी मानव व्यवहार अर्जित होता है इन्हीं कारणों से आइजनेक के शीलगुण सिद्धान्त को जैविक शीलगुण सिद्धान्त कहा गया है।

11.3.1. व्यक्तित्व का स्वरूप-

आइजेंक के अनुसार व्यक्तित्व के स्वरूप पर विचार करते समय उसके संज्ञानात्मक, चारित्रिक, भावनात्मक तथा शारीरिक पक्ष पर ध्यान देना आवश्यक है। आइजेंक ने व्यक्तित्व की परिभाषा करते हुए लिखा है-

''व्यक्तित्व प्राणी के वास्तविक एवं सम्भाव्य व्यवहार संरूप का वह समग्र है जिसका निर्धारण आनुवंशिकता और वातावरण करता है। इसका प्रारम्भ तथा गठन व्यवहार संरूप से सम्बन्धित अनुभागों के गठन तथा उनसे सम्बन्धित प्रकार्यात्मक अन्तर्क्रिया के द्वारा होता है।''

एक अन्य परिभाषा में आइजेंक ने व्यक्तित्व को व्यवहार बताया है- ''व्यक्तित्व व्यवहार है, बशर्ते व्यवहार में संगत वाचिक एवं स्वायत्त अनुक्रिया तथा प्रेक्षणीय निष्पादन सम्मिलित हो। यह केवल विशिष्ट उद्दीपक-अनुक्रिया यांत्रिकी का समुच्चय नहीं है।''आलपोर्ट द्वारा प्रस्तुत व्यक्तित्व की परिभाषा को आइजेंक ने स्वीकार किया है। इस प्रकार आइजेंक के अनुसार व्यक्तित्व सभी संज्ञानात्मक, भावनात्मक, क्रियात्मक और शारीरिक लक्षणों का एक समग्र समुच्चय है।

11.3.2. व्यक्तित्व के संरचना और मापन (Structure and Measurement of Personality)-

आइजनेक ने व्यक्तित्व संरचना की व्याख्या जिन प्रत्ययों के आधार पर की है, वह हिप्पाक्रेट्स और युग के विचारों से बहुत अधिक प्रभावित हुए हैं। आइजेंक ने कारक विश्लेषण के आधार पर व्यक्तित्व के तीन प्राथमिक आयाम बताए हैं-

1. अन्तर्मुखता - बहिर्मुखता (Introversion-Extroversion)
2. मनस्ताप- स्थिरता (Neuroticism- Stability)
3. मनोविक्षिपतता -आवेग नियन्त्रण (Psychoticism- Impulse Control)

चित्र-आइजनेक (1985) द्वारा वर्णित विमा या प्रकार स्तर

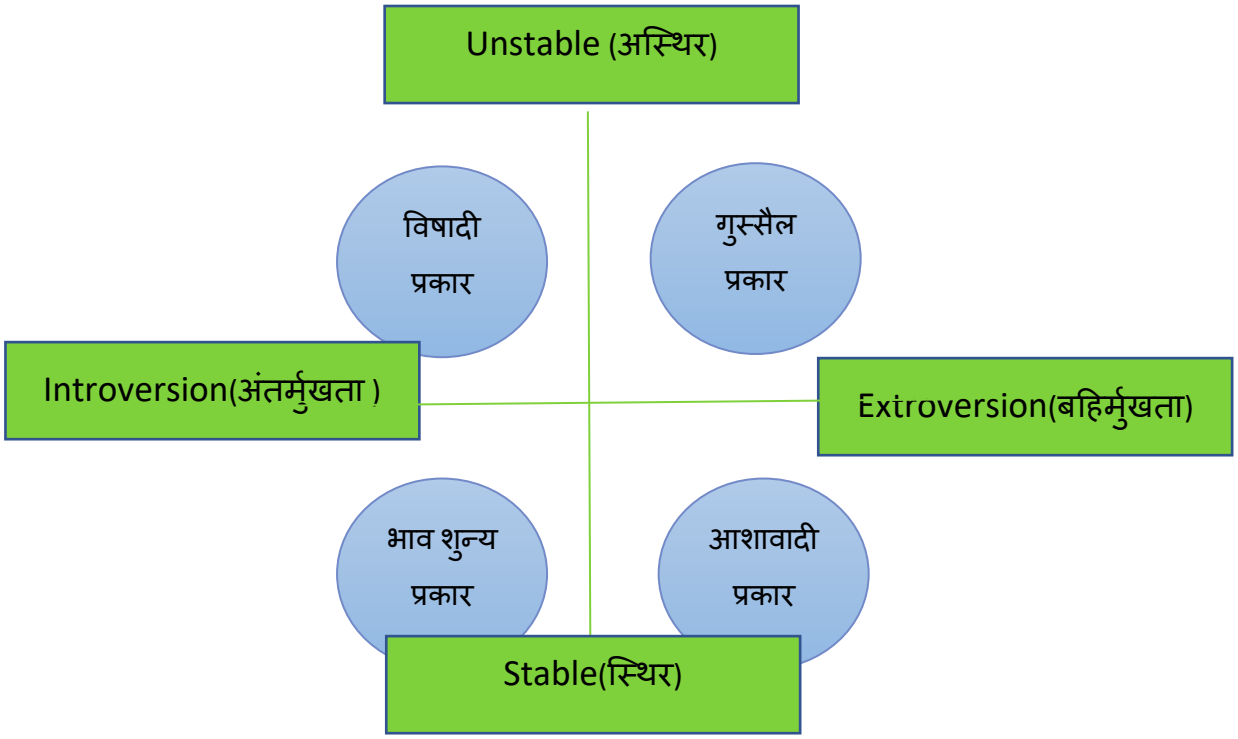

11.3.2.1. अन्तर्मुखता-बहिर्मुखता (Introversion-Extroversion)-

आइजनेक द्वारा अन्तर्मुखता के क्षेत्र में किये गये अध्ययनों के आधार पर यह स्पष्ट हुआ है कि जो व्यक्ति अन्तर्मुखी होते हैं, वह एकान्त प्रिय, संकोची, कल्पनाशील अन्तदर्शन करने वाला लज्जाशील, पीछे हटने वाला, आवेगी निर्णयों के प्रति अविश्वासी तथा अनुशासित जीवन को पसन्त करने वाला होता है।

व्यक्तित्व में जब अन्तर्मुखता की प्रबलता होती हे, तब ऐसा व्यक्ति आत्मकेन्द्रित रहना पसन्द करता है, वह सामाजिक कार्यक्रमों से दूर रहना पसन्द करता है, ऐसा दिवास्वप्न देखना अधिक पसन्द करते हैं। यह लोग अधिक चिन्ता करने वाले सिद्धान्तवादी प्रकृति के होते हैं, कार्य करने की अपेक्षा विचार करना अधिक पसन्द करते हैं, इन्हें किसी समस्या पर निर्णय करने में बहुत अधिक समय लगता है, यह अपने विचारों से दूसरों को प्रभावित करते हैं, बहुधा यह योजनायें बनाने में या मनन करने में लगे रहते हैं। आइजनेक (1953) के अनुसा बहिर्मुखी व्यक्ति सामाजिक होता है, पार्टियां पसन्त करता है, उसके बहुत से मित्र होते हैं, उद्दीपन युक्त होता है, प्रोत्साहन पर क्रिया करता है और आतुरतायुक्त होता है, बहिर्मुखी व्यक्ति संकोचहीन, व्यावहारिक यथार्थवादी और अधिक बोलने वाले होते हैं।

इस प्रकार के व्यक्तियों की कुछ विशेषताओं निम्न प्रकार से होती हैं-

1. बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाला व्यक्ति सामाजिक होता है, सामाजिक कार्यक्रमों में हिस्सा लेता है और सामाजिक पार्टियाँ पसन्द करता है, उसे दूसरे के घर आने-जाने और मिलने जुलने में बहुत आनन्द आता है, इनके मित्रों की अपेक्षाकृत अधिक होती है।

2. बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाले व्यक्ति में क्रियाशीलता और प्रतिक्रियाशील अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में पायी जाती है।

3. इस प्रकार के व्यक्ति दूसरे लोगों में जल्दी घुल-मिल जाते हैं, क्योंकि दूसरों से मिलने-जुलने में अच्छा लगता है, यह अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक बातूनी होते हैं।

4. बर्हिमुखी व्यक्तित्व वाले व्यकित में परिवर्तनशीलता बहुत अधिक मात्रा में पायी जाता है, वह भविष्य के प्रति आशावान रहते हैं, प्रोत्साहन पर तुरन्त कार्य करते हैं, यह अपने परिचितों के प्रति सजग रहते हैं।

5. बर्हिमुखी व्यक्ति दुसरों के साथ मिलकर अपनी ओर दूसरी की समस्याओं का समाधान करते हैं, इनमें चहलकदमी अधिक और भावुकता और संवेगात्मक ता कम मात्रा में पायी जाती है।

व्यक्तित्व के इस आयाम के सैद्धान्तिक पक्ष को स्पष्ट करते हुए आइजनेक (1972) ने लिखा है कि अन्तर्मुखी-बहिर्मुखी व्यक्तित्व में वैयक्तिक अन्तरों से न्यूरोफिजियोलॉजिकल प्रकार्यों में अन्तरों पर प्रकाश पड़ता है। मौलिक रूप से अन्तमुरखी लोगों को सरलता से उदीप्त किया जा सकता है तथा यह सामाजिक निषेधों को सरलता से सीख लते हैं। दूसरी ओर बहिर्मुखी लोगों को सरलता से उदीप्त नहीं किया जा सकता है। यह सामाजिक निषेधों को भी सरलता से नहीं सीखते हैं।

11.3.2.2-मनःस्ताप -स्थिरता (Neuroticism- Stability)-

मनःस्ताप एक द्विधुरवीय विमा है। इस विमा के एक छोर पर स्थिरता का गुण पाया जाता है और दूसरे छोर पर स्थिरताका गुण पाया जाता है। विमा के जिस छोर पर स्थिरता का गुण पाया जाता है वह सामान्यता का प्रतीक या सामान्यता का गुण है। इस विमा को उपरोक्त वृत्त चित्र द्वारा आइजनेक ने वृत में प्रदर्शित किया है। स्थिरता का प्रबलता जिन व्यक्तियों में होती है वह विषम परिस्थितियों में अपने को नियंत्रित रखते हैं और अपने दैनिक जीवन की समस्याओं का समाधान विश्वसनीय और वास्तविक ढंग से करते हैं जिन व्यक्तियों को व्यक्तित्व में स्थिरता पायी जाती है, उनमें निम्नलिखित महत्वपूर्ण विशेषतायें पायी जाती है-

1. स्थिरता व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों में उपयुक्त संवेगातमकता की अभिव्यक्ति होती है और इन व्यक्तियों का वास्तविकता से प्रभावपूर्ण सम्बन्ध होता है।
2. स्थिरता व्यक्तित्व वाले व्यक्ति उपयुक्त स्वयं का ज्ञान और उपयुक्त आत्म मूल्यांकन करने वाले होते हैं।
3. स्थिरता व्यक्तित्व वाले व्याक्तियों की उपयुक्त शारीरिक आवश्यकतायें होती हैं और वह इन शारीरिक आवश्यकताओं की मान्य ढंग से पूर्ति कर सकने की योग्यता भी रखते हैं।

इन व्यक्तियो में परिवार और समूह की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकने की योग्यता होती है।

4. स्थिरता व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों के जीवन के वास्तविक उद्देश्य होते हैं। यह पूर्व अनुभवों से लाभ उठाने की योग्यता रखते हैं और इनके व्यक्तित्व में स्थायित्व या संगति पायी जाती है।

मनःस्ताप विमा के दूसरे छोर पर स्थित व्यक्तियों के व्यक्तित्व में अस्थिरता का गुण पाया जाता है और अस्थिरता से सम्बन्धित व्यवहार विशेषतायें भी पायी जाती है। आइजनेक (1975) के अनुसार ऐसे व्यक्ति संवेदनशील, बेचैन, अक्रामक, जल्दी उद्दीप्त होने वाले, परिवर्तनशील, आवेगी और क्रियाशील होते हैं। इसी प्रकार से अस्थिरता व्यक्तित्व वाले लोगों का व्यवहार मूड़ी उत्सुकतापूर्ण, दृढ़ और असामान्यता दिखायी देती है, उनकी मानसिक योग्यतायें सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा कम दिखायी देती हैं। इनके अप्रसन्नता, चिन्ता, तना, अन्तर्द्वन्द्व और नैराश्य जैस लक्षण दिखायी देते हैं। आइजनेक ने अपने अध्ययनों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि जिन व्यक्तियो का स्वतन्त्र-नाड़ी संस्थान अधिक क्रियाशील प्रकार का होता है। ऐसे व्यक्ति वातावरण की उत्तेजनाओं की प्रति अधिक प्रतिक्रियाओं करते हैं। इस प्रकार के लोगों में मनःस्ताप के रोग होने की सम्भावनायें अधिक होती हैं। इन व्यक्तियों में अकारण भय, चिन्ता, मनोग्रस्तता, बाह्यता, मनःस्ताप आदि मानसिक रोगों से पीड़ित होने की सम्भावना अधिक होती है।

11.3.2.3- मनोविक्षिपतता -आवेग नियन्त्रण (Psychoticism- Impulse Control)

आइजनेक ने अपने सन् 1970 के बाद के अध्ययनों पर व्यक्तित्व विमाओं में एक तीसरी विमा को और जोड़ दिया यह तीसरी विमा मनोविक्षिप्तता विमा कहलायी। यह एक द्विध्रुवीय विमा है। यह विमा आज मनोविक्षिप्तता-आवेग नियंत्रण विमा कहलाती हे। आइजनेक (1976) के अनुसार व्यकितत्व क्रूरता, अति संवेदनशीलता और अति चिन्ता की विशेषतायें पायी जाती है। व्यक्तित्व की इस विमा के पहले छोर पर स्थित व्यक्ति समाज विरोधी, क्रूर, शंकालु और विद्वेषी प्रकृति के होते हैं। इस विमा के दूसरी छोर पर परा अहं की क्रियायें होती हैं आइजनेक ने सन् 1970 में इस विमा को मनोविक्षिप्तता पराअहं क्रियायें विमा कहा परन्तु बाद में इस विमा का नाम आवेग नियंत्रण विमा पड़ा। मनोविक्षिप्तता विमा वाले छोर से

जैसे आवेग नियंत्रण वाली विमा की ओर बढ़ेंगे वैसे-वैसे व्यक्ति के व्यक्तित्व में मनोविक्षिप्तता के उपरोक्त लक्षण कम होते जायेंगे और व्यक्ति में धीरे-धीरे आदर्श और नैतिकता की मात्रा बढ़ती जायेगी।

व्यक्तित्व की यह विमा मनोविक्षिप्तता, मानसिक रोग से भिन्न है। मनोविक्षिप्तता विमा वाले छोर के व्यक्तियों में कुछ अन्य विशेषतायें भी पायी जाती है। उदाहरण के लिए यह व्यक्ति खतरनाक परिस्थितियों में अपने को सुरक्षित रखने में कठिनाइ्र का अनुभव करते हैं, बहुधा यह देखा गयाहै कि दूसरे व्यक्ति इन व्यक्तियों को कुछ विचित्र व्यवहार करने वाला ही समझते हैं।

11.3.3- व्यक्तित्व का पदानुक्रमिक स्वरूप –

आइजनेक (1985) ने व्यक्तित्व की संरचना की व्याख्या चार स्तरों के आधार पर की है, जिसे निम्नांकित चित्र द्वारा प्रदर्शित किया गया है। चित्र में वर्णित पहला स्तर विशिष्ट अनुक्रिया स्तर है। विशिष्ट अनुक्रिया स्तर का अर्थ है कि एक विशेष परिस्थितियों में व्यक्ति के द्वारा किया गया व्यवहार। उदाहरण के लिए कक्षा में अध्यापक का एक व्याख्यान देना, परिस्थिति विशेष में किया गया विशिट व्यवहार या अनुक्रिया है। चित्र में वर्णित दूसरा स्तर आदतजन्य अनुक्रिया स्तर है। आदतजन्य अनुक्रिया स्तर का अर्थ है कि

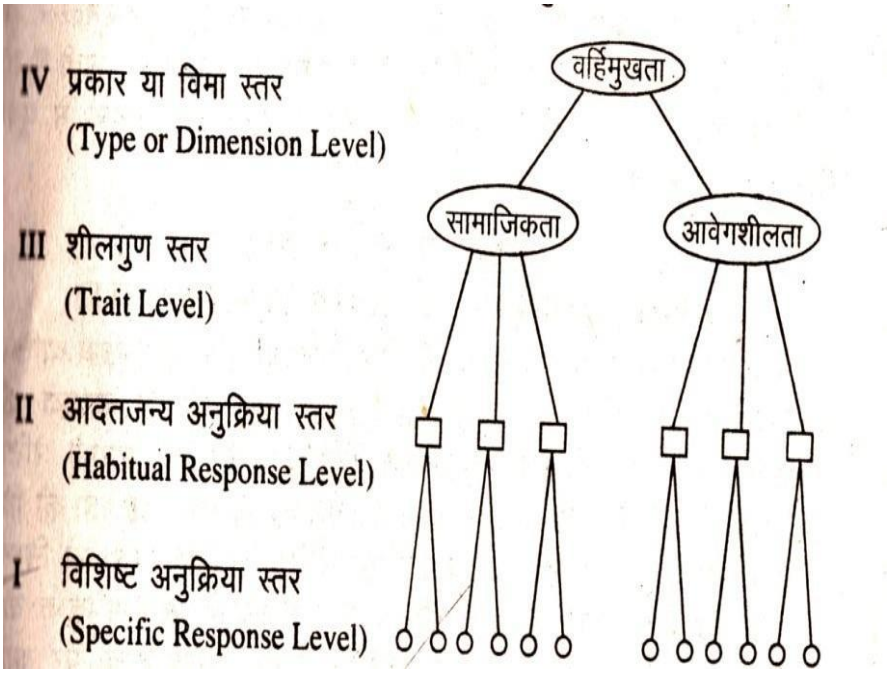

चित्र-आइजनेक (1985) द्वारा वणि्रत शीलगुण और विमा या प्रकार स्तर

जब विशिष्ट अनुक्रियायें बार-बार दुहरायी जाती हैं, तब वह क्रियायें एक आदत बन जाती हैं, इन आदतों से सम्बन्धित व्यवहार दूसरे स्तर, आदतजन्य अनुक्रिया स्तर पर होता है। उदाहरण के लिए कक्षा में अध्यापक का बार-बार व्याख्यान देने से उसकी आदत बन जायेगी और अनेक बार व्याख्यान देने के बाद जो उसका व्यवहार या अनुक्रिया होगी वह आदतजन्य अनुक्रिया स्तर के अन्तर्गत आयेगी।

चित्र में वर्णित पदानुक्रम का तृतीय स्तर शीलगुण स्तर है। इन शीलगुणों को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि यह वह आदतजन्य अनुक्रिया स्तरों के सेट हैं जो आपस में अन्तर्सम्बन्धित होते हैं। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति जिसमें सामाजिकता का शीलगुण हैं वह यदि अध्यापक है, तो कक्षा में बातचीत करता है, अन्य लोगों के साथ बातचीत करता है, वह पाटियों में जाना पसन्द करता है आदि।

चित्र में वर्णित पदानुक्रम का चतुर्थ स्तर प्रकारया विमा स्तर है। इस प्रकार या विमा स्तर को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि एक प्रकार से शीलगुणों के सेट हैं जो आपसे में अन्तर्सम्बन्धित होते हैं। यदि वह व्यक्ति मनोविक्षिप्तता प्रकार या आयाम से सम्बन्धित है, तो उस व्यक्ति में आवेगशीलता, अक्रामकता और समाज विरोधी शीलगुणों के अन्तर्सम्बन्धित सेट पाया जायेगा। आइजनेक ने इस चतुर्थ स्तर की प्रकार नहीं माना है बल्कि इसे व्यक्ति की एक विमा के रूप में स्वीकार किया है, आइजनेक ने इस विमा पर बहिर्मुखता को रखा है, जो मुख्यतः सामाजिकता और आवेगशीलता शीलगुणों के सेट के आधार पर बनी है।

इस प्रकार से आइजनेक ने पदानुक्रम मॉडल के आधार पर यह स्पष्ट किया है कि शीलगुण और विमा स्तर किस प्रकार से अलग-अलग है। आइजनेक ने यह भी बताया है कि जब व्यक्तित्व की एक विमा किसी व्यक्ति में पहचान ली जाती है तो उस विमा से सम्बन्धित शीलगुण कौन-कौन से पाये जायेंगे। इस सम्बन्ध में पूर्वकथन किया जा सकता है।

11.3.4- व्यक्तित्व का दैहिक आधार-

आइजनेक (1967) ने व्यक्तित्व की विमाओं के वर्णन के साथ-साथ व्यक्त्वि की इन विमाओं के दैहिक आधार की भी व्याख्या की है। उदाहरण के लिए अन्तमुर्खता-बहिर्मुखता विमा मस्तिष्क के आरोही रेटिक्यूलर एक्टीवेटिंग तन्त की क्रियाओं से सम्बन्धित है। इस आरोही रेटिक्यूलर एक्टीवेटिंग तन्त्र को निम्न चित्र द्वारा प्रदर्शित किया गया है। इस ARAS का सक्रियकरण स्तर मस्तिष्क के उच्च केन्द्रों के सक्रियककरण पर निर्भर करता है जो निम्न स्तरीय केन्द्रों पर कार्टिकल नियंत्रण को प्रभावित करता है। एक बहिर्मुखी व्यक्ति में कार्टिकल उत्तेजना स्तर निम्न रहता है, जबकि अन्तर्मुखी व्यक्ति में कार्टिकल उत्तेजना स्तर उच्च रहता है। परिणामस्वरूप सामान्य व्यक्ति की तुलना में बहिर्मुखी व्यक्ति को उत्तेजित करने में अतिरिक्त उत्तेजना की आवश्यकता होती है।

आइजनेक (1967) ने मनःस्ताप-स्थिरता विमा के दैहिक आधार को भी स्पष्ट किया है। इसविमा का स्म्बन्ध स्वतन्त्र नाड़ी संस्थान की क्रियाओं से है। आइजनेक ने बताया कि जिन व्यक्तियों का स्वतन्त्र नाड़ी संस्थान अधिक सवेंदनशील होता है। वह व्यक्ति वातावरण के उद्दीपकों के प्रति अधिक तीव्र

संवेगात्मक ढंग से अनुक्रिया करते हैं। ऐसे व्यक्तियों में मनःस्ताप रोगों के होने की सम्भावना अधिक होती है। सामान्य व्यक्तियों का स्वतन्त्रता नाड़ी संस्थान अपेक्षाकृत कम संवेदनशील होता है।

11.11.5- आइजनेक के सिद्धान्त का मूल्यांकन-

आइजनेक ने यद्यपि व्यक्ति सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं किया है, फिर भी व्यक्तित्व पर इतने शोध कार्य वैज्ञानिक विधियों द्वारा किये हैं कि उनके द्वारा प्राप्त परिणामों ने स्वतः ही एक व्यक्तित्व सिद्धान्त का रूप ले लिया है। जो कुछ भी उसका व्यक्तित्व सिद्धान्त है उसमें व्यक्तित्व गतिकी और व्यक्तित्व विकास से सम्बन्धित अध्ययन नगण्य है, इन्हें व्यक्तित्व सिद्धान्त की सीमा इसलिए नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि आइजनेक व्यक्तित्व सिद्धान्त प्रतिपादन के विरोधी थे।

आइजनेक जीवनपर्यन्त व्यक्तित्व से सम्बन्धित शोध कार्यों में व्यस्त रहे। उन्होंने व्यक्तित्व से सम्बन्धित शोध अध्ययन वैज्ञानिक विधियों द्वारा किये और अध्ययनों में उच्च सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया। उन्होंने व्यक्तित्व की जिन तीन विमाओं को कारक विश्लेषण की विधि की सहायता से प्राप्त किया है, उनके मापन के लिए एक परीक्षण (EPI) भी बनाया है। व्यक्तित्व मनोविज्ञान के क्षेत्र में आइजनेक के ये योगदान आगे आने वाले समय में शोधकर्ताओं के लिए प्रेरणा का स्रोत रहेंगे।

11.4. व्यक्तित्व के पंचआयामी कारक सिद्धांत-

समकालीन मनोविज्ञान में, व्यक्तित्व के 'बिग फाइव' कारक हैं व्यक्तित्व के पांच व्यापक डोमेन या आयाम, जिनका मानव व्यक्तित्व को वर्णित करने के लिए उपयोग किया जाता है।

बिग फाइव कारक हैं खुलापन (Openness), कर्तव्यनिष्ठा (Conscientiousness), बहिर्मुखता (Extraversion), सहमतता (Agreeableness) और मनोविक्षुब्धता (Neuroticism) (यदि पुनर्व्यवस्थित किया जाए तो OCEAN, या CANOE)। मनोविक्षुब्धता कारक को कभी-कभी भावनात्मक स्थिरता के रूप में भी संदर्भित किया जाता है. खुलेपन के घटक की व्याख्या के संबंध में कुछ असहमति अभी बाकी है, जिसे कभी-कभी 'समझ' कहा जाता है। प्रत्येक कारक के साथ अनेक विशिष्ट लक्षणों का समूह जुड़ा हुआ है जो एक साथ सह-संबद्ध हैं। उदाहरण के लिए, बहिर्मुखता में सामाजिकता, उत्साही, आवेग, और सकारात्मक भावनाएं जैसे संबंधित गुण शामिल हैं। पांच कारक मॉडल व्यक्तित्व का विशुद्ध व्याख्यात्मक मॉडल है, लेकिन मनोवैज्ञानिकों ने बिग फाइव (महान पांच) के लिए असंख्य सिद्धांत विकसित किए हैं। 10.4.1. बिग फाइव कारक - व्यक्तित्व के 'बिग फाइव' कारक और उनके अंशभूत लक्षण निम्नतः है-

- खुलापन - (कल्पनाशील/उत्सुक बनाम सतर्क/रूढ़िवादी)। कला, भावना, साहस, असामान्य विचार, जिज्ञासा, और विविध अनुभव के प्रशंसक।
- कर्तव्यनिष्ठा - (कुशल/संगठित बनाम आरामपसंद/लापरवाह)। अनुशासन, कर्तव्यपरायण, और कार्यसिद्धि का प्रयास, सहज के बजाय योजनाबद्ध व्यवहार की प्रवृत्ति।

- बहिर्मुखता - (मिलनसार/उत्साही बनाम शर्मीला/गुमसुम). ऊर्जा, सकारात्मक भावनाएं, सहमतता, और दूसरों के साथ उत्तेजना की तलाश करने की प्रवृत्ति।
- सहमतता - (मैत्रीपूर्ण/संवेदनशील बनाम प्रतिस्पर्धी/मुखर) दूसरों के प्रति शंकालु और विरोधी होने के बजाय दयालु और सहयोगी रहने की प्रवृत्ति।
- मनोविक्षुब्धता - (संवेदनशील/बेचौन बनाम निश्चिंत/आश्वस्त). क्रोध, चिंता, अवसाद या अतिसंवेदनशीलता जैसी अप्रिय भावनाओं को आसानी से अनुभव करने की प्रवृत्ति।

1. अनुभव के प्रति खुलापन-

खुलापन कला, भावना, साहस, असामान्य विचार, कल्पना, जिज्ञासा, और विविध अनुभव के प्रति सामान्य प्रशंसा है. यह लक्षण कल्पनाशील लोगों को व्यावहारिक, परंपरागत लोगों से अलग पहचानता है. लोग जो अनुभव के प्रति खुले हैं बौद्धिक रूप से उत्सुक, कला की सराहना करने वाले, और खूबसूरती के प्रति संवेदनशील होते हैं. उनकी तुलना परिपूर्ण, अधिक रचनात्मक और अपनी भावनाओं के बारे में जागरूक लोगों से की जाती है. उनके द्वारा अपरंपरागत विश्वास रखे जाने की ज्यादा संभावना है.

खुलेपन में कम अंक पाने वाले लोगों में अधिक परंपरागत, पारंपरिक दिलचस्पियां होने की संभावना है. वे जटिल, अस्पष्ट और गूढ़ की तुलना में अधिक सादे, ईमानदार, और स्पष्टता को पसंद करते हैं. वे कला और विज्ञान को संदेह की दृष्टि से देख सकते हैं, जिन प्रयासों को वे अनाकर्षक मान सकते हैं. खुलेपन के कुछ स्व-कथनों में शामिल हैं-

नमूना खुलापन मदें--

a. मेरे पास समृद्ध शब्दावली है।
b. मैं सजीव कल्पना कर सकता हूं।
c. मैं चीजों पर चिंतन-मनन में समय बिताता हूं।
d. मैं कठिन शब्दों का प्रयोग करता हूं।
e. मुझे कपोल-कल्पना में दिलचस्पी नहीं है। (विपरीत)
f. मुझे अमूर्त विचारों को समझने में कठिनाई होती है। (विपरीत)

2.कर्तव्यनिष्ठा

कर्तव्यनिष्ठा स्व-अनुशासन दर्शाने, कर्तव्यपरायण रहने और कार्यसिद्धि को लक्ष्य बनाने की एक प्रवृत्ति है. यह विशेषता सहज व्यवहार के बजाय योजनाबद्धता के प्रति प्राथमिकता को दर्शाती है. यह हमारे आवेगों

को नियंत्रित, विनियमित और संचालित करने के तरीके को प्रभावित करती है. कर्तव्यनिष्ठा में शामिल है कार्यसिद्धि की आवश्यकता (NAch) के रूप में ज्ञात कारक|

नमूना कर्तव्यनिष्ठा मदें--

1. मैं एक समय-सारणी का पालन करता हूँ।
2. मुझे व्यवस्था पसंद है।
11. मैं विवरणों पर ध्यान देता हूँ।
4. मैं अपनी चीजे चारों ओर बिखेरता हूँ।(विपरीत)
5. मैं अक्सर चीजों को उनके सही स्थान पर वापस रखना भूल जाता हूँ। (विपरीत)
6. मैं अपने कर्तव्यों से दूर भागता हूँ। (विपरीत)

11.बहिर्मुखता

बहिर्मुखता की विशेषताएं हैं सकारात्मक भावनाएं, मिलनसारिता, और उत्तेजना और दूसरों का साथ चाहने की प्रवृत्ति। इस विशेषता की खासियत है बाहरी दुनिया के साथ स्पष्ट तौर पर जुड़ना। बहिर्मुखियों को अन्य लोगों के साथ जुड़ने में मजा आता है, और अक्सर उत्साह से भरे माने जाते हैं। वे उत्साहित, कार्रवाई-उन्मुख व्यक्ति होते हैं, जिनके द्वारा उत्साहपूर्ण मौकों के लिए सदा 'हां!' या 'चलो!' कहने की संभावना रहती है। समूहों में वे बात करना, अपनी बात पर दृढ़ रहना, और खुद की ओर ध्यान आकर्षित करना पसंद करते हैं।

अंतर्मुखी लोगों में सामाजिक उल्लास और बहिर्मुखियों जैसी गतिविधि स्तर की कमी रहती है। वे शांत, संयत, सतर्क, और सामाजिक दुनिया में कम शामिल होते हैं। उनके द्वारा सामाजिक भागीदारी की कमी को शर्म या अवसाद के रूप में नहीं लेना चाहिए। अंतर्मुखी लोगों को बहिर्मुखियों की तुलना में कम उत्तेजना और अधिक अकेलेपन की जरूरत होती है। वे बहुत सक्रिय और ऊर्जावान हो सकते हैं, केवल सामाजिक रूप से नहीं।

नमूना बहिर्मुखता मदें--

1. मुझे सबके आकर्षण का केंद्र बनने से कोई आपत्ति नहीं है।
2. मुझे लोगों के आस-पास सुखद महसूस होता है।
3. मैं बातचीत शुरू करता हूं।
4. मैं अजनबियों के आस-पास चुप रहता हूँ। (विपरीत)

5. मुझे लोगों का ध्यान आकर्षित करना पसंद नहीं है। (विपरीत)

6. मैं कुछ नहीं कहना चाहता हूँ। (विपरीत)

4. सहमतता

सहमतता दूसरों के प्रति शंकालु और विरोधी होने के बजाय संवेदनशील और सहयोगशील होने की प्रवृत्ति है। यह विशेषता सामाजिक सद्भाव के लिए सामान्य चिंता में व्यक्तिगत मतभेदों को दर्शाता है। सहमत होने वाले व्यक्ति, अन्य लोगों के साथ चलने को महत्व देते हैं. वे आम तौर दूसरों का लिहाज करने वाले, मैत्रीपूर्ण, उदार, मददगार, और दूसरों के लिए अपने हितों से समझौता करने को तैयार होते हैं. सहमत लोगों का मानव स्वभाव के प्रति एक आशावादी दृष्टिकोण भी होता है. उनका मानना है कि लोग मूल रूप से ईमानदार, सभ्य, और विश्वसनीय होते हैं।

असहमत लोग अपने स्वार्थ को दूसरों के साथ चलने से ज्यादा मान देते हैं। आम तौर पर वे दूसरों की भलाई के बारे में उदासीन रहते हैं, और अन्य लोगों के लिए उनके सामने आने की कम संभावना है कभी-कभी दूसरों के प्रयोजन के बारे में उनका संदेह उन्हें शंकालु, रूखा, और असहयोगी बनाता है।

नमूना सहमतता मदें--

1. मैं दूसरों की भावनाओं को महसूस करता हूँ।

2. मैं नरम दिल हूँ।

3. मैं लोगों को निश्चिंत करता हूँ।

4. मैं दूसरों के लिए समय निकालता हूँ।

5. मुझे दूसरे लोगों की समस्याओं में कोई दिलचस्पी नहीं है। (विपरीत)

6. मुझे दूसरों की बहुत कम चिंता रहती है। (विपरीत)

7. मुझे अलग रहना पसंद है। (विपरीत)

5.मनोविक्षुब्धता-

मनोविक्षुब्धता क्रोध, चिंता, या अवसाद जैसी नकारात्मक भावनाओं को अनुभव करने की प्रवृत्ति है। इसे कभी-कभी भावनात्मक अस्थिरता कहा जाता है. जो लोग मनोविक्षुब्धता में अधिक अंक पाते हैं वे भावनात्मक रूप से प्रतिक्रियाशील और तनाव के प्रति कमजोर होते हैं। उनके द्वारा आम हालातों को संकटपूर्ण और मामूली कुंठाओं को निराशाजनक रूप से मुश्किल मानने की संभावना ज्यादा है। उनकी नकारात्मक भावनात्मक प्रतिक्रियाएं असामान्य रूप से लंबे समय तक बने रहने की संभावना होती है, जिसका अर्थ है कि वे अक्सर खराब मूड में रहते हैं। मनोविक्षुब्धता में अधिक अंक पाने वाले व्यक्ति में

भावनात्मक नियंत्रण की ये समस्याएं, उनकी स्पष्ट रूप से सोचने, निर्णय लेने और तनाव के साथ प्रभावी ढंग से जूझने की क्षमता को कम करती है।

पैमाने के दूसरे छोर पर, मनोविक्षुब्धता में कम अंक पाने वाले व्यक्ति, आसानी से परेशान नहीं होते और भावनात्मक रूप से कम प्रतिक्रियाशील होते हैं. वे शांत, भावनात्मक रूप से स्थिर, और सतत नकारात्मक भावनाओं से मुक्त होते हैं. नकारात्मक भावनाओं से मुक्ति का मतलब यह नहीं है कि कम अंक पाने वाले अधिक सकारात्मक भावनाओं का अनुभव करते हैं।

नमूना मनोविक्षुब्धता मदें--

1. मैं आसानी से तनाव महसूस करने लगता हूँ।
2. मैं आसानी से परेशान हो जाता हूँ।
3. मेरी मनोदशा अक्सर बदलती रहती है।
4. मैं अक्सर उदास हो जाता हूँ।
5. मैं आम तौर पर आराम से रहता हूँ। (विपरीत)
6. मैं शायद ही कभी उदास होता हूँ। (विपरीत)

11.4.2. बिग फाइव के निर्धारक-

बिग फाइव के प्रमुख निर्धारक निम्न है .

11.4.2.1. वंशानुगतता-

सभी पांच कारक दोनों आनुवंशिकता और पर्यावरण से प्रभावित होते दिखते हैं। जुड़वे अध्ययन का सुझाव है कि ये प्रभाव मोटे तौर पर बराबर अनुपात में योगदान देते हैं। उपलब्ध अध्ययनों के विश्लेषण ने बिग फाइव लक्षणों के लिए समग्रतः वंशानुगतता को निम्नतः पाया-

खुलापन – 57%

कर्तव्यनिष्ठा – 49%

बहिर्मुखता – 54%

सहमतता – 42%

मनोविक्षुब्धता – 48%

11.4.2.2. विकास

अनुदैर्ध्य डेटा के कई अध्ययन, जो समय के साथ लोगों के परीक्षण प्राप्तांक, और प्रतिनिधिक-समूह डेटा को सहसंबंधित करते हैं, जो विभिन्न आयु समूहों के आर-पार व्यक्तित्व स्तरों की तुलना करते हैं, वयस्कता के दौरान व्यक्तित्व लक्षणों में उच्च स्तरीय स्थिरता दर्शाते हैं। हाल ही के अनुसंधान और पिछले अध्ययनों के मेटा-विश्लेषण, तथापि, सूचित करते हैं कि जीवन-काल के विभिन्न बिंदुओं में सभी पांच लक्षणों में परिवर्तन होता है। नया शोध परिपक्वता प्रभाव सबूत दर्शाता है। औसतन, सहमतता और कर्तव्यनिष्ठा स्तरों में आम तौर पर समय के साथ वृद्धि होती है, जबकि बहिर्मुखता, मनोविक्षुब्धता और खुलेपन में कमी आती है। इन सामूहिक प्रभावों के अतिरिक्त, व्यक्तिगत मतभेद भी रहे हैं। अलग-अलग लोग जीवन के सभी चरणों में अद्वितीय परिवर्तन पैटर्न प्रदर्शित करते हैं।

11.4.2.3. लिंग भेद-

26 देशों से अंतर-सांस्कृतिक अनुसंधान (छ = 23,031 अनुसंधानाधीन लोग) और फिर 55 देशों में (छ = 17,637 अनुसंधानाधीन लोग) ने बिग फाइव की सूची के प्रति प्रतिक्रियाओं में लिंग भेद के वैश्विक पैटर्न को दर्शाया है। महिलाएं लगातार उच्च मनोविक्षुब्धता और सहमतता रिपोर्ट करती हैं, और पुरुष अक्सर अधिक बहिर्मुखता और कर्तव्यनिष्ठा रिपोर्ट करते हैं। व्यक्तित्व लक्षणों में लिंग भेद समृद्ध, स्वस्थ, और समानतावादी संस्कृतियों में अधिक होते हैं, जहां महिलाओं को पुरुषों के समान अवसर मिलते हैं।

11.4.2.4. जन्म क्रम-

अक्सर यह सुझाव दिया गया है कि व्यक्ति अपने जन्म के क्रम से भिन्न होते हैं। फ्रैंक जे. सुलोवे का तर्क है कि जन्म क्रम व्यक्तित्व लक्षण के साथ सहसंबद्ध है। उनका दावा है कि बाद में पैदा होने वाले बच्चे की तुलना में पहलौठा अधिक कर्तव्यनिष्ठ, अधिक सामाजिक रूप से प्रभावी, कम सहमत, और नए विचारों के प्रति कम खुला होता है।

11.4.3. आलोचनाएं- बिग फाइव पर अधिक शोध किया गया है। इसके परिणामस्वरूप मॉडल के लिए दोनों आलोचना और समर्थन हासिल हुए हैं। आलोचकों का तर्क है कि एक व्याख्यात्मक या भविष्यसूचक सिद्धांत के रूप में बिग फाइव की गुंजाइश के लिए दायरे मौजूद हैं। यह बहस की जाती है कि बिग फाइव सभी मानव व्यक्तित्व की व्याख्या नहीं करते हैं। व्यक्तित्व लक्षण की आयामी संरचना को पहचानने के लिए प्रयुक्त कार्यप्रणाली, कारक विश्लेषण को अक्सर विभिन्न कारक सहित समाधानों के बीच चयन के लिए वैश्विक-मान्यता आधार न होने के कारण चुनौती दी गई है। एक और सतत आलोचना यह है कि बिग फाइव सिद्धांत से प्रेरित नहीं है। यह केवल कारक विश्लेषण के अधीन साथ एकत्रित होने की प्रवृत्ति वाले कतिपय विवरणकों की डेटा-संचालित जांच है। इसके अतिरिक्त पंच-आयामी मॉडल के कुछ लाभ (advantages) तथा अलाभ (disadvantages) बतलाए गए हैं।

पंच-आयामी मॉडल के कुछ लाभ -

1. पंच-आयामी मॉडल द्वारा व्यवसायिक अभिरुचि की पहचान करने में मदद मिलती है। इस मॉडल या सिद्धान्त के अनुसार जिन व्यक्तियों में बहिर्मुखता का आयाम ऊँचा होता है, वे सामाजिक एवं उद्यमशील पेशाओं में उन व्यक्तियों की तुलना में अधिक उपयोगी सिद्ध होंगे जो अंतर्मुखता में अधिक होंगे। उसी तरह से जो व्यक्ति खुलापन के आयाम पर उच्च होंगे, वे कलात्मक तथा अन्वेषणात्मक पेशाओं में अधिक श्रेष्ठ होते पाये जाते हैं।
2. पंच-आयामी सिद्धान्त से कुछ व्यक्तित्व विकृतियों के स्वरूप को समझने में मदद मिलती है। इस सिलसिले में कोस्टा एवं विडिगर द्वारा किए गए शोधों से जो आश्चर्यचकित करने वाला तथ्य सामने आया है, वह यह है कि कुछ असामान्य व्यवहार व्यक्ति में सामान्य व्यक्तित्व शीलगुणों का अतिरंजित प्रारूप होता है न कि वह सामान्य शीलगुणों से विचलित अवस्था होता है। जैसे- इन लोगों के अनुसार जब कर्त्तव्यनिष्ठता के आयाम पर व्यक्ति ऊँचा होता है तो उसमें बाध्यकारी व्यक्तित्व विकसित हो जाता है तथा जब व्यक्ति सहमतिजन्यता आयाम पर अत्यधिक निम्न होता है, तो उसमें समाज-विरोधी व्यक्तित्व का विकास हो जाता है।
3. पंच-आयामीय सिद्धान्त मानसिक रूप से क्षुब्ध व्यक्तियों को सही मनोवैज्ञानिक उपचार प्रदान करने में भी सहायक सिद्ध हुआ है। मैककेनजी के अनुसार व्यक्तित्व के इन पाँच आयामों को जानकर व्यक्ति की समस्याओं को तथा उसके उपचार करने के बारे में ठीक ढंग से योजना बना सकने में चिकित्सक समर्थ हो पाता है। जैसे- जो व्यक्ति खुलापन के आयाम पर उच्च होगा, वे वैसे चिकत्साओं से अधिक लाभ उठा पायेंगे जिसमें अन्वेषण तथा कल्पना को प्रोत्साहन मिलता हो। अभी हाल में पंच कारकीय सिद्धान्त को वैवाहिक परामर्श के लिए भी उपयोगी बतलाया गया है।
4. इस सिद्धान्त द्वारा व्यक्तित्व की एक सार्वभौम व्याख्या होती है जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति के व्यवहारों के बारे में पूर्वकथन तथा उसे परिस्थिति के अनुसार नियंत्रित करना कापी आसान हो जाता है।
5. इस सिद्धान्त का सबसे बड़ा गुण उस पर आधारित NEO-PI-r test जैसे व्यक्तित्व प्रश्नावली का निर्माण है। इस प्रश्नावली की विश्वसनीयता तथा वैधता काफी अधिक है तथा कई अध्ययनों से यह साबित हो गया है कि यह एक काफी बहु उपयोगी प्रश्नावली है।
6. इस सिद्धान्त से एक महत्वपूर्ण प्राक्कल्पना सर्जित हुआ है जो मनोवैज्ञानिकों के लिए नये शोध का आकर्षण केन्द्र बना हुआ है। प्राक्कल्पना यह है कि व्यक्तित्व पर्यावरण में पारिवारिक पर्यावरण खासकर वैसा पारिवारिक पर्यावरण जिसकी साझेदारी सभी सदस्यों के लिए नहीं हो

पाती है, (अर्थात् उस तरह का पारिवारिक अनुभव कुछ ही दस्यों को होता है) व्यक्तित्व निर्धारण के लिए महत्वपूर्ण होता है।

पंच-आयामी मॉडल के कुछ अलाभ -इन लाभों के बावजूद पंच-आयामीय सिद्धान्त की कुछ परिसीमाएँ है जिनके चलते उसकी आलोचना हुई है। ऐसी प्रमुख परिसीमाएँ निम्नांकित हैं-

1. पंच-आयामी सिद्धान्त व्यक्ति का एक नया सिद्धान्त है जिसपर अभी शोध जारी है। इस कारण अबतक यह स्पष्टनहीं हो पाया है इस सिद्धांत में जो पाँच कारक की बात कही गयी है, वह कहाँ तक विभिन्न व्यक्तित्वों के बीच अंतर करने में सक्षम होगा ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि अमुक तरह का व्यक्तित्व अमुक तरह के मनश्चिकित्सा से अधिक लाभ उठा पायेगा।
2. मिलर (Miller 1991) के अनुसार यह सिद्धान्त सिर्फ विभिन्न तरह के मनोरोग (psychopathology) का वर्णन तो कर पाता है परंतु उसकी व्याख्या नहीं कर पाता है।
3. व्यक्तित्व के अन्य सिद्धान्तों के समान इस सिद्धान्त में कोई चिकित्सीय उपागम (therapeutic approach) की संकेत नहीं मिलता है।
4. पंच-आयामीय सिद्धान्त का आधार कारक विश्लेषण है तथा कोस्टा एवं मैकक्रे कोस्टा एवं मैकक्रे (Costa & McCrae ,1994) जो इस सिद्धान्त के प्रमुख प्रवर्त्तक हैं, के अनुसार एक काफी वैज्ञानिक एवं वैध प्रविधि है। आलोचकों का मत है कि यदि यह बात सही है तथा व्यक्तित्व सिर्फ इन बड़े पाँच आयामों से ही बना होता है, तो क्यों आइजेंक (Eysenck, 1993) तथा जुकरमैन पाँच से कम आयाम से ही पूर्णतः संतुष्ट दीखते हैं। कुछ अन्य मनोवैज्ञानिकों जिसमें पेरविन(Pervin, 1994) का नाम मुख्य है, ने इन पाँच आयामों के स्तर (status) पर अभी और अधिक विचार विमर्श करने की आवश्यकता महसूस किया है।
5. ब्लौक (Block, 1995), बस (Buss, 1988) तथा मैकएडैम्स (McAdams ,1992) ने इस सिद्धांत की आलोचना करते हुए कहा है कि इन बड़े पाँच आयामों के अतिरिक्त व्यक्तित्व में और भी कई चीजें हैं जिनकी चर्चा तक इस सिद्धान्त में नहीं की गयी है।जैसे- आत्म-संप्रत्यय (self-ceoncept), संज्ञानात्मक शैली (cognitive styles) तथा अचेतन (unconscious) कुछ ऐसे ही गुण हैं जिनपर सिद्धान्त में कोई चर्चा नहीं की गयी है।
6. हालाँकि अभी हाल में रोबिन्स तथा उनके सहयोगियों (Robins et al., 1996) ने यह दिखलाने का प्रयास किया है कि ये बड़े पाँच कारक किस तरह से आपस में मिलकर व्यक्तित्व का एक प्रकार का निर्माण करते हैं, परंतु सच्चाई यह है कि इस सिद्धांत द्वारा व्यक्तित्व के संगठन (organization) की व्याख्या नहीं होती है। इस पर टिप्पणी करते हुए मैक ऐडम्स (McAdams ,1992) ने कुछ इस तरह कहा है, 'पंच-कारकीय मॉडल तत्त्वतः अजनबी का मनोविज्ञान है- किसी का द्रुत एवं साधारण प्रतिकृति है।'

7. पंच-आयामीय सिद्धान्त द्वारा व्यक्तित्व परिवर्तन (personality change) की व्याख्या नहीं होती है। इसके द्वारा इस तथ्य पर कहीं भी प्रकाश डाला गया है कि व्यक्तित्व में परिवर्तन किस प्रकार होता है।

इन आलोचनाओं के बावजूद पंच-आयामीय सिद्धान्त व्यक्तित्व का एक नया एक उत्साहवर्धक सिद्धान्त है। इसे आधुनिक मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व का एक 'सहमतिजन्य मॉडल' (consensus model) कहा है क्योंकि इसके पाँचों आयामों एवं उनकी उपयोगिताओं पर मनोवज्ञानिकों के बीच बहुत हद तक सहमति है।

अभ्यास प्रश्न

1. आइजेंक के व्यक्तित्व सिद्धांत में किसे सुपर कारक कहा गया है।

a. अन्तर्मुखता-बहिर्मुखता

b. ओ.टी. आकड़ा

c. समूहनिर्भर-आत्मनिर्भर

d. क्यू. आकड़ा

2. बड़े पाँच कारक कौन है-

a. स्नायु विकृति, बहिर्मुखता, सहमतिजन्यता, खुलापन तथा कर्तव्यनिष्ठता

b. स्नायुविकृति, अन्तर्मुखता, सहमतिजन्यता, मनोविक्षिप्तता तथा खुलापन

c. मनोविक्षिप्त, स्नायुविकृति, कर्तव्यनिष्ठता, खुलापन तथा अन्तर्मुखता

d. अन्तर्मुखता, स्नायुविकृति, सहमतिजन्यता, खुलापन तथा कर्तव्यनिष्ठता

3. आइजेंक के अनुसार मनस्ताप के दूसरे ध्रुव पर..... होता है।

4. एन.ई.ओ. व्यक्तित्व आविष्कारिका से ..... मापन होता है।

11.5. सारांश

1. आइजेंक ने व्यक्तित्व की संरचना का वर्णन प्रकार उपागम से न करके विमीय उपागम से किया है इन्होंने व्यक्तित्व की संरचना की व्याख्या चार वीमाओं अर्थात् अन्तर्मुखता-बर्हिमुखता, स्नायु विकृति-स्थिरता, मनोविक्षीप्तता-पराहं तथा बुद्धि के आधार पर किया है इनमें से प्रथम तीन वीमाओं

को मापने के लिए आइजेंक ने एक विशे ष प्रश्नावली का निर्माण किया है जिसे आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली कहा गया है।

2. व्यक्तित्व के पंचआयामी सिद्धांत की खास विशे षता यह है कि व्यक्तित्व की सम्पूर्ण व्याख्या व्यक्तित्व के पाँच प्रमुख आयामों- स्नायु विकृति, बहिर्मुखता, खुलापन, सहमति जन्यता तथा कर्तव्यनिष्ठा के रूप में की गयी है। इन आयामों को मापने के लिए एक विशेष प्रश्नावली जिसे (NEO-PI-R) कहा गया है जिसमें कुल 240 एकांश है।

3. व्यक्तित्व के विकास में 40 प्रतिशत आनुंवाशिक कारकों का 35प्रतिशत पारिवारिक पर्यावरण का 5प्रतिशत साझा पारिवारिक पर्यावरण का होता है। बाकी 20प्रतिशत में वैसे अनुभूतियों होती है जिसे व्यक्ति विद्यालय तथा साथियों से प्राप्त करता है।

11.6. शब्दावली

NEO-PI-R.(Neuroticism-Extraversion-Openness) व्यक्तित्व की सम्पूर्ण व्याख्या व्यक्तित्व के पाँच प्रमुख आयामों- स्नायु विकृति, बहिर्मुखता, खुलापन, सहमति जन्यता तथा कर्तव्यनिष्ठा के रूप में की गयी है। इन आयामों को मापने के लिए एक विशेष प्रश्नावली।

मनोविक्षप्ता . क्रोध, चिंता, या अवसाद जैसी नकारात्मक भावनाओं को अनुभव करने की प्रवृत्ति है।

अन्तर्मुखता. एकान्त प्रिय, संकोची, कल्पनाशील अन्तदर्शन करने वाला लज्जाशील, पीछे हटने वाला, आवेगी निर्णयों के प्रति अविश्वासी तथा अनुशासित जीवन को पसन्त करने वाला व्यक्ति।

बहिर्मुखता . सामाजिक, पार्टियां पसन्द करने वाला, मित्र बनाने वाला, उद्दीपन युक्त, प्रोत्साहन पर क्रिया करने वाला और आतुरतायुक्त व्यक्ति।

11.7. अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1- a 2-a 3. स्थिरता 4. पंचआयामी कारक

11.8. संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. व्यक्तित्व मनोविज्ञान, अरूण कुमार सिंह, एवं आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास

2. उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान-अरूण कुमार सिंह- मोतीलाल - बनारसी दास

3. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, सीताराम जायसवाल, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा

4. व्यक्तित्व मनोविज्ञान, मधु अस्थाना एवं किरण बाला वर्मा, मोतीलाल बनारसी दास

5. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, डी.एन. श्रीवास्तव, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा-2

6. प्रतियोगिता मनोविज्ञान, अरूण कुमार सिंह, एवं आशीष कुमार सिंह, मोतीलाल बनारसी दास

11.9. निबन्धात्मक प्रश्न-

1. आइजेंक के व्यक्तित्व सिद्धांत का आलोचनात्मक वर्णन कीजिए।
2. आइजेंक के अनुसार व्यक्तित्व की संरचना और मापन पर प्रकाश डालिये।
3. व्यक्तित्व के पंचकारकीय सिद्धांत की आलोचनात्मक व्याख्या करें।
4. निम्नलिखित पर संक्षिप्त नोट लिखिए-

a. सुपरकारक

b. अन्तर्मुखता-बहिर्मुखता

c. स्नायुविकृति-स्थिरता

d. मनोविक्षिप्तता

e. एन.ई.ओ. व्यक्तित्व आविष्कारिका

f. सहमति जन्यता

इकाई 12. व्यक्तित्व का मूल्यांकन; व्यक्तित्व परीक्षण और इसके महत्वपूर्ण मुद्दे

इकाई संरचना

12. 1 प्रस्तावना

12. 2 उद्देश्य

12. 3 मूल्यांकन की आवश्यकताएं और उद्देश्य

12. 4. व्यक्तित्व मूल्यांकन के तरीके

12. 4.1 साक्षात्कार

12. 4.2 प्रोजेक्टिव तकनीक

12. 4.3 प्रोजेक्टिव तकनीकों का वर्गीकरण

12. 4.4 एसोसिएशन तकनीक

12. 5 आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली

12. 6 आइजेंक माड्सले व्यक्तित्व अनुसूची

12. 7 टाइप ए और टाइप बी व्यवहार प्रतिमान

12. 8 सारांश

12. 9 निबंधात्मक प्रश्न

12. 10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

12. 1 प्रस्तावना

व्यक्तित्व परीक्षण या मूल्यांकन से तात्पर्य किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण का आकलन करना है, अर्थात व्यक्ति के विशिष्ट व्यवहार पैटर्न और उनकी प्रमुख और स्थिर विशेषताओं इत्यादि के बारे में जानकारी प्राप्त करना है। चूंकि व्यक्तित्व के विभिन्न सैद्धांतिक विवरण हैं, और सवाल यह है कि लोग कैसे पता लगाते हैं कि उनका व्यक्तित्व किस प्रकार का है? व्यक्तित्व का आकलन करने या मापने या मूल्यांकन करने के तरीके अलग-अलग हैं, और ये तरीके अलग -अलग व्यक्तित्व के सिद्धांत के अनुसार विकसित किए जाते हैं। हालाँकि, व्यक्तित्व मूल्यांकन करने वाले अधिकांश मनोवैज्ञानिक ज़रूरी नहीं कि खुद को सिर्फ़ एक सैद्धांतिक दृष्टिकोण से बाँध लें, बल्कि वे व्यक्तित्व के बारे में एक उदार दृष्टिकोण अपनाना पसंद करते हैं। उदार दृष्टिकोण से तात्पर्य है कि विभिन्न सिद्धांतों के उन हिस्सों को चुनने का एक तरीका है जो किसी विशेष स्थिति के लिए सबसे उपयुक्त लगते हैं, न कि किसी घटना को समझाने के लिए सिर्फ़ एक सिद्धांत का उपयोग करते है।

वास्तव में, व्यवहार को अलग-अलग दृष्टिकोणों से देखने पर अक्सर किसी व्यक्ति के व्यवहार के बारे में ऐसी अंतर्दृष्टि मिल सकती है जो केवल एक दृष्टिकोण से आसानी से नहीं मिल सकती (सिकारेली और मेयर, 2006)। इसलिए, व्यक्तित्व मूल्यांकन करने वाले कई मनोवैज्ञानिक अलग-अलग दृष्टिकोणों का उपयोग करते हैं और इसके मूल्यांकन के लिए अलग-अलग तकनीकें भी अपनाते हैं। यहाँ यह भी ध्यान रखना ज़रूरी है कि व्यक्तित्व मूल्यांकन उन उद्देश्यों के संबंध में भी भिन्न हो सकता है जिनके लिए यह किया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि उद्देश्य आत्म-समझ है, तो व्यक्ति अलग-अलग परीक्षण/सूची चुन सकता है, यदि उद्देश्य व्यक्ति को उसके व्यक्तित्व लक्षणों के अनुसार वर्गीकृत करना है, तो परीक्षणों का एक अलग सेट उपयोगी हो सकता है। अंत में, यदि उद्देश्य निदान (नैदानिक मनोवैज्ञानिक, परामर्शदाता आदि) है, तो परीक्षणों का एक पूरी तरह से अलग सेट अधिक उपयोगी हो सकता है।

व्यक्तित्व के आकलन के लिए कई परीक्षण/सूचियाँ उपलब्ध हैं। मोटे तौर पर, इन्हें तीन श्रेणियों में से एक में समझा जा सकता है। ये व्यक्तिपरक, वस्तुनिष्ठ और प्रक्षेपी विधियाँ हैं। व्यक्तिपरक दृष्टिकोण में किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का आकलन उसके काम को ध्यान में रखते हुए किया जाता है, जैसे कि उसने अपने पूरे जीवन में क्या किया है। इसमें उसके आत्मकथात्मक विवरण और जीवनियाँ आदि पर भी विचार किया जा सकता है। लेकिन इसकी एक बड़ी सीमा यह है कि ऐसी संभावनाएँ हो सकती है कि व्यक्ति अपनी खूबियों को बढ़ा-चढ़ाकर बता सकता है और अपनी सीमाओं को कम करके बता सकता है और इसलिए हम व्यक्तित्व की सही तस्वीर से वंचित रह सकते हैं। व्यक्तित्व मूल्यांकन में प्रयास यह होता है कि मूल्यांकन को विषय/प्रतिभागी (जिसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाना है) और मूल्यांकनकर्ता दोनों की ओर से किसी भी तरह के पूर्वाग्रह से मुक्त किया जाए। यह प्रस्तुत करता है कि ऐसे बहुत से परीक्षण/सूचियाँ हैं जिनके द्वारा हम किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का वस्तुनिष्ठ रूप से आकलन कर सकते हैं और ये इस उद्देश्य के लिए महत्वपूर्ण मापक/उपकरण हैं। जहाँ कुछ परीक्षण सतही विशेषताओं का आकलन करते हैं, वहीं अन्य व्यक्तित्व के अंतर्निहित पहलुओं को उजागर करते हैं। वर्तमान में उपयोग में

आने वाली प्रमुख प्रक्रियाओं में से, महत्वपूर्ण वे प्रक्रियाएँ हैं जो विषय-वस्तु प्रासंगिकता, अनुभवजन्य मानदंड कुंजीयन, कारक विश्लेषण और व्यक्तित्व सिद्धांत पर आधारित हैं। व्यक्तित्व मूल्यांकन उन उद्देश्यों में भिन्न हो सकता है जिनके लिए उन्हें संचालित किया जाता है। व्यक्तित्व मूल्यांकन का उपयोग नैदानिक और परामर्श मनोवैज्ञानिकों, मनोचिकित्सकों और अन्य मनोवैज्ञानिक पेशेवरों द्वारा व्यक्तित्व विकारों के निदान में किया जाता है।

12. 2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप निम्नलिखित कार्य करने में सक्षम होंगे:

- व्यक्तित्व मूल्यांकन को परिभाषित करने में;
- व्यक्तित्व मूल्यांकन की प्रमुख विशेषताओं की व्याख्या करने में;
- व्यक्तित्व मूल्यांकन के उद्देश्यों की व्याख्या करने में;
- व्यक्तित्व के मूल्यांकन में प्रयुक्त विभिन्न विधियों की व्याख्या करने में;
- व्यक्तित्व मूल्यांकन के विभिन्न प्रकार के उपकरणों के बीच अंतर करने में;
- प्रक्षेपी तकनीकों की विस्तार से व्याख्या करने में;
- वस्तुनिष्ठ तकनीकों की विस्तार से व्याख्या करने में;
- आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली का उपयोग करने में;
- आइजेंक माड्सले व्यक्तित्व अनुसूची का उपयोग करने में और;
- टाइप ए और टाइप बी व्यवहार प्रतिमान का उपयोग करने में

12. 3 मूल्यांकन की आवश्यकताएं और उद्देश्य

मनोविज्ञान के प्रत्येक बढ़ते क्षेत्र के साथ परीक्षण अधिक से अधिक महत्वपूर्ण होता जा रहा है। परंपरागत रूप से, परीक्षणों का उपयोग केवल अलग-अलग परिस्थितियों में व्यक्तिगत अंतर या अंतर-व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं को मापने के लिए किया जाता था। व्यक्तिगत अंतर की प्रकृति और सीमा, उनके पास मौजूद मनोवैज्ञानिक लक्षण, विभिन्न समूहों के बीच अंतर आदि कुछ प्रमुख घटक बन रहे हैं जो माप की सहायता के रूप में मूल्यांकन की मांग करते हैं। व्यक्तित्व के विभिन्न घटकों की पहचान के लिए व्यक्तित्व परीक्षण एक आवश्यक शर्त है। व्यक्तित्व परीक्षण व्यक्तित्व के भावनात्मक और प्रेरक लक्षणों के माप प्रदान करता है।

12. 4. व्यक्तित्व मूल्यांकन के तरीके

व्यक्तित्व को मापने वाले कुछ महत्वपूर्ण परीक्षण और तकनीकें में शामिल हैं (i) साक्षात्कार (ii) प्रोजेक्टिव तकनीकें (iii) एसोसिएशन तकनीकें (iv) अभिव्यंजक तकनीकें

12. 4.1 साक्षात्कार (Interviews)

साक्षात्कार व्यक्तित्व मूल्यांकन की एक विधि है जिसमें साक्षात्कारकर्ता को मनोवैज्ञानिक द्वारा पूछे गए प्रश्नों का उत्तर संरचित या असंरचित तरीके से देना होता है। कुछ चिकित्सक सर्वेक्षण प्रक्रिया में साक्षात्कारकर्ता के उत्तरों को नोट करते हैं। इस प्रकार का साक्षात्कार असंरचित तरीके से होता है और स्वाभाविक रूप से आगे बढ़ता है।

साक्षात्कार की सीमाएँ (Limitations of Interviews)

मनोवैज्ञानिक द्वारा साक्षात्कार के लिए क्लाइंट की अंतरतम भावना, चिंताओं और आग्रहों की रिपोर्ट की आवश्यकता होती है। इसे क्लाइंट या साक्षात्कारकर्ता सीधे जान सकता है और इस प्रकार, सर्वेक्षण जैसे स्व-रिपोर्ट डेटा के साथ आने वाली समस्याओं का सामना साक्षात्कार के दौरान भी किया जाता है। साक्षात्कारकर्ता/ क्लाइंट गलत सूचना दे सकते हैं, झूठ बोल सकते हैं, वास्तविक तथ्यों या वास्तविकता को विकृत कर सकते हैं और सामाजिक वांछनीयता के लिए सही जानकारी छिपा सकते हैं। साथ ही, साक्षात्कारकर्ताओं की ओर से पूर्वाग्रह हो सकते हैं क्योंकि उनकी व्यक्तिगत विश्वास प्रणाली या पूर्वाग्रह साक्षात्कारकर्ता द्वारा दी गई जानकारी की व्याख्या में बाधा डाल सकते हैं।

12. 4.2 प्रोजेक्टिव तकनीक (Projective Techniques)

माना जाता है कि प्रोजेक्टिव तकनीकें व्यक्तित्व के उन केंद्रीय पहलुओं को उजागर करती हैं जो व्यक्ति के अचेतन मन में होते हैं। माना जाता है कि अचेतन प्रेरणाएँ, छिपी हुई इच्छाएँ, आंतरिक भय और जटिलताएँ उनकी असंरचित प्रकृति द्वारा प्रकट होती हैं जो क्लाइंट के सचेत व्यवहार को प्रभावित करती हैं। अपेक्षाकृत असंरचित कार्य प्रोजेक्टिव तकनीकों की एक प्रमुख विशिष्ट विशेषता है। एक असंरचित कार्य वह होता है जो संभावित प्रतिक्रियाओं की एक अंतहीन श्रृंखला की अनुमति देता है। प्रोजेक्टिव तकनीकों की अंतर्निहित परिकल्पना यह है कि जिस तरह से परीक्षण सामग्री या "संरचनाओं" को व्यक्ति द्वारा माना जाता है और व्याख्या की जाती+ है, वह उसके मनोवैज्ञानिक कामकाज के मूलभूत पहलुओं को दर्शाता है। दूसरे शब्दों में, परीक्षण सामग्री एक प्रकार की स्क्रीन के रूप में कार्य करती है जिस पर उत्तरदाता अपनी विशिष्ट विचार प्रक्रियाओं, चिंताओं, संघर्षों और जरूरतों को "प्रोजेक्ट" करते हैं।

मनोवैज्ञानिक द्वारा क्लाइंट को अस्पष्ट दृश्य उत्तेजनाएँ दिखाई जाती हैं और उनसे पूछा जाता है कि वे उस उत्तेजना में क्या देखते हैं। यह माना जाता है कि क्लाइंट दृश्य उत्तेजना पर अचेतन चिंताओं और भय को प्रक्षेपित करेगा और इस प्रकार मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाओं की व्याख्या कर सकता है और क्लाइंट की

समस्या के अंतर्निहित मनोविज्ञान को समझ सकता है। इस पद्धति का उपयोग करने वाले परीक्षणों को प्रोजेक्टिव परीक्षण कहा जाता है। ये परीक्षण, किसी के व्यक्तित्व की खोज करने के अपने कार्य के अलावा, छिपे हुए व्यक्तित्व मुद्दों को उजागर करने के लिए एक नैदानिक उपकरण के रूप में भी काम करते हैं।

प्रोजेक्टिव तकनीकों का इतिहास 15वीं शताब्दी की शुरुआत में शुरू हुआ जब लियोनार्डो दा विंची ने अस्पष्ट रूप में आकार और पैटर्न खोजने के उनके प्रयास के आधार पर विद्यार्थियों का चयन किया (पियोत्रोव्स्की, 1972)। 1879 में, गैलन द्वारा एक वर्ड एसोसिएशन टेस्ट का निर्माण किया गया था। कार्ल जंग द्वारा नैदानिक सेटिंग्स में इसी तरह के परीक्षणों का उपयोग किया गया था। बाद में, फ्रैंक (1939, 1948) ने परीक्षणों की एक श्रृंखला का वर्णन करने के लिए प्रोजेक्टिव विधि शब्द की शुरुआत की जिसका उपयोग असंरचित उत्तेजनाओं के साथ व्यक्तित्व का अध्ययन करने के लिए किया जा सकता है। इस तरह, व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के गुणों को प्रोजेक्ट करने का पर्याप्त अवसर मिलता है, जिसे वह सामान्य साक्षात्कार या बातचीत के दौरान प्रकट नहीं कर सकता। अधिक विशेष रूप से, प्रोजेक्टिव उपकरण इस अर्थ में प्रच्छन्न परीक्षण प्रक्रियाओं का भी प्रतिनिधित्व करते हैं कि परीक्षार्थी अपने उत्तरों की मनोवैज्ञानिक व्याख्या के बारे में नहीं जानते हैं। लक्षणों को अलग-अलग मापने के बजाय समग्र चित्र पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। अंत में, प्रोजेक्टिव तकनीक व्यक्तित्व के अव्यक्त या छिपे हुए पहलुओं को उजागर करने के लिए एक प्रभावी उपकरण है जो अचेतन में तब तक अंतर्निहित रहते हैं जब तक कि उन्हें उजागर नहीं किया जाता। ये तकनीकें इस धारणा पर आधारित हैं कि यदि उत्तेजना संरचना प्रकृति में कमजोर है, तो यह व्यक्ति को अपनी भावनाओं, इच्छाओं और जरूरतों को प्रोजेक्ट करने की अनुमति देती है, जिन्हें विशेषज्ञों द्वारा आगे व्याख्या किया जाता है।

12. 4.3 प्रोजेक्टिव तकनीकों का वर्गीकरण (Classification of Projective Techniques)

मनोवैज्ञानिकों द्वारा विभिन्न प्रकार की प्रक्षेपी तकनीकों को कई श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है।

रचनात्मक (Constructive): इसमें वे सभी परीक्षण और परिस्थितियाँ शामिल हैं जहाँ परीक्षार्थी को किसी विशिष्ट कार्य का निर्माण करना होता है। विषय को परीक्षक द्वारा प्रस्तुत स्थिति पर एक संरचना तैयार करने की आवश्यकता होती है, और उसे एक मानव आकृति बनाने के लिए कहा जाता है जिससे व्यक्ति परीक्षक के झुकाव को स्वतंत्र रूप से व्यक्त कर सके।

संरचनात्मक (Constitutive): इस श्रेणी में वे परीक्षण शामिल हैं जिनमें परीक्षार्थी को कुछ दी गई असंरचित सामग्री पर संरचनाएँ बनाने की आवश्यकता होती है, उदाहरण के लिए, रोर्शा इंक ब्लॉट तकनीक। इस परीक्षण में परीक्षार्थी असंरचित स्याही के धब्बों पर अपनी संरचना लगाता है (ज़ुबिन, इरोस और शूमर, 1965) और विषय की प्रतिक्रियाओं को स्कोर किया जाता है और उनकी व्याख्या की जाती है।

रेचनात्मक (Cathartic): इसमें वे स्थितियाँ शामिल हैं, जहाँ परीक्षार्थी अपनी इच्छाओं, आंतरिक मांगों, संघर्षों आदि को कुछ जोड़-तोड़ वाले कार्यों के माध्यम से व्यक्त कर सकता है।

व्याख्यात्मक (Interpretative): इसमें वे परीक्षण स्थितियाँ शामिल हैं जहाँ परीक्षार्थी को दी गई स्थिति में विस्तृत अर्थ जोड़ना होता है। उदाहरण के लिए, थीमैटिक एपर्सेप्शन टेस्ट (TAT) और वर्ड एसोसिएशन टेस्ट (WAT)।

अपवर्तक (Refractive): इस श्रेणी में वे सभी तकनीकें शामिल हैं जिनके माध्यम से परीक्षार्थी को ड्राइंग, पेंटिंग आदि के रूप में अपने व्यक्तित्व को चित्रित करने का अवसर मिलता है। फ्रैंक ने बताया कि ग्राफोलॉजी इस श्रेणी का सबसे अच्छा उदाहरण है।

अगर हम वर्गीकरण का मूल्यांकन करें तो यह स्पष्ट है कि इसमें कई सीमाएँ हैं। सबसे बड़ी सीमा यह है कि उनके वर्गीकरण के अनुसार, एक ही परीक्षण को दो या अधिक श्रेणियों में शामिल किया जा सकता है, जिससे काफी हद तक ओवरलैप होता है। इस तरह, प्रोजेक्टिव विधियों का वर्गीकरण एक लोकप्रिय वर्गीकरण नहीं है।

12. 4.4 एसोसिएशन तकनीक (Association Techniques)

इस श्रेणी में वे सभी स्थितियाँ शामिल हैं जहाँ परीक्षार्थी को उत्तेजना सामग्री को देखने या सुनने के बाद बनाए गए संबंधों के रूप में प्रतिक्रियाएँ देनी होती हैं। उदाहरण के लिए शब्द संघ परीक्षण आदि। शब्द संघ परीक्षण में, परीक्षार्थी को एक सूची के रूप में कई शब्द दिए जाते हैं और उसे उत्तेजना शब्द सुनते ही अपने दिमाग में आने वाले पहले शब्द को बोलना होता है। प्रतिक्रिया समय के अनुसार प्रतिक्रियाओं का उपयोग व्यक्ति के व्यक्तित्व के विश्लेषण के लिए किया जाता है।

12. 5 व्यक्तित्व सूची

व्यक्तित्व सूची एक मुद्रित प्रपत्र है जिसमें मानव व्यवहार पर लागू होने वाले कथनों या प्रश्नों का एक सेट होता है। प्रश्नों की सूची एक मानक सूची है और इसके लिए "हाँ", "नहीं" और "निर्णय नहीं ले सकते" जैसे विशिष्ट उत्तरों की आवश्यकता होती है। चूँकि प्रश्न बंद-अंत वाले उत्तरों (close-ended answers) की मांग करते हैं, इसलिए ये आकलन प्रकृति में काफी वस्तुनिष्ठ होते हैं। कैटेल का 16PF एक ऐसी ही व्यक्तित्व सूची है। कोस्टा और मैकक्रे (2000) द्वारा NEO-PI को संशोधित किया गया है, जो व्यक्तित्व लक्षणों के पांच कारक मॉडल पर आधारित है। मायर्स-ब्रिग्स टाइप इंडिकेटर (MBTI) एक और आम तौर पर इस्तेमाल की जाने वाली सूची है।

अंतर्मुखता, बहिर्मुखता (I/E) एक क्लासिक आयाम है जिसकी शुरुआत जंग से हुई और इसे बिग फाइव सहित लगभग हर व्यक्तित्व सिद्धांत में दर्शाया गया है। संवेदन (sensing) /अंतर्ज्ञान (intuition) (S/I), सोच (thinking) /भावना (feeling) (T/F), अंतर्मुखता (Introversion) /बहिर्मुखता

(Extroversion) (I/E) और अनुभूति (Perceiving) /निर्णय (Judging) (P/J) चार आयाम हैं जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए अलग-अलग हो सकते हैं जिसके परिणामस्वरूप संभवतः ISTJ, ISTP, ISFP, ISFJ व्यक्तित्व प्रकार हो सकते हैं (ब्रिग्स और मायर्स, 1998)। उदाहरण के लिए, एक ESTJ एक आयोजक, स्वभाव से व्यावहारिक और गतिविधि में ऊर्जावान होता है, एक ESTJ एक अच्छा स्कूल प्रशासक भी होता है। आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली (आइजेंक एवं आइजेंक, 1993), कैलिफोर्निया मनोवैज्ञानिक सूची (गफ, 1995) और सोलह व्यक्तित्व कारक प्रश्नावली (कैटेल, 1994) कुछ अन्य सामान्य व्यक्तित्व परीक्षण हैं।

12. 6 आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली (Eysenck Personality Questionnaire)

आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली (ईपीक्यू) एक मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन उपकरण है जिसे हंस आइजेंक के व्यक्तित्व सिद्धांत के आधार पर व्यक्तित्व लक्षणों को मापने के लिए डिज़ाइन किया गया है। आइजेंक का मॉडल व्यक्तित्व के तीन प्रमुख आयामों को प्रस्तुत करता है:

बहिर्मुखता (Extraversion) (E): यह आयाम मापता है कि कोई व्यक्ति कितना मिलनसार, मिलनसार और ऊर्जावान है। उच्च स्कोर बहिर्मुखता को इंगित करते हैं, जबकि कम स्कोर अंतर्मुखता को इंगित करते हैं।

न्यूरोटिसिज्म (Neuroticism) (N): यह आयाम भावनात्मक स्थिरता और नकारात्मक भावनाओं का अनुभव करने की प्रवृत्ति का आकलन करता है। उच्च स्कोर बताते हैं कि व्यक्ति चिंता, मूड स्विंग और भावनात्मक अस्थिरता के प्रति अधिक प्रवण है, जबकि कम स्कोर भावनात्मक स्थिरता को इंगित करते हैं।

साइकोटिसिज्म (Psychoticism) (P): यह आयाम आक्रामकता, रचनात्मकता और गैर-अनुरूपता से जुड़े लक्षणों को मापता है। उच्च स्कोर आवेग और शत्रुता की ओर उच्च प्रवृत्ति को इंगित करते हैं, जबकि कम स्कोर अधिक पारंपरिक और सहानुभूतिपूर्ण प्रकृति का सुझाव देते हैं।

इसके अतिरिक्त, EPQ में उत्तरदाताओं की सामाजिक रूप से वांछनीय लेकिन गलत प्रतिक्रिया देने की प्रवृत्ति का आकलन करने के लिए एक झूठ (L) पैमाना शामिल है।

EPQ के कई संस्करण हैं, जिनमें मूल EPQ, EPQ-R (संशोधित) और बच्चों के लिए EPQ-J (जूनियर) शामिल हैं। प्रश्नावली में आम तौर पर बहुविकल्पीय आइटम होते हैं जिनका उत्तर उत्तरदाता अपनी भावनाओं और व्यवहारों के आधार पर देते हैं। परिणाम व्यक्तित्व प्रोफाइल को समझने में मदद करते हैं, जो नैदानिक, शैक्षिक और व्यावसायिक सेटिंग्स में उपयोगी हो सकते हैं।

आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली की मुख्य विशेषताएं (Main features of the Eysenck Personality Questionnaire)

आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली (ईपीक्यू) में कई प्रमुख विशेषताएं हैं जो इसे मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन में एक विशिष्ट और व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाने वाला उपकरण बनाती हैं:

प्रमुख आयाम (Major Dimensions):

बहिर्मुखता (Extraversion) (E): सामाजिकता, जीवंतता, गतिविधि स्तर और उत्तेजना को मापता है।

न्यूरोटिसिज्म (Neuroticism) (N): भावनात्मक स्थिरता, चिंता, मनोदशा और तनाव का आकलन करता है।

साइकोटिसिज्म (Psychoticism) (P): आक्रामकता, रचनात्मकता, आवेगशीलता और सहानुभूति की कमी का मूल्यांकन करता है।

झूठ स्केल (Lie Scale) (L): यह स्केल उत्तरदाताओं की खुद को सामाजिक रूप से वांछनीय तरीके से पेश करने की प्रवृत्ति का पता लगाने के लिए डिज़ाइन किया गया है, जो अन्य पैमानों की सटीकता सुनिश्चित करता है।

प्रारूप (Format): इसमें बहुविकल्पीय प्रश्न होते हैं, जिनका उत्तर आमतौर पर "हां" या "नहीं" में दिया जाता है।

संस्करण के आधार पर आइटम की संख्या भिन्न हो सकती है, EPQ-R में लगभग 100 आइटम होते हैं।

स्कोरिंग (Scoring): परिणाम जानने के लिए तीन प्रमुख आयामों और झूठ पैमाने में से प्रत्येक को अलग-अलग स्कोर किया जाता है। और ये स्कोर व्यक्ति के व्यक्तित्व लक्षणों का एक प्रोफ़ाइल प्रदान करते हैं।

अनुप्रयोग (Applications):

· व्यक्तित्व विकारों का निदान और व्यक्तित्व विकारों को समझने के लिए नैदानिक सेटिंग्स में आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली का उपयोग किया जाता है।

· आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली का उपयोग छात्र विकास का आकलन और समर्थन करने के लिए शैक्षिक सेटिंग्स में नियोजित करने के लिए किया जाता है।

· कर्मियों के चयन और कैरियर परामर्श के लिए व्यावसायिक सेटिंग्स में आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली का उपयोग किया जाता है।

सैद्धांतिक आधार (Theoretical Basis): यह प्रश्नावली हंस आइजेंक के व्यक्तित्व के जैविक सिद्धांत पर आधारित है, जो सुझाव देता है कि आनुवंशिक और शारीरिक कारक व्यक्तित्व लक्षणों को प्रभावित करते हैं।

शोध और सत्यापन (Research and Validation):

· इस प्रश्नावली का विभिन्न संस्कृतियों और आबादी में व्यापक रूप से शोध और सत्यापन किया गया।

· इस प्रश्नावली ने इच्छित व्यक्तित्व लक्षणों को मापने में विश्वसनीयता और स्थिरता का प्रदर्शन किया।

उपयोगकर्ता के अनुकूल (User-Friendly):

· इसे प्रशासन करने में सरल और स्कोर करने में आसान होने के लिए डिज़ाइन किया गया।

· यह प्रश्नावली विभिन्न आयु समूहों और शैक्षिक स्तरों के लिए उपयुक्त है।

ये विशेषताएँ EPQ को विभिन्न संदर्भों में व्यक्तित्व लक्षणों का आकलन करने के लिए एक व्यापक और विश्वसनीय उपकरण बनाती हैं।

12. 7 आइजेंक माड्सले व्यक्तित्व अनुसूची

आइजेंक मौडस्ले पर्सनालिटी इन्वेंटरी (ईएमपीआई) हंस आइजेंक द्वारा विकसित व्यक्तित्व मूल्यांकन उपकरणों का एक पुराना संस्करण है, जिसके परिणामस्वरूप अंततः आइजेंक पर्सनालिटी प्रश्नावली (ईपीक्यू) का निर्माण हुआ। ईएमपीआई का सैद्धांतिक आधार भी आइजेंक के व्यक्तित्व मॉडल पर आधारित है। यहाँ कुछ प्रमुख सैद्धांतिक अवधारणाएँ दी गई हैं:

व्यक्तित्व के प्रति आयामी दृष्टिकोण (Dimensional Approach to Personality): आइजेंक ने प्रस्तावित किया कि व्यक्तित्व को अलग-अलग श्रेणियों के बजाय आयामों के संदर्भ में समझा जा सकता है। EMPI ने व्यक्तित्व के दो प्रमुख आयामों को मापने पर ध्यान केंद्रित किया:

· बहिर्मुखता-अंतर्मुखता और

· न्यूरोटिसिज्म -स्थिरता।

बहिर्मुखता-अंतर्मुखता (Extraversion-Introversion): आइजेंक का यह आयाम सामाजिकता, गतिविधि और उत्तेजना के स्तर का आकलन करता है। बहिर्मुखी लोगों की विशेषता यह होती है कि वे बाहर जाने वाले, जीवंत और मिलनसार होते हैं, उत्तेजना और उत्साह की तलाश करते हैं। दूसरी ओर, अंतर्मुखी अधिक आरक्षित, शांत होते हैं और एकांत गतिविधियों को पसंद करते हैं।

न्यूरोटिसिज्म-स्थिरता (Neuroticism-Stability): यह आयाम भावनात्मक स्थिरता और नकारात्मक भावनाओं का अनुभव करने की प्रवृत्ति को मापता है। न्यूरोटिसिज्म पर उच्च स्कोर चिंता, मनोदशा और भावनात्मक अस्थिरता की प्रवृत्ति को इंगित करता है, जबकि कम स्कोर भावनात्मक स्थिरता और शांति को इंगित करता है।

व्यक्तित्व का जैविक आधार (Biological Basis of Personality): आइजेंक का सिद्धांत यह मानता है कि इन व्यक्तित्व लक्षणों का एक जैविक आधार है। उन्होंने सुझाव दिया कि कॉर्टिकल उत्तेजना और स्वायत्त तंत्रिका तंत्र प्रतिक्रियाशीलता में अंतर बहिर्मुखता और न्यूरोटिसिज्म में व्यक्तिगत अंतर को रेखांकित करता है।

कॉर्टिकल उत्तेजना (Cortical Arousal): आइजेंक के अनुसार, बहिर्मुखता और अंतर्मुखता कॉर्टिकल उत्तेजना के स्तरों से जुड़े हुए हैं। बहिर्मुखी लोगों में कॉर्टिकल उत्तेजना का आधारभूत स्तर कम होता है, जिससे वे अपने उत्तेजना स्तर को बढ़ाने के लिए बाहरी उत्तेजना की तलाश करते हैं। अंतर्मुखी लोगों में कॉर्टिकल उत्तेजना का आधारभूत स्तर अधिक होता है, जिससे वे बाहरी उत्तेजनाओं के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं और इस प्रकार अतिउत्तेजना से बचने की अधिक संभावना होती है।

स्वायत्त तंत्रिका तंत्र प्रतिक्रियाशीलता (Autonomic Nervous System Reactivity): न्यूरोटिसिज्म स्वायत्त तंत्रिका तंत्र की प्रतिक्रियाशीलता से जुड़ा हुआ है। उच्च न्यूरोटिसिज्म वाले व्यक्तियों में अधिक प्रतिक्रियाशील स्वायत्त तंत्रिका तंत्र होता है, जो उन्हें तनाव और भावनात्मक अस्थिरता के प्रति अधिक प्रवण बनाता है। कम न्यूरोटिसिज्म वाले लोगों में कम प्रतिक्रियाशील स्वायत्त तंत्रिका तंत्र होता है, जिससे अधिक भावनात्मक स्थिरता होती है।

अनुभवजन्य सत्यापन (Empirical Validation): आइजेंक के मॉडल और EMPI को अनुभवजन्य शोध द्वारा समर्थित किया गया था, जिसमें कारक-विश्लेषणात्मक अध्ययन शामिल थे, जिन्होंने व्यक्तित्व के प्रमुख आयामों के रूप में बहिर्मुखता और तंत्रिकावाद की पहचान की थी। इन अध्ययनों ने इन लक्षणों के माप के रूप में EMPI की विश्वसनीयता और वैधता के लिए सबूत प्रदान किए।

आनुवंशिकी और पर्यावरण की भूमिका (Role of Genetics and Environment): आइजेंक का मानना था कि व्यक्तित्व लक्षण आनुवंशिक प्रवृत्तियों और पर्यावरणीय प्रभावों के बीच परस्पर क्रिया से उत्पन्न होते हैं। जबकि उन्होंने व्यक्तित्व के जैविक आधार पर जोर दिया, उन्होंने यह भी माना कि पर्यावरणीय कारक इन लक्षणों की अभिव्यक्ति को आकार देने में भूमिका निभाते हैं।

भविष्य के लिए आधार (Foundation for Future): EMPI ने आइजेंक व्यक्तित्व सूची (EPI) और आइजेंक व्यक्तित्व प्रश्नावली (EPQ) जैसे बाद के मापकों के लिए आधार तैयार किया, जिसने मूल आयामों का विस्तार किया और साइकोटिसिज्म स्केल जैसे अतिरिक्त पैमाने शामिल किए गए।

EMPI के अनुप्रयोग (Applications of EMPI)

नैदानिक मनोविज्ञान (Clinical Psychology): EMPI का प्रयोग व्यक्तित्व लक्षणों का आकलन करने के लिए किया जाता है जो मनोवैज्ञानिक विकारों के निदान और उपचार के लिए प्रासंगिक हो सकते हैं।

· **शोध (Research):** EMPI का उपयोग व्यक्तित्व लक्षणों और विभिन्न मनोवैज्ञानिक, व्यवहारिक और सामाजिक परिणामों के बीच संबंधों का पता लगाने के लिए अध्ययनों में किया जाता है।

व्यावसायिक सेटिंग्स (Industrial Settings): EMPI कभी-कभी कर्मचारी व्यवहार को समझने और भर्ती निर्णय लेने में मदद करने के लिए संगठनात्मक मनोविज्ञान में उपयोग किया जाता है।

सीमाएँ (Limitations)

स्व-रिपोर्ट पूर्वाग्रह (Self-Report Bias): सभी स्व-रिपोर्ट सूचियों की तरह, EMPI सामाजिक वांछनीयता (social desirability) और आत्म-धोखे (self-deception) जैसे पूर्वाग्रहों के अधीन है।

सांस्कृतिक सीमाएँ (Cultural Limitations): व्यक्तित्व लक्षणों की व्याख्या संस्कृतियों में भिन्न हो सकती है, जो संभावित रूप से विविध आबादी में सूची की सटीकता को प्रभावित करती है।

स्थिर प्रकृति (Static Nature): व्यक्तित्व लक्षणों को अपेक्षाकृत स्थिर माना जाता है, लेकिन वे समय के साथ या विभिन्न संदर्भों में बदल सकते हैं, जिनका सूची द्वारा पूरी तरह से वर्णन नहीं किया जा सकता है।

संक्षेप में, EMPI आइजेंक के व्यक्तित्व के आयामी मॉडल पर आधारित है, जो बहिर्मुखता-अंतर्मुखता और तंत्रिकावाद-स्थिरता के जैविक रूप से आधारित लक्षणों पर ध्यान केंद्रित करता है। यह सैद्धांतिक ढांचा व्यक्तित्व को आकार देने में आनुवंशिक और शारीरिक कारकों की भूमिका पर जोर देता है, साथ ही पर्यावरणीय कारकों के प्रभाव को भी स्वीकार करता है। EMPI ने व्यक्तित्व मूल्यांकन में अधिक परिष्कृत और व्यापक उपकरणों के लिए आधार तैयार किया, और इसकी अवधारणाएँ व्यक्तित्व मनोविज्ञान के क्षेत्र को प्रभावित करती रहती हैं।

12. 8 टाइप ए और टाइप बी व्यवहार प्रतिमान

टाइप ए और टाइप बी व्यवहार पैटर्न व्यक्तित्व लक्षण हैं जिन्हें मूल रूप से कोरोनरी हृदय रोग पर शोध के संदर्भ में पहचाना गया था। ये पैटर्न अलग-अलग तरीकों का वर्णन करते हैं जिनसे व्यक्ति आमतौर पर तनाव और उनके सामान्य व्यवहार की प्रवृत्ति पर प्रतिक्रिया करते हैं।

टाइप ए व्यवहार पैटर्न की विशेषताएँ:

1. टाइप ए व्यवहार वाले व्यक्ति प्रतिस्पर्धी और आत्म-आलोचनात्मक होते है।
2. टाइप ए व्यवहार वाले व्यक्ति उपलब्धि और उन्नति के लिए प्रयासरत होते है।
3. इस व्यक्तित्व वाले व्यक्ति समय के पाबंद और हमेशा जल्दी में रहते है।
4. इस व्यवहार वाले व्यक्ति में तनाव और अधीरता का स्तर उच्च होता है।
5. टाइप ए व्यवहार वाले व्यक्ति अक्सर आक्रामक, महत्वाकांक्षी और प्रेरित करने वाले होते है।
6. इस व्यक्तित्व वाले व्यक्ति अक्सर एक साथ कई काम करने में व्यस्त रहते है।
7. इस व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों में क्रोध और शत्रुता की प्रवृत्ति अधिक होती है।
8. टाइप ए व्यवहार वाले व्यक्ति आराम करने में और तनावमुक्त रहने में कठिनाई अनुभव करते है।

स्वास्थ्य निहितार्थ (Health Implications):

शुरू के शोधों द्वारा यह पता चला कि टाइप ए व्यवहार वाले व्यक्ति अपने उच्च तनाव स्तर और आक्रामक व्यवहार के कारण कोरोनरी हृदय रोग के लिए उच्च जोखिम में थे।

बाद के अध्ययनों ने इस दृष्टिकोण को और अधिक स्पष्ट किया है, जो दर्शाता है कि टाइप ए व्यवहार के विशिष्ट घटक, विशेष रूप से शत्रुता और क्रोध, हृदय रोग के जोखिम से अधिक मजबूती से जुड़े हैं।

टाइप बी व्यवहार पैटर्न की विशेषताएँ:

टाइप बी व्यवहार वाले व्यक्ति आराम पसंद और सहज प्रवृत्ति के होते है।

टाइप बी व्यक्तित्व वाले व्यक्ति प्रतिस्पर्धा पसंद और उपलब्धि से कम प्रेरित होने वाले होते है।

टाइप बी व्यवहार वाले व्यक्ति धैर्यवान और समय के बारे में ज़्यादा चिंतित नहीं होते हैं।

टाइप बी व्यवहार वाले व्यक्तियों में तनाव का स्तर कम होता है, और वे जीवन से ज़्यादा संतुष्ट होते हैं।

टाइप बी व्यवहार वाले व्यक्ति आराम करने और अवकाश गतिविधियों का आनंद लेने में सक्षम होते हैं।

टाइप बी व्यवहार वाले व्यक्ति अधिक सहनशील और अनुकूलनशील होते हैं।

टाइप बी व्यवहार वाले व्यक्ति आम तौर पर बेहतर कार्य-जीवन संतुलन बनाए रखते हैं।

स्वास्थ्य निहितार्थ (Health Implications):

टाइप बी व्यवहार वाले व्यक्ति टाइप ए व्यक्तियों की तुलना में तनाव से संबंधित स्वास्थ्य समस्याओं के प्रति कम संवेदनशील होते हैं।

जीवन के प्रति उनके अधिक शांत दृष्टिकोण और कम तनाव के स्तर के कारण उन्हें कोरोनरी हृदय रोग विकसित होने का कम जोखिम माना जाता है।

ऐतिहासिक संदर्भ और शोध (Historical Context and Research):

उत्पत्ति (Origin): टाइप ए और टाइप बी व्यवहार पैटर्न की अवधारणा 1950 के दशक में हृदय रोग विशेषज्ञ मेयर फ्राइडमैन और रे रोसेनमैन द्वारा पेश की गई थी। उन्होंने देखा कि उनके हृदय रोग के मरीज़ अक्सर समान व्यवहार लक्षण प्रदर्शित करते थे, जिन्हें उन्होंने टाइप ए के रूप में लेबल किया। इसके विपरीत, जिन व्यक्तियों में ये लक्षण नहीं थे, उन्हें टाइप बी के रूप में वर्गीकृत किया गया।

टाइप ए और टाइप बी व्यवहार पैटर्न स्केल एक साइकोमेट्रिक उपकरण है जिसका उपयोग यह आकलन करने के लिए किया जाता है कि कोई व्यक्ति टाइप ए या टाइप बी व्यवहार विशेषताओं को अधिक प्रदर्शित करता है या नहीं। ये स्केल प्रत्येक व्यवहार पैटर्न से जुड़े लक्षणों को मापने के लिए डिज़ाइन किए गए हैं ताकि स्वास्थ्य परिणामों की भविष्यवाणी की जा सके, विशेष रूप से तनाव और हृदय रोग से संबंधित।

स्केल के मुख्य घटक (Key Components of the Scale):

प्रश्नावली प्रारूप (Questionnaire Format): स्केल में आम तौर पर कथनों या प्रश्नों की एक श्रृंखला होती है, जिसके लिए उत्तरदाता अपनी सहमति के स्तर या विशिष्ट व्यवहारों की आवृत्ति को इंगित करते हैं।

स्कोरिंग सिस्टम (Scoring System): प्रतिक्रियाओं को इस हद तक स्कोर किया जाता है कि कोई व्यक्ति कितना टाइप ए या टाइप बी व्यवहार प्रदर्शित करता है। टाइप ए आइटम पर उच्च स्कोर टाइप ए व्यवहार की ओर झुकाव को इंगित करते हैं, जबकि टाइप बी आइटम पर उच्च स्कोर टाइप बी व्यवहार की ओर झुकाव को इंगित करते हैं।

आम तौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले उपकरण (Commonly Used Instruments):

जेनकिंस गतिविधि सर्वेक्षण (Jenkins Activity Survey) (JAS): टाइप A और टाइप B व्यवहारों को मापने के लिए सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल किए जाने वाले मापक में से एक हैं। जेनकिंस (Jenkins), ज़िज़ांस्की (Zyzanski) और रोसेनमैन (Rosenman) द्वारा विकसित, इसमें ऐसे प्रश्न शामिल हैं जो प्रतिस्पर्धा (competitiveness), समय की तात्कालिकता (time urgency) और शत्रुता

(hostility) जैसे पहलुओं का आकलन करते हैं। उत्तरदाता "कभी नहीं" से लेकर "हमेशा" तक के मापक पर यह रेट करते हैं कि वे कितनी बार कुछ व्यवहारों में संलग्न होते हैं।

बॉर्टनर रेटिंग स्केल (Bortner Rating Scale): टाइप A व्यवहार का आकलन करने के लिए विकसित एक और उपकरण हैं। यह एक स्व-रेटिंग स्केल (self-rating scale) का उपयोग करता है जहाँ उत्तरदाता अधीरता (Impatience), प्रतिस्पर्धा (competition) और आक्रामकता (aggression) जैसे विभिन्न आयामों के लिए अपने स्वयं के व्यवहार को एक निरंतरता पर रेट करते हैं।

आलोचना और विकास (Criticism and Evolution): टाइप ए व्यवहार और हृदय रोग के बीच प्रारंभिक मजबूत संबंध की वर्षों से आलोचना और परिशोधन किया गया है। शोध ने संकेत दिया है कि टाइप ए व्यवहार के सभी पहलू हानिकारक नहीं हैं; बल्कि, शत्रुता और पुराने तनाव जैसे विशिष्ट तत्व अधिक समस्याग्रस्त हैं। व्यक्तित्व और स्वास्थ्य पर आधुनिक शोध अक्सर कारकों की एक व्यापक श्रेणी पर विचार करता है और अन्य व्यक्तित्व मॉडल से निष्कर्षों को एकीकृत करता है।

12. 9 सारांश

सभी प्रकार के उपलब्ध व्यक्तित्व परीक्षणों में कुछ कठिनाइयाँ होती हैं जो सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों प्रकृति की होती हैं। हर दृष्टिकोण के कुछ फायदे और नुकसान होते हैं। हालाँकि, व्यक्तित्व मापन अनुसंधान ने पर्याप्त महत्व प्राप्त कर लिया है। फिर भी, विभिन्न उपकरणों में सुधार की प्रक्रिया चल रही है। व्यक्तित्व परीक्षण में आने वाले कुछ रुझानों में भावनात्मक और संज्ञानात्मक लक्षणों के बीच पारस्परिक प्रभाव के बढ़ते प्रमाण शामिल हैं। दूसरा, भावनात्मक और संज्ञानात्मक लक्षणों पर सभी प्रकार के बुनियादी शोध को शामिल करते हुए मानव गतिविधि से संबंधित एक व्यापक मॉडल का विकास किया गया।

12. 10 निबंधात्मक प्रश्न

1. आइसेनक व्यक्तित्व प्रश्नावली (EPQ) का वर्णन करें। इसके सैद्धांतिक आधार, संरचना और यह व्यक्तित्व लक्षणों को कैसे मापता है, इस पर चर्चा करें। बताएं कि EPQ अन्य व्यक्तित्व मूल्यांकन उपकरणों से कैसे भिन्न है और मनोवैज्ञानिक शोध में इसका क्या महत्व है।

2. आइसेनक मौडस्ले व्यक्तित्व सूची (EMPI) की व्याख्या करें। इसके विकास, प्रमुख घटकों और यह व्यक्तित्व लक्षणों का आकलन कैसे करता है, इस पर चर्चा करें।

3. व्यक्तित्व को मापने के उनके दृष्टिकोण के संदर्भ में EMPI की तुलना आइसेनक व्यक्तित्व प्रश्नावली से करें।

4. टाइप A और टाइप B व्यवहार पैटर्न को परिभाषित करें। प्रत्येक प्रकार की विशेषताओं का वर्णन करें और इन अवधारणाओं के ऐतिहासिक संदर्भ और विकास पर चर्चा करें।

5. टाइप A और टाइप B व्यवहार पैटर्न के स्वास्थ्य पर प्रभाव का विश्लेषण करें, विशेष रूप से तनाव और हृदय रोगों के संबंध में।

12. 11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. The Personality Brokers: The Strange History of Myers Briggs and the Birth of Personality Testing, “Merve Emre”
2. 1964_Eysenck personality inventory_Manual.pdf
3. Personality test

इकाई 13. व्यक्तित्व मूल्यांकन के उपागम; आत्म-विवरण, प्रक्षेपी एवं व्यवहार मूल्यांकन

इकाई संरचना

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 व्यक्तित्व मापन

13.4 व्यक्तित्व मापन की विधियाँ: **आत्म रिर्पोट अविष्कारिका**

13.5 प्रक्षेपी विधियाँ

13.6 सारांश

13.7 शब्दावली-

13.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

13.10 निबन्धात्मक प्रश्न

13.1 प्रस्तावना:

व्यक्तित्व व्यक्ति के उन गुणों से सम्बन्धि होता है जिसके आधार पर एक व्यक्ति कों दूसरें व्यक्ति सें अलग किया जा सकता है। व्यक्तित्व का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। सामाजिक जीवन जैसे-जैसे जटिल हो रहा है, प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है, साथ-साथ व्यक्तित्व का महत्व भी बढ़ रहा है। किशोरावस्था से युवास्था तक के व्यक्तियों में अपने व्यक्तित्व को उन्नत करने की बहुत चाह होती है सभी लोग यह मानते है कि व्यक्तित्व का एक उपलब्धि मूल्य भी होता है एवं यह भी मानते है कि अच्छे और प्रभावशाली व्यक्तित्व होने पर व्यक्ति अनेक उपलब्धियॉ प्राप्त कर सकता है। उनकी उपलब्धियों के पीछे उनके व्यक्तित्व का बहुत प्रभाव और कार्य होता है। वह व्यक्ति जो व्यक्तित्व के उपलब्धि मूल्य को जानते है वह अनेक व्यक्तिव को और अधिक उन्नत करना चाहते है जिससे उनके व्यक्तित्व का उपलब्धि मूल्य और अधिक बढ़ जाय, लोग यह भी विश्वास करते है कि आज उनका जो व्यक्तित्व है उसकों और व्यक्तित्व के मापन की व्यक्तित्व के मापन के लिए व्यक्तित्व मनोविज्ञान में अनेक विधियॉ प्रचलित हैं।

प्रस्तुत इकाई में व्यक्तित्व मापन की विधियों एवं मापन में होने वाली समस्याओं के बारे में आप जान सकेंगे।

13.2 उद्देश्य:

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे की आप -

1. व्यक्तित्व मापन को भली-भाति समझ सकेंगे।

2. व्यक्तित्व मापन के विभिन्न तकनीकों से अवगत हो सकें।

3. व्यक्तित्व मापन के उद्देश्य को समझ सकें।

4. प्रक्षेपीय मापन तकनीक में अनुक्रिया के समस्या को समझ सकें।

5. व्यवहारिक मापन तकनीक के अनुक्रिया के समस्या से अवगत हो सकें।

13.3 व्यक्तित्व मापन

व्यक्तित्व की माप से तात्पर्य व्यक्तित्व के शीलगुणों के बारे में पता लगाकर यह निश्चित करना होता है कि कहाँ तक वे संगठित है। किसी भी व्यक्ति के भिन्न-भिन्न शीलगुण जब आपस में संगठित होते है, तो इससे व्यक्ति का व्यवहार सामान्य होता है। परन्तु यदि उसके शीलगुण विसंगठित होते है तो व्यक्ति का व्यवहार असामान्य हो जाता है। व्यक्तित्व का मापन मनोवैज्ञानिक इसलियें भी करते है कि मापन के आधार पर व्यक्तित्व सिद्धान्तों और नियमों का प्रतिपादन करते है। दूसरे मापन का उद्देश्य व्यवहारिक होता है जिसके द्वारा यह जानने का प्रयास किया जाता है कि एक व्यक्ति के व्यक्तित्व में कौन-कौन सी विशेषतायें होती है,

शीलगुण की कमी से व्यक्ति को समायोजन करने में कठिनाई होती है। अतः व्यक्तित्व मापने के द्वारा इन कठिनाईयों को दूर करने में मदद की जाती है।

13.4 व्यक्तित्व मापन की विधियाँ:

मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व मापन की बहुत सी विधियों या परीक्षणों का प्रतिपादन किया है। ऐसी प्रमुख विधियों या परीक्षणों को निम्नांकित तीन भागों में बाटकर अध्ययन किया गया है-

1. आत्म रिर्पोट आविष्कारिका (Self-Report Inventory)
2. प्रक्षेपीय विधियाँ (Projective Techniques)
3. व्यवहारिक विधियाँ (Behavioral Techniques)

13.4.1. **आत्म रिर्पोट अविष्कारिका** (Self-Report Inventory)- व्यक्तित्व मापने की यह विधि काफी प्रचलित है। इस विधि में व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण शीलगुणों से संबंधित कुछ प्रश्न बने होते है जिनका उत्तर प्रायः 'हा-नहीं, सही-गलत' आदि में दिया रहता है। व्यक्ति इन प्रश्नों को एक-एक करकें पढ़ता है और उनका उत्तर दिये गये विकल्पों में से चुनकर देता है। एक ही प्रश्न का सही एवं उचित उत्तर अलग-अलग व्यक्तियों के लिए अलग-अलग हो सकता है। इस तरह की आवितकारिका को व्यक्ति स्वयं पढ़ता है एवं उसका उत्तर देता है। इस कारण इसे व्यक्तित्व अविष्कारिका अथवा मनोमिति विधियाँ या मनोमिति परीक्षण कहते हैं।

सर्वप्रथम फ्रान्सिस गाल्टन ने व्यक्तित्व मापने के लिए सन् 1880 में एक सूची तैयार की थी। इसके बाद वुडवर्थ (R. S. Woodworth, 1918) ने एक व्यक्तित्व अनुसूची बनाई जिसका नाम था वुडवर्थ पर्सनल डेटा इन्वेन्ट्री वुडवर्थ की इस व्यक्तित्व सूची में 116 प्रश्न जिनका उत्तर दो विकल्पों ' हाँ ' अथवा ' नहीं ' में देना था। इसके बाद अनेक व्यक्तित्व सूचियों का निर्माण और मीनकीकरण किया है। इनमें से कुछ प्रमुख नाम इस प्रकार से है - थर्स्टन और थर्स्टन (1930), रोजर्स (1931), बर्नीस्टर (1933) आदि ने भी व्यक्तित्व सूचियों का निर्माण किया है। थोर्पे और क्लार्क 1939 ने कैलीफोर्निया व्यक्तित्व परीक्षण की रचना की है। हाथवे और मैककिन्ले (1940) ने मिनिसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व सूची की रचना की है। डार्ले और मेकनामरा ;1942द्ध मिनिसोटा व्यक्तित्व मापनी की रचना की है।यह वास्तव में दो मापनियॉ है एक पुरुषों के लिए और दूसरी महिलाओं के लिए। इसके द्वारा नैतिकता सामाजिक समायोजन, पारिवारिक सम्बन्ध, संवेगात्मक स्थिरता और आर्थिक दृढ़ता जैसे व्यक्तित्व के पॉच पहलुओं का मापन किया जाता है। गिलफोर्ड और जियरमैन (1949) एवं थर्स्टन (1949) ने कारक विश्लेषण की विधि के आधार पर स्वभाव अनुसूची की रचना की है। आर. बी. कैटिल (1950) ने व्यक्तित्व मापन के क्षेत्र में बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य किया है। उन्होंने व्यक्तित्व के मापन के लिए सूचियों का निर्माण और मानकीकरण भी किया हैं। व्यक्तित्व मापन के लिए आजकल जितनी भी विश्वसनीयता, वैधता और मानक ज्ञात होते है। कुछ प्रमुख व्यक्तित्व सूचियों का विवरण निम्न प्रकार से है -

13.4.1.1. मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व सूची (Minesota Multiphasic Personality Inventory, MMPI) का निर्माण मूलतः हाथावें एवं मैककिनले (1940) में किया गया जिसमें 550 एकांश थे और प्रत्येक एकांश के तीन उत्तर थे – (True), (False) तथा (Can't say)| इस मौलिक प्रा६प के दो प्रतिरूप हैं - वैयक्तिक कार्ड उद्देश्य व्यक्तित्व के रोगात्मक शीलगुणों को मापना है। इस सूची में दस नैदानिक मापनियाँ और चार वैधता मापनियाँ है। नैदानिक मापनी द्वारा 10 रोगात्मक शीलगुणों का मापन होता है, तथा वैधता मापनी पर के प्राप्तांकों द्वारा व्यक्ति द्वारा दिये गये उत्तरों की विश्वसनियता तथा वैधता का पता चलता है।

MMPI के कई संशोधित प्रारूप तैयार किए गए है जिसमें सबसे नवीनतम संशोधन को MMPI- 2 के नाम से जाना जाता है। यह संशोधन वुचर, डाहस्ट्रोम, ग्राहम, टेलेगन तथा केमर (1989) द्वारा किया गया। MMPI- 2 में 10 नैदानिक मापनी तथा तीन मुख्य वैधता मापनी है। इन तीन वैधता मापनी के अतिरिक्त एक और वैधता मापनी है जिसे '?"(Can't Say)से संकेतिक किया जाता है तथा इसमें उन एकांशो को रखा जाता है जिसका उत्तर व्यक्ति नहीं दे पाता है। इन वैधता मापीनयों का सम्बन्ध अविष्कारिका के वैधता से कुछ भी नहीं है बल्कि इनके द्वारा विभिन्न तरह के वैसे मनोवृत्तियों का पता चलता है जिससे परीक्षण पर की अनुक्रियाएँ विकृत हो जाती हैं । इन सभी मापनी में कुल मिलाकर 641 एकांश हैं परन्तु 74 एकांश एक मापनी से दूसरे में सामान्य होने से MMPI- 2 के कुल 567 एकांश बच जाते है। इन सभी 10 नैदानिक मापनी एवं वैधता मापनी का वर्णन इस प्रकार से हैं -

नैदानिक मापनी (Clinical Scale)-

1. **रोगभ्रम (Hypochondriasis or HS)**- इस मापनी के कुल 32 एकांश है और इसके द्वारा उस प्रवृत्ति की माप होती है जिसमें व्यक्ति अपने शारीरिक स्वास्थ्य एवं शारीरिक कार्य के बारे में ज६रत से ज्यादा चिंता दिखलाता है।

2. **विषाद (Depression)** - इस मापनी में 57 प्रश्न या पद है जो उदासी क्षमता में हास, ऊर्जा में कमी, अभिरुचि में कमी आदि से सम्बन्धित है।

3. **रूपान्तर हिस्ट्रीया (Conversion Hysteria or Hy)**- इस मापनी के 60 एकांश है। इसके द्वारा ऐसे स्नायुविकृत प्रवृत्ति का मापन होता है जिसमें रोगी मानसिक संघर्ष एवं चिन्ताओं से छुटकारा पाने के लिए कोई न कोई शारीरिक लक्षण विकसित कर लेता है।

4. **मनोविकृत विचलन (Psychopathic Deviate or Pd)**- इस मापनी में 50 एकांश है तथा इसके द्वारा व्यक्ति में सामाजिक एवं नैतिक मानकों को अवहेलना करने वाली प्रवृतियों तथा दडात्मक अनुभूतियों से भी कुछ न सीखने की प्रवृति का मापन होता है।

5. **पुरूषत्व नारीत्व (Masculinity – Feminity M-F)** - इस मापनी में 56 एकांश हैं तथा इसके द्वारा व्यक्ति के सीमांतीय यौन भूमिका (Extreme sex role) की प्रवृत्ति का माप होती है।

6. **स्थिर व्यामोह (Paranoia or Pa**) - इस मापनी में 40 एकांश है जिनके द्वारा व्यक्ति में असामान्य शक करने की प्रवृत्ति तथा दंडात्मक एवं उत्कृष्ठता से संबंध गलत विश्वास या भ्रान्ति का मापन होता है।

7. **मनोदौर्वल्यता** (**Psychethrnia or Pt**) - इस मापनी में कुल 48 एकांश हैं जिसके द्वारा व्यक्ति में मनोग्रस्ति (Obsession), बाध्यता (Compulsion), असामान्य डर आदि का मापन होता है।

8. **मनोविदलता** (**Schizophrenia or Sc**)- इस मापनी से 78 एकांश हैं इसके द्वारा व्यक्ति में असामान्य चिन्तन या व्यवहार करने की प्रवृत्ति का मापन होता है।

9. **अल्पोन्मान** (**Hypomania or Ma**) - इस मापनी में 46 एकांश है तथा इसके द्वारा व्यक्ति के सांवेगिक उत्तेजन, अतिक्रिया तथा विचारों का विखराव का मापन होता है।

10. **सामाजिक अन्तर्मुखता** (**Social Introversion or SI**) - इस मापनी में 69 पद या प्रश्न है यह सभी प्रश्न सामाजिक अन्तर्मुखता से सम्बन्धित है।

वैधता मापनियॉं (Validity Scales)-

L (Lie) - इस मापनी में 15 प्रश्न हैं, जिनकी सहायता से झूठ बोलने से सम्बन्धित प्रश्न हैं।

F (Frequency or Infrequency)- इस मापनी में 60 पद हैं। इन सभी पदों से प्रयोज्य की लापरवाही का मापन होता है इस मापन से यह मालूम हो जाता है कि एक व्यक्ति अपने रोगात्मक लक्षणों को कैसे बढ़ा कर व्यक्त करता है।

K (Correction)-इस मापनी में 30 प्रश्न हैं। इस मापनी व्यक्ति की अत्यधिक सुरक्षात्मक दृष्टिकोण का मापन होता है।

? (Can't Say) - इस प्रश्न में वह प्रश्न या पद सम्मिलित किये जाते हैं, जिनका प्रयोज्य उत्तर नहीं दे पता है।

इस तरह से यह स्पष्ट हुआ है कि MMPI.2 में मैलिक MMPI के सभी मापनियों को बरकरार रखते हुए उनके एकांशों को संशोधित किया गया है। MMPI.2 की फिर भी कुछ अपनी और विशेषताएं है जो इस प्रकार हैं -

1. MMPI.2 के एकांशो को समूहन करके 15 नये अन्तर्वस्तु मापनी (Content Scale) बनाए गए हैं जिसके द्वारा व्यक्तित्व के 15 ऐसे कारक (डर, क्रोध, टाईप ए व्यक्तिव इत्यादि) को मापना संभव हो पाया है जिसे पहले के 10 नैदानिक मापनियों द्वारा मापना संभव नही था।

2. MMPI.2 में दो और नये वैधता मापनियों को जोड़ा गया है जिसका उपयोग उपर्युक्त चार वैधता मापनी के साथ-साथ करना होता है। ये दो वैधता मापनी है - भ्रिन (Vrin) तथा ट्रिन (Trin) इन दोनों

मापनियों द्वारा पराक्षण एकाशों के प्रति असंगत (Inconsistent) ढंग से उत्तर देने की प्रवृति का मापन होता है।

MMPI की उपयोगिता बहुत अधिक है। इसका उपयोग व्यक्तित्व असामायोजन, मानसिक विकारों व सामान्य व्यक्तियों के अध्ययन में किया जाता है। सन् 1950 में हाथवे और मीहल ने इसके नैदानिक उपयोग के लिए एक एटलस का प्रकाशन करवाया है।

मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व सूची के लाभ –

(1) MMPI से यह मालूम पड़ जाता है कि प्रयोज्य उत्तर देने के कितनी लापरवाही बरत रहा है अथवा तथ्यों को कितना बढ़ा कर बोल रहा है।

(2) इस मापनी के द्वारा नैदानिक मनोविज्ञान के क्षेत्र में एक ही समय में यह ज्ञात हो जाता है कि व्यक्ति किन-किन मानसिक रोगों से पीड़ित है।

(3) इस मापन में मूल्यांकन की वस्तुनिष्ठता की विशेषता है।

मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व सूची के प्रमुख दोष-

(1) MMPI की सहायता से व्यक्तित्व विकृति और मनस्थिति विकृति के कुछ प्रकारों का मापन नहीं होता है।

(2) MMPI के सभी पद शब्दिक है इसलिये इसके द्वारा कम पढ़े-लिखे लोगों और बुद्धि की दृष्टि से दुर्बल लोगों का मापन सही ढंग से नहीं किया जा सकता है।

(3) MMPI.2 का एक दोष यह भी है कि इसमें 74 प्रश्न ऐसे है जिसका उपयोग इस परीक्षण की एक से अधिक मापनियों में किया गया है।

आइकेन (1989) ने अपने अध्ययनों के आधार पर इस मापनी के सम्बन्ध में यह कहा है कि MMPI.2 को 90 प्रतिशत नैदानिक मनोवैज्ञानिक द्वारा पसन्द किया जाता है।

13.4.1.2 सोलह व्यक्तित्व कारक प्रश्नावली (**sixteen Personality Factor Inventory**)- इस व्यक्तित्व सूची का निर्माण और मानकीकरण कैटेल एवं इबर (R. B. Cattell & H. W. Eber 1950, 1956, 1970) ने किया, इस प्रश्नावली के । A, B, C, D, E तथा F प्रारूप उपलब्ध है। प्रारूप A और Bकॉलेज पढने वाले छात्रों के लिए है, तथा E और Fकम पढे लिखे व्यस्कों के लिए है जिनके द्वारा 17 वर्ष से अधिक आयु वाले व्यक्तियों के 16 शीलगुणों को मापा जाता है। इस प्रश्नावली में सम्मिलित किये गये सभी 16 शीलगुण द्विध्रवीय है। इसका विस्तृत अध्ययन आप अगले अध्याय में करेंगे|

13.4.1.3. कैलीफोर्निया व्यक्तित्व परीक्षण (California Psychological Inventory, CPI) - इस परीक्षण का निर्माण और मानकीकरण गफ (Gough 1957 and 1987) द्वारा किया गया। इस परीक्षण के निर्माण कर्त्ता चूँकि कैलीफोर्निया विश्वविद्य्नालय से सम्बद्ध थे अतः यह कैलीफोर्निया व्यक्तित्व परीक्षण के नाम से जाना जाता है। यह परीक्षण 5 प्रकार के लोगों के लिए है- प्राइमरी के बच्चों के लिए, एलीमेन्ट्री के बच्चों के लिए, सैकेण्ड्री के बालकों के लिए, इण्टरमीडिट के किशोरों के लिए एवं व्यस्को के लिए प्रत्येक पॉचों स्तरों के लिए अलग-अलग प्रारूप है। कैलीफोर्निया व्यक्तित्व परीक्षण की सहायता से व्यक्तित्व और सामाजिक समायोजन से सम्बन्धि शीलगुणों का मापन किया जाता है।

इस परीक्षण की सहायता से आत्म समायोजन से सम्बन्धित (1) आत्म निर्भरता (2) व्यक्तिगत कार्य (3) व्यक्तित्व स्वतंत्र ता (4) सम्बन्ध रखने की भावना (5) हटने की प्रवृत्ति की स्वतंत्र ता (6) नर्वसनेस से स्वतंत्र ता एवं सामाजिक समायोजन से सम्बन्धित (1) सामाजिक मानक (2) समाजिक कौशल (3) समाज विरोधी प्रवृत्तियों से स्वतंत्र ता (4) पारिवारिक (5) विद्य्नालय सम्बन्धी एवं (6) सम्प्रदायिक सम्बन्ध से सम्बन्धित प्रश्न है।

इस व्यक्तित्व परीक्षण के पदों का उत्तर देने के लिए ' हॉ ' और ' नहीं ' दो विकल्प है। इस परीक्षण की विश्वसनीयता और वैधता उच्च है और इसके मानक भी उपलब्ध है। इस परीक्षण से व्यक्तित्व मापन के बाद प्राप्त प्राप्तांक से यक्तित्व आंकलन की सरलता के लिए पार्श्वचित्र बनाया जाता है। जिससे आसानी से यह मालूम हो जाता है कि किस क्षेत्र में व्यक्ति मानकों से विचलित है अर्थात असमायोजित है ताकि उसके उपचार की व्यवस्था की जा सकें।

13.4.1.4. माडसेल व्यक्तित्व अनुसूची. (Maudsley Personality Inventory- MPI) - इस अनुसूची की रचना आइजेन्क (H. J. Eysenk 1940) ने की है। इस मापनी में मनोस्नायु दौर्बल्य स्थिरता एवं अर्न्तमुखता बहिर्मुखता एवं अर्न्तमुखता बहिर्मुखता दो मापनियाँ है। प्रत्येक मापनी में 24 पद है अर्थात पूरी मापनी में 48 पद है। इस मापनी के मनोस्नायु दौर्बस्य स्थिरता विमा के मापन से यह ज्ञात होता है कि एक व्यक्ति में मनोस्नायु दुर्बलता है या स्थिरता है। सभी प्रकार से दूसरी विमा अन्तर्मुखता बहिर्मुखता के मापन से यह ज्ञात होता है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व में अन्तर्मुखता का गुण है या बहिर्मुखता का गुण है।

इस मापनी का एक छोटा प्रारुप भी है जिसमें प्रत्येक विमा में 12-12 पद है अर्थात कुल 24 पद है। छोटी मापनी से व्यक्तित्व का मापन शीघ्र हो जाता है किन्तु गहन मापन के लिए 48 प्रश्नों वाली मापनी ही अधिक उपयुक्त है। इस पूरी मापनी को भरने में लगभग 20 मिनट का समय लगता है। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर देने के लिए तीन विकल्प 'हा', '?' (ज्ञात नहीं) तथा 'नहीं' है।

इस मापनी की अर्द्ध-विच्छेद विधि से प्राप्त विश्वसनीयता उच्च है एवं परीक्षण निर्मित वैधता भी उच्च है। इस सूची का उपयोग 15 वर्ष से अधिक आयु वाले लोगों पर किया जाता है। इस सूची का उपयोग निर्देशन और नैदानिक क्षेत्र के साथ-साथ शिक्षा व उद्योग के क्षेत्र में भी किया जाता है। जैनसन (1965) ने इस मापनी की उपयोगिता को बताते हुए कहा है कि "परीक्षण विकास में सभी उत्कृष्ट कसौटियों पर

माडसले व्यक्तित्व सूची एक प्रभावशाली उपलब्धि है।" भारत में जलोटा और कपूर ने इस सूची हिन्दी और पंजाबी भाषा में अनुकूलन किया है।

13.4.1.5. बेल समायोजन अविष्कारिका (Bell Adjustment Inventory) - इस आविष्कारिका का निर्माण बेल (Bell) ने 1934 में किया इस आविष्कारिका का उद्देश्य व्यक्ति में समायोजन सम्बन्धी कठिनाइयों का पता लगाना होता है। इस आविष्कारिका के दो फार्म है- विद्यार्थी फार्म तथा व्यवसायिक फार्म विद्यार्थी फार्म में कुल 140 एकांश है जो चार भिन्न-भिन्न क्षेत्र जैसे - गृह, स्वास्थ , सामाजिक तथा सांवेगिक अवस्था से सम्बन्धित समायोजन समस्याओं का पता लगाता है। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 'हा', 'नहीं' एवं '?' में से किसी एक चिन्ह खीचकर दिया जाता है। व्यवसायिक फार्म में इन 140 एकांशों में 20 एकांश और जोड़ दिया गया है कि इस फार्म के कुल पॉच क्षेत्र हो जाते है जो व्यस्कों के समायोजन की ओर इंगित करते है। इस परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक 0.75 से 0.89 तक है, वैधता गुणांक .58 से .89 तक पाया गया। इस आविश्कारिका का अनुकूलन भारतीय भाषाओं में जैसे हिन्दी तथा मलयालम में भी किया गया है।

इसके अलावा भी बहुत से व्यक्तित्व आविष्कारिका जैसे - आइजेन्क व्यक्तित्व प्रश्नावली (आइजेनक एवं आइजेन्क, 1975), एडवार्डस परसनल प्रेफरेन्स (एडवार्डस, 1959), परसनालिटी रिसर्च फार्म (जैक्सन, 1984) आदि है, जिनका प्रयोग व्यक्तित्व मापन में काफी किया गया है। भारत में भी बहुत सारे व्यक्तित्व आविष्कारिका भेददर्शी व्यक्तित्व मापनी (एल. एन. के सिन्हा एवं ए. के. सिंह), समायोजन सूचि कुन्दु और टी के सेन, 1959) भी है।

1. **आत्म रिर्पोट अविष्कारिका के लाभ** - आत्म रिपोर्ट आविष्कारिका में प्रमुख लाभ निम्न प्रकार से है-
2. व्यक्तित्व सूचियों की सहायता से व्यक्तित्व शीलगुणों का मापन बहुत सरलता से किया जा सकता है।
3. व्यक्तित्व सूचियों की सहायता से व्यक्तित्व शीलगुणों का मापन एक ही समय में अनेक व्यक्तियों के व्यक्तित्व का मापन भी सम्भव है।
4. व्यक्तित्व आविष्कारिका का प्रयोग नैदानिक परिस्थिति तथा सामान्य परिस्थिति दोनों में ही होता है।
5. व्यक्तित्व मापन की सहायता से व्यक्ति के व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन सरलता से किया जा सकता है।
6. आत्म रिर्पोट अविष्कारिका के दोष - आत्मरिर्पोट आविष्कारिका के कुछ प्रमुख दोष निम्न प्रकार से है-

7. फ्रीमैन (1962) का विचार है कि व्यक्तित्व सूचियों द्वारा व्यक्तित्व की अलग-अलग विशेषताओं का मापन होता है। अतः व्यक्तित्व का मापन सम्पूर्ण ६प में नहीं होता है। अतः व्यक्तित्व मापन का यह तरीका बहुत वैज्ञानिक नहीं माना जा सकता है।
8. व्यक्तित्व सूचियों विश्वसनीय तो होती है लकिन इनकी वैधता ज्ञात करने के लिये कोई मान्य कसौटी साधारण तथा उपलब्ध नहीं होती है।
9. व्यक्तित्व सूचियों में व्यक्तित्व का मापन एकांशों या पदो या प्रश्नों की सहायता से किया जाता है। इन प्रश्नों का उत्तर देते समय यह देखा गया है कि प्रयोज्य प्रश्नों का उत्तर कई बार सही न देकर बनावटी या नकली उत्तर देते है।
10. इन आलोचनाओं के बावजूद भी व्यक्तित्व आविष्कारिका का प्रयोग व्यक्तित्व के मापन तथा उससे सम्बन्धित शोधो में काफी किया जा रहा है।

13.5. प्रक्षेपीय विधियॉं (Projective Method)- प्रक्षेपीय विधि द्वारा व्यक्ति के माप परोक्ष रूप से होती है। इस परीक्षण में व्यक्ति के कुछ अस्पष्ट असंगठित उद्दीपक या परिस्थिति दिया जाता है। ऐसे उद्दीपकों एवं परिस्थितियों के प्रति कुछ अनुक्रिया करता है। इन अनुक्रियाओं के सहारे व्यक्ति अचेतन रूप् से अपनी इच्छाओं, त्रुटियों एवं मानसिक संघर्षों को प्रक्षेपित करता है। इस तरह से प्रक्षेपीय परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसके एकांश स्पष्ट एवं असंगठित होते है और जिसके प्रति अनुक्रिया करके व्यक्ति अपने भिन्न भिन्न प्रकार के शीलगुणों की अभिव्यक्ति परोक्ष रूप से करता है।

यदि हम ध्यानपूर्वक देखे तो यह स्पष्ट होगा कि प्रक्षेपीय विधि का अपना एक संक्षिप्त इतिहास है। 1400 में लियोनार्डो डा विनसी (**Leonardo da Vinci**) ने उन बच्चों का चयन किया जिन्होंने कुछ अस्पष्ट प्रारूप (**ambiguous forms**) में विशेष आकार तथा पैटर्न को खोजकर अपने व्यक्तित्व में सर्जनात्मकता को दिखलाया था। फिर 1800 के उत्तरार्द्ध में जब बिने ने ब्लोटो (**Blotto**) जो एक तरह का खेल है, के माध्यम से बच्चों के निष्क्रिय कल्पना (**Passive Imagination**) के मापने की कोशिश किया। इस खेल में बच्चों को कुछ स्याही के धब्बे दिए जाते थे जिसे देखकर उन्हें बताना होता था कि उसमें वे क्या देखते है। 1879 में फिर गाल्टन ने शब्द साहचर्य परीक्षण का निर्माण किया। 1910 में युंग ने इसी तरह के परीक्षण का उपयोग नैदानिक मूल्यांकन के लिए किया। ये सभी अनौपचारिक प्रक्षेपीय प्रविधियों ने अन्ततोगत्वा औपचारिक प्रक्षेपीय परीक्षण का जन्म दिया जिसके एकांश अधिक माननीकृत हुए तथा जिनका क्रियान्वयन प्रत्येक व्यक्ति पर समान ढंग से किया जाना संभव हो सका।

इन प्रक्षेपण विधियों के सम्बन्ध के सम्बन्ध में मरे (**Murray, H. A.** 1951) का विचार है कि प्रक्षेपण प्रविधियों द्वारा प्रयोज्य जो भी प्रक्षेपण करता है। वह दमित नहीं होता है, वह सामग्री चेतन स्वीकार करने योग्य होती है। वह सामग्री कभी-कभी प्रशंसनीय होती है। आवश्यक नहीं है कि प्रयोज्य द्वारा प्रक्षेपण सामग्री चिन्ता परिहार या फ्रीमैन (**F. S. Freeman** 1972) के अनुसार प्रक्षेपी प्रविधि में सामान्य रूप से व्यक्ति के सामने जो उद्दीपक प्रस्तुत किया जाता है इस तरह उसे ऐसा अवसर दिया जाता है कि वह अपने व्यक्तिगत जीवन के छुपे हुए तथ्यों को इन उद्दीपक स्थितियों को माध्यम से अभिव्यक्त करे।

प्रक्षेपण प्रविधियों में सामग्री असंरचित (**Unstructured**)या अर्द्धसंरचित (**Semi-Structured**) होती है। इस प्रकार की परीक्षण सामग्री कुछ चित्र, स्याही धब्बे, अधूरे वाक्य आदि के प्रति प्रयोज्य को अपना प्रत्युत्तर देना होता है। प्रत्युत्तर स्वरूप् प्रयोज्य अपनी इच्छाएँ , भवनाएँ , संवेग, आवश्यकताएँ आदि को प्रक्षेपित करता है।

प्रक्षेपण प्रविधियों की विशेषताएँ-

प्रक्षेपण प्रविधियों की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ निम्न प्रकार से है-

1. इन विधियों में प्रयुक्त परीक्षण सामग्री पूर्णतः असंरचित या अर्द्धसंरचित होती है। यह सामग्री व्यक्ति की चेतन और अचेतन इच्छाओं को अभिव्यक्त कराने में पूर्ण रूप से सक्षम होती है।

2. प्रक्षेपण प्रविधियों की सामग्री अनेक अर्थ वाली होती है, इसलिए प्रयोज्य यह समझ नहीं पाता है कि उसका कौन-सा प्रत्युत्तर सही है और कौन-सा प्रत्युत्तर गलत है।

3. इन प्रविधियों का प्रशासन प्रयोज्य पर व्यक्तिगत रूप से होता है फिर भी परीक्षणकर्त्ता का प्रभाव प्रयोज्य पर नहीं के बराबर पड़ता है।

4. इन प्रविधियों द्वारा सामान्य और असामान्य दोनों प्रकार के व्यक्तियों के व्यक्तित्व का मापन किया जाता है।

5. प्रक्षेपी प्रविधियों की सहायता से व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का चित्र स्पष्ट होता है।

6. इन विधियों के द्वारा चेतन तथा अचेतन स्तर की अभिप्रेरणाओं तथा व्यक्तित्व संरचना का अध्ययन किया जा सकता है।

7. इन अध्ययन विधियों के द्वारा व्यक्ति के संवेगों, अभिप्ररणाओं, अनुभवों, विचारों और अभिवृत्तियों का अध्ययन विश्वसनीय ढंग से किया जा सकता है।

8. इन विधियों की सहायता से चेतन और अचेतन स्तर तथा आन्तरिक विचारों, भावनाओं और ग्रन्थियों का अध्ययन किया जा सकता है।

9. इन विधियों द्वारा प्राप्त परिणाम और निष्कर्ष विश्वसनीय और वैध होते है।

10. इन विधियों की सहायता से व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को सामान्य विश्वसनीयता के साथ समझा जा सकता है।

प्रक्षेपण विधि की उपयुस्त विशेषताओं और उपयोगिताओं के अतिरिक्त इन विधियों के कुछ दोष भी है।

प्रक्षेपण प्रविधियों की सीमाएँ और दोष -

1. इन विधियों की रचना तथा मानकीकरण एक कठिन कार्य है।

2. इन विधियों के प्रशासन, गणना तथा विवेचना के लिए परीक्षणकर्ता का प्रशिक्षित होना आवश्यक है।

3. परीक्षार्थी और प्रशिक्षणकर्ता में जब तक रेपापोर्ट फॉरमेशन (**Rapport formation**) ठीक प्रकार से स्थापित नहीं होता है तब तक विश्वसनीय ऑकड़ों के प्राप्त होने की सम्भावना कम रहती है।

4. इन विधियों द्वारा ऑकड़ों के संकलन में समय अधिक लगने से थकान तथा अरोचकता जैसे कारक ऑकड़ों को प्रभावित करते है।

5. इन विधियों द्वारा प्राप्त ऑकड़ों की विश्वसनीयता एवं वैधता बहुत अधिक नहीं होती है।

6. इन विधियों का उपयोग अन्य अनुसंधानों की अपेक्षा चिकित्सा के क्षेत्र में अधिक होता है।

7. प्रक्षेपण विधियों के प्रशासन, मूल्यांकन एवं गणना के लिए अधिक प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

8. इन प्रविधियों से व्यक्तित्व मापन में समय व्यय होता है।

9. प्रक्षेपण परीक्षणों की रचना और मानकीकरण करना एक कठिन कार्य है।

10. इनकी विश्वसनीयता एवं वैधता की गणना करना कठिन है।

11. मनोविज्ञान की अन्य शाखाओं की अपेक्षा नैदानिक मनोविज्ञान के क्षेत्र में अनुसन्धान कार्यों में इनका उपयोग अधिक किया जाता है।

12. बहुधा इनका उपयोग सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा असामान्य और असमायोजित व्यक्तियों पर किया जाता है।

प्रक्षेपीय परीक्षण प्रकार - व्यक्तित्व मापन के लिए मनोविज्ञानिकों ने कई तरह के प्रक्षेपीय परीक्षण का वर्णन किया है। इसमें लिण्डजे (Lindzey 1961) ने जो वर्गीकरण अनुक्रिया की कसौटी के आधार पर किया है, वह आज भी बहुत लोकप्रिय है। इनके अनुसार प्रक्षेपीय परीक्षण को निम्नाकिंत पॉच भाग में बॉटा गया है-

13.5.1. साहचर्य परीक्षण (Association Test)

13.5.2. संरचना परीक्षण (Constrution Test)

13.5.3. पूत्ति परीक्षण (Complition Test)

13.5.13. चयन या क्रम परीक्षण (Choice or Orderning Test)

13.5.5. अभिव्यंजक परीक्षण (Experssive Test)

13.5.1. साहचर्य परीक्षण -ऐसे परीक्षण में व्यक्ति अस्पष्ट उद्दीपकों को देखता है और यह बतलाता है कि उसमें वह क्या देख रहा है या फिर उससे वह किस चीज को साहचर्यित कर रहा है। रोर्शाक परीक्षण (Rorschach Test)तथा शब्द साहचर्य परीक्षण (Word Association Test)श्रेणी के दो प्रमुख प्रकार है जिनका वर्णन निम्नांकित है-

13.5.1.1. शब्द साहचर्य परीक्षण -इस परीक्षण में कुछ पूर्व निश्चित उद्दीपक शब्दों को एक-एक करके व्यक्ति के सामने उपस्थित किया जाता है। और व्यक्ति को शब्द सुनने के बाद उसके मन में जो सबसे पहला शब्द आता है, उसे बतलाना होता है। सबसे पुरानी प्रक्षेपण प्रविधि शब्द साहचर्य विधि है। सर्वप्रथम गाल्टन 1879 ने शब्द साहचर्य सूची का उपयोग किया, उसने 75 शब्दों की एक सूची का निर्माण एवं प्रकाशन करवाया। विलियम वुण्ट (Wilhelm Wundt 1879) ने भी शब्द साहचर्य विधि का उपयोग किया, वुण्ट ने गाल्टन की शब्द साहचर्य सूची के असम्बद्ध शब्दों को क्रमबद्ध ढंग से प्रस्तुत किया गया। इस सूची के उद्दीपक शब्दों को प्रयोज्य के सामने एक-एक करके प्रस्तत किया गया। प्रयोज्य किसी भी उद्दीपकशब्द को सूनते ही अपना प्रति उत्तर देता था। फ्रायड ने स्वप्नों की व्याख्या के लिए और मनोविश्लेषण के लिए शब्द साहचर्य विधि का उपयोग किया।

व्यक्ति मापन के रूप में इस परीक्षण का उपयोग फ्रायड तथा शिष्य विशेषकर युंग द्वारा प्रारंभ किया गया। युंग ने 1904 में 100 शब्दों की एक मानक सूची तैयार की और उपयुक्त विधि द्वारा व्यक्ति की अनुक्रियाओं को प्राप्त किया। उसके बाद उसका विश्लेषण करके विशेषकर प्रत्येक अनुक्रिया शब्द का सांकेतिक अर्थ (Symbolic Meaning) ज्ञात करके तथा प्रतिक्रिया समय (Reaction Time) के आधार पर व्यक्ति के सांवेगिक संघर्षों का पता युंग ने सफलतापूर्वक लगाया। इसकी सफलता देखकर अमेरिका में केन्ट तथा रोजेन्फ ने 1910 में तथा रैपापोर्ट ने 1946 में अन्य शब्द साहचर्य परीक्षण का निमार्ण किया जिसका प्रयोग व्यक्तित्व मापन में विशेषकर साधारण मानसिक रोग (mild mental diseases) से ग्रसित व्यक्तियों के व्यक्तित्व के मापन में सुचारु रूप से किया गया।

मरे एवं मार्गन (Murray , Morgan 1935) ने शब्द साहचर्य परीक्षण का उपयोग व्यक्तित्व अध्ययनों में किया है। इसी प्रकार से रसेल जेनकिन्स (Rusel and Jenakins 1954) ने निदान के क्षेत्र में शब्द साहचर्य परीक्षणों का सफल उपयोग किया है। रेपापोर्ट (Rappaport 1968) ने शब्द साहचर्य परीक्षण की उपयोगिता का वर्णन करते हुए कहा है कि, इस परीक्षण के द्वारा व्यक्ति के साहचर्यत्मक विचारों का सफलतापर्वक अध्ययन किया जा सकता है। इसके साथ-साथ व्यक्ति के मनोभावों और अन्तर्द्वन्द्वों आदि का अध्ययन इस परीक्षण के द्वारा सफलतापूर्वक किया जाता है।

आज उपचार तथा निदान के क्षेत्र में उस विधि का उपयेग अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। अनेक अध्ययनों (Conklin1927, Wells1927)के आधार पर निष्कर्ष निकाला गया हैं कि भावना ग्रन्थियों को उद्दीप्त करने वाले शब्द प्रत्येक व्यक्तित्व अध्ययन में सम्बन्धित भिन्न-भिन्न होते है फिर भी यह उद्दीपक शब्द जीवन के कुछ विशेष पहलुओं से सम्बन्धित होते है जैसे प्रेम, विवाह, मित्रता, लड़ाई,

क्रोध, अन्याय मृत्यु आदि। जब भी किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व या भावना ग्रन्थियों का अध्ययन करना होता है तब विभिन्न पहलूओं से सम्बन्धित कुछ उद्दीपक शब्दों को चुना जाता है फिर इन उद्दीपक शब्दों को सामान्य उद्दीपक शब्दों में मिलाकर प्रयोज्य के सामने एक-एक करके प्रस्तुत किया जाता है। प्रयोज्य को किसी भी उद्दीपक शब्द को सुनकर जो भी मानस-पटल पर आये उसकों प्रतिउत्तर के रूप् में तुरन्त बोलना पड़ता है। इस तरह से प्राप्त प्रयोज्य के प्रतिउत्तरों का विश्लेषण करके व्यक्ति की भावना ग्रन्थियों का पता लगाया जाता है।

रोर्शा और टी. ए. टी. परीक्षणों की तुलना में शब्द साहचर्य परीक्षण विधि अपेक्षाकृत अधिक वस्तुनिष्ठ विधि है फिर भी यह इन परीक्षणों की तुलना में अधिक प्रचलित नहीं है। इसके प्रचलित न होने का मुख्य कारण यह है कि परीक्षणकर्त्ता को व्यक्तित्व अध्ययन में शब्द साहयर्च परीक्षण सूची स्वयं तैयार करनी होती है। यह तैयार की गई सूची की प्रामाणिकता कभी-कभी सन्देहपूर्ण होती है।

13.5.1.2. रोशार्क परीक्षण (Rorschach Test)- प्रक्षेपण परीक्षण में सबसे प्रचलित एवं प्रमुख परीक्षण रोशोर्क परीक्षण है जिसका प्रतिपादन स्विटजरलैंड के मनोरोगविज्ञानी हरमान रोशार्क (Herman Rorschach) ने 1921 में किया। इस परीक्षण में 10 कार्ड होते है जिसपर स्याही के धब्बे के समान चित्र बने होते ;चित्र-1द्ध है। इसमें 5 कार्ड पर स्याही के धब्बे जैसी आकृति पूर्णतः काला-उजला (black and white) में छपे होते है और 5 कार्ड पर स्याही के धब्बे जैसी आकृति रंगों में होती है। प्रत्येक कार्ड एक-एक करके उस व्यक्ति का दे दिया जाता है जिसका व्यक्तित्व मापना होता है। कार्ड को वह जैसे चाहे घुमा फिरा सकता है और ऐसा करके उसे बताना होता है कि उसे उस कार्ड में क्या दिखलाई दे रहा है या धब्बे का कोई अंश या पूरा भाग उसे किसी चीज के समान दिखलाई पड़ रहा है। व्यक्ति द्वारा दी गयी अनुक्रियाओं को लिख लिया जाता है और बाद में उसका विश्लेषण कुछ खास-खास अक्षर संकेतों (letter symbol) के सहारे निन्नांकित चार भागों में बॉट कर किया जाता है-

चित्र-1

(a) **स्थल-निरूपण** (**Location**)- इन श्रेणी में इस बात का निर्णय किया जाता है कि व्यक्ति की अनुक्रिया का संबंध स्याही के पूरे धब्बे से है या उसके कुछ अंश से। अगर अनुक्रिया का आधार पूरा धब्बा होता है, तो उसे एक खास अक्षर संकेत, यानी W से अंकित करते है। यदि अनुक्रिया का आधार धब्बे का बड़ा एवं सामान्य अंश (common detail) होता है तो उसके लिये D त़था असामान्य एंव छोटे अंश के आधार पर अनुक्रिया होने से उसके लिए Dd का प्रयोग किया जाता है। सिर्फ उजले स्थानों या जगहों के आधार पर अनुक्रिया देने से उसके लिए S का प्रयोग किया जाता है।

(b) **निर्धारक (Determinants)**-. इस श्रेणी में इस बात का निर्णय किया जाता है कि धब्बे के किस गुण ;मिंजनतमद्ध के कारण व्यक्ति ने अमुक अनुक्रिया की है। इस अनुक्रिया के निर्धारण श्रेणी में इस बात का निर्णय किया जायेगा कि व्यक्ति ने धब्बे के किस गुण अर्थात आकार, रंग, गति आदि में से किसके आधार पर ऐसी अनुक्रिया की है। इस श्रेणी के लिए लगभग 24 अक्षर संकेतों का प्रतिपादन किया गया जिसमें कुछ इस प्रकार है- आकार (form) के लिए f . रंग (colour)के लिए c, मानव गति अनुक्रिया (human movement response) के लिए FM, पशु गति अनुक्रिया (animal movement response)के लिए m आदि।

(c) विषय-वस्तु (Content). इस श्रेणी में यह देखा जाता है कि व्यक्ति द्वारा दी गयी अनुक्रिया की विषय-वस्तु क्या है। विषय-वस्तु मनुष्य होने पर उसके लिए भ् तथा पशु होने पर उसके लिए । के संकेत का प्रयोग किया जाता है। मानव के किसी अंग के विवरण (human detail) होन पर hd तथा पशु के किसी अंग के विवरण (animal detail)के लिए d,आग के लिए Fi तथा घरेलू वस्तुओं के लिए Hh का प्रयोग किया जाता है।

(d) मौलिक अनुक्रिया एवं संगठन (Original response and Organization). मौलिक अनुक्रिया से तात्पर्य उस अनुक्रिया से होता है जो अनेकों व्यक्तियों द्वारा किसी कार्ड के प्रति अक्सर दिये जाते है। इसलिए इसे लोकप्रिय अनुक्रिया भी कहा जाता है जिसका संकेत च् है। जैसे, प्रथम कार्ड में पूरे धब्बे को चमगादड़ या 'तितली' के रूप में देखना एक लोकप्रिय अनुक्रिया का उदाहरण है। इसी तरह से प्रत्येक कार्ड के लिए कुछ अनुक्रियाओं को लोकप्रिय अनुक्रिया की श्रेणी में रखा गया है। कभी-कभी वह कुछ अनुक्रियाओं को एक साथ संगठित कर लेता है जिसका संकेत Z है।

रोशार्क परीक्षण पर दिये गये अनुक्रियाओं को उपर्युक्त चार भागों में विश्लेषण करने के बाद उसकी व्याख्या की जाती है। उदाहणार्थ, यदि किसी व्यक्ति द्वारा अधिक संख्या में W की अनुक्रिया की गयी है, तो इससे तीव्र बुद्धि तथा अमूर्त चिन्तन (abstract reasoning) की क्षमता का बोध होता है। D अनुक्रियाओं से व्यक्ति में किसी वस्तु को स्पष्ट रूप से देखने तथा समझने की क्षमता का बोध होता है। Dd अनुक्रिया जो एक सामानय व्यस्क द्धारा दी गयी कुल अनुक्रियाओं का 5: से अधिक नहीं होता है, द्वारा व्यक्ति के चिन्तन में अस्पष्टता को दिखलाता है। परन्तु यदि ऐसी अनुक्रिया 5: से अधिक हो जाती है, तो इससे व्यक्ति में मनोविदालिता (Schizophrenia) जो एक प्रकार का मानसिक रोग है, का संकेत मिलता है। S अनुक्रिया की अधिकता से व्यक्ति में नकारात्मक प्रवृति (negativistic tendency) तथा

आत्म-हठधर्मी (self – assertive) होने का संकेत मिलता है। Fअनुक्रिया की अधिकता से चिन्तन करते समय एकाग्रता (concentration) की क्षमता का बोध होता है। रंग-संबंधी अनुक्रिया की अधिकता से व्यक्ति की संवेगशीलता या व्यक्तित्व के भावात्मक शीलगुणों का पता चलता है। रंग-संबंधी अनुक्रिया का बहुत ही कम होना या न होने पर व्यक्ति में मनोविदलता के लक्षण, जैसे- सामान्य वातावरण से अपने आपको अलग करके रखना, भ्रम तथा विभ्रम अिधक होना आदि गुण पाये जाते है। गति अनुक्रियाओं (F, FM, m) की अधिकता से व्यक्ति में काल्पनिक क्रियाओं तथा उसकी कल्पना शक्ति का बोध होता है। A तथा Ad अनुक्रियाओं को मिलाकर A प्रतिशत तथा H और Hd अनुक्रियाओं को मिलाकर H प्रतिशत ज्ञात किया जाता है। । प्रतिशत अधिक होने से बौद्धिक संकीर्णता (Intellectual constriction) तथा सांवेगिक असंतुलन (Emotional disturbance) ज्ञात होता है तथा H प्रतिशत अधिक होने से उपयुक्त संज्ञानात्मक विकास होने का संकेत मिलता है। P अनुक्रिया की अधिकता से रूढ़िगत चिन्तन (conventional thinking) तथा इसकी कमी से व्यक्ति में सामाजिक अनुरूपता (social conformity) के शीलगुण की कमी होने का अंदाज मिलता है। एक्सनर (Exner 1974) के अनुसार P अनुक्रियाओं से व्यक्ति में सर्जानात्मक का भी बोध होता है। अनुक्रियाओं से व्यक्ति में उच्च बुद्धिए सर्जनात्मक तथा निपूणता आदि का बोध होता है।

रोशार्क के समान ही एक स्याही-धब्बा परीक्षण है जिसका प्रतिपादन होल्जमैन (Holtzman)ने 1961 में किया था जिसे होल्जमैन स्याही-धब्बा परीक्षण (Holtzman Ink- blot test) कहा जाता है। इसके दो फार्म है और प्रत्येक फार्म में 45 कार्ड है जिसपर स्याही के धब्बे बने होते है। प्रत्येक कार्ड के प्रति अधिक-से अधिक एक अनुक्रिया व्यक्ति को करनी होती है परन्तु व्यक्तित्व मापन में इसकी लोकप्रियता उतनी नहीं है जितनी की परीक्षण का है।

13.5.2. संरचना परीक्षण (Construction test)-. इस श्रेणी में वैसे प्रक्षेपीय परीक्षणों को रखा जाता है जिसमें परीक्षण उद्दीपकों के आधार पर व्यक्ति को एक कहानी या अन्य समान चीजों की संरचना करनी होती है।

13.5.2.1. विषय आत्मबोध परीक्षण (Thematic Appercepcotion Test or TAT). इस श्रेणी का सबसे प्रमुख परीक्षण विषय आत्मबोध परीक्षण है। इस परीक्षण का निर्माण मरे ; (Murray 1935) ने हारर्वड विश्वविद्यालय में किया। बाद में यानी, 1938 में मार्गन Morgan) के साथ मिलकर इन्होंने इस परीक्षण का संशोधन किया। इस परीक्षण में कुल 31 कार्ड होते है जिसमें से 30 कार्ड पर चित्र बने होते है तथा 1 कार्ड सादा होता है। जिस व्यक्ति के व्यक्तित्व को मापना होता है, उसके यौन (sex) एवं उम्र के अनुसार इस 31 कार्ड में से 20 कार्ड का चयन कर लिया जाता है। इस 20 कार्ड में 19 कार्ड पर चित्र अंकित होते है और एक कार्ड सादा होता है। किसी एक व्यक्ति पर 20 कार्ड से अधिक नहीं दिया जाता है। प्रत्येक कार्ड के चित्र के आधार पर व्यक्ति जिसका व्यक्तित्व मापन किया जाता है, एक कहानी तैयार करता है जिसमें चित्र से संबंधित घटना के भूत, वर्तमान तथा भविष्य तीनों का वर्णन होता है। इस परीक्षण का क्रियान्वयन दो सत्रों (session)में होता है- पहले सत्र मे 10 कार्ड फिर दूसरे सत्र में अन्तिम 10 कार्ड व्यक्ति को देकर उसके आधार पर कहानी लिखने को कहा जाता है। सबसे अन्त में सादा कार्ड दिया जाता

है। जिसपर अपने मन से किसी चित्र को मानकर उसके आधार पर कहानी लिखने के लिए कहा जाता है। मर्रे ने उपर्युक्त दो सत्रों के बीच कम-से- कम 24 घंटों का अन्तर देने की सिफारिश की है। सभी कार्ड के आधार पर कहानी-लेखन का कार्य समाप्त होने पर एक साक्षात्कार किया जाता है जिसका उद्देश्य यह जानना होता है कि कहानी लिखने में व्यक्ति की कल्पना-शक्ति का स्त्रोत मात्र चित्र या चित्र से बाहर की कोई घटना भी रही है।

कहानी-लेखन का कार्य समाप्त होने पर उसका विश्लेषण कर व्यक्तित्व के महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं (dominant needs) का पता लगाया जाता है मर्रे के अनुसार इस परीक्षण का विश्लेषण निम्नांकित प्रसंगों में किया जाता है।

1. नायक (Hero)- प्रत्येक कहानी में नायक या नायिका का पता लगाया जाता है। ऐसा समझा जाता है कि व्यक्ति इस नायक या नायिका के साथ आत्मीकरण (identification) स्थापित कर अपने व्यक्तित्व के शीलगुणों विशेषकर अपनी महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं को दिखलाता है।

2. आवश्यकता (Needs) - प्रत्येक कहानी में नायक या नायिका की मुख्य आवश्यकताएँ क्या-क्या है, इसका पता लगाया जाता है। मर्रे के अनुसार TAT द्वारा 28 मानव आवश्यकताओं का मापन होता है। कुछ ऐसी आवश्यकताएँ है- उपलब्धि आवश्यकता (need for achievement), संबंध आवश्यकता (need for affiliation), प्रभुत्व आवश्यता (need for domains) आदि।

3. प्रेस (Press) - प्रेस से तात्पर्य कहानी के उस वातावरण संबंधी बलों से होता है जिनसे कहानी के नायक की आवश्यकता या तो पूरी होती है या पूरी होने से वंचित रह जाती है। मर्रे के अनुसार इस तरह के वातावरण संबंधी बल (environment force) 30 से अधिक है। आक्रामकता या आक्रमण तथा शारीरिक खतरा दो महत्वपूर्ण प्रेस है जिनका वर्णन अधिकांश कहानियों में मिलता है।

4. थीमा Thema)-. प्रत्येक कहानी में थीमा का निर्धारण किया जाता है। थीमा से तात्पर्य नायक की आवश्यकता तथा प्रेस अर्थात वातावरण संबंधी बल में हुई अन्तः क्रिया (interaction) से उन्पन्न घटना से होता है। थीमा द्वारा व्यक्तित्व में निरन्तरता (continuity) का ज्ञान होता है।

5. परिणाम (Outcome)-. परिणाम से तात्पर्य इस बात से होता है कि कहानी को किस तरह से समाप्त किया गया है। कहानी का निष्कर्ष निश्चित है या अनिश्चित है। निश्चित एवं स्पष्ट निष्कर्ष होने से व्यक्ति में परिपक्ता (maturity), वास्तविकता (reality) का ज्ञान होने का बोध होता है।

TAT का भारतीय अनुकूलन कलकत्ता के प्रो. उमा चौधरी ने किया है जिसका उपयोग भारतीय संदर्भ में अधिक किया जा रहा है।

इस श्रेणी में TAT के समान अन्य कुछ परीक्षणों का भी निर्माण किया गया है जिसका संक्षिप्त वर्णन यहॉ अपेक्षित है जो इस प्रकार है-

13.5.2.2. रोजेनविग तस्वीर-कुंठा अध्ययन (Rosenwig Picture Frustration Study)-. इस परीक्षण का निर्माण रोजनविग (Rosenwig 1949) द्वारा किया गया। इसमें 24 कार्टून होते है जिसमें एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति के साथ इस ढ़ग से व्यवहार करते दिखलाया जाता है कि दूसरे व्यक्ति में उसके व्यवहार से निश्चित रूप से कुंठा उत्पन्न हो। यहॉ व्यक्ति को प्रत्येक कार्टून देखकर यह बतलाना होता है कि ऐसी परिस्थिति में कुंठित व्यक्ति की अनुक्रिया क्या होगी।

इस परीक्षण के द्वारा कुण्ठा (frustration)और आक्रामक प्रवृत्तियों का मापन किया जाता है। इस परीक्षण के दो प्रारूप् है- एक प्रारूप 4 वर्ष से लेकर 13 वर्ष तक के बच्चों के लिए है और दूसरा प्रारूप् 14 वर्ष से अधिक आयु के लोगों के लिए है। इस परीक्षण में 24 कार्टून चित्रों में से प्रत्येक चित्र में कम से कम दो कार्टून दो चित्र है। दो चित्रों में से एक चित्र में कुछ कथन है और चित्र में कथन के लिए स्थान रिक्त छोड़ गया है।

रोजेनविग पी. एफ. स्टडी का निमार्ण कुण्ठा या नैराश्य औश्र दबाव के सिद्धान्त के आधार पर किया गया है। कार्टून चित्र के एक चित्र में जो रिक्त स्थान कथनों के लिए छोड़े गए है उनकी पूर्ति प्रयोज्य अपनी भाषा में करता है। यह कार्टून चित्र ऐसे बनाये गए है कि प्रत्येक कार्टून चित्र में कुण्ठा परिस्थिति में दो व्यक्ति दिखाये गए है। इन दो व्यक्तियों में से एक व्यक्ति दूसरे से कुछ कहता है, पहले व्यक्ति द्वरा जो कुछ कहा जाता है प्रयोज्य प्रति उत्तर के रूप् में खाली स्थान को भरता है। इस परीक्षण का प्रशासन व्यक्तिगत स्तर और सामूहिक स्तर पर किया जाता है। जब प्रयोज्य कुण्ठा परिस्थिति के साथ तादात्म्य (identification)स्थापित कर लेता है तब व्यक्ति अपनी प्रतिक्रिया का प्रक्षेपण करता है।

13.**5.2.3. बाल आत्मबोधन परीक्षण (Children's Apperception Test or CAT)-**. इस परीक्षण का विकास बेल्लाक (Bellak 1954) द्वारा किया गया है तथा इसके कार्ड में पशु पात्र है न कि मानव पात्र। TAT के समान ही इसमें बच्चों के व्यक्तित्व की आवश्यकता का मापन प्रत्येक कार्ड के आधार पर लिखी गयी कहानी के माध्यम से होता है।

13.5.2.4. रोवर्टस आत्मबोधन परीक्षण: बच्चों के लिए (**Roberts Apperception Test for children or RATC)-**. इस परीक्षण का निमार्ण मैकअर्थर तथा रोवर्टस (Mcarthur and Roberts 1982) द्वारा किया गया। इसमें 27 कार्ड होते है और प्रत्येक कार्ड में कुछ बच्चों को अन्य बच्चों या कारकों के साथ अन्तः क्रिया करते हुए दिखलाया जाता है। बच्चों को प्रत्येक कार्ड के आधार पर यह बतलाना होता है कि उसमें दिखाए गए पात्र क्या कर रहे है और क्या करेगें।

13.5.3. पूर्त्ति परीक्षण (Completion Test)-. पूर्ति परीक्षणों या वाक्यपूर्ति परीक्षणों की सहायता से भी व्यक्तित्व का अध्ययन किया जाता है। इन वाक्यपूर्ति परीक्षणों में चित्रों और शब्दों के रूप् में उद्दीपक नहीं होते है बल्कि उद्दीपक अपूर्ण वाक्यों के रूप् में होते है। परीक्षण के सभी अपूर्ण वाक्य व्यक्तित्व से सम्बन्धित होते है। प्रयोज्य को इन अपूर्ण वाक्यों को पूरा करना होता है। इस परीक्षण विधि में यह माना जाता है कि जब एक प्रयोज्य अपूर्ण वाक्यों को पूर्ण करता है तो वह इस प्रकार वाक्यों को पूरा करने में अपनी इच्छाओं, भावनाओं, अन्तर्द्वन्द्वों, मनोवृत्तियों और ग्रन्थियों आदि का प्रक्षेपण करता है । प्रयोज्य

को अपूर्ण वाक्यों को देखकर अथवा सुनकर पूर्ण करना होता है। इन वाक्यपूर्ति परीक्षणों के द्वारा व्यक्ति के अन्तर्द्वन्द्वों और साहचर्यत्मक विकारों (associative disorder)का अध्ययन किया जाता है| वाक्यपूर्ति परीक्षण के कुछ नमूने के पद या प्रश्न निम्न प्रकार से है-

1. मेरे पिता ने .....
2. असफलता से मुझे .....
3. पत्नी के साथ मुझे .....
4. सामाजिक कार्यक्रम मुझे .....
5. अच्छी वेशभूषा मुझे .....

वाक्यपूर्ति परीक्षणों में 30 अपूर्ण वाक्यों से लेकर 100 अपूर्ण वाक्यों तक आवश्यकतानुसार कितने भी अपूर्ण वाक्य हो सकते है। रोटर्स वाक्यपूर्ति परीक्षण में 40 अपूर्ण वाक्य थे। एल. एन. दुबे और अर्चना देबे 1987 द्वारा निर्मित वाक्य पूर्ति परीक्षण में 50 अपूर्ण वाक्य है। व्यक्तित्व का मापन करने के लिए परीक्षणकर्त्ता या अनुसन्धानकर्त्ता को आवश्यकतानुसार एक अलग वाक्यपूर्ति परीक्षण का निर्माण और मानवीकरण करना होता है। ऐसा करने से परीक्षणकर्त्ता को व्यक्तित्व मापन के लिए एक विश्वसनीय परीक्षण मिल जाता है और व्यक्तित्व के उन शीलगुणों का मापन हो जाता है जिनका वह मापन करना चाहता है। इन परीक्षण का उपयोग करते समय प्रयोज्य को सोच-विचार का अधिक समय नहीं दिया जाना चाहिए। ऐसा करने से प्रयोज्यों की चेतन भावनाओं के साथ-साथ अचेतन भावनाओं की पूर्ति भी वाक्य पूर्ति में हो जाती है। इस प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग वैयक्तिक व सामूहिक दोनों स्तरों पर किया जाता है।

1940 में राहड़े तथा हाइड्रोथ (Rohde and Hildreth) ने एक ऐसा परीक्षण बनाया जिसका प्रयोग व्यक्तित्व मापन में काफी किया गया है। रौट्टर (Rotter 1950) नें एक व्यक्ति पूर्त्ति परीक्षण विकसित किया जिसमें 40 अधूरे वाक्य होते है और व्यक्ति उन्हें अपने ओर से पूरा करता है। भारत में विश्वनाथ मुखर्जी ने भी इस तरह के परीक्षण का निर्माण किया है।

वाक्यपूर्ति परीक्षण के वाक्य 'मैं', 'मुझे' अथवा 'वह' 'उसे' से प्रारम्भ होते है। इस दिशा में हुए अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि 'मैं', 'मुझे' से प्रारम्भ होने वाले अपूर्ण वाक्य अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त होते है क्योंकि इन अपूर्ण वाक्यों से आन्तरिक भावनाओं की संलग्ता का अधिक करता है। इस प्रकार के वाक्यपूर्ति परीक्षणों की एक मुख्य सीमा यह है कि इनका उपयोग शिक्षित वर्ग तक ही सीमित है। जब व्यक्तित्व के सम्बन्ध में प्राप्त निष्कर्ष सन्देहपूर्ण होते है। इतना होते हुए भी इन परीक्षणों की विश्वसनीयता को राटर और विलरमैन 1947 ने तथा लेजरस और इरिक्सन 1951 ने उच्च बताया है क्योकि व्यक्ति द्वारा दिये गये उत्तरों का विश्लेषण कर शीलगुणों के बारे में अंदाज लगाया जाता है।

13.5.4. चयन या क्रम परीक्षण (Choice and Ordering Test). इस श्रेणी के परीक्षण में व्यक्ति परीक्षण उद्दीपकों को एक विशेष क्रम में सुव्यवस्थित करता है या अपनी पसंद या आकर्षकता या अन्य कोई बिमा के आधार दिए गए परीक्षण उद्दीपकों में से कुछ को चुनना होता है। पूर्वकल्पना यहॉ यह होती है कि व्यक्ति द्वारा चुने गए उद्दीपकों या उनके एक खास व्यवस्थित क्रम से उसके व्यक्तित्व के शीलगुणों का अंदाज होता है। जोन्डी परीक्षण (Szondi Test)जिसका निर्माण जोन्डी (Szondi 1947) द्वारा किया गया था, इस श्रेणी का एक प्रमुख परीक्षण है। इस परीक्षण में व्यक्ति को कोई फोटोग्राफ के छह समुहों को एक-एक करके दिखलाया जाता है जिसमें से उसे दो ऐसे तस्वीर को चुनना होता है जिसे वह अधिक पंसद करता है तथा दो ऐसे तस्वीर भी चुनना होता है जिसे वह सबसे अधिक नापसंद करता है। ऐसे चयन से व्यक्तित्व के शीलगुणों के बारे में अनुमान लगाया जाता है।

इस श्रेणी का दूसरा महत्वपूर्ण परीक्षण 'काहन टेस्ट ऑफ सिम्बोल ऐरेजमेन्ट (Kahn Test of Symbol Arrangement)है जिसका निर्माण काहन (Kahn 1955) द्वारा किया गया। इसमें व्यक्ति को प्लासटिक के बने 16 विभिन्न आकारी वस्तुओं जैसे, पशु, तारा, क्रास आदि को दिखलाया जाता है। और उन्हें विभिन्न श्रेणियों जैसे 'घृणा', 'प्यार', 'बुरा', 'अच्छा', 'जीवित', 'मृत' आदि छॉटना होता है। इसके बाद व्यक्ति को प्रत्येक वस्तु को देखकर मन में आए साहचर्यों को बिना हिचक के बताना होता है ताकि उसके सांकेतिक अर्थ को समझा जा सके। इसके बाद छाँटे गए वस्तुओं की व्याख्या प्रत्येक संकेत के अर्थ के संदर्भ में लगाया जाता है और उसके आधार पर व्यक्ति के अचेतन प्रक्रियाओं के बारे में अनुमान लगा पाना संभव हो पाता है।

13.5.5. अभिव्यंजक परीक्षण (Expressive Test)- इस श्रेणी के प्रक्षेपीय परीक्षण में व्यक्ति को अपने आप को अभिव्यक्त करने का मौका दिया जाता है। प्रायः यह अभिव्यक्ति उसे एक तस्वीर का आरेखण (drawing) करके करना होता है। किए गए आरेखण के विश्लेषण के आधार पर व्यक्ति के व्यक्तित्व के शीलगुणों का अनुमान लगाया जाता है। इस श्रेणी के मुख्य दो परीक्षण है- ड्रा-ए-परसन परीक्षण (Draw- a- Person Test or DAP) तथा घर पेड़ व्यक्ति परीक्षण (House Tree Person Test or H-T-P)। DAP का निर्माण मैकोवर (Machovar 1949)द्वारा किया गया जिसमें व्यक्ति को एक व्यकित के चित्र का आरेखण करना होता है। कभी-कभी इसके बाद उसके विपरित लिंग के व्यक्ति, आत्मन, मॉ, परिवार के चित्र का भी आरेखण करने के लिए कहा जाता है। मैकोवर का मत है कि शरीर के प्रत्येक अंग के आरेखण में दिखाए गए अंतर्वेशन (inclusion), बहिष्करण (exclusion), आकार, संगठन, सममिति (symmetry) आदि से व्यक्ति की आत्म-प्रतिमा (self-image) मानसिक संघर्ष, प्रत्यक्षण, चिंतन आदि के बारे में एक स्पष्ट अंदाज लगाना संभव हो पाता है।

घर-पेड़-व्यक्ति परीक्षण(H-T-P Test) का निर्माण बक (Buck 1948) द्वारा किया गया। व्यक्ति को इससे एक पेड़ तथा एक व्यक्ति के चित्र का आरेखण करना होता है और फिर उसकी विवेचना एक साक्षात्कार में करनी होती है। इस विवेचन के आधार पर उस व्यक्ति के व्यक्तित्व के बारे में महत्वपूर्ण सूचनाएँ मिलती है।

इन दो प्रमुख परीक्षणों के अतिरिक्त वेण्डर-गेस्टाल्ट परीक्षण (Bender Gestalt Test) को भी इस श्रेणी का ही एक प्रक्षेपीय विधि कुछ लोगों द्वारा माना गया है। इस परीक्षण द्वारा व्यक्ति के बौद्धिक ह्रास (Intellectual deterioration) की मात्रा का पता चलता है। इस परीक्षण का निर्माण लिउरेटा वेण्डर (Lauretta Bender) 1938,द्वारा किया गया। इस परीक्षण में 9 अति साधारण चित्र होते है जिसे देखकर पहले व्यक्ति उसका नकल उतारता है, उसके बाद उसके सामने से डिजाइन हटा लिया जाता है और उसे स्मृति से ही उस डिजाइन का आरेखण करना होता है। इस आरेखण में वह कई तरह की त्रुटियॉं करता है जिसमें चित्र घूर्णन (figure rotation), पुनरावृत्ति (repetition) तथा समन्वय में कमी आदि प्रधान है। इन त्रुटियों की गंभीरता एवं वारबंरता के आधार पर व्यक्ति का अंदाज लगाया जाता है।

यद्यपि प्रक्षेपीय परीक्षण व्यक्तित्व को मापने की एक महत्वपूर्ण विधि है, फिर भी मनोवैज्ञानिकों ने इसकी आलोचना की है। आइजेत्क (Eysenck 1959)द्वारा प्रक्षेपण परीक्षण की प्रमुख ओलोचनाएँ इस प्रकार की गयी-

1. प्रक्षेपीय परीक्षण का आधार कोई अर्थपूर्ण तथा परीक्षणीय सिद्धान्त नहीं है। फलतः इसके द्वारा किये गये व्यक्तित्व मापन से कोई ठोस निष्कर्ष नहीं निकालता है।

2. प्रक्षेपीय परीक्षण का प्राप्तांक - लेखन (scoring) तथा व्याख्या (interpretation) काफी आत्मनिष्ठ (subjective) है। यह अलोचना विशेषकर RT यानी रोशार्क परीक्षण तथा TAT के लिए और भी ज्यादा सही है। इसका परिणाम यह होता है कि एक ही व्यक्तित्व का मापन करके भिन्न-भिन्न लोग भिन्न-भिन्न तरह के निष्कर्ष पर पहुंचते है जो सर्वथा अर्थहीन ही होता है।

3. प्रक्षेपीय परीक्षण की वैधता अधिक नहीं होती है। प्रायः इस परीक्षण की वैधता के आधार पर व्यक्ति का केस इतिहास (case history) आदि तैयार किया जाता है जिसे मनोवैज्ञानिकों ने एक वैज्ञानिक कसौटी (Scientific criteria) नहीं माना है। फलतः इन परीक्षणों की वैधता पर अधिक विश्वास नहीं किया जाता है।

अधिकतर मनोरोगविज्ञानियों (Psychiatrists) का ऐसा विश्वास है कि प्रक्षेपीय परीक्षण के सूचकों (indicators) तथा शीलगुणों के बीच प्रत्याशित संबंध (expected relationship) होने का कोई वैज्ञानिक सबूत नहीं है।

इन आलोचनाओं के बावजूद भी प्रक्षेपीय परीक्षण का प्रयोग व्यक्तित्व मापन में काफी होता है और मनोचिकित्सा में तो इस परीक्षण को एक अभिन्न अंग माना गया है।

अभ्यास प्रश्न-

1. रोशार्क परीक्षण की ..... अनुक्रिया वर्ग से बुद्धि परावर्तित होती है।

2. एम.एम.पी.आई. का निर्माण ..... द्वारा किया गया था।

3. शब्द साहचर्य परीक्षण एक तरह का ..... है।

4.. 16 पीएफ व्यक्तित्व प्रश्नावली में Bold-Shy का ..... संकेत है।

5. टीएटी का किसी भी एक व्यक्ति पर उसके उम्र तथा यौन के आधार पर अधिक ..... कार्ड का क्रियान्वयन किया जा सकता है।

6. बेल समायोजन आविष्कारिका में दो फार्म ..... तथा ..... है।

13.6. सारांश

1. व्यक्ति मापन के लिए तीन तरह की प्रविधियों व्यक्तित्व आविष्कारिका, प्रक्षेपी विधि तथा व्यवहारिक विधिवर्णन किया गया है।
2. व्यक्तित्व आविष्कारिका में व्यक्ति के खास-खास शीलगुणों को मापन के लिए शाब्दिक एकांश होते है जिन्हें व्यक्ति स्वयं पढ़ते है तथा उसका उत्तर दिए उत्तरों के सेट में से चुनकर करता है। एक ऐसा महत्वपूर्ण परीक्षण है। इसके अलावा भी कई व्यक्तित्व आविष्कारिकाओं का वर्णन किया गया है।
3. सबसे महत्वपूर्ण व्यक्तित्व अविष्कारिका का निर्माण 1943 में एस.आर. हाथवे जो मनोवैज्ञानिक थे तथा जे.सी. मैककिनली जो एक मेडिकल डॉक्टर थे द्वारा किया गया।
4. व्यक्तित्व परीक्षण को मापने के लिये दूसरा महत्वपूर्ण परीक्षण प्रक्षेपीय परीक्षण है जो प्रक्षेपण प्राक्कल्पना पर आधारित है। इसमें व्यक्ति के सामने असंरचित कार्य दिया जाता है जिसे देख कर व्यक्ति असीमित प्रकार की अनुक्रियाएँ कर सकता है अर्थात कुछ अस्पष्ट उद्दीपकों के प्रति व्यक्तित्व अपनी अनुक्रिया करके अपने व्यक्तित्व के गुणों का प्रक्षेपण करता है। प्रक्षेपीय परीक्षण ग्लोबल उपागम पर आधारित है और इसे व्यक्तित्व का छिपा हुआ एवं अचेतन पहलू को मापने के लिये महत्वपूर्ण माना जाता है।
5. प्रक्षेपीय परीक्षण कई प्रकार के हैं जैसे- स्याही धब्बा परीक्षण, चित्रिय परीक्षण, शाब्दिक परीक्षण, क्रियात्मक परीक्षण तथा आत्मचरितात्मक स्मृतियों का परीक्षण जिसमें रोशार्क परीक्षण, विषय-आत्मबोध परीक्षण, झ-ए-पटसन परीक्षण आदि प्रक्षेपीय विधि के प्रमुख उदाहरण है। इसके अतिरिक्त प्रक्षेपीय परीक्षण के कुछ शाब्दिक प्रविधियाँ भी हैं। जिनमें शब्द साहचर्य परीक्षण तथा वाक्यपूर्ति परीक्षण प्रमुख है।

13.7. शब्दावली-

व्यक्तित्व आविष्कारिका- व्यक्तित्व आविष्कारिका में खास-खास शील गुणों से सम्बन्धित कुछ प्रश्न बने होते हैं जिनका उत्तर हॉ-नहीं, सही-गलत आदि में दिया रहता है।

प्रक्षेपीय विधि- इस विधि द्वारा व्यक्तित्व की माप परोक्ष रूप से होती है।

साहचर्य परीक्षण- ऐसे परीक्षण में व्यक्ति अस्पष्ट उद्दीपकों को देखता है और यह बतलाता है कि उसमें वह क्या देख रहा है या फिर उससे वह किस चीज को साहचर्यित कर रहा है।

स्थानीयकरण- इसमें यह तय किया जाता है कि अनुक्रिया वस्तु को कहॉ देखा गया था।

प्रेस- प्रेस से तात्पर्य कहानी के उस वातावरण सम्बन्धित बलों से होता है जिनसे कहानी के नायक की आवश्यकता या तो पूरी होती है या पूरी होने से वंचित रह जाती है।

13.8. अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. W 2. हाथवे एवं मैक्कीनले 3. प्रक्षेपीय विधि 13. H 5. 20 6. विद्यार्थी फार्म, व्यावसायिक फार्म।

13.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान - अरूण कुमार सिंह - मोतीलाल - बनारसी दास
2. व्यक्तित्व मनोविज्ञान - अरूण कुमार सिंह, एवं आशीष कुमार सिंह - मोतीलाल बनारसी दास
3. प्रतियोगिता मनोविज्ञान - अरूण कुमार सिंह - मोतीलाल बनारसी दास
4. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान - सीताराम जायसवाल - विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
5. व्यक्तित्व मनोविज्ञान - मधु अस्थाना एवं किरण बाला वर्मा - मोतीलाल बनारसी दास
6. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान - डी.एन. श्रीवास्तव - विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा-2
7. मनोविज्ञान के संप्रदाय एंव इतिहास - अरूण कुमार सिंह - मोतीलाल - बनारसी दास

13.10. निबन्धात्मक प्रश्न-

1. व्यक्तित्व मापन में व्यवहत प्रमुख आविष्कारिकाओं का वर्णन करते हुए उसके गुण एवं दोषों पर प्रकाश डालें।

2. प्रक्षेपी तकनीकों के गुण-दोष का वर्णन कीजिए।

3. व्यक्तित्व मापन की तकनीक के रूप में टी0 ए0 टी0 का वर्णन कीजिए।

4. रोशार्क ब्लाट टेस्ट द्वारा व्यक्तित्व मापन किस प्रकार किया जाता है?

5. व्यक्तित्व मापने में एम.एम.पी.आई. के उपयोग का वर्णन करें तथा उसके लाभ एवं दोषों पर प्रकाश डालें।

इकाई 14 -व्यक्तित्व के अन्य माप; क्यु-सार्ट प्रविधि, 16 पी.एफ.

इकाई संरचना

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 व्यक्तित्व के माप: क्यु-सार्ट प्रविधि

14.3.1 क्यू शार्ट प्रविधि के प्रकार

14.3.2 क्यू-शार्ट प्रविधि के गुण

14.3.3 क्यू सार्ट प्रविधि के दोष

14.4 16 पी.एफ.

14.4.1 विभिन्न क्षेत्रों में 16PF के उपयोग

14.4.2 16PF के गुण

14.4.3 16PF की सीमाएँ

14.5 सारांश

14.6 शब्दावली

14.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

14.8 संदर्भ ग्रंथ

14.9 निबन्धात्मक प्रश्न

14.1 प्रस्तावना:

मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व मापन की बहुत सी विधियों या परीक्षणों का प्रतिपादन किया है।पिछली इकाई में में आपने व्यक्तित्व मूल्यांकन के उपागम आत्म-विवरण, प्रक्षेपी एवं व्यवहार मूल्यांकन का अध्ययन किया| प्रस्तुत इकाई में आप व्यक्तित्व के अन्य माप; क्यु-सार्ट प्रविधि, 16 पी.एफ.के बारे में अध्ययन करेंगे| क्यू-शॉर्ट टेक्नीक, क्यू-सॉर्ट मेथड का एक छोटा रूप है जिसका इस्तेमाल सीमित संख्या में कथनों को उनकी व्यक्तिगत महत्व के हिसाब से रैंक करके व्यक्तित्व और आत्म प्रत्यय का आकलन करने के लिए किया जाता है।

14.2 उद्देश्य:

1. व्यक्तित्व के मूल्यांकन में प्रयुक्त क्यू-शार्ट प्रविधि को समझ पाएंगे|
2. व्यक्तित्व के मूल्यांकन में प्रयुक्त 16 pf कारक को समझ पाएंगे|

14.3 व्यक्तित्व के माप: क्यु-सार्ट प्रविधि (Q – sort Technique)-

क्यू-शार्ट प्रविधि कोटि अन्तर विधि (Rank Difference Method) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात करने की विधि का ही एक परिष्कृत (Refined) रूप है। इस तकनीक को विलियम स्टिफेन्सन (William Stephenson 1953) ने विकसित किया है। कोटि अन्तर विधि द्वारा जिन प्राप्तांको का सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। वह प्राप्तांक संख्या में कम होते है। व्यवहारपरक विज्ञानों में जो अनुसन्धान होते है, उनमें प्रदत्तों की संख्या बहुत अधिक होती है। इन अधिक संख्या वाले प्रदत्तों का विश्लेषण इस क्यू-शार्ट विधि द्वारा सरलता के किया जा सकता है। क्यू-शार्ट प्रविधि में सह-सम्बन्ध की गणना व्यक्तियों में नहीं की जाती हैं यह गणना व्यक्तियों की अनुक्रियाओं के वर्गीकृत क्यू वरणों (Q – Sort) की सहायता से की जाती है। इस प्रविधि में व्यक्तियों की अनुक्रियाओं का श्रेणीकरण (Sorting) करके क्यू वरणों में वर्गीकृत किया जाता है और फिर इन्हीं क्यू वरणों का सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

क्यू शार्ट प्रविधि में शोध अध्ययन से प्राप्त गुणात्मक प्रदत्तों (Qualitative Data) को पूर्ण निर्धारित कसौटी के आधार पर क्यू शार्ट या श्रेणियों या उप-भागों या वरणों में बॉटकर प्राप्त ढेरियों (Piles) से सह-सम्बन्ध मैट्रिक्स बनाई जाती है।

जब इस विधि की सहायता से व्यक्तित्व मापन करना होता है तब उस व्यक्ति को जिसके व्यक्तित्व का मापन करना होता है, उसे लगभग 100 कार्ड दिए जाते है। इन सभी कार्डों पर अलग-अलग प्रकार के व्यक्तित्व विशेषताओं से सम्बन्धित कथन लिखे हुए होते है। एक कार्ड पर एक कथन और दूसरे पर दूसरा कथन तथा इसी प्रकार से सभी कार्डों पर कथन लिखे हुए होते है। प्रयोज्य को यह निर्देश दिये जाते है कि वह इन कार्डो को अलग-अलग संवर्ग या ढेरियों में रखे। उसे एक ढेरी या संवर्ग में वह कार्ड रखने होते है, जो उसके व्यक्तित्व विशेषताओं से मेल खाते हुए होते है और उसे दूसरी ढेरी या संवर्ग में वह कार्ड रखने

होते है जो उसकी व्यक्तित्व विशेषताओं के विपरीत विशेषताओं वाले होते है। प्रयोज्य को इस प्रकार की उसे पॉच, सात, नौ या ग्यारह ढेरियॉ बनानी होती है।

14.3.1 क्यू शार्ट प्रविधि के प्रकार –

क्यू शार्ट प्रविधि के दो मुख्य प्रकार है-

1. असंरचित प्रकार (Unstructured Type)- यह वह क्यू शार्ट प्रविधि होती है, जिसमें कार्डों पर ऐसे कथन होते है जिसमें किसी कसौटी को आधार नहीं बनाया जाता है।

2. संरचित प्रकार (Structured Type)- यह वह क्यू शार्ट प्रविधि होती है, जिसमें कार्डों पर ऐसे कथन होते है, जिसमें व्यक्तित्व के शीलगुण निश्चित होते है अथवा कार्ड के कथन व्यक्तित्व के एक क्षेत्र विशेष से सम्बन्धित होते है, इसके पुनः दो प्रकार होते है-

a.. एक पक्षीय संरचित क्यू शार्ट प्रविधि (One- way Structured Q- Sort Technique)- जैसा इसके नाम से स्पष्ट है इसमें संरचना का आधार एकपक्षीय होता है। इसमें कार्ड के कथन या पदों के श्रेणीकरण का एक कसौटी का मापण्ड या आधार होता है।

b. द्विपक्षीय संरचित क्यू शार्ट प्रविधि (Two- way STructured Q- Sort Technique)- इसमें संरचना का आधार द्विपक्षीय होता है। इसमें कार्ड के कथन के श्रेणीकरण का दो कसौटियों का मापण्ड होता है।

14.3.2 क्यू-शार्ट प्रविधि के गुण (Merits)-

व्यक्तित्व मापन में अंतर्मुखता-बहिर्मुखता, भावनात्मक स्थिरता, सामाजिक समायोजन के अध्ययन के लिए उपयोग किया जाता है| नैदानिक एवं परामर्श मनोविज्ञान में क्लाइंट की सेल्फ-इमेज को समझने ,चिकित्सकीय प्रगति को मापना,आत्म-सम्मान का आकलन करने,शिक्षा मनोविज्ञान में,छात्रों के आत्म संप्रत्यय को समझने, शिक्षक की अभिवृत्ति का अध्ययन करने, करियर मार्गदर्शन के लिए इसका उपयोग किया जाता है| अनुसंधान में अभिवृत्ति का अध्ययन, छोटे पैमाने पर व्यक्तित्व अनुसंधान के लिए इसका उपयोग किया जाता है|क्यू-शार्ट प्रविधि के गुण इस प्रकार हैं-

1. क्यू-शार्ट प्रविधि एक सिद्धान्त उन्मुख (Theory Oriented) तकनीक है।

2. यह व्यक्तित्व के अध्ययन के एक वस्तुपरक (Objective) और आनुभविक (Emperical) प्रविधि है। यह प्रविधि आनुभविक इसलिए है कि इसमें कार्डों की ढेरियॉ पसन्द या व्यक्तित्व निर्णय के आधार पर बनाई जाती है। यह प्रविधि वस्तुपरक इसलिए है कि इसमें सह-सम्बन्ध और कारक विश्लेषण किया जाता है।

3. इसमें सह-सम्बन्ध, कारक विश्लेषण (Factor Analysis) और प्रसरण विश्लेषण जैसी उच्च सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया जाता है।

4. इस प्रविधि का उपयोग वहॉ किया जाता है, जहॉ प्रदत्त संख्या या मात्रा में व्यक्त नहीं होते है। यह व्यक्तित्व का विभिन्न दृष्टिकोण से अध्ययन क्यू संवर्गों के आधार पर होता है।

5. इस विधि का उपयोग बहुत बड़े प्रतिदर्श (Sample) पर उपयुक्त नहीं होता है। छोटे प्रतिदर्श के अध्ययन इस विधि द्वारा अधिक सफलतापूर्वक हो जाते है।

6. इस विधि की एक सीमा यह है कि व्यक्ति के सामने अनेक विकल्प न होकर केवल बाधित पसन्द (Forced Choice) ही होती है। प्रयोज्य एक निश्चित प्रकार के कार्डों को छॉटने के लिए विवश होता है।

7. यह प्रविधि केवल क्यू श्रेणियों या वरणों के आधार पर व्यक्तित्व का मापन करती है।

8. समय की बचत होती है, प्रशासन में आसान विधि है

9. सामाजिक वांछनीयता पूर्वाग्रह को कम करता है, आत्म-चिंतन को बढ़ावा देता है

10. समूह प्रशासन के लिए उपयुक्त है|

14.3.3 क्यू सार्ट प्रविधि के दोष (Demerits)-

इस विधि का उपयोग सामान्यतः छोटे प्रतिदशों के लिये अधिक उपयुक्त रहता है, बड़े प्रतिदशों के अध्ययन के लिये यह विधि उपयुक्त नहीं होती। इसके अतिरिक्त इस विधि में व्यक्ति को अपनी अनुक्रिया व्यक्त करने के लिये एक प्रकार से विवश होना पड़ता है, क्योंकि अनुक्रिया का आधार प्रायः बाधितवरण (Forced Choice) ही होता है। यह विधि केवल सम्बन्धित क्यू-वरणों के अध्ययन को ही महत्व देती है, इसमें व्यक्तियों की अनुक्रियाओं के विचलन की ओर ध्यान नहीं दिया जाता है|कम आइटम होने के कारण गहराई सीमित होती है, पढ़ने की समझ ज़रूरी है, बहुत छोटे बच्चों के लिए उपयुक्त नहीं है|

अभ्यास प्रश्न:1

1. Q-सॉर्ट विधि किसके द्वारा विकसित किया गया था?

A. गॉर्डन ऑलपोर्ट

B. रेमंड बी. कैटेल

C. विलियम स्टीफेंसन

D. कार्ल जंग

2. Q-सॉर्ट विधि का इस्तेमाल मुख्य रूप से किसे मापने के लिए किया जाता है:

A. बुद्धिमत्ता

B. योग्यता

C. व्यक्तित्व और आत्म-अवधारणा

D. उपलब्धि

3. Q-सॉर्ट तकनीक में, आइटम होते हैं:

A. स्वतंत्र रूप से रेट किए गए

B. हाँ या ना में जवाब दिए गए

C. कैटेगरी में रैंक किए गए

D. बिना जवाब दिए छोड़ दिए गए

14.4 16 पी.एफ. (सोलह व्यक्तित्व कारक प्रश्नावली

व्यक्तित्व मापन में इस विधि का इस्तेमाल करके किसी व्यक्ति के गुणों, व्यवहार, भावनाओं और नज़रिए का व्यवस्थित मापन किया जाता है। क्योंकि व्यक्तित्व जटिल और बहु आयामी होता है, इसलिए मनोवैज्ञानिकों ने इसे वस्तुनिष्ठ तरीके से मापने के लिए कई अनुसूचियों का निर्माण किया है।16PF ट्रेट सिद्धांत पर आधारित है, जो मानता है कि व्यक्तित्व स्थिर गुणों से बना होता है| गुण व्यक्तियों में अलग-अलग मात्रा में होते हैं|गुणों को वैज्ञानिक रूप से मापा जा सकता है

व्यक्तित्व मूल्यांकन के लिए सबसे ज़्यादा वैज्ञानिक रूप से सही और प्रयोग किए जाने वाले उपकरणों में से एक रेमंड बी. कैटेल द्वारा विकसित किया गया सोलह व्यक्तित्व कारक अनुसूची (16PF) है। 16PF एक लक्षण उपागम पर आधारित है और व्यक्तित्व के मूलभूत आयामों की पहचान करने के लिए कारक विश्लेषण का इस्तेमाल करता है।

सोलह व्यक्तित्व कारक प्रश्नावली (sixteen Personality Factor Inventory)- इस व्यक्तित्व सूची का निर्माण और मानकीकरण कैटेल एवं इबर (R. B. Cattell & H. W. Eber 1950, 1956, 1970) ने किया, इस प्रश्नावली के । A, B, C, D, E तथा F प्रारूप उपलब्ध है। प्रारूप A और Bकॉलेज पढने वाले छात्रों के लिए है, तथा E और Fकम पढे लिखे व्यस्कों के लिए है जिनके द्वारा 17 वर्ष से अधिक आयु वाले व्यक्तियों के 16 शीलगुणों को मापा जाता है। इस प्रश्नावली में सम्मिलित किये गये सभी 16

शीलगुण द्धिध्रवीय है। 16 शीलगुणों को मापने के लिये बिने 16 मापनी पर उच्च प्राप्तांक तथा कम प्राप्त के कुछ खास अर्थ होते है, जो इस प्रकार से है-

उच्च प्राप्तांक	अक्षर चिन्ह	निम्न प्राप्तांक
Outgoing	A	Reserved
More Intelligent	B	Less Intelligent
Stable	C	Emotional
Assertive	E	Humble
Happy- go Lucky	F	Sober
Conspicuous	G	Expedient
Bold	H	Shy
Thunder minded	I	Though mined
Suspicious	L	Trusting
Imaginative	M	Practical
Shrewd	N	Forthright
Apprehensive	O	Placid
Experimenting	Q_1	Traditional
Self- Sufficient	Q_2	Group - Tied
Controlled	Q_3	Casual
Tense	Q_4	Relaxed

वर्तमान में 16 PF के सिर्फ (Q) कारक के पूरक के ६प में इसके सात नये कारकों को जोड़ा गया है जिनके संकेत D, J, K, P तथा Q_5, Q_6 तथा Q_7 है। जिसमें उत्तेजनशीलता के लिए D, उत्साहपूर्णता बनाम वैयक्तित्वता के लिए J अशिष्टता बनाम परिपक्व समाजीकरण के लिए K प्रसन्नचित आकस्मिकता के लिए P सामूहिक समर्पक के लिए Q_5, सामाजिक कलगी के लिए Q_6 तथा स्पष्ट आत्म अभिव्यक्ति के

लिए Q_7 का उपयोग किया गया। मैलिक 16 कारकों के आधार पर कैटेल द्वितीय क्रम के कारक तथा 23 शीलगुणों के विस्तरित सेट से 12 द्वितीय के क्रम के कारकों की पहचान किया है। ड्रेगर (1977) के अनुसार 16 PF के कुछ ऐसे प्रारूप भी तैयार किये गये है जिसके द्वारा प्राक स्कुली बच्चों से लेकर किशोरों तक के व्यक्तित्व संरचनाओं का भी मापन सम्भव है।

इसे अकेले या ग्रुप में दिया जा सकता है इसके लिए साफ़ निर्देशों की ज़रूरत होती है, जवाब देने वालों से ईमानदारी से जवाब देने के लिए कहा जाता है| प्रशासन में लगभग 30–45 मिनट का समय लगता है| प्रशासन के उपरांत प्रयोज्य के जवाबों को एक स्टैंडर्ड स्कोरिंग कुंजी का इस्तेमाल करके स्कोर किया जाता है| रॉ स्कोर को स्टेन स्कोर (स्टैंडर्ड दस स्केल: 1–10) में बदला जाता है स्कोर को प्लॉट करके एक पर्सनैलिटी प्रोफ़ाइल बनाई जाती है| हर कारक पर ऊंचे और कम स्कोर की जांच की जाती है| ताकत, कमजोरियों और एडजस्टमेंट पैटर्न की पहचान की जाती है|

14.4.1विभिन्न क्षेत्रों में 16PF के उपयोग:

1. यह विधि व्यक्तित्व संरचना को समझने तथा निदान में मदद करती है|
2. इससे शिक्षा मनोविज्ञान में छात्रों को निर्देशन देने तथा करियर काउंसलिंग में सहायता होती है|
3. औद्योगिक एवं संगठनात्मक मनोविज्ञान के अंतर्गत कर्मचारियों का चयन, नेतृत्व का मूल्यांकन व समूह का निर्माण करने में मददगार होती है|
4. शोध के क्षेत्र में व्यक्तित्व अध्ययन, व्यक्तित्व विशेषताओं की तुलना तथा मनोवैज्ञानिक प्रोफाइल बनाने में उपयोगी है|

14.4.2 16PF के गुण:

1. यह विधि कारक विश्लेषण का उपयोग करके वैज्ञानिक रूप से विकसित की गई है|
2. इसके द्वारा गहरी मूल विशेषताओं को मापा जा सकता है|
3. उद्देश्यपूर्ण और मानकीकृत विधि है|
4. विश्वसनीय और वैध है|

14.4.3 16PF की सीमाएँ

1. आत्म रिपोर्ट प्रकृति से प्रतिक्रिया में पूर्वाग्रह हो सकता है|
2. पढ़ने की समझ की आवश्यकता है

3. सांस्कृतिक कारक प्रतिक्रियाओं को प्रभावित कर सकते हैं

4. बहुत छोटे बच्चों के लिए उपयुक्त नहीं है

अभ्यास प्रश्न:2

1. सोलह व्यक्तित्व कारक इन्वेंटरी (16PF) किसके द्वारा विकसित की गई थी:

A. गॉर्डन ऑलपोर्ट

B. कार्ल रोजर्स

C. रेमंड बी. कैटेल

D. हैंस आइज़ेंक

2. 16PF पर्सनैलिटी के किस दृष्टिकोण पर आधारित है?

A. मनोविश्लेषणात्मक

B. मानवतावादी

C. व्यवहारवादी

D. विशेषता दृष्टिकोण

3. 16PF मापता है:

A. बुद्धि के कारक

B. स्वभाव के प्रकार

C. व्यक्तित्व के सोलह मूल लक्षण

D. भावनात्मक विकार

14.5 सारांश:

क्यू-शॉर्ट विधि वैज्ञानिक सटीकता और प्रयोगात्मक सुविधा के बीच एक अच्छा संतुलन बनाती है। एक संरचित रैंकिंग प्रणाली के ज़रिए व्यक्तिपरक आत्म प्रत्यक्षण पर ध्यान केंद्रित करके, यह समय और श्रम को ध्यान में रखते हुए व्यक्तित्व और आत्म प्रत्यय के बारे में ज़रूरी जानकारी देती है। यह काउंसलिंग, शिक्षा और रिसर्च के क्षेत्रों में बहुत प्रभावी है।

16 पर्सनैलिटी फैक्टर इन्वेंटरी व्यक्तित्व को मापने का एक व्यापक, वस्तुनिष्ठ और वैज्ञानिक रूप से आधारित उपकरण है। सोलह मूलभूत व्यक्तित्व लक्षणों की पहचान करके, यह व्यक्तिगत मतभेदों की विस्तृत समझ प्रदान करता है। कुछ सीमाओं के बावजूद, 16PF नैदानिक, शैक्षिक, औद्योगिक और अनुसंधान के क्षेत्र में एक मूल्यवान उपकरण है।

14.6 शब्दावली:

Objective: वस्तुनिष्ठ

16PF: सोलह व्यक्तित्व कारक इन्वेंटरी

Inventory: अनुसूची

Self concept: आत्म प्रत्यय

14.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न:1

1. C, 2. C, 3.C

अभ्यास प्रश्न:2

1. C, 2. D, 3.C

14.8 संदर्भ

1. Cattell, R. B. (1957). *Personality and Motivation Structure and Measurement*. World Book.

2. Cattell, R. B., Eber, H. W., & Tatsuoka, M. M. (1970). *Handbook for the Sixteen Personality Factor Questionnaire*. IPAT.

3. Anastasi, A., & Urbina, S. (1997). *Psychological Testing*. Prentice Hall.

4. Mangal, S. K. (2012). *Advanced Educational Psychology*. PHI Learning.

5. Singh, A. K. (2015). *Tests, Measurements and Research Methods in Behavioral Sciences*. Bharati Bhawan.

14.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. **Q-Sort Method** क्या है? इसकी परिभाषा, सैद्धान्तिक आधार, प्रक्रिया, उपयोग, लाभ एवं सीमाओं का विस्तार से वर्णन कीजिए।

2. Q-Sort Method एवं **Likert Scale** में तुलना कीजिए। दोनों की विशेषताएँ, उपयोग तथा सीमाएँ स्पष्ट कीजिए।

3. 16PF के उपयोग (Applications), लाभ (Merits) एवं सीमाएँ (Limitations) का आलोचनात्मक विवेचन कीजिए।

4. Q-Sort Method एवं **16PF** के महत्व पर चर्चा कीजिए तथा शैक्षिक, नैदानिक एवं औद्योगिक क्षेत्रों में इनके उपयोग का वर्णन कीजिए।